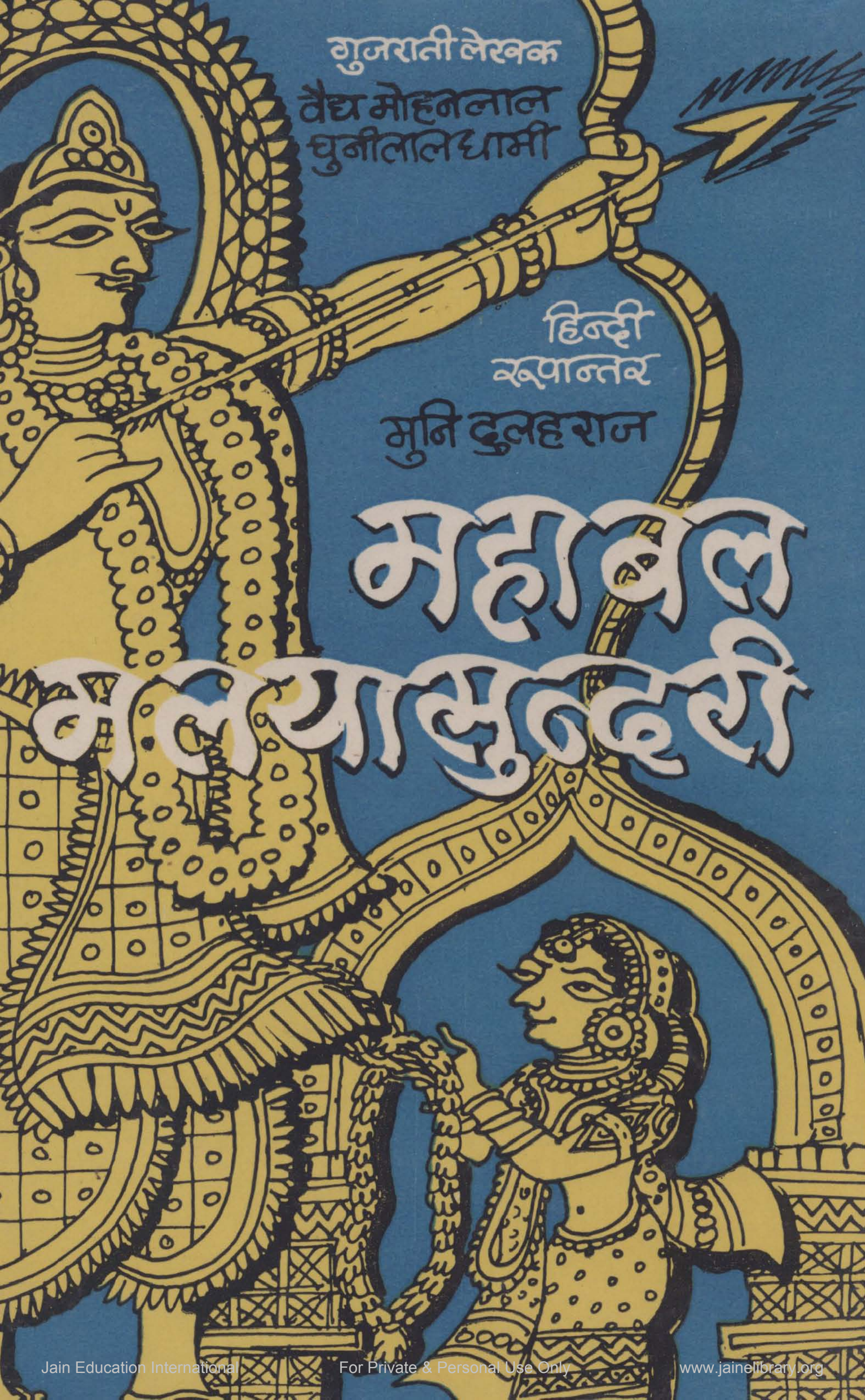

गुजराती लेखक

वैद्य मोहनलाल चुनीलाल धामी

हिन्दी रूपान्तर

मुनि दुलहराज

महाबल मलयासुन्दरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल मलयासुन्दरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदर्श साहित्य संघ प्रकाशन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुजराती लेखक

वैद्य मोहनलाल
चुनीलाल धामी

हिन्दी रूपान्तर

मुनि दुलहराज

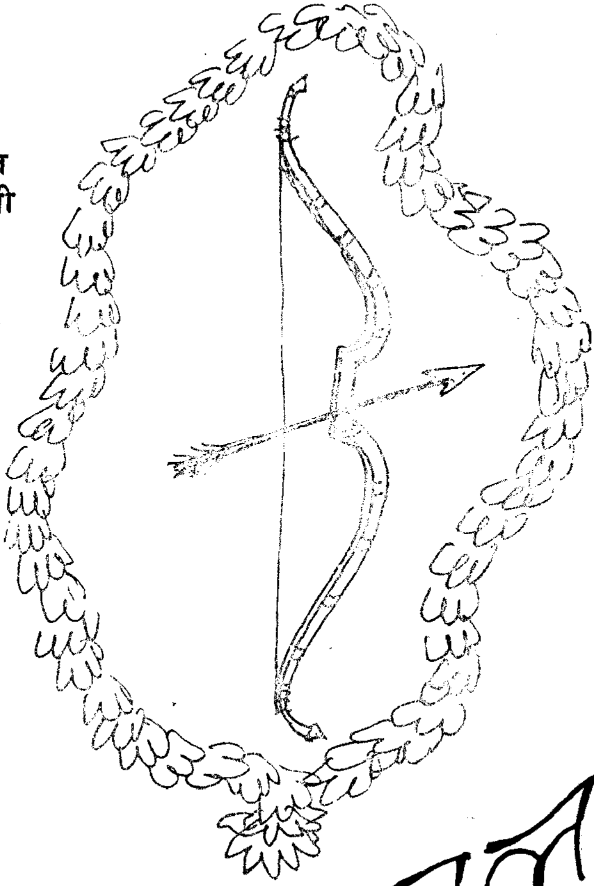

महाबल मलयासुन्दरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

MAHABAL MALAYASUNDARI

(Novel)

Translated from Gujarati

by

MUNI DULAHRAJ

Rs. 20.00

मूल्य : बीस रुपये / प्रथम संस्करण, १९८५ / प्रकाशक : कमलेश चतुर्वेदी, प्रबंधक, आदर्श साहित्य संघ, चूरू (राजस्थान) / मुद्रक : पवन प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक बात

'महाबल मलयासुन्दरी' उपन्यास जैनकथा पर आधृत है। यह गुजराती भाषा में वैद्य मोहनलाल चुनीलाल धामी द्वारा लिखा गया था और दो भागों में, विभिन्न शीर्षकों में प्रकाशित हुआ था। नमस्कार महामंत्र की आराधना से संकल्पशक्ति का विकास कौन कैसे कर सकता है, यह तथ्य इस उपन्यास में यत्र-तत्र उभरकर प्रकट हुआ है। उपन्यास में नये-नये मोड़ पाठक को बांधे रखते हैं और उनमें 'आगे क्या' की जिज्ञासा उत्पन्न करते हैं।

यथार्थ और कल्पना के धागों से अनुस्यूत यह उपन्यास पढ़ने में रुचिकर और समझने में सहज-सरल होगा, इसमें सन्देह नहीं। 'बन्धन टूटे' और 'नृत्यांगना'—ये दो उपन्यास प्रकाशित होकर चर्चित हो चुके हैं। पहला उपन्यास चन्दनबाला से तथा दूसरा स्थूलभद्र और कोशा वेश्या से संबंधित था। यह उसी श्रृंखला का तीसरा उपन्यास है।

इसकी संपूर्ण कथावस्तु मूल लेखक की है। मैंने केवल हिन्दी में रूपान्तरण किया है।

मैं सन् १९८३ में लाडनूं में था। मैंने चातुर्मास में रात्रि के पहले तथा दूसरे प्रहर का कुछ समय इसके रूपान्तरण के लिए निश्चित किया और कार्य की नियमितता से यह शीघ्र संपन्न हो गया।

विद्वान् गुजराती उपन्यासकार ने इस उपन्यास को बहुत सहज-सरल भाषा में लिखा है। मैंने भी सहज-सरल हिन्दी में इसका रूपान्तरण प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। हिन्दी पाठक इससे लाभान्वित होंगे, इसी मंगल भावना के साथ।

बालोतरा
१० जनवरी, १९८५

— मुनि दुलहराज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल मलयासुन्दरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१. दिव्य गुटिका

आधी रात बीत चुकी थी। अन्धकार ने पृथ्वी को अपने उदर में समा लेने का प्रयास कभी का प्रारंभ कर लिया था। फिर भी···अन्धकार के पंजों में फंसी हुई पृथ्वी सदा की भांति स्वस्थ थी। उसे यह भान था कि अन्धकार सदा प्रयत्न करता रहा है, पर वह काल की गति को रोकने में कभी सफल नहीं हुआ···उसे स्वयं को ही विदा होना पड़ा है।

विजय प्रकाश की होती है, अन्धकार की नहीं। इस सत्य को जानते हुए शैतान कभी अपना दोष नहीं देखता।

अन्धकार सघन हो रहा था। पृथ्वीस्थानपुर के पूर्व में एक सघन वन था। उसे काम्यवन कहते थे। आसपास में छोटी-बड़ी पहाड़ियां, छोटी नदियां और यत्र-तत्र झरने थे। हिंस्र पशुओं के कलरव से वह वन भयानक लगता था। उस वन में दिन में भी आना-जाना साहस का कार्य माना जाता था।

उस भयंकर काम्यवन के दक्षिण छोर पर एक छोटी नदी के किनारे महान् वैज्ञानिक आचार्य पद्मसागर एक छोटे से सुन्दर आश्रम में रहते थे। उस काम्यवन में वे अकेले ही रहते थे, क्योंकि उस वन की भयंकरता के कारण कोई भी उनके साथ रहना नहीं चाहता था। यदि वे किसी शिष्य को अभय देकर ले भी आते तो वह दो-चार दिन से अधिक वहां टिक नहीं पाता था।

लोग यह मानते थे कि काम्यवन में नरभक्षी राक्षस, भयंकर व्यन्तर और अनेक दुष्ट जीव रहते हैं। वहां रहने वाला कोई भी मनुष्य अधिक दिनों तक जीवित नहीं रह सकता।

एक समय था जब यह वन संतों और योगियों का धाम था, किन्तु यह सब सौ वर्ष पूर्व की बात है···आज तो यह काम्यवन मनुष्य के लिए मौत का धाम बना हुआ है।

कोई भी मनुष्य वहां जाना मृत्युधाम को जाना मानता था।

इस लोकश्रुति के आधार पर ही आचार्य पद्मसागर ने वहां अकेला रहना ही पसन्द किया था। वे विज्ञान के आराधक, उपासक और स्वामी थे। वे मानते थे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कि विज्ञान पर स्वामित्व स्थापित करने के लिए नीरव और एकान्त स्थान ही उपयुक्त होता है, जहां कि व्यक्ति के चिन्तन में कोई बाधा नहीं आती। विज्ञान केवल आंकड़ों का शास्त्र नहीं है, वह चिन्तन और प्रयोग की एक भूमिका है। यदि इस भूमिका पर खड़ा रहना है तो व्यक्ति को जन-कलरव से दूर रहना होगा। इसीलिए आचार्य ने इस स्थान का चुनाव किया था।

दस वर्ष बीत गए। वे कुछ दिव्य-प्रयोग सिद्ध करना चाहते थे। उसकी सिद्धि के लिए उन्हें एक स्वस्थ, शक्तिशाली, धैर्यवान और पराक्रमी साधक की आवश्यकता थी। दो वर्षों से वे इसी प्रयत्न में लगे थे।

एक दिन पृथ्वीस्थानपुर के महाराजा सुरपाल के समक्ष अपनी बात प्रस्तुत करते हुए उन्होंने कहा—'महाराज ! मैं अनेक दिव्य-प्रयोग सिद्ध करना चाहता हूं। उनकी सिद्धि के लिए उत्तम साधक अपेक्षित है। आप अपने इकलौते राजकुमार महाबल को डेढ़ महीने के लिए मेरे पास रखें। उसके सहयोग से मेरे प्रयोग सिद्ध होंगे, ऐसा विश्वास है।'

इकलौते पुत्र को इस भयंकर वन में भेजने के लिए राजा का मन नहीं माना, किन्तु आचार्य पद्मसागर जैसे सात्विक साधक की प्रार्थना को ठुकराना भी योग्य नहीं लगा।

युवराज महाबल को देखने के बाद ही आचार्य ने यह मांग की थी। राजा को चिन्तित देख, महाबल ने विनयपूर्वक कहा—'पिताजी ! आचार्य के साथ जाने में मुझे कोई भय नहीं है"'इनके पास रहने में मुझे परम हर्ष होगा। मैंने इनके विषय में बहुत सुना है। मुझे प्रत्यक्ष अनुभव का लाभ होगा। आप इनकी भावना को स्वीकार करें।'

राजा चिन्तित हो गया। इकलौते पुत्र को मौत के मुंह में कैसे भेजा जाए'''?

महारानी पद्मावती वहीं बैठी थी। उसने कहा—'पुत्र ! यह वन अत्यन्त भयंकर है। सुना है, यहां मानवभक्षी राक्षसों और भयंकर स्वभाव वाले व्यन्तर रहते हैं। यहां हिंस्र पशुओं की बहुलता है। दिन में भी यहां जाना भयप्रद लगता है। ऐसे वन में मैं तुम्हें जाने की कैसे अनुमति दे सकती हूं !'

महाबल बोला—'मां ! आचार्य स्वयं वहां दस वर्षों से रह रहे हैं। वे शक्तिशाली और अनुभवी हैं। उनके समक्ष सारी विपत्तियां चूर-चूर हो जाती हैं।'

आचार्य पद्मसागर ने कहा—'महाराज ! युवराज के जीवन पर कोई विपत्ति नहीं आएगी'''और आप यह जानते ही हैं कि व्यक्तित्व का निर्माण संकट की घड़ियों में ही होता है।'''युवराज की आंखों में मुझे उस शक्ति के दर्शन हो रहे हैं, जिसके माध्यम से मैं अपनी सिद्धि में सफल हो सकूंगा और उससे भावी महाराज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का जीवन भी अनुभव से गुजरेगा।'

अंत में राजा और रानी आचार्य पद्मसागर के साथ महाबलकुमार को भेजने के लिए राजी हो गए।

महाबलकुमार को साथ ले आचार्य पद्मसागर काम्यवन में आ गए।

युवराज को काम्यवन में आए आज अड़तीस दिन बीत चुके थे। निर्भयतापूर्वक उसने यह समय उस वन में बिताया था।

साधक पद्मसागर के प्रयोगों को नष्ट करने के लिए इन अड़तीस दिनों में तीन-चार बार मानवभक्षी राक्षस आए थे, किन्तु महाबलकुमार ने अपने पराक्रम से चार राक्षसों को मार डाला था और नौ राक्षसों को घायल कर पराजित कर दिया था।

आचार्य पद्मसागर युवराज के पराक्रम और धैर्य से बहुत प्रसन्न थे। युवराज की कर्तव्य-निष्ठा की छाप आचार्य के हृदय पर अंकित हो गई थी।

आज अड़तीसवीं रात्रि थी। रात्रि का मध्य चल रहा था। आचार्य पद्मसागर एक अद्भुत वस्तु का निर्माण आज पूरा करने वाले थे। वे पारद से उस वस्तु की निर्मिति कर रहे थे। युवराज धनुष पर बाण चढ़ाए सतर्क खड़ा था।

खुला आकाश। एक गोलाकार भट्ठी में तीव्र अग्नि भभक रही थी। अग्नि मंद न होने पाए, इसलिए निश्चित प्रकार की वनस्पतियों की लकड़ियां समय-समय पर उसमें डाली जा रही थीं।

भट्ठी पर लोह का एक कड़ाह रखा हुआ था। उसमें वनस्पति का रस उबल रहा था। उससे निकलने वाला धुआं रात्रि के अन्धकार में चमचमाहट पैदा कर रहा था।

तीव्र अग्नि के लाल प्रकाश के बीच सौम्यमूर्ति आचार्य पद्मसागर खड़े थे··· उनकी जटा श्वेत, दाढ़ी श्वेत और शरीर नीरोग था···उनकी अवस्था अस्सी वर्ष की थी; परन्तु शरीर पर कहीं झुर्रियां नहीं दीख रही थीं···उनकी दृष्टि तेज और निर्मल थी।

महाबल का ध्यान चारों ओर था···काम्यवन का कोई भयंकर प्राणी अथवा मानवभक्षी राक्षस आश्रम में आकर प्रयोग की सिद्धि में बाधक न बने, इसलिए महाबल पूर्ण सतर्कता से चारों ओर देख रहा था।

आचार्य ने भट्ठी पर पड़े कड़ाहे की ओर दृष्टि डाली, रस का पाचन हो चुका था। उन्होंने कहा—'वत्स! अब केवल एक घटिका का कार्य और है। जो कार्य मन्त्रों से नहीं होता वह कार्य दिव्य विज्ञान से हो जाता है। अब तू ताम्रिका के रस से भरा वह स्वर्णकुंभ मेरे पास रख दे।'

तत्काल युवराज ने पूर्ण सावधानी से ताम्रिका वनस्पति के रस से भरा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वर्णकुंभ आचार्य के पास रख दिया।

आचार्य ने पुनः भट्ठी पर पड़े कड़ाहे को देखा। रस का पाचन पूर्ण हो चुका था। उसमें तीन श्वेताम्र गुटिकाएं उबलते हुए रस में उछल-कूद कर रही थीं। आचार्य ने तत्काल ताम्रिकारस उस कड़ाहे में उंडेल दिया।

महाबल अचानक चमका। लोहपात्र से भयंकर आवाज आ रही थी। किन्तु आचार्य विश्वस्त थे। अग्नि के ताप को और अधिक तेज किया गया··· और तत्काल लोहपात्र से अग्नि की ज्वाला आकाश को छूने लगी।

महाबल बोला—'आचार्य देव···!'

आचार्य ने महाबल की भावना को समझकर कहा—'युवराज! यह ज्वाला अग्नि नहीं है। यह ताम्रिकारस के धुएं का गुब्बारा है···अब तू विशेष सावचेत रहना···इस धुएं की गंध चारों ओर फैलेगी और तब व्यन्तर विघ्न डालने के लिए आ पहुंचेंगे। मैंने तुझे जो बात कही थी, वह याद तो है न?'

'हां···आपने जिस रेखा से बाहर न जाने के लिए कहा है, उससे बाहर मैं पैर नहीं रखूंगा।'

आचार्य ने कहा—'संभव है कोई दुष्ट व्यन्तर नया रूप धारण कर तुझे आकर्षित करे।'

'आप निश्चिंत रहें···मैं पूर्ण सावधान हूं, कहकर महाबल ने चारों ओर देखा।

उस सघन अन्धकार में भी मंत्रित राख से की हुई वह गोलाकार रेखा स्पष्ट दीख रही थी। इस रेखा के बीच ही आचार्य बैठे थे, सारी सामग्री पड़ी थी और महाबल भी वहीं खड़ा था।

आचार्य एकटक उस लोहपात्र में उबलते हुए रसायन को देख रहे थे। वे बार-बार आंच को तेज कर रहे थे।

इतने में ही महाबल चौंका···आश्रम की दूर स्थित बाढ़ को लांघकर एक भयंकर रीछ की आकृति वाला वनमानव, क्रोध से फुफकारता हुआ इस ओर आ रहा था···महाबल ने आंखें फाड़कर देखा···वह भयंकर मानव सात-आठ हाथ ऊंचा था···अन्धकार में उसके लाल-लाल नेत्र दीपक की भांति चमक रहे थे···उसका पूरा शरीर दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था।···फिर भी अन्धकार से भी अधिक श्याम उसका वर्ण होना चाहिए, ऐसा अनुमान था।

महाबल ने तत्काल धनुष्य पर बाण चढ़ाया और वनमानव को लक्ष्य कर उसको छोड़ा। बाण सरसराहट करता हुआ तीव्रगति से उस ओर गया।

महाबल को यहां रहते अनेक दिन बीत चुके थे, इसलिए अन्धकार में देखने की शक्ति भी बढ़ गई थी। उसने देखा, वनमानव ने आते हुए बाण को हाथ से पकड़ा और भयंकर अट्टहास करते हुए उसे मरोड़कर दूर फेंक दिया। वह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और तेज गति से महाबल की ओर लपका।

महाबल ने सोचा, यदि यह प्राणी इस ओर आ जाएगा तो क्षण भर में हस्तगत होने वाली सिद्धि विनष्ट हो जाएगी। उसने तत्काल दूसरा बाण उस ओर छोड़ा और फिर तीसरा और चौथा···।

किन्तु क्रूर अट्टहास करते हुए उस वनमानव ने सारे बाण हाथों से पकड़, तोड़कर फेंक दिए।

महाबल ने धैर्य नहीं छोड़ा···उसने एक बाण अभिमंत्रित कर छोड़ा। वह बाण अग्नि की तीव्र ज्वालाओं को बिखेरता हुआ तीव्र गति से आगे जा रहा था।

महाबल की दृष्टि वनमानव पर टिकी हुई थी। वनमानव ने उस अग्निमय बाण को पकड़ने का निश्चय किया···किन्तु बाण का स्पर्श करते ही वह वनमानव तत्काल अदृश्य हो गया।

महाबल ने सोचा—यह कोई व्यन्तर भय उत्पन्न करने के लिए यहां आ रहा था, किन्तु लगता है कि अभिमंत्रित बाण के स्पर्श से अदृश्य हो गया है।

महाबल निश्चित हुआ···उसने आचार्य की ओर देखा।

आचार्य एक योगी की भांति लोहपात्र में दृष्टि डाले बैठे थे···विज्ञान की एक महान् सिद्धि हस्तगत होने वाली थी···किनारे लगी नाव डूब न जाए, यह विचार उन्हें पल-पल जागरूक रख रहा था।

इतने में ही एक भयंकर चीख सुनाई दी। महाबल ने दक्षिण दिशा की ओर देखा। एक पर्वताकार हाथी बाड़ को फांदकर अन्दर आ चुका था। उसकी सूंड़ में एक पूरा वृक्ष था। महाबल ने सोचा, यह क्या? इस वन में मैंने कभी हाथी नहीं देखा; अभी-अभी यह कहां से आ गया? क्या यह आचार्य की सिद्धि को नष्ट कर देगा? क्या सूंड़ में पकड़े वृक्ष को इस ओर फेंकेगा?'

नहीं···नहीं···

तत्काल महाबल ने एक बाण अभिमंत्रित कर उस ओर फेंका। वह बाण हाथी के गंडस्थल पर लगा···अरे, यह क्या? गजराज कहां अदृश्य हो गया? क्या यह भी कोई भयंकर व्यन्तर था?

यह प्रश्न समाहित हो उससे पूर्व ही आचार्य बोल पड़े—'महाबल! दस वर्षों का यह श्रम आज तेरे सहयोग से सफल हुआ है···वत्स! संसार की एक महान् वस्तु का निर्माण हो चुका है।'

महाबल ने आचार्य की ओर देखा। आचार्य भट्ठी की अग्नि बुझा रहे थे।

वहां एक छोटी-सी मशाल जल रही थी।

महाबल बोला—'आपकी सेवा का सुअवसर पाकर मैं धन्य हुआ हूं।'

आचार्य पद्मसागर बोले—'युवराज! निकट आकर इस कड़ाहे में देख।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

युवराज ने निकट आकर देखा। तीन गुटिकाएं रत्न की भांति चमक रही थीं।

'यह क्या है, यह मैंने तुझे पहले नहीं बताया। बताता भी कैसे ? क्योंकि जब तक कार्य सिद्ध न हो, तब तक उसकी चर्चा करना व्यर्थ है। दिव्य विज्ञान में पारद को महान् द्रव्य माना जाता है। पारद का सत्व निकालना बहुत ही कठिन कार्य है···पारद एक ऐसा द्रव्य है, जिसकी चंचलता को वश में करना सहज नहीं होता···पारद में दिव्य परमाणुओं का सघन योग है···परमाणुवाद के पुरस्कर्त्ता इस तथ्य को जानते हैं। इन गुटिकाओं में मैंने पारद के इन परमाणुओं को स्थिर और एकत्रित किया है। इन गुटिकाओं का प्रभाव विचित्र है···क्या तूने कभी रूपपरावर्तिनी विद्या के विषय में सुना है ?'

'हां, सुना है कि इस विद्या के स्मरण से मनुष्य अपनी इच्छानुसार रूप धारण कर सकता है"

'फिर भी यह मंत्र-विद्या है···प्रत्येक मनुष्य इसका उपयोग नहीं कर सकता।

'जो मंत्रविद् होता है या जिसने रूपपरावर्तिनी विद्या को साधा है, वही व्यक्ति अपने रूप को बदल सकता है। किन्तु इन गुटिकाओं की अपनी विशेषता है। इनमें कोई मंत्रशक्ति नहीं है···इनमें केवल दिव्य विज्ञान की शक्तियां ही केन्द्रित की गई हैं। इस गुटिका को मुंह में रखकर मनुष्य किसी भी देखे गए रूप में परिवर्तित हो सकता है। गुटिका को मुंह से बाहर निकालते ही वह मूल रूप में आ जाता है। महाबल ! एक कार्य अब शेष है···तीन-चार दिनों में वह भी पूरा हो जाएगा। निश्चित ही तूने मेरे पर बहुत बड़ा उपकार किया है।'

महाबल ने हाथ जोड़कर कहा— आचार्य देव ! मैंने अपना कर्तव्य निभाया है। आप-जैसे सिद्ध पुरुष के समागम से मुझे बहुत कुछ सीखने को मिला है।'

आचार्य ने महाबल की पीठ थपथपायी।

फिर दूध का एक घड़ा उस कड़ाह में डाला।

थोड़े समय पश्चात् उस कड़ाह में पड़ी तीनों गुटिकाओं को लेकर आचार्य पद्मसागर महाबल के साथ कुटीर में आ गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. कला का उपासक

दिवस का प्रथम प्रहर पूरा हो चुका था।

राजदरबार जुड़ गया था। चंद्रावती नगरी का प्रतापी राजा अपनी दोनों रानियों, पुत्र-पुत्रियों के साथ राजदरबार में बैठा था। सभी मन्त्री तथा सामंत अपने-अपने स्थान पर बैठे थे। आज इस सभा की आयोजना इसलिए की थी कि एक विशिष्ट शक्ति-सम्पन्न चित्रकार का परिचय सबको कराना था। नागरिक भी बड़ी संख्या में उपस्थित थे।

राजसभा का दैनिक कार्य पूरा होने के पश्चात् महामन्त्री ने खड़े होकर कहा—'बंगदेश के सुप्रसिद्ध चित्रकार आर्य सुशर्मा आज राजसभा में आए हैं। ये बंगदेश के राजाधिराज का आदेश प्राप्त कर भारत-दर्शन करने के लिए निकले हैं। ये महान कलाकार हैं। इनकी शक्ति अद्भुत है। एक बार देखे हुए दृश्य या व्यक्ति का चित्र ये आंखों पर पट्टी बांधकर चित्रपट पर उतार देते हैं। इनकी कला-साधना इतनी विशिष्ट है कि ये एक चावल के दाने पर भगवान के समवसरण की रचना विविध रंगों में चित्रित कर सकते हैं।'

आर्य सुशर्मा ने सबको प्रणाम कर कहा—'महाराज के मन में कला के प्रति जो उत्साह है, उसे देखकर मेरा मन अत्यन्त प्रसन्न हुआ है। मैं अभी आप सबके समक्ष अपनी चित्रकला का एक उदाहरण प्रस्तुत करना चाहता हूं। महाराज जिस व्यक्ति या दृश्य का चित्रांकन देखना चाहेंगे, मैं उस व्यक्ति या दृश्य की झलक मात्र लेकर फिर आंखों पर पट्टी बांध आपको चित्रांकन कर दिखाऊंगा।'

महाराज वीरधवल ने सभा की ओर देखा। उन्होंने राजपुरोहित को खड़े होने का संकेत दिया और चित्रकार से कहा—'आर्य सुशर्मा! आप हमारे राजपुरोहित को देख लें और तत्काल उनका चित्रांकन कर दिखाएं।'

चित्रकार ने राजपुरोहित को एक ओर खड़ा कर उसके स्वरूप का मन-ही-मन अवगाहन किया। थोड़े ही क्षण पश्चात् चित्रकार बोला—'महाराज! मेरा निरीक्षण पूरा हो गया है। अब मैं चित्रपट्टक तथा अन्य सामग्री एकत्रित करता हूं। फिर आप मेरी आंखों पर पट्टी बांधने की आज्ञा देना।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आर्य सुशर्मा ने श्वेत वस्त्र का चित्रपट्टक एक मंच पर रखा। विविध रंगों से भरे कटोरे का एक थाल त्रिपदी पर रखा और एक मिट्टी के बर्तन में पिच्छियां एकत्रित कीं। जल से भरा एक कलश एक ओर रखा।

इतना कार्य हो जाने पर वह आंखों पर पट्टी बंधाने के लिए तैयार हो गया।

महाराज वीरधवल का महाप्रतिहार आगे आया। उसने चित्रकार की आंखों पर श्याम वर्ण का एक पट्टा कसकर बांध दिया। उसने उस पट्टे के पांच आंटे दिए, जिससे कि कलाकार कुछ भी न देखने पाए।

चित्रकार ने अपने दोनों हाथों से चित्रपट्टक का पूरा स्पर्श किया। उसने पूरा अनुमान कर, एक पिच्छी उठाकर अपने उपयुक्त रंगवाली कटोरी में उसे डुबोया और रेखाएं अंकित करना प्रारम्भ कर दिया।

सारी सभा एकटक उसकी ओर निहार रही थी।

राजा, रानी तथा मन्त्री वर्ग चित्रकार की क्रिया को सूक्ष्मता से देख रहे थे।

सभी सभासद् चित्रकार की पिच्छी को देख रहे थे। उन्होंने देखा कि जहां जिस वर्ण की आवश्यकता होती है, कलाकार की पिच्छी उसी वाली कटोरी में जाती है और कलाकार उपयुक्त वर्ण से चित्रांकन करता चला जाता है। उनके मन में यह सन्देह उभरा कि मनुष्य बिना देखे ऐसा कर नहीं सकता। अवश्य ही कोई दैवी शक्ति इसके पीछे कार्य कर रही है। देव सहयोग के बिना ऐसा करना असम्भव है।

एक घटिका बीत गई। राजपुरोहित की आकृति स्पष्ट रूप से पट्ट पर उभर आयी। गले में रुद्राक्ष की माला; वैसे ही नयन···दायीं ओर आंख के नीचे वैसा ही काला मसा, नीचे का होंठ उतना ही मोटा।

एक घटिका और बीत गई।

चित्र तैयार हो गया।

चित्रकार बोला—'कृपावतार ! अब मेरी आंखों पर से पट्टी हटा लें···और चित्र का अवगाहन करें।'

महाप्रतिहार ने पट्टी खोल दी।

महाराज वीरधवल विस्फारित नेत्रों से चित्र देखते रहे।

सभासदों ने चित्रकार को सहस्र-सहस्र धन्यवाद दिए। एक नागरिक ने कहा—'महाराज ! यह कार्य मानव के लिए अशक्य है। अवश्य ही कोई देव-देवी की आराधना का ही यह परिणाम है।'

चित्रकार बोला—'आप ऐसा कोई संशय न रखें। यह केवल व्यक्ति की निष्ठा, श्रम और तत्परता का ही परिणाम है। जब मैं वस्तु या दृश्य को देखता हूं तो उसके साथ तन्मय हो जाता हूं। मैं उस वस्तु या दृश्य को मन पर अंकित कर लेता हूं और फिर अभ्यस्त हाथ रेखाओं के माध्यम से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसी वस्तु या दृश्य की आकृति को उभार देते हैं। यह केवल कला की आराधना का परिणाम है। कोई भी व्यक्ति इस कला को हस्तगत कर सकता है।'

राजा ने कहा—'आर्य सुशर्मा ! मैं तुम्हारी कला पर मुग्ध हूं। तुम हमारे परिवार के सदस्यों के कुछ चित्रांकन करो। यह मेरी अभिलाषा है।'

कलाकार ने राजाज्ञा को शिरोधार्य किया।

राजा ने उसे बहुमूल्य पारितोषिक दिया।

राजा ने कहा—'आर्य सुशर्मा ! सबसे पहले तुम राजकन्या मलयकुमारी का चित्र बनाओ, फिर अन्य सदस्यों के चित्र तैयार करना।'

आर्य सुशर्मा ने सबसे पहले मलयकुमारी का चित्रांकन प्रारम्भ किया। उसने मलयकुमारी को देखा। उसे लगा, चौदह वर्ष की यह कन्या साक्षात् देवांगना है। मैंने अनेक रूपवती स्त्रियों का चित्रांकन किया है, अनेक राज-परिवार की स्त्रियों को देखा है··· परन्तु ऐसा सौम्य-सुन्दर स्वरूप अन्यत्र कहीं नहीं देखा। यह मलयकुमारी या तो सरस्वती का ही अवतार है या कोई शापित देवकन्या मनुष्य भव में आयी है। यदि ऐसा नहीं होता तो इतना रूप, ऐसी माधुरी और ऐसा सौम्य तेज नहीं होता।

चित्रकार ने दो दिनों में ही मलयकुमारी का चित्र तैयार कर दिया। राज-परिवार के लोगों ने उसे बहुत पसन्द किया।

चित्रकार ने यह भी सोचा था कि ऐसी सुन्दर-सौम्य कन्या को उपयुक्त वर भी प्राप्त होना चाहिए। इसलिए उसने एक छोटा चित्रांकन अपने उपयोग के लिए अपने पास ही रख लिया। वह अनेक राजाओं और राजकुमारों से परिचित था, उनके पास आता-जाता था। उसने कुमारी के हितचिन्तन से ऐसा किया था।

चित्रकार बारह दिन तक वहां रहा। उसने राज-परिवार के अनेक लोगों का चित्रांकन किया। राजा बहुत ही प्रसन्न हुआ। महाराजा वीरधवल ने उसे पारितोषिक देकर, दो दिन और रुकने के लिए कहा।

उसी सांझ चित्रकार ने देखा कि उसके अतिथिगृह के समक्ष एक रथ खड़ा है। रथ सुन्दर था। रथ के अश्व श्वेत थे। रथ का शिखर संध्या की अन्तिम किरणों से जगमगा रहा था।

रथ से एक अधेड़ उम्र की स्त्री उतरी। वह सुशर्मा के कमरे की ओर गई। सुशर्मा विश्राम कर रहा था। उस स्त्री ने पूछा—'सुप्रसिद्ध कलाकार आर्य सुशर्मा···।'

'हां, मैं ही हूं। कहें, क्या आज्ञा है ?'

अधेड़ स्त्री बोली—'कलाकार ! देवी चन्द्रसेना ने आपका कुशलक्षेम पूछा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है और अपने भवन में आने का निमन्त्रण भेजा है।'

'देवी चन्द्रसेना···?'

'इस नगरी की कलामूर्ति देवी चन्द्रसेना का नाम आपने नहीं सुना ?'

'जी, नहीं···मैं इस नगरी से सर्वथा अपरिचित हूं।'

'तब तो आप मेरे साथ ही चलें। देवी चन्द्रसेना आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं। मैं उनकी मुख्य परिचारिका विनोदा हूं।'

सुशर्मा विचारों में उलझ गया। इस स्त्री को क्या उत्तर दे ? देवी चन्द्रसेना कौन है ?

कलाकार को विचारमग्न देखकर विनोदा बोली—'आप तनिक भी सन्देह न करें। आपकी कला की प्रशंसा सुनकर ही देवी ने आपसे साक्षात् करना चाहा है। आप मेरे साथ चलें।'

'क्या देवी से मिलने का यह समय अनुकूल रहेगा ?'

'हां, यह समय उनसे बातचीत करने के लिए अनुकूल है।'

'अच्छा,' कहकर कलाकार अन्दर गया और कन्धे पर उत्तरीय रखकर तत्काल आ गया।

दोनों रथ पर बैठे। रथ गतिमान हुआ।

चारों ओर दीपमालिकाओं का प्रकाश प्रसृत हो चुका था।

नगरी के देवालयों में सांयकालीन आरती की झालरें बज रही थीं।

सुशर्मा रथ के जालीदार परदे से नगरी की शोभा देख रहा था। उसके मन में बार-बार यह संशय उभर रहा था, देवी चन्द्रसेना कौन है ? उसने विनोदा से यह प्रश्न पूछ ही लिया।

विनोदा बोली—'कलाकार ! आपके इस प्रश्न को सुनकर मुझे आश्चर्य हो रहा है। समग्र दक्षिण भारत में चन्द्रसेना रजनीगंधा की सौरभ की भांति सुप्रसिद्ध है।'

सुशर्मा के प्रश्न का उत्तर नहीं आया। मन उलझा ही रहा।

थोड़े समय के पश्चात् वह रथ एक विशाल उपवन वाले भवन के मुख्य द्वार में प्रविष्ट हुआ।

रथ प्रांगण में जाकर रुका।

विनोदा और सुशर्मा—दोनों रथ से नीचे उतरे।

भवन की सोपान-श्रेणी पर पैर रखते ही भवन की आठ-दस परिचारिकाओं ने सुशर्मा पर पुष्पवृष्टि की। कलाकार ने सामने देखा। उसकी दृष्टि एक नारी पर अटक गई। उसकी आयु पचीस वर्ष की होगी। वह मुसकरा रही थी। उसके नयन मर्मवेधक थे। उसके उरोज उन्नत थे। वह षोडशी-सी लगती थी। सुशर्मा ने सोचा, क्या यही चन्द्रसेना है ? क्या यह नर्तकी या संगीतज्ञा है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जब कलाकार निकट आया तब सुन्दरी ने दासी के हाथ में पकड़े थाल से माला लेकर सुशर्मा के गले में डालते हुए कहा—'बंग देश के महान् कलाकार का स्वागत कर मैं धन्य हो गई।'

सुशर्मा ने हाथ जोड़कर अभिवादन किया।

चन्द्रसेना कलाकार को अपने खण्ड में ले गई। एक मुलायम आसन पर उन्हें बिठाकर स्वयं एक आसन पर बैठ गई। फिर उसने पूछा—'आप क्या लेंगे—मैरेय, दूध या हिम…?'

'नहीं, देवी! मैं जैन श्रावक हूं, इसलिए सूर्यास्त के पश्चात् कुछ भी ग्रहण नहीं करता। आप क्षमा करें!'

चन्द्रसेना यह सुनकर अवाक् रह गई।

सुशर्मा लगभग तीस वर्ष के युवा-से लगते थे। यह उम्र तो सुखोपभोग की ही होती है। चन्द्रसेना बोली—'आपकी उम्र तो अभी…'

सुशर्मा ने हंसते हुए बीच में कहा—'मेरी उम्र इकतीस वर्ष की है।'

'तो फिर इस छोटी उम्र में रात्रि-भोजन का त्याग क्यों?'

'देवी! पारिवारिक परम्परा से ऐसा ही अभ्यास है और रात में खाने-पीने का प्रयोजन भी मुझे समझ में नहीं आता।'

'अच्छा, आपसे मिलकर मुझे परम हर्ष हुआ है।'

'आपने मुझे क्यों याद किया?' सुशर्मा ने पूछा।

'आपकी चित्रकला अद्भुत है, उसकी प्रशंसा सुनकर ही मैंने आपको यहां बुला भेजा है। मेरे एक चित्रांकन की अभिलाषा है।'

'आपका?'

'हां।'

'किन्तु मैं तीन दिन के बाद यहां से प्रस्थान कर दूंगा। फिर भी मैं इस अवधि में आपका चित्र बना दूंगा। आपको जिस वेशभूषा में चित्रांकन कराना है, उसे आप अभी पहनकर आएं। मैं इसी समय चित्रांकन करके दे दूंगा…' सुशर्मा ने सहज स्वरों में कहा।

चन्द्रसेना ने दूर खड़ी एक परिचारिका को संकेत किया और वह तत्काल खण्ड से बाहर चली गई। चन्द्रसेना तब बोली—'कलाकार! मुझे मेरा अनोखा चित्रांकन करवाना है।'

'मैं समझा नहीं।'

'मैं अपना निरावरण चित्रांकन देखना चाहती हूं। वस्त्रों के ढके शरीर में सौन्दर्य का यथार्थ स्वरूप प्रत्यक्ष नहीं होता।'

'यह मिथ्या तथ्य आपको कहां से प्राप्त हुआ? आपका रूप और यौवन किसी भी वेशभूषा में खिल उठेगा। निरावरण चित्र का अंकन कला की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपासना नहीं, परिहास मात्र है।'

'आप श्रेष्ठ कलाकार हैं···नारी का आकर्षण उसकी निरावरण काया की रेखाओं में उभरता है। आप किसी भी प्रकार का संशय न रखें···आप जितना धन मांगेंगे, वह दूंगी।' चन्द्रसेना ने कहा।

'देवी! जिस कलाकृति को देखकर मानव के मन में विकार उत्पन्न होता है; वह कला की उपासना नहीं हो सकती। मुझे क्षमा करें, मैं निरावरण चित्रांकन करने में असमर्थ हूं।' सुशर्मा ने स्पष्ट शब्दों में कहा।

चन्द्रसेना आश्चर्यचकित होकर कलाकार को एकटक निहारती रही।

कुछ क्षण मौन गुजरे। फिर चन्द्रसेना बोली—'श्रीमन्! आप मेरी इच्छा के अनुसार चित्रांकन करेंगे तो मुंहमांगा स्वर्ण दूंगी।'

'देवी! आपकी उदारता को धन्यवाद! किन्तु कलास्वर्ण से नहीं खरीदी जा सकती···साधना की प्रत्येक वस्तु मूल्यातीत होती है।'

चन्द्रसेना ने एक नया प्रश्न किया—'आप अविवाहित हैं?'

'नहीं, देवी!···मैं विवाहित हूं। आपके प्रश्न का आशय···?'

'आपने अपनी पत्नी का चित्र बनाया ही होगा?'

'नहीं···।'

'आश्चर्य···।'

'जिसने मेरे चरणों में अपना सर्वस्व अर्पित कर डाला, उसकी ऐसी इच्छा होगी ही कैसे?'

चन्द्रसेना असमंजस में पड़ गई।

थोड़े समय पश्चात् आर्य सुशर्मा ने जाने की आज्ञा मांगी।

चन्द्रसेना बोली—'आपकी कलाकृतियों का दर्शन कब···।'

'कल राजा के अतिथिगृह में आप आएंगी तो वहां सारी कलाकृतियां बता पाऊंगा।'

सुशर्मा हाथ जोड़, नमस्कार कर वहां से चल पड़ा।

आश्चर्य से अभिभूत चन्द्रसेना कलाकार को पहुंचाने प्रांगण तक गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. निरावरण रूप

नीरव रात्रि। चन्द्रसेना शय्या पर जा सो गई। वह सुशर्मा के विचारों में खो गई। चन्द्रसेना को अपने रूप, वैभव और यौवन पर गर्व था। ऐसे गर्व से बचना सर्वश्रेष्ठ माना जा सकता है, परन्तु जो इन सारी वस्तुओं से संपन्न हो और उसका गर्व करे, तो वह मानवीय स्वभाव की दृष्टि से अनुचित नहीं कहा जा सकता।

उस समय संपूर्ण दक्षिण भारत में चन्द्रसेना के रूप-यौवन की बहार मालती पुष्प के सौरभ की भांति प्रसृत हो रही थी। चन्द्रसेना को देखने के लिए दूर-दूर से रूप और यौवन के गर्व से मत्त युवक आते थे। चन्द्रसेना के यौवन की माधुरी का रसास्वादन करने के लिए तरुण, प्रौढ़ और वृद्ध—सभी तरसते रहते थे। इतना ही नहीं, वे चन्द्रसेना को प्रसन्न करने के लिए स्वर्ण और रत्नों की बौछार करते थे। इतना सब कुछ होने पर भी चन्द्रसेना ने अपनी मां की बात को हृदय में अंकित कर रखा था। लगभग नौ वर्ष पूर्व जब चन्द्रसेना की मां मृत्यु-शय्या पर अंतिम सांसें ले रही थी, तब उसने अपनी पुत्री चन्द्रसेना को पास बुलाया, उसके मस्तक पर हाथ रखकर कहा—'पुत्री! हमारा व्यवसाय सुखद भी है और दुःखद भी है। जब तक रूप और यौवन की बहार रहती है तब तक ही लोग धन की बौछार करते हैं और जब रूप और यौवन अस्त हो जाता है तब कोई भी ऊंची नजर कर हमारी ओर नहीं देखता। इस धंधे में यदि स्त्री धैर्य नहीं रखती है तो वह अपने रूप और यौवन को टिकाए नहीं रख सकती। यदि वह रूप और यौवन के उपभोग पर नियन्त्रण रख सके तो उसका यौवन चिरकाल तक बना रह सकता है। याद रखना, पुरुषों के मायाजाल में कभी मत फंसना। योग्य पुरुष के साथ ही मर्यादित मैत्री स्थापित करना।'

माता की यह शिक्षा चन्द्रसेना के हृदय पर अमिट छाप छोड़ गई थी। वह इसका पूरा पालन करती थी। वह गणिका थी। उसके भवन में कामशास्त्र का विधिवत् शिक्षण दिया जाता था। उसके पास पचीस सुन्दर तरुण युवतियां थीं, जो कामशास्त्र के अध्येताओं का सहयोग करती थीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कामशास्त्र का अध्ययन करने के लिए आने वाले युवकों को वह बार-बार कहती—'कामशास्त्र विलास की मर्यादा का शास्त्र है। यह यौवन को यथावत् बनाए रखने की कला है। राष्ट्र के लिए उत्तम प्रजा का निर्माण करने वाला शास्त्र है···यह शास्त्र केवल शरीर की भूख मिटाने के लिए और लालसा का पोषण करने के लिए नहीं है। जो ऐसा करते हैं, वे बरबाद हो जाते हैं।'

चन्द्रसेना अपने रूप और यौवन के प्रति पूर्ण सजग थी और वह खान-पान के संयम से अपने को स्वस्थ बनाए रखती थी। अपने इस काम में कभी-कभी मैरेये का पान भी करती थी, फिर भी अमर्यादित नहीं बनती थी।

आज तक का उसका अनुभव था कि उसके एक इशारे पर अनेक युवक मर-मिटने को तैयार रहते थे। उसके सहवास के लिए पुरुष तन, मन और धन से उसके चरणों में न्योछावर थे। ऐसा एक भी प्रसंग नहीं आया, जिसमें उसने कोई वस्तु मांगी हो और उसे वह न मिली हो।

किन्तु आज···

एक चित्रकार आया और उसने निरावरण चित्रांकन करने से इनकार कर दिया। वह पागल या अबूझ था···अरे, भला निरावरण काया का अंकन करना क्या दोष है? यदि दोष है तो जन्म लेना ही दोषपूर्ण है। प्रत्येक बच्चा निरावरण ही तो जन्म लेता है। क्या नर-नारी का यथार्थ सौन्दर्य वस्त्रों में है? इसके अंकन से कला को कौन-सा कलंक लगता था?

एक पत्थर की प्रतिमा का अंकन किया जा सकता है···सदा नग्न रहने वाले पशु-पक्षियों को चित्रित किया जा सकता है···तो फिर मनुष्य का निरावरण चित्रांकन क्यों नहीं किया जा सकता?

इस प्रकार अनेक संकल्प-विकल्पों में उन्मज्जन-निमज्जन करती हुई चन्द्रसेना ने मन-ही-मन यह निश्चय किया कि वह सुशर्मा को समझाने का प्रयत्न करेगी। जो व्यक्ति धन के लालच में आकर नहीं झुकता, वह रूप और यौवन की मादकता के आगे नतमस्तक हो ही जाता है।···अन्त में मुझे यही करना होगा। कल राज्य के अतिथिगृह में जाकर मुझे सुशर्मा को समझाना होगा।

ऐसा ही हुआ।

दूसरे दिन प्रथम प्रहर की समाप्ति से पूर्व ही चन्द्रसेना का स्वर्णजटित रथ अतिथिगृह के प्रांगण में आ रुका।

अतिथिगृह के रक्षक दौड़े-दौड़े रथ के पास आए। सब आश्चर्य-चकित थे कि देवी चन्द्रसेना अतिथिगृह में कैसे?

विनोदा ने एक अंगरक्षक से पूछा—'आर्य सुशर्मा यहीं हैं?'

'हां···क्या उनको बुलाऊं?'

'नहीं, उनको बता दो कि देवी चन्द्रसेना आयी हैं।' विनोदा ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक रक्षक तत्काल दौड़ा-दौड़ा गया।

विनोदा और चन्द्रसेना दोनों रथ से नीचे उतरे। विनोदा के हाथ में एक करंडक था। उसमें नये फूलों की एक माला थी। उसकी सुगंध चारों ओर महक रही थी।

चन्द्रसेना विनोदा के साथ सीढ़ियां चढ़ने लगी। इतने में ही सामान्य धोती पहने हुए; धोती के एक पल्ले को कंधे पर डाले हुए आर्य सुशर्मा आये और बोले—'देवी की जय हो। आप स्वस्थ तो हैं न ?'

चन्द्रसेना ने प्रसन्न दृष्टि से आर्य सुशर्मा की ओर देखकर कहा—'आपके दर्शन पाकर मेरे चित्र की प्रसन्नता शतगुणित हो गई है।'

सुशर्मा पूर्ण आदर और सत्कार के साथ देवी चन्द्रसेना और विनोदा को अपने कक्ष में ले गया।

चन्द्रसेना ने देखा कि चित्रकार का कक्ष अव्यवस्थित रूप से पड़ा है। कहीं कुछ और कहीं कुछ। कहीं रंग के कटोरे पड़े हैं तो कहीं तूलिकाएं बिखरी पड़ी हैं। कहीं कार्पास के चित्रपट हैं तो कहीं जल से भरे पात्र पड़े हैं।

वहां कुछेक आसन पड़े थे। आर्य सुशर्मा ने दो आसनों को साफ करते हुए कहा—'देवी ! आप यहां बैठें !'

चन्द्रसेना बोली—'पहले मैं कलाकार का अभिवादन तो कर लूं।' यह कहकर उसने विनोदा के हाथ से करंडक लिया और फूल की माला को दोनों हाथ से उठा, सामने खड़े चित्रकार के गले में पहना दी।

चित्रकार ने कहा—'देवी ! स्वागत तो मुझे आपका करना चाहिए था, किन्तु आपके आकस्मिक आगमन के कारण मैं कुछ भी पूर्व तैयारी नहीं कर सका···इसलिए मैं क्षमाप्रार्थी हूं। अब आप इस आसन पर बैठें।'

'प्रिय सुशर्मा ! मैं तो यहां आपकी कला का दर्शन करने आयी हूं।'

'मैं धन्य हुआ। मुझे आशा तो थी कि आप यहां अवश्य ही आएंगी।'

'ऐसी आशा का कारण···?' मुसकराते हुए चन्द्रसेना ने पूछा।

'एक धुनी और गरीब कलाकार के पास ऐसी ऐश्वर्यशालिनी देवी का आगमन···!'

बीच में ही चन्द्रसेना बोल पड़ी—'कलाकार संसार का सर्वश्रेष्ठ धनी होता है। उसके चरणों में संसार की भौतिक संपत्ति लुटती रहती है। आपने ही तो कल मुझे कहा था कि कला का मूल्य धन से नहीं आंका जा सकता···मुझे ज्ञात हुआ कि कला का मूल्य केवल भावना से होता है···मैं आयी हूं भावना का स्वर्णथाल लेकर।'

'देवी ! आपका हृदय उदार है·· अब मैं आपको कुछेक चित्र बताता हूं'—कहकर कलाकार उठा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह पास वाले खण्ड में गया और चन्द्रसेना से आकर बोला—'देवी ! मैं सबसे पहले आपको अपने सूक्ष्म चित्र दिखाता हूं।' उसने एक छोटी डिबिया खोली। उसमें से पन्द्रह चावल निकाले। उन्हें एक तश्तरी पर रखते हुए वह बोला—'देवी ! इन चावल के दानों पर मैंने विविध चित्र अंकित किए हैं। आप इन्हें इन खुली आंखों से नहीं देख पाएंगी। मेरे पास इनको दसगुणित बड़ा कर दिखाने वाला कांच है। आप उससे इन्हें देखें।' यह कहकर कलाकार ने पेटी से एक गोल कांच निकाला और चन्द्रसेना के हाथों में दिया। चन्द्रसेना ने व्यंग्य से हंसते हुए कहा—'इन चित्रों को देखने के लिए ऐसे कांच की खोज करनी पड़े तो फिर चित्र की महत्ता ही क्या रह जाती है ?'

यह सुनकर सुशर्मा का हृदय व्यथित हो गया और वह प्रश्नभरी नजरों से चन्द्रसेना को निहारने लगा।

चन्द्रसेना ने कांच के माध्यम से सारे चित्र देखे। वह अवाक् रह गई। उसने सोचा—चावल के दानों पर इतना सूक्ष्म और स्पष्ट अंकन करना महान कलाकार का ही कार्य हो सकता है।···कैसा होगा कलाकार का वह हाथ और कैसी होगी वह तूलिका···कैसी होगी कल्पना···और···

सभी चित्रों का सूक्ष्म निरीक्षण कर लेने के पश्चात् चन्द्रसेना ने सोचा—यह चित्रकार नहीं, कोई देव है। मनुष्य ऐसा कर ही नहीं सकता। इस कलाकार को गर्व करने और जगत को तुच्छ समझने का अधिकार है।

चन्द्रसेना ने सुशर्मा की ओर देखा। कलाकार ने पूछा—'देवी ! आपको कौन-सा चित्र पसन्द आया ?'

'एक भी नहीं'···मायाभरे हास्य से चन्द्रसेना ने कहा।

'एक भी नहीं !' सुशर्मा का स्वर मंद हो गया।

'कुछ दीखता ही नहीं, फिर अपनी पसन्द कैसे बताऊं···' विनोदभरे स्वर में चन्द्रसेना बोली।

'यह नयी बात है···आपने कांच को ठीक से पकड़ा नहीं होगा···देखें, देवी !' यह कहकर सुशर्मा ने कुछ सिर नमाया। उसका मस्तक चन्द्रसेना के मस्तक से सहसा टकराया। चन्द्रसेना तत्काल बोल पड़ी, 'ऊंह···!'

'क्यों ?'

'निमित्तक कहते हैं कि जब दो मस्तक टकराते हैं तो विषाणयोग होता है।'

'देवी ! क्षमा करें···मेरे से सावधानी नहीं रही···अब आप कांच पर नजर टिकाएं और किसी भी चावल के दाने पर अंकित चित्र को देखें।'

चन्द्रसेना ने सारे चित्र पहले ही देख लिये थे।···कलाकार को व्यथित करने के ही लिए उसने ऐसा कहा था। वह प्रसन्न स्वर में बोली—'आर्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुशर्मा ! आप यथार्थ में कलाकार हैं···महान् हैं···आपके ये सारे चित्र देखकर···'

'क्या; देवी ?'

'आपने इन चित्रों का अंकन किया है या···यह संशय होना स्वाभाविक है।'

'इस संशय का तो कोई कारण नहीं है। आपके हृदय में यह संशय क्यों उत्पन्न हुआ ?'

'एक मनुष्य और वह भी अत्यन्त अव्यावहारिक और रूढ़, भला ऐसे सुन्दर चित्रांकन कैसे कर सकता है ? या तो उसके पास कोई देवशक्ति होनी चाहिए या फिर···।'

चन्द्रसेना अपना वाक्य पूरा करती, उससे पूर्व ही कलाकार ने हंसते हुए कहा—'देवी ! इस प्रकार की निर्मिति करने वाले कलाकार को व्यवहार से तो दूर ही रहना चाहिए। व्यवहार के बंधन में बंधा हुआ कलाकार कला की ऐसी आराधना कर ही नहीं सकता। आपका अनुमान सही है। मैं सर्वथा अव्यावहारिक हूं। मेरी पत्नी भी मुझे बार-बार कहती रहती है···अब देवी ! आप उस दूसरे कक्ष में चलें; मैं आपको दूसरे चित्र दिखाता हूं।'

'हां', कहकर चन्द्रसेना आसन से उठी और सुशर्मा के पीछे-पीछे उस खंड की ओर चल पड़ी। विनोदा भी साथ चलने के लिए उठी, परन्तु चन्द्रसेना के संकेत से वहीं बैठ गई।

दूसरे कक्ष में जाकर कलाकार ने चन्द्रसेना को राजपरिवार के चित्र तथा अनेक प्राकृतिक चित्र दिखाए।

चित्रों को देखकर चन्द्रसेना ने यह अनुभव किया कि ये चित्र निर्जीव नहीं हैं, ये तो जीवन्त चित्र हैं और इनमें भावनाओं के प्रकम्पन-स्पष्ट दीख रहे हैं।

चन्द्रसेना ने सारे चित्र देखे। उसका आनन्द उछालें भरने लगा। उसने कहा—'आर्य सुशर्मा ! मैं आपकी कला का वर्धापन किन शब्दों में करूं। किन्तु मैं अपने हृदय की मूक भावना आपके चरणों में चढ़ाती हूं।' यह कहकर चन्द्रसेना नीचे झुक गई।

सुशर्मा तत्काल बोला—'देवी ! आप मुझे लज्जित न करें···मैं तो कला का उपासक मात्र हूं···उपासक के लिए यह सम्मान शोभित नहीं होता।'

'प्रिय सुशर्मा ! यह मान नहीं, यह तो अन्तर की मौन कविता का उपहार है', कहकर चन्द्रसेना खड़ी हो गई।

'देवी ! आपका चित्त प्रसन्न हुआ, यही मेरे लिए बड़े-से-बड़ा उपहार है।'

चन्द्रसेना ने यौवन से मत्तदृष्टि का क्षेप करते हुए कहा—'मेरी एक प्रार्थना आपको स्वीकार करनी होगी।'

'देवी ! कहें···।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'कल मैंने आपसे मेरे निरावरण चित्रांकन के लिए मुंहमांगा धन देने के लिए कहा था···किन्तु आज मैं अनुभव कर रही हूं कि ऐसा कहकर मैंने आपका बहुत बड़ा अपमान किया है···इस अपराध के लिए आप मुझे क्षमा करें।'

'देवी मुझे लज्जित न करें।'

'तो आप मेरा एक निरावरण चित्रांकन करें।'

'देवी ! निरावरण चित्र का अंकन करना कला का अपमान है···उपासक अपने आराध्य का अपमान कैसे कर सकता है ?'

'क्या जब मनुष्य जन्मता है तब वह निरावरण नहीं होता ? निरावरण अवस्था प्रकृति का सही स्वरूप है। मैं अपने मूल स्वरूप में अपने आपको देखना चाहती हूं।'

'देवी ! बालक निर्दोष होता है···किन्तु यौवन किसी-न-किसी दोष से दूषित होता है···और फिर आप-जैसी गुण-संपन्न नारी अपने निरावरण शरीर को लोगों के समक्ष क्यों रखेगी ?'

'मैं वह चित्र बाहर नहीं रखूंगी, केवल अपने में ही संजोए रखूंगी।'

'आपके स्वामी···'

'मैं चिर-कुंवारी हूं।'

सुशर्मा यह सुनकर अवाक् रह गया। वह कुछ नहीं बोला, किन्तु एकटक चन्द्रसेना की ओर देखता रहा।

चन्द्रसेना बोली—'मैं इस नगरी की गणिका हूं···मेरे यहां अनेक युवक कामशास्त्र का अभ्यास करने के लिए आते रहते हैं···।'

'ओह !' कहकर सुशर्मा विचार में पड़ गया।

चन्द्रसेना बोली—'मेरे परिचय से आपको घृणा तो नहीं हुई !'

'नहीं, देवी ! ऐसा कुछ नहीं है···किन्तु मुझे एक दूसरा ही विचार झकझोर रहा है।'

'कौन-सा विचार ?'

'आपके निरावरण शरीर का चित्रांकन करना बहुत कठिन कार्य है··· काया पर एक आवरण है त्वचा का और इसी त्वचा के पीछे मनुष्य का वास्तविक रूप छिपा रहता है।'

'त्वचा के पीछे !' चन्द्रसेना कुछ भी नहीं समझ सकी।

'हां, देवी !···काया के यथार्थ सौन्दर्य की अभिव्यक्ति अत्यन्त कठिन होती है। दूसरी बात यह है कि कल मुझे सारे चित्र समर्पित करने के लिए राज-दरबार में जाना होगा और परसों मैं यहां से प्रस्थान कर दूंगा।'

'अच्छा, तो आप मेरी प्रार्थना के प्रति तनिक भी सहानुभूति नहीं रखते ?'

दो क्षण सोचकर आर्य सुशर्मा ने कहा—'देवी ! आपने मेरा सत्कार भावना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के फूलों से किया है···मैं दो दिन और रुक जाऊंगा···आप परसों दिन के प्रथम प्रहर में यहां आएं।'

'यहां···?'

'हां, आपको मेरे समक्ष कुछ क्षणों तक खड़ा रहना पड़ेगा···मैं आपके निरावरण स्वरूप को अपने मानस-पटल पर अंकित कर लूंगा और फिर दो दिन की अवधि में वास्तविक यौवन का चित्र मैं प्रस्तुत करूंगा।'

'मैं धन्य हुई···' कहकर चन्द्रसेना ने सुशर्मा के दोनों हाथ पकड़ लिये।

सुशर्मा ने कहा—'देवी! संसार में सबकी प्रार्थना टाली जा सकती है, किन्तु बहन और माता की बात को टाला नहीं जा सकता।'

चन्द्रसेना सुशर्मा के मुंह की ओर देखती रही।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. कलाकार का सम्मान

दूसरे दिन का प्रथम प्रहर।

राजसभा में नगर के संभ्रान्त व्यक्ति एक-एक कर उपस्थित हो रहे थे। थोड़ी देर में वह खचाखच भर गया। राजा ने अपने परिवार के साथ राजसभा में प्रवेश किया। सभी व्यक्तियों ने जय-जयकार से राजा का वर्धापन किया।

आर्य सुशर्मा ने अपने सारे चित्र प्रस्तुत किए। राजा ने उन्हें सूक्ष्मता से देखा। रानी कनकवती ने सभी चित्र देखे। उसने अपने चित्र को देखकर आश्चर्य व्यक्त करते हुए मन-ही-मन सोचा—'क्या मैं इतनी सुन्दर हूं ?' संभ्रान्त लोगों ने भी चित्रों का अवलोकन किया। चित्रों की सजीवता और रेखाओं में सूक्ष्म भावों का अंकन देखकर सभी ने कलाकार की कलाकृतियों को सराहा। राजा ने प्रसन्न होकर उसे पुरस्कार दिया। आर्य सुशर्मा उस पुरस्कार को देख स्तब्ध रह गया।

राजसभा का कार्य संपन्न कर वह अतिथिभवन में अपने स्थान पर आ गया। उसने सोचा—राजा ने मुझे बहुत धन दिया है। किन्तु मैं एक अकिंचन ब्राह्मण हूं। मुझे इतने धन की आवश्यकता ही क्या है ? जरूरत से अधिक रखना अपराध है। मैं अपने घर हजार स्वर्ण मुद्राएं भेज देता हूं; शेष सात हजार स्वर्ण-मुद्राओं का इसी नगरी में वितरण कर दूंगा।'

इस विचार को लेकर वह महामंत्री के घर गया और अपने विचार बताए। महामंत्री ने कहा—'आर्य सुशर्मा ! अन्याय का धन प्राप्त हो तो वह अपराध हो सकता है। यह तो राजा ने स्वयं दिया है। आपको इसे घर ले जाना चाहिए। धन के प्रति इतना वैराग्य क्यों ?'

आर्य सुशर्मा ने कहा—'मैं जैन हूं। परिग्रह पाप का मूल है, यह मैं हृदयंगम कर चुका हूं। यह मोक्ष मार्ग का अवरोधक है। यह भार है···यह चंचल है··· इसके प्रति विरक्ति ही अच्छी है।'

महामंत्री ने कहा—'धन्य हैं आप ! इतनी छोटी अवस्था में इतनी विरक्ति को अपनाकर चल रहे हैं। मैं आपके धन का सत्कार्य में उपयोग करूंगा। आप निश्चिन्त रहें।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुशर्मा अपने स्थान की ओर लौट गया ।

चन्द्रसेन राजसभा में उपस्थित नहीं हुई थी; किन्तु कलाकार के सम्मान की बात उसे ज्ञात हो गई थी ।

अपने कार्यों से निवृत्त होकर चन्द्रसेना अपनी शय्या पर जाकर सो गई । उस समय उसके मानस-पटल पर आर्य सुशर्मा की मूर्ति उभरने लगी । चित्रकार की कला उसके हृदय में समा चुकी थी, किन्तु स्वयं कलाकार भी उसके हृदय के एक कोने में बस चुका था । उसने मन-ही-मन सोचना प्रारंभ किया कि सुशर्मा को हृदय का स्वामी कैसे बनाया जाए । मेरे मन में ऐसी अनेक भावनाएं जागती हैं, किन्तु ज्यों ही मैं उसके समक्ष जाती हूं, एक भी भावना अभिव्यक्त नहीं कर पाती । ऐसा क्यों होता है ? कल कलाकार ने कैसे कह डाला कि बहन और माता की बात को टाला नहीं जा सकता । यह अकल्पित बात थी ।···किन्तु उस समय भी मैंने उसका प्रतिकार नहीं किया···उनके हाथ पकड़कर भी मैं नहीं कह सकी कि अरे ! आप यह क्या कर रहे हैं ? मैं आपकी हूं और सदा आपकी ही रहना चाहती हूं···आप ही मेरे तन-मन के स्वामी हैं···मैं आपका प्रिया···मैं आपकी दासी···

किन्तु ऐसा हो नहीं सका । उसके मन में दूसरा विचार उभरा । कल मुझे उनके पास जाना है···वे मेरा निरावरण चित्रांकन करेंगे···उस समय मुझे उनके सामने लज्जारूपी वस्त्रों से आवृत होकर खड़ा रहना होगा···क्या उस समय मेरा रूप उनके प्राणों को नहीं बांध पाएगा ? जरूर बांध लेगा···वह ऐसा बंधन होगा कि अनन्त जन्म तक हम उसमें बंधे रहेंगे···यह कभी निष्फल नहीं होगा ।

इस प्रकार एक अप्रतिम आशा को संजोती हुई चन्द्रसेना बहुत समय बाद निद्रादेवी की गोद में चली गई ।

सुशर्मा अपने नित्य नियम के अनुसार प्रातःकाल जल्दी उठा । ध्यान, स्वाध्याय, भगवत्पूजा से निवृत्त हो मुनि-वन्दन के लिए बाहर गया । मुनि-वन्दन के लिए महामंत्री भी आ रहे थे । दोनों रास्ते में मिले । कुशलक्षेम पूछा । महामंत्री और सुशर्मा—दोनों मुनि-वन्दन के लिए उपाश्रय में गए । मुनि महाराज को विधिवत् वन्दना कर, कुछ क्षणों तक उपासना कर दोनों अपने-अपने गन्तव्य की ओर चल पड़े ।

जब आर्य सुशर्मा अतिथि-निवास के प्रांगण में पहुंचा, तब उसने देखा कि एक सुन्दर रथ खड़ा है । उसके मन में यह विचार उठा कि यह रथ किसका है··· रथ खाली था···सारथी भी इधर-उधर नजर नहीं आया । इतने में ही गृहरक्षक ने आकर कहा—'आर्य ! देवी चन्द्रसेना आपके कक्ष में आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं ।'

आर्य सुशर्मा को आश्चर्य हुआ, किन्तु तत्काल उसे याद आ गया कि आज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवी का यहां आना निश्चित था, किन्तु इतनी जल्दी ! वह तत्काल अपने कक्ष की ओर गया।

उसने देखा कि देवी चन्द्रसेना और उनकी मुख्य परिचारिका विनोदा उस कक्ष में बैठी हैं।

चन्द्रसेना ने कलाकार का अभिवादन किया।

सुशर्मा ने कहा—'देवी ! मैं जानता था कि आप प्रथम प्रहर के बाद ही आएंगी।'

'आपका सोचना यथार्थ है, पर मैंने सोचा कि दिवस के प्रथम प्रहर के बाद आपसे मिलने वाले अनेक लोग आते-जाते रहेंगे।'

'नहीं, ऐसा तो कुछ भी नहीं है।'

'कल महाराजा ने आपका जिस महत्त्वपूर्ण ढंग से स्वागत किया था, उससे आपकी कला की प्रसिद्धि हुई है और अनेक व्यक्ति आपसे मिलने आ भी सकते हैं'—चन्द्रसेना ने कहा।

इतने में ही अतिथिगृह के दो परिचारक दूध के तीन पात्र लेकर आ पहुंचे।

तीनों ने दुग्धपान किया।

विनोदा ने तांबूल तैयार किए। तीनों ने तांबूल लिये।

सुशर्मा ने कहा—'देवी ! तीन दिन बाद तो मुझे यहां से प्रस्थान करना ही होगा।'

'आप कैसे जाएंगे ?'

'मेरे पास एक अश्व है'''

'अच्छा। पर आप इतना सामान कैसे ले जाएंगे ?'

'देवी ! मुझे जो कुछ उपहार में मिला है, मैं उसे यहीं वितरण कर दूंगा। साथ में उतना ही ले जाऊंगा, जितना अनिवार्य है, आवश्यक है। मैं धन कमाने के लिए यहां नहीं आया था। मैं तो केवल अपनी कला का परिचय देने आया था। मैं तो कल ही चला जाता, किन्तु मुझे आपकी छवि तैयार करनी है।'

'क्या वह छवि दो-तीन दिनों में तैयार हो जाएगी ?'

'हां'''।'

'फिर आप यहीं रुकेंगे कि नहीं ?'

'नहीं, क्या कोई मुसाफिर कहीं प्रतिबद्ध होता है'—कहकर सुशर्मा मुसकरा दिया।

चन्द्रसेना उसके तेजस्वी वदन को देखती रही।

सुशर्मा क्षणभर मौन रहा। मौन भंग कर उसने कहा—'देवी ! आपका चित्रांकन प्रारंभ करने से पूर्व यह आवश्यक होगा कि आप निरावरण रूप में मेरे समक्ष कुछ क्षणों तक रुकें, जिससे कि मैं आपकी छवि को मन में अंकित कर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'लूं···।'

'यहीं ?'

'नहीं, पास वाले कक्ष में···किन्तु मैं वहां थोड़ी व्यवस्था कर देता हूं···फिर मैं आपको बुला लूंगा···'कहकर सुशर्मा उठा और दूसरे कक्ष की ओर चला गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. चित्र पूरा हुआ

आशा के रंग की कल्पना किसी के लिए सहज नहीं है। आशा प्रतिपल अपना रंग बदलती है। जैसे मन की तरंगें क्षण-क्षण में बदलती हैं, वैसे ही आशा की तरंगें भी चंचल हैं।

जब मनुष्य का मन आशा के अकल्पित रंगों में आत्मविभोर हो जाता है, तब उसके स्वप्न मात्र लुभावने बनते हों, यह बात नहीं है, किन्तु उसकी नींद भी उचट जाती है और त्रियामा रात्रि भी शतयामा बन जाती है।

निरावरण चित्र की आशा ने चन्द्रसेना के मन में आर्य सुशर्मा के स्वस्थ देह के साथ संपर्क की कल्पना उभार दी थी।

इतने में ही सुशर्मा सारी व्यवस्था कर देवी के पास आकर बोला—'देवी ! अब आप अन्दर के कक्ष में पधारें।'

चन्द्रसेना तत्काल उठी। अन्दर के कक्ष में निरावरण होना पड़ेगा, यह कल्पना जितनी मधुर थी, उतनी ही वह लज्जा के भार से भारी थी···परन्तु उसकी इच्छा के अनुसार सब कुछ घटित हो रहा है···यह सोचकर वह सुशर्मा के पीछे-पीछे चल पड़ी।

सुशर्मा ने खंड में प्रवेश किया। देवी और विनोदा दोनों साथ थीं। सुशर्मा ने कहा—'देवी ! आपकी निरावरण चित्राकृति तीन प्रकार से हो सकती है। आप कौन-सा प्रकार पसन्द करेंगी ?'

'आप मुझे समझाएं।'

'एक प्रकार तो यह है कि निरावरण होकर स्वाभाविक रूप से खड़े रहना, दूसरा प्रकार है कि किसी भी नृत्यमुद्रा में खड़े रहना और तीसरा प्रकार है कि शय्या में निद्रित अवस्था या अर्धनिद्रित अवस्था में सोते रहना। इन तीनों में से आप जो पसन्द करेंगी, उसी में आपका चित्र···' सुशर्मा ने अत्यन्त सहज स्वरों में कहा।

चन्द्रसेना विचारामग्न हो गई···उसने सोचा, भव्य और सुन्दर पलंग पर अर्धनिद्रित अवस्था में पड़े रहना अति उत्तम होगा। किन्तु यहां तो कोई भव्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पलंग है ही नहीं···।

उसने सुशर्मा से कहा—'आर्य ! अर्धनिद्रित अवस्था का प्रकार अच्छा लगता है, पर यहां वैसा सुन्दर पलंग नहीं है, जिस पर मैं सो सकूं। यदि आप मेरे भवन पर आ सकें तो···'

'नहीं, देवी ! ऐसी कोई आवश्यकता नहीं है। अतिभव्य पलंग का चित्रांकन करना तो मेरी कल्पना पर निर्भर करता है। अब आप मेरी इस शय्या पर सो जाएं।'

चन्द्रसेना ने शय्या पर दृष्टि डाली। वह अत्यन्त अव्यवास्थित थी। उसे उस पर सोना पसन्द नहीं था। सुशर्मा ने उसके मनोभावों को पढ़ते हुए कहा—'देवी ! आप संकोच न करें। मैं अतिभव्य पलंग का चित्रांकन करूंगा। आप सो जाएं। आपका दाहिना हाथ मस्तक के नीचे रहे। दूसरा हाथ स्वतन्त्र रहे।'

'हूं, परन्तु···।'

'क्या, देवी ?'

'आप बाहर जाएं तो मैं अपने वस्त्र···।'

बीच में ही सुशर्मा ने कहा—'वस्त्रों को उतारने की आवश्यकता नहीं है। आप केवल सो जाएं···कलाकार की दृष्टि इतनी निकृष्ट नहीं होती कि वह किसी नारी का अनावरण रूप देख सके। मेरी आंखों में आपके स्वरूप का सूक्ष्मतम भाव अंकित हो जाएगा···परसों आप उस चित्र को देख सकेंगी··· चित्र देखने के बाद आप मुझे कुछ कहना···।'

'प्रिय सुशर्मा ! मुझे लगता है कि आप मेरे मन को केवल संतुष्ट करने के लिए···।'

'नहीं, देवी ! आपकी बात मैंने स्वीकार ली है···इसमें कोई दंभ या मायाचार नहीं है। मैं आपके शरीर का निरावरण चित्रांकन करूंगा।'

देवी चन्द्रसेना उस शय्या में लेट गई। चित्रकार ने चित्र के दोषों को मिटाने के लिए चन्द्रसेना को हाथ कैसे रखना है, पैर कैसे रखने हैं, नयन अर्धनिमीलित तथा हाथ के पंजों पर मस्तक हो—यह सब स्वयं अपने हाथों से चन्द्रसेना का स्पर्श कर किया। आर्य सुशर्मा को इस स्पर्श का कोई खयाल ही नहीं था। जैसे मनुष्य पत्थर की मूर्ति का स्पर्श करते समय निर्विकार रहता है वैसे ही सुशर्मा जीवन्त स्त्री-प्रतिमा का स्पर्श करते हुए विकार से दूर रहा। चन्द्रसेना के हृदय में इस स्पर्श ने कंपन पैदा कर दिया था और उसने मन-ही-मन सोच लिया कि वह उठ खड़ी हो और सुशर्मा के बाहुपाश में बंध जाए। पर वह संभल गई।

सुशर्मा दूर एक कोने में खड़ा-खड़ा ताड़्पत्र पर तूलिका से कुछ रेखाएं बना रहा था और चन्द्रसेना का वदन उसकी आंखों में समा चुका था।

लगभग एक घटिका बीत गई। सुशर्मा ने कहा—'देवी ! परसों आपको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपनी निरावरण काया के वास्तविक स्वरूप का दर्शन हो जाएगा···किन्तु इससे पूर्व आपको मेरी एक शर्त माननी होगी ।'

'कहो ।'

'कृपा कर आप यह चित्र कहीं न दिखाएं ।'

'तो···।'

'जिस दिन आपको अपना व्यवसाय दुःख रूप लगे, उस समय आप अपना यह चित्र सबको दिखाना ।'

'मैं समझी नहीं···आपका कथन स्वयं एक समस्या होता है ।' चन्द्रसेना ने शय्या से उठते हुए कहा ।

'देवी ! जीवन की मंगल बातें समस्याओं में ही गुंथी हुई होती हैं । जीवन स्वयं एक समस्या है···जो व्यक्ति समस्या का सही समाधान पा लेता है, उसी का पुरुषार्थ फलवान होता है···ये सब बातें जाने दें । पहले आपका चित्र पूरा हो जाए···।'

'आप तूलिका से क्या कर रहे थे ?'

'मैं आपके निरावरण स्वरूप का माप ले रहा था···यह देखें···आप समझ नहीं सकेंगी···' कहकर सुशर्मा ने रेखाएं दिखाईं ।

चन्द्रसेना रेखाओं को देख अवाक् रह गई । उन रेखाओं में उसके शयन करने का स्पष्ट चित्र उभर रहा था ।

चित्रकार ने मृदु स्वर में कहा—'देवी ! क्षमा करें । आपको ऐसी अस्वच्छ शय्या पर···।'

बीच में ही चन्द्रसेना बोल पड़ी—'आप मुझे लज्जित न करें । मेरे मन में ऐसी कोई कल्पना भी नहीं आयी ।'

'मेरा सद्भाग्य है कि आपके मन को ऐसी चीज स्पर्श तक नहीं कर गई'—कहकर सुशर्मा खंड से बाहर चला ।

चन्द्रसेना भी इधर-उधर की बातें कर अपने भवन की ओर चली गई ।

चित्रकार का समग्र चित्र इस रूपवती गणिका के चित्रांकन में मग्न हो गया था···उसके मन में इस चित्र को अंकित करने की त्वरा व्याप गई थी ।

मध्याह्न के पश्चात् उसने निश्चित किए हुए माप के अनुसार कार्पासकपट बनाया और तत्काल विविध प्रकार के रंग और तूलिकाओं को एकत्रित कर एक स्थान पर रख दिया ।

चित्र में जब-जब आवेश उतरता है तब-तब मनुष्य उसके तनाव से भर जाता है ।

आर्य सुशर्मा पूरी रात और दूसरे दिन के मध्याह्न तक चित्रांकन करता रहा । चित्र को पूरा कर उसने संतोष की सांस ली और अपने आसन से उठा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसे तब तक न नींद का भान था और न भोजन का। प्रातः उसने थोड़ा-सा दुग्धपान किया और फिर चित्रांकन में तन्मयता से लग गया।

मध्याह्न के समय उसने चित्र को अंतिम रूप देते हुए इधर-उधर कुछ रेखाएं खचित कीं और फिर चित्र को एक घटिका पर्यन्त ध्यान से देखा।

उसने सोचा, मात्र नारी ही नहीं···मनुष्य मात्र का सत्य-दर्शन उसके वास्तविक स्वरूप में ही किया जा सकता है।

जब वह चित्रकार चित्रांकन में तन्मय हो रहा था, तब अनेक व्यक्ति उससे मिलने आते-जाते रहे, पर उसने अपनी परिचारिका को स्पष्ट निर्देश दे दिया था कि वह अभी किसी से नहीं मिल सकेगा···जिसे मिलना हो वह सायंकाल के बाद आए।

चित्र को पूरा कर, आनन्दित होता हुआ चित्रकार अपने मुख्यकक्ष में आया। हाथ-मुंह धोकर वह भोजन करने चला गया।

कल तो उसे पृथ्वीस्थानपुर की ओर प्रस्थान करना ही था।

इसको लक्ष्य कर महाराज वीरधवल ने पृथ्वीस्थानपुर के महाराज को संबोधित कर एक पत्र लिखकर कलाकार को दिया था।

उसने यह निश्चय किया था कि प्रस्थान करते समय वह देवी से मिलेगा और यह निरावरण चित्र उसे दे देगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. नग्न सत्य

रात का नीरव वातावरण। कलाकार ने प्रस्थान की पूरी तैयारी कर ली। अपना सारा सामान बांधकर एक ओर रख दिया। देवी चन्द्रसेना का निरावरण चित्र, एक सफेद कपड़े में लपेटकर पृथक् रख दिया और वह निद्रादेवी की गोद में चला गया।

सूर्योदय से पूर्व वह जागा। स्नान, पूजा आदि से निवृत्त हो अपने अश्व के साथ अतिथिगृह से बाहर निकला। उसने अतिथिगृह की प्रत्येक परिचारिका को एक-एक स्वर्णमुद्रा भेंट में दी और अपने मार्गदर्शक को साथ ले आगे चल पड़ा। उसने वस्त्र से ढंके चित्र को साथ में ले लिया। धीरे-धीरे चलते हुए वह एक घटिका के बाद देवी चन्द्रसेना के विशाल भवन के पास पहुंचा···उसने अपने अश्व की लगाम मार्ग-दर्शक को सौंपते हुए कहा—'तुम यहीं खड़े रहो। मैं यह चित्र देवी को देकर तत्काल लौट रहा हूं।'

कलाकार चित्र लेकर भवन की सोपान वीथी तक पहुंचा। देवी चन्द्रसेना की परिचारिका विनोदा वहां खड़ी थी। उसने कलाकार का भावभीना स्वागत किया।

सुशर्मा ने पूछा—'देवी क्या कर रही हैं ?'

'स्नान आदि से निवृत्त होकर देवी वस्त्रखंड में गई हैं। आप मेरे साथ ऊपर चलें।'

सुशर्मा विनोदा के पीछे-पीछे चल पड़ा।

चन्द्रसेना के मुख्य खंड में एक आसन पर कलाकार को बिठाते हुए विनोदा बोली—'देवी अभी पधार रही हैं, आप यहां बैठें।'

'जी !···मुझे अभी-अभी प्रस्थान करना है, इसलिए विलम्ब न हो।'

'मैं देवी को आपके आगमन की सूचना देने जा रही हूं, आप निश्चिन्त रहें', कहकर विनोदा तत्काल देवी के वस्त्रखंड की ओर गई।

लगभग आधी घड़ी बीती होगी कि देवी चन्द्रसेना दिव्यवस्त्र और अलंकारों से सज्जित होकर वहां आ पहुंची। उसको देखते ही आर्य सुशर्मा खड़ा हुआ और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बोला, 'देवी ! आपका चित्र अत्यन्त भव्य और जीवन-पर्यन्त स्मृति-पटल पर नाचने जैसा बना है ।'

'मैं धन्य हो गई'''किन्तु मैं आपको आज ऐसे ही नहीं जाने दूंगी। आपको मेरा सत्कार स्वीकार करना ही होगा ।'

सुशर्मा मौन रहा ।

देवी चन्द्रसेना आर्य सुशर्मा के पास एक आसन पर बैठ गई। उसने विनोदा को संकेत दिया और तत्काल तीन दासियां वहां उपस्थित हो गईं।

देवी चन्द्रसेना ने एक फूलमाला कलाकार को पहना दी।

दुग्धपान के पश्चात् सुशर्मा ने कहा—'देवी ! मैं अभी आपको चित्र अर्पित करने के लिए आया हूं'''किन्तु चित्र को देखते समय यहां दूसरा कोई'''।'

'ओह !' कहकर चन्द्रसेना ने वहां खड़ी विनोदा से कहा—'तू बाहर जा, और इस बात का ध्यान रखना कि कोई अन्दर न आए।'

'जी !' कहकर विनोदा चली गई ।

आर्य सुशर्मा ने चित्र पर लपेटे हुए वस्त्र खंड को निकाला और चित्र को किस कोने से देखा जाए यह सोचते हुए चारों ओर देखा ।

चन्द्रसेना के तन में यह प्रश्न उभर रहा था कि उसका निरावरण चित्र कितना भव्य होगा? सौन्दर्य कितना मनमोहक होगा ? इसी विचार में डूबी हुई वह बोली—'आप चारों ओर क्या देख रहे हैं ?'

'चित्र बड़ा है। उसे कहां रखूं, यही सोच रहा हूं ।'

'तो आप मेरे शयनखंड में चलें।' कहकर चन्द्रसेना उठी और आर्य सुशर्मा उसके पीछे चित्र को साथ ले चल पड़ा ।

शयनखण्ड में जाने के पश्चात् सुशर्मा ने कहा—'देवी ! मैं आपके चित्र को आपके ही पलंग पर निरावृत करता हूं'''फिर आप इस पर कांच मंढा लेना।'

'क्या पलंग पर इसे ठीक प्रकार से देखा जा सकेगा ?' देवी ने पूछा।

'नहीं, फिर भी कुछ आभास तो होगा ही। यदि कोई फ्रेम हो तो अच्छा है। उसे दीवार के पास रखकर देखने से पूरा आनन्द देगा।'

तत्काल चन्द्रसेना ने विनोदा को पुकारा। वह दौड़ी-दौड़ी आयी। चन्द्रसेना ने कहा—'विनोदा ! कोई फ्रेम'''

बीच में ही सुशर्मा बोल पड़ा—'कोई आवश्यकता नहीं है। मैं चित्र को पकड़-कर खड़ा रहूंगा। आप दूर से उस चित्र का निरीक्षण करना। आप उस सामनेवाली दीवार के पास खड़ी रहें'''मैं इस दीवार के पास खड़ा रहूंगा'''क्योंकि यदि इसके माप का फ्रेम नहीं मिलेगा तो काम पूरा नहीं होगा।'

ऐसा ही हुआ ।

विनोदा तत्काल कक्ष से बाहर चली गई। चन्द्रसेना सामने की दीवार के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पास जाकर खड़ी हो गई। उसके नयनों में कलाकार की कलाकृति देखने की आतुरता क्रीड़ा कर रही थी।

सुशर्मा चित्र को लेकर चन्द्रसेना के पास गया। चित्र अभी कपड़े में लिपटा हुआ ही था। उसने चन्द्रसेना से कहा—'देवी ! चित्र देखने से पूर्व मैं आपसे एक प्रार्थना करना चाहता हूं कि मनुष्य शरीर का निरावरण स्वरूप देखकर अप्रसन्न हो जाता है, इसलिए…'

'मैं बिलकुल अप्रसन्न नहीं होऊंगी।'

'तो देखें !' यह कहते हुए सुशर्मा ने चित्र पर से कपड़े का आवरण हटाया और दोनों हाथों से उसके दोनों कोनों को पकड़कर निर्धारित दीवार के पास खड़ा हो गया।

और चित्र को देखते ही चन्द्रसेना चीख उठी। उसने दोनों हाथों से अपनी आंखें मूंद लीं। सुशर्मा ने हंसते हुए कहा—'देवी ! मैंने आपसे प्रार्थना की थी कि चित्र को देखकर आप उदास नहीं होंगी…।'

'नहीं, कलाकार ! यह दृश्य तो असह्य है…आप तत्काल चित्र को समेट दें। मैं ऐसा चित्र देखना नहीं चाहती।'

'देवी ! आप इसको एकाग्र होकर देखें… प्रथम क्षण में व्याकुल न बनें मैंने आपका निरावरण चित्रांकन किया है। आप देखें, आपके शरीर पर यौवन की रसमाधुरी अभिव्यक्त हो रही है…आपकी शय्या कितनी भव्य है ? आपके इस पलंग से भी चित्रांकित पलंग कितना रमणीय और मनमोहक है। आपकी काया का यह यथार्थ निरावृत स्वरूप है…मैंने आपको पहले ही कहा था कि क्षण-क्षण में परिवर्तित होने वाली यह चमड़ी भी एक आवरण है। इस चमड़ी के आवरण के पीछे छिपी हुई काया का यथार्थ दर्शन करने के लिए मुझे बहुत श्रम करना पड़ा है।'

चन्द्रसेना अभी तक अपनी दोनों हथेलियों से आंखों को बंद कर खडी थी। वह बोली—'चित्र को समेट लो।'

'काया का यथार्थ स्वरूप देखकर आप मन में इतनी अकुलाहट का अनुभव क्यों कर रही हैं ? याद रखें, यह चित्र नहीं, किन्तु आपके जीवन का एक बोधपाठ है। कितना ही रूप क्यों न हो, कितना ही सौष्ठव और सौन्दर्य क्यों न हो, वह केवल इस अस्थिपंजर को आवृत करने के लिए है। उनका और कोई प्रयोजन नहीं है।…आकर्षक और मोहक दीखने वाले इस शरीर का यही यथार्थ स्वरूप है। काया में प्राणों के मृदु स्पंदन होते हों अथवा मन के झंझावात उभरते हों, किन्तु काया के मूल स्वरूप को कोई नहीं मिटा सकता।'

'ओह !'

'एक बार दृष्टि उठाकर चित्र को देखें, देवी !…जो मनुष्य सत्य को नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सह सकता, वह केवल अंधकार का पुजारी बना रह सकता है। देखें...यह संसार का सर्वश्रेष्ठ चित्र है...कोई भी शल्य चिकित्सक यह स्वरूप नहीं बता सकता...कोई भी कामशास्त्री यह नग्न सत्य कह नहीं सकता...यह तथ्य तो केवल सर्वत्यागी महात्मा ही समझा सकते हैं...आप दृष्टि डालें चित्र पर...कृपा कर देखें...'

चन्द्रसेना ने प्रयत्नपूर्वक आंखें खोलीं...उसकी आंखों से केवल अकुलाहट ही नहीं झांक रही थी, भय भी साथ-साथ झांक रहा था।

चित्रकार ने दूर से ही भय की स्थिति को समझ लिया। वह बोला—'देवी ! जिस शरीर का मनुष्य क्षण-क्षण परिकर्म करता है, सजाता है, उस शरीर का, इस स्वरूप के अतिरिक्त; कोई यथार्थ स्वरूप नहीं है। मोह से मूढ़ मनुष्यों को यह नग्न सत्य अप्रिय लगता है। जिन व्यक्तियों का अज्ञान मिट चुका है और जिनका ज्ञानचक्षु उद्‌घाटित हो गया है, उनको यह नग्न सत्य एक दिशाबोध देता है। मेरे कथन में...।'

बीच में ही अत्यन्त दीन स्वर में चन्द्रसेना ने कहा—'चित्रकार ! मेरा ऐसा परिहास...मैंने आपका क्या बिगाड़ा था ? मेरे हृदय में आपके प्रति...'

'देवी ! मेरे प्रति आपके हृदय में सहज-सुलभ नारी का प्रेम जागृत हुआ था...मैं न अंधा हूं और न हृदयविहीन। किन्तु उस प्रेमभावना के कारण ही मैंने इस चित्रांकन में सफलता पायी है...मेरे मन में न उस दिन कोई अन्यथा-भाव था और न आज है...यह चित्र मैं आपको एक गरीब भाई के उपहार-स्वरूप अर्पित कर रहा हूं। आप इस उपहार को उपहास मानकर इसकी उपेक्षा न करें। मैंने अभी-अभी आपसे कहा था कि यह महान् चित्र दिशाबोध का सूत्र है। जिस दिन आप इस काया की माया से ऊब जाएंगी उस दिन यह चित्र आपको आश्वस्त करेगा...' कहकर चित्रकार ने अपना चित्र समेटना प्रारंभ किया।

चन्द्रसेना धीरे-धीरे चित्रकार के निकट आयी। उसके नयन सजल थे। वह मंद-मधुर स्वर में बोली—'आर्य सुशर्मा ! इस चित्रांकन की पृष्ठभूमि में रही हुई भावना को मैं समझ रही हूं...आप मुझे क्षमा करें...मैं आपकी इस भेंट को सहर्ष स्वीकार करती हूं और इसे जीवनभर संजोकर रखूंगी, यह विश्वास दिलाती हूं।' यह कहकर चन्द्रसेना आर्य सुशर्मा के चरणों में नत हो गई।

तत्काल सुशर्मा ने चन्द्रसेना के मस्तक पर हाथ रखते हुए कहा—'बहन ! मैं तुझे कभी नहीं भूलूंगा...मेरा अंतिम कथन यही है कि इस नश्वर काया को संसार के मोहरूपी अग्निकणों से कभी मत दागना।'

चन्द्रसेना खड़ी हुई। उसने सुशर्मा के हाथ में पकड़े चित्र को ले लिया और मस्तक पर चढ़ाते हुए कहा—'मैं आपकी शिक्षा कभी विस्मृत नहीं करूंगी...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्या अभी आप प्रस्थान करेंगे ?'

'हां।'

'किस ओर ?'

'मैं पृथ्वीस्थानपुर जा रहा हूं।'

'फिर कब लौटेंगे ?'

'इस ओर तो आना नहीं होगा। वहां से मैं अपने देश की ओर चला जाऊंगा।'

'आपका स्थायी निवास ?'

'इस चित्र के पीछे मैंने लिखा है—चातुर्मास के चार महीने तक मैं प्रवास नहीं करता। यदि मेरे योग्य कोई कार्य हो तो तुम संदेश भेज देना, मैं अवश्य आ जाऊंगा···भगिनी के आदेश का पालन करना भाई का कर्त्तय होता है।'

चन्द्रसेना प्रसन्न दृष्टि से चित्रकार को देखती रही।

चित्रकार वहां से प्रस्थान कर चला गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. चित्र-दर्शन

महान् वैज्ञानिक आचार्य पद्मसागर की साधना संपन्न हुई। उनको अपनी उपलब्धि पर अपार हर्ष हो रहा था। मनुष्य जब अपने ध्येय को पा लेता है, तब उसे अपूर्व तृप्ति की अनुभूति होती है।

आचार्य पद्मसागर के हर्ष का मुख्य कारण यह था कि युवराज महाबल-कुमार उनका उत्तर साधक था। उसकी निष्ठा और धैर्य अपूर्व था। महाबल-कुमार ने रात-दिन सजग रहकर आचार्य पद्मसागर की सिद्धि में सहयोग दिया था।

आचार्य पद्मसागर ने कष्टसाध्य मानी जाने वाली रूपपरावर्तिनी गुटिका का निर्माण किया था। इसके अतिरिक्त 'भूस्तरदर्शक' अंजन तथा द्रुतगति से गमन करने योग्य एक औषधि का भी निर्माण किया था। इनके साथ-साथ चार-पांच अन्य वस्तुएं भी बनाई थीं। आचार्य पद्मसागर अपने सभी कार्यों में सफल हुए थे। वे 'पवन-पादुका' बनाना चाहते थे, किन्तु उसके निर्माण में छह महीने का काल लगता था, इसलिए उसके निर्माण को भविष्य के लिए छोड़ दिया।

पवन-पादुका के निर्माण में विशेष प्रकार का काष्ठ प्रयुक्त होता था। वह काष्ठ केवल त्रिविष्टप अथया नेपाल के उत्तरीय भाग में ही उपलब्ध हो सकता था। इस काष्ठ के अतिरिक्त अन्य बीसों द्रव्य इसके निर्माण में आवश्यक थे··· इन सबकी संयुति छह मास पूर्व होनी असंभव थी, इसलिए अंतिम रात्रि में आचार्य ने युवराज से कहा—'वत्स! यदि तेरा सहयोग प्राप्त नहीं होता तो मैं अपनी सिद्धि नहीं कर पाता और इतनी बहुमूल्य और कष्टसाध्य वस्तुओं का निर्माण नहीं हो पाता···अब केवल एक वस्तु के निर्माण की इच्छा शेष है। उसके निर्माण में पूरे छह मास लगते हैं इसलिए उस कार्य को भविष्य के लिए छोड़ देता हूं।'

युवराज महाबल ने सहज ही प्रश्न करते हुए पूछा—'ऐसी कौन-सी वस्तु का निर्माण आप करना चाहते हैं?'

'पवन-पादुका।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'यह नाम तो मैंने कभी सुना ही नहीं। यह क्या वस्तु है ?'

आचार्य पद्मसागर ने महाबल के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा—'वत्स ! भारत के प्राचीन वैज्ञानिकों ने एक महाग्रन्थ रचा था। उसका नाम है 'विमान-शास्त्र'। इस ग्रन्थ में आकाश में उड़ने वाले छोटे-बड़े अनेक वाहनों के निर्माण का पूरा विवरण प्राप्त था। उसमें तीन प्रकार के विमानों का वर्णन है—यांत्रिक विमान, तांत्रिक विमान और योग-प्रभावक विमान। इनके अतिरिक्त अन्यान्य विमानों की निर्माण-विधि भी उस महान् ग्रन्थ में उल्लिखित थी। उस ग्रन्थ में पवन-पादुकाओं के सहारे कोई भी व्यक्ति सहज रूप से आकाशचारी हो सकता है, व्योमगामी हो सकता है। मेरे गुरु से मुझे योगप्रभावी विमान-पादुका बनाने की विधि ज्ञात हुई थी, किन्तु आज तक मैं इस विधि को काम में नहीं ले सका और पादुका निर्माण नहीं कर सका।'

महाबल ने पूछा—'आपके पास वह महान् ग्रन्थ है ?'

'नहीं, वत्स ! पूर्वकाल में हिमगिरि के उस ओर रहने वाले राक्षसों के हाथ में उस ग्रन्थ का एक भाग आ गया था। उन राक्षसों ने उस ग्रन्थ में वर्णित विधि से अनेक विमान बनाए और जनता को भयाक्रान्त कर डाला। इसलिए त्रिविष्टप के महाराजा ने चीन के उन राक्षसों के साथ भयंकर युद्ध लड़ा और येन-केन-प्रकारेण उस विमानशास्त्र को नष्ट कर डाला। उसके कुछ खण्ड इधर-उधर आज भी उपलब्ध होते हैं···और पूरा विमानशास्त्र त्रिविष्टप के भंडार में आज भी सुरक्षित पड़ा है।'

महाबल आश्चर्यभरी दृष्टि से आचार्य की ओर देखता रहा। थोड़े क्षणों के मौन के पश्चात् आचार्य ने कहा—'वत्स ! मैं तुम्हारे शान्त, निर्भीक और उदात्त स्वभाव से अत्यन्त प्रभावित हुआ हूं। मैं आज तुम्हें रूपपरावर्तिनी गुटिका दे रहा हूं। इसका एक रहस्य है, वह भी मैं तुम्हें बता देता हूं'—कहकर आचार्य पद्मसागर ने रूपपरावर्तिनी गुटिका को निकाला और एक छोटी डिबिया में रखते हुए कहा—'जिस प्राणी के रूप में तुम बदलना चाहो, उस प्राणी के रूप की मन में अवधारणा कर इस गुटिका को मुंह में रख लेना। तत्काल तुम उस रूप में बदल जाओगे···पश्चात् गुटिका को मुंह से निकाल लेने पर भी तुम मूल रूप में नहीं आ पाओगे···इसलिए कच्ची और खट्टी केरी खाने से मूल रूप को पा लोगे।'

महाबल ने पूछा—'खट्टी केरी न खायी जाए तो क्या मूल रूप प्राप्त नहीं होता ?'

'प्राप्त हो सकता है। किन्तु छह मास तक वैसा नहीं हो सकता। इस गुटिका के अणुओं का प्रभाव छह महीनों तक रहता है। कच्ची केरी खा लेने से वह प्रभाव तत्काल नष्ट हो जाता है।' यह कहते हुए आचार्य पद्मसागर ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुटिका की डिबिया युवराज महाबल के हाथ में सौंप दी।'

युवराज बोला—'महात्मन्! आपकी सिद्धि का प्रयोग मैं कैसे कर सकता हूं? और ऐसी महान् वस्तु मेरे लिए क्या उपयोगी हो सकती है? आपकी ममता ही मेरे लिए सर्वश्रेष्ठ आशीर्वाद है।'

युवराज ने गुटिका की डिबिया आचार्य के हाथ में दे दी। आचार्य ने युवराज के मस्तक पर हाथ रखते हुए कहा—'वत्स! तुम इसे विनिमय मत समझना। तुमने मुझे सहयोग दिया, इसलिए मैं यह नहीं दे रहा हूं। यह मात्र एक वैज्ञानिक साधु का प्रसाद है। प्रसाद सदा स्वीकार्य होता है। वह कभी नकारा नहीं जा सकता। तुम्हारा जीवन बहुत लम्बा है। यह वस्तु तुम्हारे लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी। प्रजा के सुख-दुःख का लेखा-जोखा करने में यह रूपपरावर्तिनी गुटिका बहुत सहयोग करेगी। जीवन आपदाओं का मंदिर है। विपत्ति के बिना शक्ति की कसौटी नहीं होती। ऐसी स्थिति में कभी-कभार यह गुटिका तुम्हारे लिए बहुत बड़ा आशीर्वाद बन सकती है। इसके स्वीकार में कोई दोष नहीं है।'

आचार्य पद्मसागर के आग्रहभरे कथन के समक्ष युवराज नत हो गया और उसने गुटिका स्वीकार कर ली।

उसके बाद आचार्य ने युवराज को और भी अनेक तांत्रिक प्रयोग बताए, देए। दूसरे दिन दोनों ने पृथ्वीस्थानपुर की ओर प्रस्थान कर दिया। दोनों के अश्व तेजस्वी और आकीर्ण थे। मार्ग में अनेक दर्शनीय और पवित्र स्थल आए। आचार्य पद्मसागर उन स्थलों का परिचय युवराज को देते हुए बढ़ रहे थे। वे यथासमय पृथ्वीस्थानपुर पहुंच गए।

एकाकी पुत्र महाबल को सुरक्षित आया देखकर राजा-रानी अत्यन्त प्रसन्न हुए। सभी मंत्री और राजपुरुष हर्षित हुए।

आचार्य पद्मसागर ने महाराज सुरपाल के समक्ष अपनी उपलब्धियों का ब्यौरा रखा और युवराज की धृति और शक्ति की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

आचार्य पद्मसागर चार दिन पृथ्वीस्थानपुर में रुके और तदनन्तर वे राज-परिवार को आशीर्वाद देकर यात्रा के लिए निकल पड़े।

उसी दिन संध्या से पूर्व आर्य सुशर्मा ने नगरी में प्रवेश किया। उसने एक धर्मशाला में रहने का निश्चय किया था। किन्तु साथ में आए हुए राज-सैनिक ने राजभवन में जाने का आग्रह किया क्योंकि महाराज वीरधवल का यही संकेत था।

दोनों अपने अश्वों को ले राजभवन में गए।

राजभवन के रक्षकों ने दोनों का सत्कार किया और महाराज वीरधवल का पत्र महाराज सुरपाल तक पहुंचा दिया।

महाराज ने तत्काल दोनों को राजभवन के अतिथिगृह में ठहराया और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूसरे दिन प्रातः चित्रकार से मिलने का समय निश्चित किया।

दूसरे दिन का प्रातःकाल। आर्य सुशर्मा स्नान, पूजा-पाठ आदि से निवृत्त होकर राजभवन में जाने की तैयारी करने लगा। इतने में राजा का एक कर्मचारी उनको राजभवन में ले जाने के लिए आ पहुंचा। चित्रकार ने अपने साथ कुछ चित्र लिये और वह उस राजकर्मचारी के साथ चल पड़ा।

राजसभा अत्यन्त भव्य और सुन्दर थी। एक सिंहासन पर महाराज बैठे हुए थे। पास में एक सुन्दर युवक स्थित है और सामने एक वृद्ध पुरुष बैठा है। सुशर्मा ने देखा। उसने जान लिया कि महाराज के समक्ष बैठा हुआ वृद्ध पुरुष मंत्री है और पास में बैठा हुआ युवक राजकुमार है।

महाराज ने चित्रकार का स्वागत किया और एक स्वच्छ आसन पर बिठाते हुए कहा—'आपका परिचय मेरे मित्र महाराज वीरधवल के पत्र से प्राप्त हो चुका है। आप-जैसे महान् चित्रकार के आगमन से मेरा स्थान पवित्र हुआ है।'

सुशर्मा ने कहा—'कृपावतार! आप-जैसे सात्विक और प्रजावत्सल स्वामी के दर्शन कर मैं स्वयं धन्यता का अनुभव कर रहा हूं।'

औपचारिक वार्तालाप के पश्चात् महाराज सुरपाल ने चित्रांकन देखने की इच्छा व्यक्त की और उसके लिए दूसरे दिन का प्रथम प्रहर निश्चित हुआ। सभा की संयोजना का भार युवराज महाबलकुमार को सौंपा गया।

दूसरे दिन आर्य सुशर्मा ने अपने अनुपम चित्रांकन प्रस्तुत किए। सारा राज-परिवार उन सूक्ष्म चित्रों को देखकर मंत्रमुग्ध हो गया।

सुशर्मा ने एक विचित्र प्रयोग कर सारी राजसभा को विस्मयान्वित कर डाला। उसने सभा में से किसी एक व्यक्ति को पास में बुलाया। एक बार उसकी पूरी आकृति को देख लिया। फिर अपनी आंखों पर पट्टी बांधकर, तत्काल तूलिका से उसका चित्रांकन कर दिया। इसे देख सब चकित रह गए।

महाराज सुरपाल ने कहा—'कलाकार! आपकी सिद्धि अनुपम है। आपसे एक अनुरोध है कि आप हमारे राज-परिवार के सदस्यों का चित्रांकन करें।'

सुशर्मा ने तत्काल कहा—'आपकी आज्ञा की देरी है। मैं यह कार्य कर दूंगा।'

दूसरे दिन युवराज का जन्मदिवस था। पूरे नगरवासियों ने धूमधाम से उस दिवस को मनाया।

चित्रांकनों की प्रशंसा के कारण नगर के बड़े-बड़े व्यक्ति सुशर्मा से मिलने, वार्तालाप करने आने लगे। अत्यन्त व्यस्तता के कारण सुशर्मा आठ दिनों में केवल दो ही चित्र तैयार करने में समर्थ हुए। एक चित्र था महाराज सुरपाल का और दूसरा चित्र था महारानी पद्मावती का। दोनों चित्र सजीव जैसे लग रहे थे। इन्हें देख राजा-रानी अत्यन्त प्रसन्न हुए और सुशर्मा को बहुमूल्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पारितोषिक दिया।

आठ दिनों के निरन्तर संपर्क के कारण चित्रकार के हृदय में महाबलकुमार की छवि अंकित हो चुकी थी। उसने सोचा—कैसा सुन्दर, बलिष्ठ, विनीत और निरभिमानी। ऐसा युवक मैंने कहीं नहीं देखा। चन्द्रावती की राजकन्या मलयासुन्दरी के लिए यह महाबल बहुत योग्य वर है। यदि महाबल और मलयासुन्दरी जीवन-साथी होते हैं तो दोनों बहुत सुखमय दाम्पत्य जीवन जी सकते हैं। यह विचार निश्चित होने के पश्चात् एक दिन आर्य सुशर्मा महाबलकुमार का चित्रांकन करते-करते विचार करने लगा कि यदि युवराज यहां आते हैं तो मैं उन्हें मलयासुन्दरी का चित्र दिखाऊंगा। उस चित्र को देखकर युवराज के मन में क्या-क्या विचार उभरते हैं, उन्हें जानने का प्रयास करूंगा।

सुशर्मा के मन में यह विचार आया और इतने में ही उसने 'युवराज की जय हो' का घोष सुना। युवराज अतिथिगृह में आए थे।

यह जानकर सुशर्मा द्वार की ओर गया। इतने में ही युवराज कक्ष में आ गए। चित्रकार ने अपना साज-सामान समेटा और युवराज के लिए आसन की व्यवस्था कर कहा—'आयुष्मन् ! सुस्वागतम्, सुस्वागतम् ! आप दीर्घजीवी हैं। अभी-अभी मैंने आपकी स्मृति की थी।'

युवराज ने कहा—'आज मैं राज्यकार्य के लिए पार्श्ववर्ती प्रदेश में चला गया था। अति व्यस्तता के कारण आपसे मिलने नहीं आ सका। मन-ही-मन आपकी स्मृति करता ही रहा।'

सुशर्मा ने युवराज के सामने एक छोटा आसन ग्रहण किया। उसने कहा—'युवराज ! आज जब मैं आपका चित्रांकन कर रहा था, तब मेरे मन में एक पात्र की स्मृति उभर आयी थी।'

'पात्र ?'

'हां···जीवन-संगिनी !'

'ओह !' कहते हुए युवराज जोर से हंस पड़ा। उसने हंसते-हंसते कहा—'आर्य सुशर्मा !···अभी तक मेरे मन में कभी ऐसी कल्पना ही नहीं आयी।'

'सात्विक पुरुषों को ऐसी कल्पनाएं नहीं आतीं, किन्तु आपके जीवन को उज्ज्वल बनाने वाली और कुल में अवतंस-रूप शोभित होने वाली एक कन्या की स्मृति मेरे मानस-पटल पर नाच रही है।'

युवराज मौन रहा।

आर्य सुशर्मा तत्काल उठा। अपनी पेटी खोली और उसमें से राजकुमारी मलयासुन्दरी का चित्र ले आया। युवराज को दिखाते हुए सुशर्मा बोला—'युवराजश्री ! यह महाराजा वीरधवल की सुन्दरतम कन्या मलयासुन्दरी है। मैंने पूरे राज-परिवार के सदस्यों का चित्रांकन किया था। जब मैं मलयासुन्दरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का चित्र बना रहा था तब मन में यह लहर उठी कि इस भाग्यशालिनी कन्या का पति कौन होगा ? जो होगा, वह कोई विशिष्ट व्यक्ति ही होगा। यह सोचकर मैंने इस कन्या का एक छोटा चित्र बिना किसी को कहे, बिना किसी को दिखाए बनाया और उसे संजोकर अपने पास रख लिया। मैं सोचता हूं, इस कन्या के लिए आप ही योग्य वर हैं। मैंने देशाटन किया है, पर आप-जैसा वर उस कन्या के लिए दूसरा मैंने नहीं देखा।'

युवराज ने मुसकराते हुए कहा—'कलाकार ! आपकी भावना उत्तम है। यदि आपको कोई एतराज न हो तो यह चित्र···।'

बीच में ही सुशर्मा बोल पड़ा—'यह चित्र आप अपने पास रखें और चिन्तन करें···मेरा निश्चित अभिप्राय है कि आप ही मलयासुन्दरी के लिए योग्य वर हैं।'

मलयासुन्दरी का चित्र देखकर युवराज का हृदय भी झंकृत हो उठा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. जन्मदिन

आज राजकुमारी मलयासुन्दरी का जन्मदिन था···साथ ही साथ युवराज का भी जन्मदिन था। दोनों युगल भाई-बहन थे।

इस जन्मदिन के उपलक्ष में सारा नगर सजाया गया था। स्थान-स्थान पर तोरणद्वार बनाए गए थे। सभी लोग आनन्दित और हर्ष से उछल रहे थे।

राजकुमारी और युवराज की शोभायात्रा निकलने वाली थी। शोभायात्रा का पूरा मार्ग सजाया गया था। युवराज और राजकुमारी दोनों स्वर्ण-रथ में आरूढ हुए। वह रथ खुला था···उस रथ के पीछे राज-परिवार के सदस्य, मंत्रीगण तथा अन्यान्य राज्य अधिकारी तथा आगंतुक अतिथि अपने-अपने वाहनों में चल रहे थे। उनके पीछे नगरजन जय-जयकार करते हुए आ रहे थे। वातायनों और अन्य ऊंचे स्थानों पर खड़े स्त्री-पुरुष युवराज और राजकुमारी के रथों पर फूल बरसा रहे थे। अक्षत और सुगंधित द्रव्यों की वर्षा-सी हो रही थी।

राजकुमारी का लावण्य और विनम्रता तथा युवराज की सौम्यता से सारे दर्शक हतप्रभ हो रहे थे। कहीं नजर न लग जाए, इसलिए स्त्रियां 'थुत्कारा' डाल रही थीं।

लोग सत्ता के आगे झुकते हैं, पर प्रेम से नहीं, भय से। किन्तु जब लोग अपने व्यक्तियों के समक्ष झुकते हैं, तब प्रेम और समर्पण साकार होता है।

शोभायात्रा अपने स्थान पर पहुंची। लोगों ने उपहार देने प्रारंभ किए। उपहारों का ढेर लग गया। महाराज वीरधवल ने 'लक्ष्मीपुंज' नाम का एक अत्यन्त दिव्य रत्नहार अपनी कन्या को भेंट-स्वरूप देते हुए कहा—'पुत्री! यह मंगलमय लक्ष्मीपुंज हार देवाधिष्ठित है। इस हार में नौ ग्रहों को सदा प्रसन्न रखने के लिए भिन्न-भिन्न जाति के नौ रत्न हैं···इस हार के साथ तेरे माता-पिता का आशीर्वाद है···तू स्वस्थ रहे। तेरे संस्कार इस हार की भांति तेजोमय और स्वच्छ बने रहें। यह हार आज मैं तुझे अर्पित कर रहा हूं। इसे तू जीवन-भर संजोए रखना। इसे प्राणों से भी प्यारा मानना।'

मलया ने माता-पिता का चरण-स्पर्श किया और हार को पहन लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्काल राजपुरुषों ने जयघोष किया।

युवराज ने बहन को मलयज की माला पहनायी और बहन ने युवराज को पुष्प-मुकुट भेंट दिया।

उत्सव संपन्न हुआ। राजप्रासाद के विशाल मैदान में नृत्य का आयोजन था। अपार जन-समूह नृत्य देखने एकत्रित हुआ था।

वह नृत्य पूरा हो और देवी चन्द्रसेना का नृत्य प्रारंभ हो, इससे पूर्व हम महाराज वीरधवल के जीवन का संक्षिप्त, किन्तु महत्त्वपूर्ण वृत्तान्त जान लें।

जब महाराज वीरधवल राजगद्दी पर आसीन हुए, तब एक सुन्दर कन्या चंपकमाला से पाणिग्रहण किया था। चंपकमाला जितनी रूपवती थी, उतनी ही गुणवती थी। दोनों का दाम्पत्य जीवन आनन्दमय, सुखमय और प्रेमलुप्त होकर बीत रहा था। दोनों एक-दूसरे में समा गए थे और सुखी जीवन जी रहे थे। पास में राज्य था, वैभव था, हृदय में उदारता थी, धर्म के प्रति भक्ति थी, संस्कार थे। मनुष्य में प्राप्त होने वाले सारे गुण उनमें थे, परन्तु विवाह हुए दस वर्ष पूरे हो गए थे। कोई भी संतान नहीं थी। यह दुःख दोनों को पीड़ित कर रहा था। दोनों कर्मवाद को मानते थे। पर एक अभाव खटकता था। इस अभाव को पूरा करने के लिए, अतिआग्रहपूर्वक चंपकमाला ने वीरधवल को दूसरे विवाह के लिए राजी किया और कनकावती नाम की एक रूपवती कन्या से उनका दूसरा विवाह कराया।

उस विवाह को भी आज पांच वर्ष बीत चुके थे, पर कनकावती के कोई संतान की प्राप्ति नहीं हुई।

संतान-प्राप्ति के लिए राजा को पुनः विवाहसूत्र में बंधने के लिए चंपकमाला ने आग्रह किया। महाराजा वीरधवल ने स्पष्ट रूप से इनकार कर दिया। वैद्यों ने चंपकमाला और कनकावती का शारीरिक परीक्षण किया और राजा के समक्ष यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया कि रानी कनकावती वन्ध्यत्व के दोष से ग्रसित है, पर रानी चंपकमाला इस दोष से मुक्त है।

रानी चंपकमाला ने तब अपनी कुलदेवी मलयादेवी की आराधना प्रारंभ की।

आराधना-काल में अनेक दैविक उपसर्ग हुए। रानी चंपकमाला अपनी विधि में दृढ़ रही, तनिक भी चलित नहीं हुई। रानी की स्थिरता, और एकनिष्ठता को देखकर मलयादेवी प्रसन्न हुई और उसने दो सन्तान होने का वरदान दिया। अन्त में देवी ने उसके गले में दिव्यशक्ति से संपन्न लक्ष्मीपुंज हार पहनाया और अदृश्य हो गई।

रानी ने यह सारी बात राजा से कही और कुछ समय पश्चात् वह गर्भवती हो गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नौ मास नौ दिन पूरे होने पर रानी ने पहले पुत्र का प्रसव किया और तत्काल बाद ही पुत्री का प्रसव किया। राजा को दो सन्तानों की प्राप्ति हो गई। मलयादेवी की आराधना से यह वृक्ष पुष्पित और फलित हुआ, इसलिए पुत्र का नाम रखा मलयकुमार और पुत्री का नामकरण किया मलयासुन्दरी।

पुत्रोत्पत्ति की बात सुनकर सारा राजपरिवार आनन्दित और उल्लसित हुआ। पौरजन प्रसन्न और हर्षित हुए।

परन्तु···रानी कनकावती का हृदय ईर्ष्या की आग से भड़क उठा था।

विवाह के बाद ही वह समझ चुकी थी कि राजा का पूरा झुकाव चंपकमाला की ओर है। उसके साथ विवाहकरण तो केवल सन्तान की प्राप्ति के लिए हुआ है। प्रथम कुछ वर्षों तक वह एक आशा को संजोकर जी रही थी कि यदि सन्तान हो जाएगी तो वह चंपकमाला के वर्चस्व को कुचल कर नष्ट-भ्रष्ट कर देगी। वह पटरानी बनकर राजा की प्रिया हो जाएगी और तब चंपकमाला एक दासी के अतिरिक्त कुछ नहीं रह पाएगी।

परन्तु ऐसा नहीं हुआ और चंपकमाला के प्रति उभरी हुई ईर्ष्या कनकावती के हृदय में जोर से भभक उठी।

रानी कनकावती सुन्दर थी, चतुर थी और हावभाव करने में निपुण थी। इतना होने पर भी वह राजा को चंपकमाला से अलग नहीं कर सकी।

महाराज वीरधवल ने रानी कनकावती के प्रति कभी रोष या विराग प्रदर्शित नहीं किया। वे रानी कनकावती की सारी इच्छाएं पूरी करने का प्रयत्न करते, पर···

रानी कनकावती मन-ही-मन दुःखी हो रही थी। वह बाहर से प्रसन्न रहने का दिखावा करती और भीतर-ही-भीतर जल-भुनकर राख हो जाती थी। उसकी प्रिय परिचारिका थी सोमा। उसके समक्ष रानी यदाकदा अपना दुःख-दर्द कहती और वह सोमा रानी को आश्वासन देती।

दोनों बालक बढ़ने लगे।

रानी कनकवती वन्ध्यत्व दोष से ग्रसित है, यह बात यदि वैद्य नहीं कहते तो वह इन दोनों बालकों को येन-केन-प्रकारेण मरवा देती।

किन्तु वह लाचार थी। चंपकमाला अपने दोनों बच्चों को बहुत सावधानी-पूर्वक रखती थी।

दोनों बालक बड़े हुए। कलाचार्य के पास शिक्षा के लिए गए। कलाचार्य ने उन्हें उत्तम शिक्षण से परिपूर्ण किया।

और आज···

चौदह वर्ष पूरे हो गए। दोनों बालक पन्द्रहवें वर्ष में प्रवेश कर गए।···

नर्तकियों का नृत्य पूरा हुआ। इतने में ही दक्षिण भारत की कलारानी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चन्द्रसेना वहां आ पहुंची।

राजकुमारी मलयासुन्दरी ने चन्द्रसेना का रूप-सौन्दर्य देखा। उसके कटाक्ष कामदेव के हृदयवेधक शर से भी अधिक तेज थे। उसके बदन पर आभरणों की शोभा अपूर्व थी।

चन्द्रसेना ने शिववंदन नृत्य प्रारंभ किया। उस समय लग रहा था कि भक्तिरस मूर्त रूप लेकर वहां आ पहुंचा है और चन्द्रसेना के रोम-रोम से भक्तिरस का निर्झर प्रवाहित हो रहा है।

सारी पौरजनता एकटक उस मनोहारी नृत्य को देख रही थी। सबके नयन चन्द्रसेना के अवयवों की भाव-भंगिमा पर अठखेलियां कर रहे थे।

रात्रि का चौथा प्रहर प्रारंभ हुआ। जन्मदिन का उत्सव संपन्न हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९. आकुलता

दस दिन बीत गए। आर्य सुशर्मा ने राज-परिवार के चित्र अंकित किए और अपने कथन के अनुसार देवी चन्द्रसेना के नृत्य की एक छवि भी अंकित की। उसे चन्द्रसेना को भेज दिया।

युवराज महाबल आर्य सुशर्मा की कला पर मुग्ध हो चुका था। महाराज सुरपाल ने आर्य सुशर्मा की कला का मूल्यांकन किया और उसे प्रचुर धन देकर विदाई दी।

नगर के अनेक संभ्रान्त व्यक्तियों ने अपने-अपने चित्रांकन के लिए आर्य सुशर्मा से प्रार्थना की। किन्तु कलाकार ने किसी की प्रार्थना को स्वीकार नहीं किया। क्योंकि समय कम था और वह चातुर्मास प्रारंभ होने से पूर्व घर लौट जाना चाहता था। वह चातुर्मास-काल में कहीं गमनागमन नहीं करता था; एक ही स्थान पर रहकर धर्म की आराधना करता था।

आर्य सुशर्मा ने दूसरे प्रदेश के राजाओं से मिलने की इच्छाओं को स्थगित कर सीधा बंग देश की ओर प्रस्थान किया। युवराज महाबल कलाकार को विदाई देने लम्बे रास्ते तक साथ गया ओर नगरी की ओर लौटते समय कलाकार ने महाबल को छाती से लगाकर कहा—'युवराजश्री ! आपके पिता और महाराज वीरधवल—दोनों मित्र-राजा हैं। दोनों राज्यों के बीच प्रेम-संबंध है'''प्रत्येक परिस्थिति अनुकूल है'''आप कुमारी मलयासुन्दरी को प्राप्त करने का जरूर प्रयास करें''' आप मलयासुन्दरी को पाकर धन्य होंगे और वह आपको पाकर धन्य होगी।'

युवराज ने कहा—'मित्र ! मैं एक सप्ताह के भीतर चन्द्रावती जाने वाला हूं।'

'आपने महाराजश्री से इस विषय में कुछ कहा है ?'

'नहीं; प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी मेरे मंत्री उपहार लेकर वहां जाएंगे। मुझे भी साथ जाने की अनुमति प्राप्त हुई है।' युवराज ने कहा।

'तब तो कार्य अवश्य ही हो जाएगा'—कहते हुए सुशर्मा ने युवराज के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोनों हाथ मुट्ठी में लेकर दबाए।

दोनों अभिवादनपूर्वक अपने-अपने गन्तव्य की ओर चल पड़े।

युवराज अपने अश्व पर राजभवन में आ गया।

युवराज के हृदय पर मलयासुन्दरी की छवि अंकित हो चुकी थी। रात्रि के समय भी आर्य सुशर्मा द्वारा प्राप्त मलयासुन्दरी के चित्र को देख-देखकर युवराज उद्वेलित हो उठता था। युवराज के मन में यह निश्चय हो चुका था कि मलयासुन्दरी एक कुलीन राजकन्या है···रूप और लावण्य में बेजोड़ है··· आकृति से गुणवती होने का साक्ष्य है···नयन निर्मल और तेजस्वी हैं।

इन सभी प्रकार के विकल्पों में उसकी रातें बिना नींद के ही बीत जाती थीं।

यौवन को जैसे यौवन प्रिय होता है, वैसे ही संस्कार को संस्कार प्रिय होते हैं। इसीलिए महाबल चंद्रावती नगरी में जाकर राजकन्या मलयासुन्दरी को प्रत्यक्षतः देखना चाहता था। उसने सोचा था, यदि प्रसंग मिला तो स्वयं मलया से मिलकर उसके हृदय के भाव जान लूंगा।

सात दिन बीत गए।

दो मंत्रियों और अनेक सुभटों तथा परिचारकों को साथ ले युवराज महाबल ने चन्द्रावती नगरी की ओर प्रस्थान किया।

प्रस्थान करते समय उसने माता-पिता से यह आदेश प्राप्त कर लिया था कि वह वहां गुप्तवेश में रहेगा, क्योंकि यदि महाराज वीरधवल को ज्ञात हो जाए कि युवराज आए हैं तो आतिथ्य-आतिथ्य में ही उसके दिन पूरे हो जाएंगे और वह एक प्रतिबद्धता में आ जाएगा।

इसलिए युवराज ने अपना वेश बदला और गुप्तवेश में प्रस्थान कर दिया। उसने एक सेठ का वेश बना लिया था और साथ वाले मंत्रियों तथा अन्यान्य कर्मकरों को यह आदेश दिया था कि कोई भी उसका मूल परिचय न दे।

चार दिन के प्रवास के पश्चात् वे चन्द्रावती नगरी में पहुंचे। वीरधवल ने आगमन की बात सुनी। उन्होंने अपने मन्त्रियों को भेज आगन्तुक अतिथियों को अतिथिगृह में रहने का निर्देश दिया। स्नान आदि से निवृत्त होकर सभी महाराज वीरधवल से मिलने राजभवन में गए। महाराज वीरधवल ने उनका सत्कार किया, कुशल-क्षेम पूछा और अधिक से अधिक दिन रुकने का अनुरोध किया।

युवराज महाबल सामंतपुत्र के वेश में था, किन्तु उसके नयनों का तेज और आकृति का प्रभाव छिपा नहीं रह सका। महाराज वीरधवल बार-बार उसकी ओर देख रहे थे। चतुर मंत्री ने कहा, 'ये हमारे सामन्त के पुत्र हैं···शिक्षण प्राप्त करने साथ आए हैं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

युवराज महाबल ने मस्तक नमा कर प्रणाम किया। महाराज ने आशीर्वाद दिया। कुछ समय रुककर महाराज भीतर चले गए और तब महाबल आदि सभी अपने निवास-स्थान अतिथिगृह में आ गए।

वहां पहुंचने के पश्चात् युवराज ने मंत्री से कहा—'मैं नगर की शोभा देखने जा रहा हूं, रात्रि के प्रथम प्रहर बीतते-बीतते लौट आऊंगा।'

एक मंत्री ने कहा—'युवराजश्री!'

हंसते हुए महाबल ने बीच में ही कहा—'भूल गए?'

'ओह श्रीमान्, प्रवास का श्रम अभी मुक्त नहीं हुआ है···आप कल नगर की शोभा देखने जाएं तो अच्छा है।'

'युवक कभी श्रम से नहीं कतराता। आप सब निश्चिन्त रहें।' युवराज ने कहा और एक सेवक को साथ ले चन्द्रावती नगरी की ओर चल पड़ा।

महाबल मलयासुन्दरी को देखने के लिए आकुल-व्याकुल हो रहा था। वह राजभवन के वातायन की ओर देखते हुए मुख्य द्वार पर आया। वातायन शून्य थे। केवल भीतर में जल रहे रत्नदीप की ज्योति का मंद प्रकाश झरोखे की जाली से बाहर आ रहा था।

महाबल वातायन में किसी को न देखकर निराश होकर अतिथिगृह की ओर लौट रहा था। उसने एक बार पुनः उस वातायन की ओर देखा; किन्तु मन की प्यास बुझी नहीं।

महाबल ने सोचा—इतने विशाल भवन में राजकन्या किस खंड में है, कैसे जाना जा सकता है? इन्हीं विचारों की उधेड़बुन में वह अपने निवास-स्थान पर आ पहुंचा।

मंत्री ने पूछा—'आप इतने शीघ्र कैसे पधार गए?'

'मैं आधे रास्ते से ही लौट आया हूं। कल बाजार देखने जाऊंगा।' युवराज ने कहा।

दूसरे दिन।

युवराज स्नान आदि से निवृत्त होकर बैठा था। मंत्री भी तैयार हो चुके थे। सभी उपहार को लेकर महाराज वीरधवल की सभा में गए। उपहार भेंट कर उन्होंने अपने महाराज का संदेश पढ़ सुनाया। वीरधवल ने अत्यन्त प्रसन्नता व्यक्त की।

पूरा दिन इसी में बीत गया।

महाबल का मन मलयासुन्दरी की आतुरता में उद्विग्न हो रहा था। दूसरे सारे आतिथ्य उसे फीके लग रहे थे। उसने सोचा—राजकन्या के दर्शन कैसे होंगे? आर्य सुशर्मा ने जो चित्रांकन किया है; क्या वह सही है? क्या कलाकार ने उस छवि को उभारकर तो नहीं दिखाया है? उसके ये विकल्प हृदय में तूफान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मचा रहे थे।

एक स्त्री को देखने की इच्छा होना यौवन के अनुरूप है, किन्तु महाबल के हृदय की अभिलाषा भिन्न थी। वह विनम्र और सुशील था। वह स्त्री की ओर देखना कभी नहीं चाहता था। किन्तु आज जीवन-संगिनी का प्रश्न उभर चुका था। इसलिए वह परिणय-सूत्र में बंधने से पूर्व मिलना, देखना चाहता था।

भोजन आदि से निवृत्त होकर वह पुनः सेवक को साथ ले नगर देखने गया। वातायनों को देखा, पर अब भी वे जनहीन थे। वह उन वातायनों में खड़ी मलया को देखना चाहता था, पर वैसा नहीं हुआ।

दिन बीत गया।

रात आयी। दीपकों की जगमगाहट से सारा नगर ज्योतिर्मय बन गया। वह अतिथिगृह की वाटिका में इधर-उधर घूमने लगा। मन व्याकुल था। वहां से दृष्टिगोचर होने वाले राजभवन के वातायन को वह बार-बार देख रहा था।

पर…

अब क्या किया जाए?

ऐसी व्याकुलता असह्य होती है। यह बात न किसी को कही जा सकती है और न सही जा सकती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. नयनों की टकराहट

पूरे चार दिन बीत गए परन्तु एक भी अवसर ऐसा नहीं मिला जिसमें युवराज मलयासुन्दरी को देख पाते। इससे युवराज को अपना गुप्तवेश शल्य की भांति चुभने लगा। उसने सोचा—यदि मैं यहां युवराज के रूप में आता तो संभव है राजप्रासाद में रहते हुए मलया को देख पाता, मिल पाता, अब क्या किया जाए ?

प्रतिष्ठानपुर की ओर प्रस्थान करने का समय आ गया। मंत्रियों ने युवराज से प्रस्थान की बात कही। युवराज प्रस्थान का नाम सुनते ही खिन्न हो गया। उसको उदास देखकर एक मंत्री ने विचारमग्नता का कारण पूछा। युवराज ने कहा—'अभी तक तो मैंने नगर-भ्रमण किया ही नहीं है। यहां पहली बार आया हूं। आप सब चले जाएं। मैं पांच-सात दिन एक पांथशाला में रहकर घर लौट आऊंगा।'

मंत्री ने कहा—'यह कभी संभव नहीं है। हम आपको एक क्षण के लिए भी छोड़कर नहीं जा सकते। आपको हमारे साथ चलना होगा या फिर हम यहीं रुकेंगे।'

युवराज ने कहा—'कोई बात नहीं है। फिर कभी आऊंगा तो यहां निश्चिन्तता से नगर-दर्शन करूंगा। हमें कल यहां से प्रस्थान करना है।'

मध्याह्न के समय युवराज एक सेवक को साथ लेकर राजभवन की वाटिका में घूमने गया। उसके मन में एक ही आशा थी कि किसी न किसी वातायन में मलयासुन्दरी को देख लूं और चित्रांकन की यथार्थता को जान लूं।

महाबल उपवन में इधर-उधर घूमने लगा। जितने कोणों से वातायन को देख सकता था, उसने वातायनों को देखा। पर आशा फली नहीं। वह निराशा के वात्याचक्र में फंस गया।

महाबल को याद आया कि उसके पास रूपपरावर्तिनी गुटिका है···उसने देवी चंपकमाला को बराबर देखा है···देवी चंपकमाला महाराज वीरधवल की प्रिय रानी और मलया की माता है···राज दरबार में उस दिन उसे देखा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

था···मैं उसका रूप धारण कर राजभवन में प्रवेश करूं तो मन की आशा पूरी हो सकती है। अरे ! सामने चंपकमाला ही मिल जाए तो···कैसी विकट परिस्थिति होगी ?

दो क्षण सोच-विचार कर महाबल एक वृक्ष के नीचे खड़ा हो गया। उस उपवन में उस समय केवल दो-तीन माली कार्य कर रहे थे।

समय अनुकूल था···संयोग भी अनुकूल था। वातावरण मधुर था···मन ऊंची उड़ानें भर रहा था···और यदि राजकन्या की झांकी मात्र मिल जाए तो वहां आना सफल हो जाता और आगे का निर्णय भी होता।

महाबल ने अपने सेवक को पानी लाने भेजा। उसने कहा—'मैं थक गया हूं। यहां बैठकर कुछ विश्राम कर प्यास बुझा लूं। तू जल्दी से पानी ले आ।'

सेवक तत्काल अतिथि-गृह की ओर गया और महाबलकुमार वातायनों की ओर बार-बार झांकने लगा।

एक क्षण आया। जीवन की विद्युत् चमक उठी···एक वातायन में मलयासुन्दरी आयी और सहजतया आकाश की ओर देखने लगी।

महाबल एकटक उस सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी को निहारता रहा। उसने मन-ही-मन सोचा—'चित्रकार ने जो मुझे छवि दी थी, वह इसी सुन्दरी की है, किन्तु यह सुन्दरी तो उस चित्रांकनगत सुन्दरी से भी अधिक सुन्दर है···अधिक निर्मल और अधिक लावण्यवती है···इस रूप का अंकन कोई भी कलाकार पूर्ण रूप से नहीं कर सकता।

महाबल मुग्ध नेत्रों से मलयासुन्दरी को निहारता रहा। आसपास कौन है, स्वयं कहां है, इसका उसको भान भी नहीं रहा। भान कैसे हो ? मनुष्य के मन में जब एक रूप क्रीड़ा करने लगता है तब अन्यत्र कुछ भी दिखाई नहीं देता।

एक ऊंचे वृक्ष पर दो पक्षी क्रीड़ा कर रहे थे। मलयासुन्दरी उस क्रीड़ा को एकाग्रता से देख रही थी···अचानक उसे भान हुआ कि कोई मानव उसे देख रहा है···तत्काल उसने महाबल की ओर देखा। दोनों की दृष्टियां आपस में टकराईं···स्त्री-सुलभ लज्जा के कारण मलया की दृष्टि नीचे झुक गई···परन्तु वह वक्रदृष्टि से नीचे खड़े अति सुन्दर, सशक्त और अनजान युवक की ओर देखती रही।

तत्काल वह भीतर जाने को तैयार हुई···पर उसके चरण आगे नहीं बढ़े।

युग के समान विराट् दीखने वाले कुछ क्षण मौन में गुजर गए।

मलयासुन्दरी के हृदय-पटल पर महाबल का चित्र अंकित हो गया था। उसका प्रथम यौवन तरंगित हो चुका था···उसके शरीर में प्रकंपन की रेखाएं खचित हो गई थीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थोड़े क्षण और बीते। महाबल स्थिर दृष्टि से मलया को पी रहा था। और मलया भी इस अपरिचित नवयुवक की दृष्टि के स्पर्श का अनुभव कर रही थी।

मलया ने सोचा—कौन है यह नवयुवक जो मुझे स्थिरदृष्टि से देख रहा है? क्या कोई पूर्वभव के प्रेम का साक्षात् हुआ है? क्या मेरे अस्पृष्ट हृदय का यह पहला स्पर्श किसी भावी का सूचक है?

मलयासुन्दरी इस होनहार और सुन्दर युवक का परिचय प्राप्त करने के लिए आकुल-व्याकुल हो रही थी। पर कैसे पूछा जाए? जीभ स्तब्ध हो चुकी थी···हृदय चंचल होने पर भी स्तब्ध हो गया था···युवक का परिचय कैसे पाया जाए?

यह प्रश्न मलया के मन को बार-बार छू रहा था। उसने महाबल की ओर पुनः देखा। दोनों की दृष्टियां पुनः मिलीं। एक अवाच्य काव्य निर्मित हो गया।

दूसरे ही क्षण मलया भीतर चली गई।

महाबल वज्राहत-सा हो गया। उसने सोचा, क्या पुनः दर्शन नहीं होंगे? ओह! मलया के बिना जीवन शून्य है, व्यर्थ है···क्या करूं? मलया से मिलना कैसे हो?

महाबल कुछ निर्णय करे, उससे पूर्व ही सेवक जल से भरा पात्र लेकर आ पहुंचा। उसने कहा—'श्रीमन्! जल···'

'ओह, तू कहां चला गया था?'

'आपने ही तो जल लाने के लिए भेजा था।'

'हूं!' कहते हुए महाबल ने जलपात्र लिया, दो-चार घूंट जल पीया और जलपात्र देते हुए सेवक से कहा—'जा, मैं अभी अतिथिगृह में आता हूं।'

'जी।' कहकर सेवक नतमस्तक हो चला गया।

उसी क्षण मलयासुन्दरी पुनः झरोखे में आयी और लज्जा के भार से मंथर बनी हुई अपनी दृष्टि युवक पर स्थिर की।

महाबल ने प्रेमभरी दृष्टि से मलया को देखा। तीसरी बार दोनों की दृष्टि टकरायी। राजकन्या महाबल की ओर कुछ फेंककर तत्काल अन्दर चली गई।

महाबल ने देखा, एक पत्र नीचे फेंका गया था। महाबल ने उस पत्र को उठाया। वह ताड़पत्र का एक टुकड़ा था। उस पर कुंकुम से सुन्दर अक्षर लिखे हुए थे।

सामने से दो माली इसी ओर आ रहे थे। महाबल तत्काल उस पत्र को छिपा एक ओर चला गया। दोनों माली बातें करते-करते दूसरी ओर चले गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल ने पुनः वातायन की ओर देखा। झरोखे के द्वार बन्द हो चुके थे। महाबल ने सोचा, अब मलया यहां नहीं आएगी। उसने ताड़पत्र की ओर देखा। उस पर दो श्लोक लिखे हुए थे।

दोनों श्लोक पढ़कर महाबल बहुत प्रसन्न हुआ। इन श्लोकों के द्वारा मलया ने पूछा था—'युवक! तुम कौन हो? तुम्हारा निवास कहां है और तुम्हारा नाम क्या है? मुझे इन प्रश्नों का उत्तर दो। तुमने मेरे मन का अपहरण कर डाला है। मैं महाराज वीरधवल की कन्या मलयासुन्दरी हूं। तुम्हारे हृदय के साथ मेरा हृदय संबद्ध हो गया है।'

महाबल ने सोचा, मलयासुन्दरी केवल रूप और लावण्य की ही अधिष्ठात्री नहीं है, वह पंडित भी है। उसने अपना परिचय दे डाला और साथ ही साथ हृदयतंत्री के झंकृत तारों का संगीत भी सुना डाला। पर मैं इस पत्र का उत्तर कैसे दूं?

कुमार ने पुनः वातावरण की ओर देखा। उसके मन में आशा की एक लहर दौड़ गई। उसने सोचा—मलयासुन्दरी के कक्ष में जाया जा सकता है। निकट के वृक्ष पर चढ़कर यदि प्रयत्न करूं तो वातायन में पहुंचा जा सकता है।

महाबल योजना बनाने में व्यस्त था। उसे न भूख सता रही थी और न प्यास। उसे किसी भी परिस्थिति का भान ही नहीं था।

इतने में ही उसके कानों में परिचित शब्द सुनाई दिए। उसने ध्वनि के मार्ग की ओर देखा। एक मंत्री उसे ढूंढ़ते-ढूंढ़ते वहां आ पहुंचा। मंत्री ने कहा—'श्रीमन्! चलें, भोजन का समय हो गया है।'

महाबल बोला—'आज भूख नहीं है, मंत्रीवर! देखा, यह उपवन कितना सुन्दर है! मैं तो यहां घूमते-घूमते तृप्त नहीं हो पाया हूं। फिर भी निवास-स्थान पर तो चलना ही होगा।'

अतिथिगृह में जाने के पश्चात् महाबल भोजन करने बैठा। पर उसका मन उद्वेलित था। मंत्री ने आकृति से मन की आकुलता को पहचानकर पूछा—'श्रीमन्! क्या आज आप अस्वस्थ हैं?'

'मंत्रीवर्य! कोई अस्वस्थता नहीं है। आज के उपवन ने मेरा मन मोह लिया है। उस उपवन में जो वृक्ष हैं, वैसे वृक्ष हमारे उपवन में कहां हैं?' युवराज ने मन की आग को छिपाते हुए कहा।

मंत्री आश्वस्त हुए।

रात्रि का प्रथम प्रहर बीत गया। युवराज शयनखंड में चला गया। उसने मलया से मिलने की योजना बना ली थी कि रात्रि के दूसरे प्रहर के अंत में उपवन में जाकर, एक वृक्ष पर चढ़कर, वातायन में प्रवेश करूंगा और वहां से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलयासुन्दरी के कक्ष में चला जाऊंगा।

इस प्रकार मिलना उचित नहीं था…पर दूसरा कोई उपाय नहीं था।

वह शय्या पर सो गया। सब निद्राधीन हो गए। वह मध्यरात्रि की प्रतीक्षा करने लगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११. महारानी के खंड में

सभी गहरी नींद में सो रहे थे। परन्तु युवराज उन्निद्र थे। उनकी पलकों में नींद आ ही नहीं रही थी।

रात का पहला प्रहर बीत गया। उसने देखा, सब गहरी नींद सो रहे हैं। वह दूसरे प्रहर के अंत की प्रतीक्षा कर रहा था। वह भी समय आ गया। वह धीरे से शय्या पर से उठा; शय्या को छोड़, कपड़े ठीक किए···रूपपरावर्तिनी गुटिका का कोई उपयोग हो सकता है; यह सोचकर उसने गुटिका को एक कपड़े में लपेटकर कमर में बांध लिया।

वह नीचे उतरा।

राजा के दो प्रहरी अतिथिगृह के द्वार पर बैठे थे···और नींद ले रहे थे।

वह प्रांगण के बाहर निकला। इधर-उधर देखा। कोई राही दृष्टिगत नहीं हुआ।

वातावरण अत्यन्त शान्त और नीरव था। उपवन के वृक्ष ऊंचे, विशाल और सघन थे। कोई देख सके वैसी आशंका नहीं थी। महाबल धीरे-धीरे कदम बढ़ाता हुआ राजभवन के पिछवाड़े पहुंचा।

वह पूर्ण सावधान था···क्योंकि नीरव रात्रि में राजभवन की ओर जाना और वह भी राजकुमारी के आवास की ओर जाना, किसी भी दृष्टि से उचित नहीं था। महान् अपराध था। पर महाबल के सामने इसके अतिरिक्त कोई उपाय था ही नहीं। वह अनेक संकल्प-विकल्पों में उलझता-सुलझता हुआ आगे बढ़ रहा था। वह एक स्थान पर आकर रुका।

एक वृक्ष जो वातायन तक पहुंचाने में उपयुक्त था, उसके पास आया···उस समय एक ही झरोखे में दीपक की ज्योति जल रही थी। क्या राजकन्या जाग रही है? क्या उसने यह कल्पना की होगी कि मैं येन-केन उपाय से मिलने के लिए आऊंगा?

चारों ओर देखते हुए कुमार महाबल ने अपने जूते उतारे, कमर में उन्हें खोसा और वेग के साथ, सर-सर करता हुआ वृक्ष पर चढ़ गया। परन्तु जिस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वातायन में वह उतरा, वह वातायन मलयासुन्दरी का नहीं था, वह था रानी कनकावती का।

एक ओर अंधकार था। झरोखे का द्वार खुला था। मंद प्रकाश की रश्मियां बाहर तक आ रही थीं। उसने वातायन के एक कोने में खड़े रहकर उपवन के चारों ओर देखा। उसने निश्चय कर लिया कि वृक्ष पर चढ़ते और वातायन में उतरते हुए उसको किसी ने नहीं देखा है। द्वार खुला है, पर अंदर कैसे जाए?··· यदि अकस्मात् राजकन्या हड़बड़ाकर उठ खड़ी हो तो क्या होगा? राजकन्या के साथ कोई दासी हो या सखी हो और वह अपरिचित मुझे देखकर चिल्लाए तो क्या होगा? प्रकाश मधुर है···वातावरण शान्त और सरस है···राजकुमारी जागृत तो नहीं है? वह क्यों जागे? मैंने आने का संकेत तो दिया ही नहीं था।··· नहीं-नहीं, वह बहुत निपुण और बुद्धिशालिनी है···मैं आ पहुंचूंगा, यह कल्पना उसने अवश्य ही की होगी।

एक ओर पर्यंक पर रानी कनकावती अर्द्ध निन्द्रा में सो रही थी। उसने वृक्ष की शाखा का खड़-खड़ शब्द सुना और उसकी आंखें खुल गईं।

रानी कनकावती सुन्दर थी। उसका आयुष्य पैंतीस वर्ष का था। फिर भी उसका सौन्दर्य और लावण्य अपूर्व था, मनमोहक था। यदि उसमें ईर्ष्या और क्रोध नहीं होता तो उसका चेहरा और अधिक देदीप्यमान होता। पर इन दोनों दूषणों ने उसके सौष्ठव को हानि पहुंचायी थी।

रानी कनकावती निःसन्तान थी और वैद्यों ने उसका परीक्षण कर वन्ध्या होने की बात कही थी। रानी ने इसे स्वीकार भी किया था, फिर भी उसमें कामवासना की उत्तेजना निरन्तर बनी रहती थी। प्रिय-मिलन की आशा से वह सदा भरी रहती थी। महाराज वीरधवल अधिकतया रानी चंपकमाला के महलों में ही रहते थे। यहां यदा-कदा आ जाते थे।

जिसके वन्ध्यत्व होता है, उसमें कामवासना का उभार भी अधिक होता है। यह कामशास्त्र का एक सूत्र है। यह सच है या झूठ, इस विवाद में हम न पड़ें, पर इतना निश्चित है कि रानी कनकावती काम-भावना से दृप्त थी और वह प्रतिदिन महाराजा की प्रतीक्षा करती रहती थी। वह रात्रि में कौशेय का अत्यन्त मुलायम वस्त्र पहनकर सोती थी। इसके अतिरिक्त वह अंगराग, आभूषण और यौवन को उद्दीप्त करने वाली सामग्री से लदी रहती थी।

कनवावती ने वातायन की ओर देखा। उसको एक छाया-सी दृष्टिगत हुई। उसने सोचा, यह क्या? कोई भ्रम तो नहीं है? वृक्ष की शाखा की छाया इस ओर कभी नहीं पड़ती···फिर यह क्या है?

रानी की नींद उड़ गई···मन में जिज्ञासाएं उभरीं···पर वह शय्या से उठी नहीं, वहीं सोयी रही।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसका यौवन और शरीर मद भरे थे। एक तो वह राजरानी, दूसरा उत्तम रूप, तीसरा मदमाता यौवन और चौथा अतृप्त मन···

वातायन में छिपे हुए महाबल ने कक्ष में जाने के लिए चरण बढ़ाए। उसने कक्ष के द्वार पर रुककर कक्ष के चारों ओर देखा।

उस कक्ष में कोई दासी नहीं थी, केवल रानी एक पलंग पर सो रही थी···क्या यही मलया है? प्रकाश पूरे कक्ष को नहला रहा था। पलंग पर सीधा प्रकाश न पड़े, इसलिए कुछ आवरण रखा हुआ था। इसलिए पलंग पर सोने वाले की आकृति पूर्ण रूप से नहीं दीख रही थी। पलंग पर से लटकते हुए उत्तरीय के कोण से उसका रंग गुलाबी है, ऐसा अनुमान लग रहा था। आज मलया ने भी गुलाबी उत्तरीय धारण कर रखा था।

रानी कनकावती स्पष्ट रूप से इस युवक को देख रही थी। सुन्दर आकृति, तेजस्वी नयन, बलिष्ठ काया···कौन होगा यह? कोई गांधर्व तो नहीं आ गया है? कोई आकाशगामी देव तो नहीं आ गया है?

महाबल ने पूर्ण धृति के साथ कक्ष में प्रवेश किया। रानी कनकावती ने उसे पास से देखा। उसको देखते ही उसकी अतृप्त वासना जाग उठी। ओह! ऐसा सुन्दर युवक! ऐसी मीठी और शान्त रात्रि! यह तो कामदेव से भी सुन्दर है।

महाबल डरता हुआ दो कदम आगे बढ़ा और तत्काल रानी कनकावती अपनी शय्या से उठी और मुग्ध नयनों से उसकी ओर देखती हुई बोली—'आओ, मेरी आशा के साथी, आओ। यौवन यौवन का अभिनंदन करता है।'

महाबल चौंका। वह वहीं खड़ा रह गया। उसने देखा कि यह सुन्दरी मलया नहीं है।···यह कोई अन्य नारी है···राजा की रानी तो नहीं है? मलया की कोई सखी तो नहीं है? नहीं···नहीं···इस स्त्री का शरीर बता रहा है कि यह विवाहिता है।

युवराज को विचारमग्न देखकर रानी कनकावती पलंग से नीचे उतरी। उसके कंचुली बंध से उत्तरीय खिसक गया। उसके उन्नत उरोज कामकुम्भ के सदृश लग रहे थे। रानी बोली—'प्रियतम! आशंकित मत हो। मैं तुम्हारे पर अपना यौवन न्योछावर करती हूं। मैं हृदय से भावभीना स्वागत करती हूं। भय को त्याग कर आओ, बैठो। यहां प्रकृति की नीरवता और मस्ती है। आओ, आगे आओ।'

युवराज असमंजस में पड़ गया। वह विचारमग्न हो खड़ा रहा।

कनकावती और निकट आयी और महाबल का हाथ पकड़ते हुए बोली—'मैं सर्वस्व तुम्हारे चरणों में अर्पित करती हूं। आओ और मेरे हृदय का मधुर संगीत सुनकर तृप्ति का अनुभव करो।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल ने कहा—'देवी ! क्षमा करें ! मैं प्रयोजनवश यहां आया था, पर भूल से आपके खण्ड में आ गया ।'

'बहुत बार भूल भी जीवन का अविस्मरणीय क्षण बन जाती है । सामने दृष्टि करो ।'

'देवी···!' कहकर महाबल ने झटके से हाथ छुड़ाया ।

'युवक ! मैं तुम्हारे पर मुग्ध बनी हूं । क्या मेरे में सौन्दर्य नहीं है !' महाबल कनकावती के कामातुर नयनों को देखता रहा । वह मौन रहा । बोला नहीं ।

रानी ने कहा—'बोलो, क्या विचार किया है ?'

महाबल ने सोचा—अब मुझे युक्ति से काम लेना है । यदि मैं इस मददृप्त नारी का सीधा अपमान करता हूं तो सम्भव है यह चिल्लाकर मेरा अनिष्ट सम्पादित कर दे । यह राजभवन है···भवन के बाहर पहरेदार हैं, अन्यान्य कक्षों में दास-दासी हैं···मेरी क्या दशा होगी तब ?

सोच-समझकर उसने गम्भीर स्वर में कहा—'देवी ! आपके रूप में आकर्षण नहीं है, यह मैं नहीं समझता ।'

'तो ?'

'मैं जिस प्रयोजन से आया हूं, वह प्रयोजन जब तक पूरा नहीं हो जाता तब तक मेरा मन स्वस्थ नहीं रह सकता ।···आप जानती हैं कि अस्वस्थ मन से कैसा आनन्द···'

'यहां आने का प्रयोजन ?'

'मैं राजकन्या को एक सन्देश देने आया हूं ।'

'किसे ? मलया को ?'

'हां, देवी ! उसे सन्देश देना है, और जब तक वह सन्देश न दे दूं, तब तक मेरा मन स्वस्थ नहीं हो सकता ।'

'परन्तु सन्देश किसका ?'

'देवी ! एक दूत यह बात कैसे बता सकता है ! हां, उसे सन्देश देने के पश्चात् मैं आपको सारी बात बता दूंगा ।'

रानी विचारमग्न हो गई । वह महाबल के वाग्जाल में फंस गई । वह मृदु स्वर में बोली—'अच्छा, तो तुम मेरे पीछे-पीछे चलो । मैं तुम्हें मलया के कक्ष तक ले चलती हूं । वह ऊपर के खण्ड में रहती है ।'

'रास्ते में कोई···'

'रास्ते में कोई नहीं मिलेगा । महाराज और महारानी दूसरे खण्ड में रहते हैं, पर तुम्हें···'

'आज्ञा दो, देवी !'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'अपना कार्य सम्पन्न कर मेरे पास ही आना है।'

'हां, आप किसी प्रकार का संशय न करें...क्योंकि मेरे जीवन-मरण का प्रश्न आपके अधीन है...फिर आपका यौवन युवक के लिए वरदान है...'

रानी ने महाबल का हाथ भींचा। महाबल मन-ही-मन रानी के प्रति रुष्ट हो रहा था। पर उस समय...

रानी कनकावती अपने कक्ष से बाहर आयी। पीछे-पीछे महाबल कुमार चला।

बरामदा सूना पड़ा था। ऊपर की सोपान-वीथी सूनी पड़ी थी।

रानी कनकावती ऊपर के खण्ड में पहुंची। एक कक्ष के द्वार पर खड़ी रही और इशारे से सूचित किया...यह कक्ष मलया का है।

महाबल ने प्रसन्नता व्यक्त की।

रानी ने जाते-जाते कहा—'मैं प्रतीक्षा करूंगी...तुम सन्देश देकर शीघ्र...'

बीच में ही महाबल ने कहा—'मैं शीघ्र ही आपके पास आ पहुंचूंगा।'

'अच्छा' कहकर रानी कनकावती अपने कक्ष की ओर लौट गई...परन्तु वह कक्ष में नहीं गई। वहीं कुछ सोपानों के पास एक ओर खड़ी रह गई।

महाबल ने नमस्कार महामन्त्र का स्मरण किया। द्वार पर सहज धक्का मारा। द्वारा खुल गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. गुटिका का चमत्कार

कक्ष का द्वार खुलते ही महाबल ने क्षणभर के लिए बाहर खड़े रहकर चारों ओर देखा। कक्ष खाली पड़ा था। कहीं कोई नजर नहीं आया। उसने सोचा—मलया कहां होगी? क्या वह कहीं दूसरे खंड में तो नहीं चली गई है।

कक्ष में एक दीपक जल रहा था···दीपक पर जाली का एक आवरण पड़ा था, जिससे कि प्रकाश मन्द रहे, फैले नहीं। फिर भी अत्यन्त मन्द प्रकाश दीपक के चारों ओर बिखर रहा था।

महाबल वापस मुड़े उससे पूर्व ही उसकी दृष्टि वातायन की ओर पड़ी और उसे यह अनुमान हुआ कि वहां कोई व्यक्ति है।

प्रतिच्छाया से उसने यह अनुमान लगाया कि यह आकृति किसी स्त्री की है। संभव है, वह मलयासुन्दरी ही हो।

साहस के साथ वह कक्ष में प्रविष्ट हुआ और कक्ष के द्वार बन्द कर दिए। कपाट बन्द करते समय सहज आवाज हुई···वातायन की जालिका से बाहर देखने वाली मलया चौंकी···तत्काल उसने मुड़कर देखा···एक पुरुष की आकृति देख उसने पूछा—'कौन?'

'मैं आपके प्रश्नों का उत्तर देने आया हूं।'

मलयासुन्दरी का मन भय से आक्रान्त हो गया। उसने सोचा—मेरे कक्ष तक यह युवक कैसे आया? कौन है यह? क्या यह वही है; जिसको मैंने उपवन में कुछ समय पूर्व देखा था? अरे, यह कोई ठग तो नहीं है, मायावी और तांत्रिक तो नहीं है? यह रूप बदलकर तो नहीं आया है?

महाबल मलयासुन्दरी को एकटक देख रहा था। मलया मौन थी, पर उसके अन्तःकरण के भाव आकृति पर उभर रहे थे। महाबल ने आकृति को पढ़ा और कहा—'सुन्दरी! भयभीत होने की बात नहीं है। तुम अविचल रहो, अभय रहो। मैं तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देने के लिए ही इस नीरव रात्रि में अनेक आशंकाओं से घिरा हुआ यहां आया हूं।'

मलयासुन्दरी ने महाबल की मधुरवाणी का पान किया। उसका हृदय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आश्वस्त हुआ। वह बोली—'कुमार ! मैं आपका स्वागत करती हूं'—यह कहकर वह तत्काल दीपक के पास गई और उस पर पड़े जाली के आवरण को हटाकर दूर रख दिया। तत्काल सारा कक्ष प्रकाशमय हो गया।

महाबल ने देखा कि वह किसी राजकन्या के समक्ष नहीं, परन्तु प्रकाश की देवी के सामने खड़ा है। वह अवाक् खड़ा रहा।

मलयासुन्दरी बोली—'आप इस आसन पर बैठें···मेरा मन कह रहा था कि आप अवश्य आएंगे और इसीलिए मैं आपकी प्रतीक्षा में वातायन पर खड़ी थी।'

महाबल कुछ कहना चाहता था, परन्तु राजकन्या की निर्भयता को देख वह अवाक् बना रहा···वह केवल एकटक सुन्दरी को देख रहा था।

मलयासुन्दरी कक्ष के द्वार के पास गई और धीरे से किवाड़ों में सांकल लगा दी। उसने बाहर झांककर नहीं देखा, अन्यथा वहां खड़ी हुई अपनी सौतेली मां को वह अवश्य देख लेती।

ज्योंही महाबल मलया के कक्ष में प्रविष्ट हुआ और कपाट बन्द किए, त्योंही सोपान श्रेणी में छिपकर खड़ी हुई रानी कनकावती मलयासुन्दरी के कक्ष के द्वार पर आयी और कक्ष में कैसी बातें हो रही हैं, सुनने के लिए द्वार पर कान लगाकर खड़ी हो गई।

मलयासुन्दरी का हृदय हर्ष से उछल रहा था। उसमें आशा की ऊर्मियां नाच रही थीं। वह आगंतुक का स्वागत कर बहुत कुछ कहना चाहती थी, पर···

युवराज महाबल ने कहा—'राजकुमारी ! तुमको देखने के पश्चात् मुझे ऐसा लग रहा था कि जन्म-जन्मान्तरों का स्नेह-बंधन जागृत हुआ है। तुमने अपनी बात श्लोकों में कह दी थी। मैं असमंजस में था कि मैं अपना परिचय तुम तक कैसे पहुंचाऊं ? कोई दासी भी परिचित नहीं थी और मेरा अन्तःपुर में आना खतरे से खाली नहीं था।'

'मेरा प्रेम आपको खींच लाया है।' राजकुमारी ने कहा।

'यही बात है, पर एक बात समझ में नहीं आ रही है।'

'पहले आप अपना परिचय दें।' मृदुस्वर में मलया ने कहा।

'ओह ! मैं तो भूल ही गया। अपना परिचय देने के लिए ही तो यहां आया हूं। पृथ्वीस्थानपुर के महाराजा सूरपाल मेरे पिताश्री हैं···महारानी पद्मावती मेरी मातुश्री हैं···तुम्हारा स्वरूप देखकर तुमको पाने की इच्छा उभरी थी, किन्तु साक्षात्कार के बिना निर्णय करना उचित नहीं समझा। मंत्रियों के साथ यहां आया और तुम्हारे दर्शन हुए···'

'और···'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मुझे विश्वास हो गया कि यह स्नेह वर्तमान का नहीं, जन्म-जन्मान्तर का है।'

मलयासुन्दरी ने कहा—'मैंने आपको वातायन से देखा। मेरा हृदय स्नेह से भर गया। आपसे मिलने की अकुलाहट से मन भारी हो गया। हृदय में समर्पण का भाव जागा···मैं अन्दर आयी। एक ताड़पत्र पर हृदय के भाव अंकित किए और भावना के फूल आपके चरणों में चढ़ा दिए। प्रियतम! नारी एक ही पुरुष के प्रति अपना समर्पण करती है···यह एक बार ही होता है। मेरी प्रार्थना है कि आप मुझे चरणों की दासी मानें।'

'ओह, प्रिये! मैं आज धन्य हो गया···मैं जो जानना चाहता था वह सब तुम्हारे समर्पण भाव से जान गया हूं।'

द्वार के पास कान लगाकर खड़ी हुई रानी कनकावती सारी बातें ध्यान से सुन रही थी। उसने सोचा—यह युवक राजकुमारी का प्रेमी ही है। यह मुझे मिथ्या वचन देकर यहां आ गया है···।

महाबल ने अभी अपना नाम नहीं बताया था। मलयासुन्दरी ने पूछा—'आपका शुभ नाम···?'

बीच में ही युवराज बोला—'महाबल।'

'प्रियतम, एक बात समझ में नहीं आयी।'

'वह क्या?'

'आपने मेरा रूप देखकर यहां आने का निश्चय किया। यह बात पूरी समझ में नहीं आयी। क्या आपने मुझे स्वप्न में देखा था?'

'नहीं···एक कलाकार ने तुम्हारा चित्रांकन दिखाया था।' कहकर महाबल ने सुशर्मा की सारी बात बताई।

'तब तो वह महान् कलाकार ही अपने मिलन का निमित्त बना है। मैं उसको धन्यवाद देती हूं।'

महाबल ने कहा—'राजकुमारी! अब मुझे यहां से शीघ्र चले जाना है, क्योंकि कल प्रातःकाल हमें यहां से प्रस्थान कर पृथ्वीस्थानपुर जाना होगा।'

'प्रियवर! मैं नहीं जाने दूंगी। आपके दर्शनों के बिना मेरा हृदय चूर-चूर हो जाएगा। आप यहीं रहें।'

'प्रिये! मैं अभी यहां रुक नहीं सकता। मुझे यहां से जाना ही होगा।'

मलयासुन्दरी मौन रही। उसका हृदय भर आया। उसने सोचा, आज का संयोग आज ही वियोग में परिणत हो जाएगा?

महाबल आसन से उठा।

मलयासुन्दरी ने कहा—'शीघ्रता न करें। मुझे एक बात कहनी है। मैंने अपने मन से आपका वरण कर लिया है। आर्य कन्या एक ही बार वरण करती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। मेरा सर्वस्व आपके चरणों में अर्पित है'—कहकर वह उठी और अपने गले से दिव्य लक्ष्मीपुंज हार निकालवर महाबल को पहनाते हुए बोली—'यह लक्ष्मीपुंज हार दिव्य और शक्तिसंपन्न है···यह मैं आज आपको समर्पित करती हूं···एक कुंआरी कन्या इस प्रकार एक वरमाला ही पहना सकती है··· इस दिव्यहार के मिष से मैंने आपके गले में वरमाला पहनायी है।'

मलयासुन्दरी महाबल के चरणों में नत हो गई।

वह बोली—'प्राणेश ! मन से तो मैंने आपका वरण कर लिया। अब आप गांधर्वविधि से मेरा स्वीकार करें···मैं तत्काल आपके साथ चलने के लिए तैयार हूं···आप मुझे सहधर्मिणी के रूप में साथ ले जाएं।'

महाबल भावभरी नजरों से मलयासुन्दरी को देखते हुए बोला—'मलय ! यदि इस तरीके से मैं तुम्हें ले जाता हूं तो वह अनीति होगी। जैसे तुमने मेरे प्रति समर्पण किया है वैसे ही मैं तुम्हारे प्रति समर्पित होता हूं। अब मैं तुम्हारे माता-पिता की आज्ञा प्राप्त करने का उपाय सोचूंगा। तुम निश्चिन्त रहो। मैं अवश्य ही तुम्हें जीवन-संगिनी बनाऊंगा।'

बाहर द्वार पर खड़ी रानी कनकावती ने ये सारी बातें सुनीं। उसका मन क्रोध से भर गया। उसने सोचा, यह नौजवान मुझे धोखा देकर यहां आया है और मलयासुन्दरी से प्रेम का नाटक रच रहा है।

महाबल बोला—'प्रिये ! अब मुझे जाने की आज्ञा दो। समय कभी नहीं रुकता···वह निरन्तर गतिमान रहता है।'

'स्वामिन् ! आपको मैं आज्ञा कैसे दूं ? कैसे कहूं आप जाएं ? किन्तु आपके उत्तम विचारों का मैं स्वागत करती हूं। आप अपने कार्य में सफल हों और इस दासी का मस्तिष्क आपके हृदय में विश्राम करे, यही मेरी इच्छा है।'

इसी समय कक्ष के कपाटों पर बाहर से किसी ने सांकल लगा दी।

महाबल और राजकन्या दोनों चौंके।

उसी समय बाहर खड़ी रानी कनकावती का अट्टहास सुनाई दिया। वह बोली—'कपटी महाबल ! यदि तेरा यह कपटजाल मुझे ज्ञात हो जाता तो मैं तेरे पर कभी विश्वास नहीं करती···अब तुम भी मजा चख लेना···' फिर अट्टहास कर रानी धम-धम करती हुई चली गई।

मलयासुन्दरी की छाती धड़कने लगी—'अरे, यह तो मेरी अपर मां कनकावती है···किन्तु यह आपसे परिचित कब, कैसे हुई ? आपको कपटी कैसे कहा ?'

'प्रिये ! घबराने का कोई कारण नहीं है। तुमने मुझसे पूछा था कि मैं यहां कैसे पहुंचा, उस समय मैंने उत्तर नहीं दिया था। अब सुनो। मैंने तुम्हारे कक्ष के भरोसे तुम्हारी अपरमाता के कक्ष में प्रवेश कर दिया। मुझे देखकर वह मुग्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हो गई···मैंने सोचा—मैं भारी विपत्ति में फंस गया हूं। तुम्हारी अपर माता ने कामभोग की आकांक्षा व्यक्त की। मैंने उस परिस्थिति को टालने के लिए बहाना बनाया ओर बोला—'देवी ! मैं मलयासुन्दरी को सन्देश देकर तुम्हारे पास लौट आऊंगा।'

'ओह ! अब क्या होगा ? वह ईर्ष्या से भरी हुई है। वह अनर्थ करेगी। मैं आपके वध का निमित्त बनूंगी···ओह ! अब इसका क्या उपाय हो सकता है ?'

'प्रिये ! तुम निश्चिन्त रहो। मैं अभी इस वातायन के मार्ग से चला जाऊंगा।'

इधर रानी कनकावती तेजी से कदम बढ़ाती हुई महाराजा के शहनगृह की ओर गयी।

महाराजा का शयनगृह अलग था···महारानी चंपकमाला का शयनगृह भी एक तरफ था।

महाराजा वीरधवल निद्राधीन हो चुके थे। बाहर एक प्रहरी जागृत बैठा था। वह रानी कनकावती को देखकर चौंका। कनकावती ने महाराजा को जगाने की आज्ञा दी।

महाराजा जागृत हुए। कनकावती ने कहा—राजन् ! महाबल नाम का एक युवक कुमारी मलया के कक्ष में है और राजकन्या ने उसे वहां रोक रखा है।'

यह सुनते ही महाराजा वीरधवल का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। वह बोला—'प्रिये ! यह बात किसी से सुनकर कह रही हो या कैसे ? मलया तो बहुत संस्कारी है।'

'स्वामिन् ! मिथ्या बात कहने का प्रयोजन ही क्या है ? मैंने स्वयं देखा है। कुछ बातें स्वयं कानों से सुनी हैं। फिर मैंने बाहरसे सांकल लगायी और आपके पास चली आयी। आप पधारें और निगह कराएं। वहां जाने से पूर्व आप प्रासाद के चारों ओर प्रहरियों को भेज दें जिससे कि महाबल किसी भी रास्ते से निकल न सके।'

तत्काल महाराजा ने कंधे पर उत्तरीय रखा और प्रहरियों की व्यवस्था का भार महाप्रहरी को दे वहां से चले।

महाराजा का मन था कि रानी चंपकमाला को साथ ले लें, किन्तु पहले पूरी बात को देख लेने पर ही उसे बुलाने का निश्चय कर राजा वीरधवल रानी कनकावती के साथ चल पड़ा।

इधर मलयासुन्दरी अनिष्ट की आशंका से अकुलाहट का अनुभव कर रही थी।

महाबल ने उसे धैर्य बंधाते हुए कहा—'तुम निश्चिन्त रहो, जाओ, किवाड़

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की सांकल निकाल दो।'

'परन्तु आप···'

'ऐसा साहस करने वाला अपने बचाव का उपाय भी साथ लिये चलता है। मेरे पास रूपपरावर्तिनी गुटिका है। मैं अभी तुम्हारी माता चम्पकमाला का रूप धारण कर लेता हूं, क्योंकि मैंने उनको राजसभा में उस दिन देखा था।'

ऐसा कहकर महाबल ने कमर में बंधी गुटिका निकाल मुंह में रख ली··· मन में उसने देवी चंपकमाला के स्वरूप का चिन्तन किया।

मलयासुन्दरी ने कपाट के अन्दर की सांकल निकाल दी। उसके कानों में पांच-सात व्यक्तियों के पदचाप सुनायी दिए। वह तत्काल कुमार के पास आयी और कुमार के स्थान पर अपनी माता चंपकमाला को देखकर स्तब्ध रह गयी।

महाबल ने मुसकराते हुए कहा—'प्रिये! यह सब उस गुटिका का चमत्कार है···अब तुम ऐसे बैठ जाओ जैसे कुछ हुआ ही न हो···मैं सब संभाल लूंगा।'

मलयासुन्दरी गुटिका के अपूर्व चमत्कार से चमत्कृत होती हुई, सामने ढले एक आसन पर बैठ गई।

उसी समय कक्ष के किवाड़ों की बाहर की सांकल खुलने की आवाज आयी और तत्काल कक्ष का द्वार खुल गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. लक्ष्मीपुंज हार

राजकन्या मलया के कक्ष में पैर रखते ही राजा आश्चर्य में पड़ गया। उससे भी अधिक आश्चर्य हुआ रानी कनकावती को'''।

राजा को इस प्रकार आया जानकर चंपकमाला के रूप में बैठा हुआ महाबल तत्काल उठा, महारानी कनकावती की ओर देखते हुए बोला—'आओ बहन ! अभी अचानक कैसे आना हुआ है ? पश्चात् राजा की ओर देखकर कहा—'आप, ये सारे सैनिक, यह सब क्या नाटक है ?'

'नहीं, प्रिये ! कोई मुख्य बात नहीं है। जिसको तू बहन कहकर आदर देती है, उसके कारण मुझे इस मध्यरात्रि में यहां आना पड़ा है'''किन्तु इस मध्यरात्रि में मां-बेटी में क्या चर्चा हो रही है ?'

'स्वामिन् ! मुझे नींद नहीं आ रही थी, इसलिए मलया के पास आ गई। जब मां-बेटी एकान्त में होती हैं, तब अनेक बातें चल पड़ती हैं। किन्तु आपने जो कहा कि तेरी बहन के कारण यहां आना पड़ा है, यह बात समझ में नहीं आयी।'

'देवी ! तेरी बहन के हृदय में जो ईर्ष्या की ज्वाला धधक रही है, वह इतने वर्षों से स्पष्ट दिखाई नहीं दे रही थी। आज मुझे उसका साक्षात्कार हो गया है। यह कुछ क्षणों पूर्व मेरे पास आयी और कभी विश्वास न करने योग्य बात कही।'

रानी कनकावती की अवस्था विचित्र-सी हो रही थी। वह स्तब्ध थी। काटो तो खून नहीं, इतनी जड़ता से वह व्याप्त हो गई थी। वह समझ नहीं पा रही थी कि कक्ष के कपाट बाहर से बन्द थे, सांकल दी हुई थी, फिर महाबल के स्थान पर रानी चंपकमाला कहां से आ गई ?

महाराजा ने रानी कनकावती की ओर देखते हुए कहा—'मलया केवल चंपकमाला की ही पुत्री नहीं है, तेरी भी पुत्री है। उस पर कलंक लगाते हुए तुझे शर्म नहीं आयी ? बता, कहां है वह पुरुष ?' महाराजा ने कठोरता से कहा।

रानी कनकावती ने करुण स्वरों में कहा—'महाराज ! मैंने अपनी आंखों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से जो बात प्रत्यक्ष देखी थी; वह आपसे कही थी। मुझे भी आश्चर्य हो रहा है कि कुछ ही समय में यह सब अन्यथा कैसे हो गया ?'

'तूने बाहर से सांकल तो चढ़ा दी थी ?'

'यही मेरे लिए समझ में न आने वाली बात है…फिर भी एक बात की जांच कर सकते हैं।'

'क्या अभी भी तेरे मन का संशय नहीं मिटा ?' राजा ने प्रश्न किया।

'स्वामिन् ! आंखों देखी बात झूठी कैसे हो सकती है ?'

'आंखों देखा सच भी कभी-कभी भ्रम पैदा कर देता है। तू किस बात की जांच करने के लिए कह रही थी ?'

'महाराज ! आपने कुछ दिनों पूर्व ही राजकन्या को लक्ष्मीपुंज हार भेंट-स्वरूप दिया था, इसकी तो आपको स्मृति होगी ही ?'

'हां, याद है। तू कहना क्या चाहती है ?'

'मलया को पूछें, वह हार कहां है ?' कनकावती ने कहा।

तत्काल चंपकमाला के रूप में खड़े महाबल ने अपने गले से लक्ष्मीपुंज हार निकालते हुए कहा—'हार तो यह रहा, अभी-अभी मलया ने मुझे पहनाया था।'

रानी कनकावती के हृदय में भारी उथल-पुथल मची। उसके पैर कांपने लगे।

महाराजा ने भृकुटी तानते हुए कहा—'तू तत्काल अपने कक्ष में चली जा। फिर तू कभी मेरे समक्ष ऐसी बात लेकर मत आना। तेरा यह भयंकर अपराध है, किन्तु प्रथम अपराध होने के कारण मैं तुझे क्षमा करता हूं…किन्तु तेरी नीति क्या है, उसकी आज मुझे स्पष्ट प्रतीति हो गई है।'

तत्काल चंपकमाला ने कहा—'स्वामिनाथ ! आप कुपित न हों। मेरी बहन ने हित के लिए ही कहा होगा; पर दृष्टि-भ्रम के कारण ऐसा निर्णय हो गया है।'

'प्रिये ! तेरी यह उदारता ही दुष्टजनों की दुष्टता को प्रोत्साहित करती है।'

कनकावती हताश, निराश होकर वहां से खिसक गई।

महाराज भी अपने सैनिकों के साथ लौट गए।

मलयासुन्दरी जो अब तक अवाक् थी, जिसने एक शब्द भी नहीं कहा था, वह तत्काल आगे बढ़ी और उसने द्वार के सांकल लगा दी।

रानी कनकावती अपने कक्ष में पहुंच गई। वह किवाड़ बन्द कर गम्भीर विचार में पड़ गई। कुछ समय पूर्व घटित घटना के दृश्य एक-एक कर प्रत्यक्ष होने लगे…वह सुन्दर युवक वातायन से मेरे कक्ष में आया था…मैंने उससे सहवास की प्रार्थना की थी…वह पुनः लौटने के लिए वचनबद्ध होकर यहां से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चला था···मैंने ही उसे मलया का खण्ड बताया था···वह भीतर गया···मैंने बाहर खड़े रहकर सब-कुछ सुना···प्रेम की मीठी मनुहारें हो रही थीं··· मलयासुन्दरी ने लक्ष्मीपुंज हार वरमाला के रूप में युवक के गले में पहनाया था···फिर मैं बाहर से कपाट बन्द कर महाराजा के पास गई···यह सब यथार्थ और प्रत्यक्ष-दृष्टि होने पर भी युवक कहां अदृश्य हो गया? उसके स्थान पर चंपकमाला कहां से टपक पड़ी? ओह! मेरा कितना तिरस्कार हुआ? मेरी कितनी भर्त्सना हुई? मैं झूठी सिद्ध हुई। आंखों देखी, कानों सुनी बात झूठी हो गई। इसमें मलया का ही जाल लगता है। निश्चित ही मलयासुन्दरी मेरे पूर्वजन्म की शत्रु है। आज उसके प्रति मेरी शत्रुता का भाव प्रचण्ड रूप से उभर रहा है। एक मलया के कारण मुझे यह सब-कुछ सहना पड़ रहा है। अब मुझे किसी भी उपाय से मलया को मौत के घाट उतार देना चाहिए। मुझे विष देकर उसे मार डालना चाहिए। यही मेरे लिए हितकर है।

इस प्रकार का चिन्तन कनकावती के मन को भारी बना रहा था। जब व्यक्ति के अहं पर चोट होती है, उसका मान भंग होता है तब वेदना प्रचण्ड हो जाती है।

कनकावती अपनी शय्या पर सोने का प्रयास करने लगी। करवट बदलते-बदलते उसे नींद आ गई।

इधर मलयासुन्दरी ने जब द्वार बन्द किया तब महाबल तत्काल बोल उठा—'अब मैं मूलरूप में आना चाहता हूं।' महाबल ने गुटिका मुंह से निकाली और कुछ ही क्षणों में वह मूल रूप में आ गया।

वह बोला—'प्रिये! अब मुझे यहां से चले जाना चाहिए।'

मलयासुन्दरी बोली—'प्रिय! मन के कुतूहल को शान्त कर आप पधारें। मैं जानना चाहती हूं कि यह गुटिका आपको कहां से मिली?'

महाबल बोला—'तन्त्र-विज्ञान के एक आचार्य ने मुझे यह दी है। राजकुमारी! यह गुटिका आज मेरे पास नहीं होती तो हम दोनों बड़ी विपत्ति में फंस जाते।'

'यह तो अद्भुत चमत्कार है। क्या ऐसी कोई अन्य गुटिका भी आपके पास है?'

'हां, मेरे पास ऐसी गुटिका है। उस गुटिका को आम के पत्ते के रस में घिसकर उसका तिलक किया जाए तो स्त्री पुरुष बन सकता है और पुरुष स्त्री बन सकती है···किन्तु वह गुटिका आज मेरे साथ नहीं है।'

महाबल जाने की त्वरा कर रहा था और मलयासुन्दरी उसको रोकने का प्रयत्न कर रही थी।

मलयासुन्दरी ने कहा—'आप यहां से कैसे जाएंगे?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल वातायन के पास गया। इधर-उधर देखा, नीचे देखा और तत्काल आकर बोला—'प्रिये ! वातायन के मार्ग से मैं नीचे उतर जाऊंगा। सोपानवीथी से जाना खतरे से खाली नहीं है। यही निरापद मार्ग है। यदि रेशम की रस्सी मिल जाए तो सरलतापूर्वक नीचे उतरा जा सकता है।'

मलयासुन्दरी अपने कक्ष से बाहर गई। पास के खण्ड में दो दासियां जाग रही थीं। महाराजा तथा सैनिकों के आवागमन से उनकी नींद उचट गई थी।

राजकुमारी को देख वे उठीं और शान्त खड़ी हो गयीं। मलया ने पूछा—'अभी तक जाग रही हो, क्या नींद नहीं आती ?'

'राजकुमारी जी ! जब महाराजाश्री पधारे थे तब नींद उड़ गई।'

'अच्छा, मुझे रेशम की रस्सी ला दो।'

'अच्छा ! कहकर एक दासी भीतर गई और कौशेय की एक सुन्दर रज्जु मलया को दी।

मलयासुन्दरी बोली—'अब सो जाओ, जागने की आवश्यकता नहीं है···' यह कहकर मलया अपने खण्ड में आ गई।

महाबल ने रज्जु को देखकर प्रसन्नता व्यक्त की।

महाबल बोला—'प्रिये ! अब वियोग का क्षण उपस्थित हो गया है। धैर्य रखना। भयंकर विपत्ति में भी हताश मत होना। जब कभी मन में निराशा आए तब महामन्त्र नमस्कार का स्मरण करना। यह कभी मत भूलना।'

मलयासुन्दरी के नयन सजल हो गए।

महाबल वातायन के पास गया। वातायन के खम्भे से रज्जु का एक छोर बांधा और शेष को नीचे फेंक दिया। महाबल ने कहा—'प्रिये ! निश्चिन्त रहना। जब मैं नीचे उतर जाऊं तब रज्जु को खींच लेना।'

और जैसे कोई नट रज्जु पर नृत्य करता है, वैसे ही महाबल सहजतया रज्जु के सहारे नीचे उतर गया।

मलयासुन्दरी सजल नयनों से प्रियतम को देखती रही। अन्धकार तो था ही, फिर भी प्रियतम का अस्पष्ट प्रतिबिम्ब दीखता रहा। जब तक छाया के दर्शन होते रहे तब तक मलया वहां खड़ी रही और जब कुछ भी दीखना बन्द हो गया, तब उसने रज्जु को खींचा। खम्भे से उसे खोला और उचित प्रकार से उसे समेटकर एक ओर रख दिया।

इधर महाराजा वीरधवल अपने कक्ष में गए। उन्होंने सोचा, ऐसी शांत-मूर्ति और संस्कारित कन्या मलया पर आरोप लगाते समय क्या कनकावती का हृदय पत्थर बन गया था ? यदि कनकावती की यह ईर्ष्या घर कर गई तो वह भयंकर अनर्थ घटित कर सकती है। वह मलया के जीवन को खतरे में डाल सकती है। रूप के साथ अंगारे होते हैं, यह कल्पना कैसे की जा सकती है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कनकावती में रूप है, पर उसमें चन्द्रमा का अमृत नहीं है, ज्वालामुखी का लावा भरा हुआ है। अब क्या करूं? क्या कनकावती को यहां से अन्यत्र भेज दूं···पर चंपकमाला नहीं चाहेगी···

इस प्रकार अनेक चिन्तनों में उलझता-सुलझता हुआ नृप सोचने लगा—क्या अभी मैं चंपकमाला से मिलने के लिए उसके कक्ष में जाऊं···नहीं-नहीं, संभव है अभी तक वह मलया के कक्ष में ही होगी···मां-बेटी का एकान्त मिलन···

महाबल जब अतिथिगृह में पहुंचा तब रात्रि का चौथा प्रहर प्रारंभ हो चुका था।

सेवक जाग गए थे···प्रस्थान की तैयारी हो रही थी···दो रथ भी आ गए थे। युवराज को शयनगृह में न पाकर सारे उदास हो गए थे।

मंत्रियों ने सोचा, अचानक युवराज कहां चले गए? हम जब सोने गए थे, तब युवराजश्री सो रहे थे। अब उन्हें कहां ढूंढ़ें?

मंत्री चिन्ता कर ही रहे थे कि इतने में महाबल वहां पहुंच गया। उसने कहा—'नींद नहीं आ रही थी, इसलिए उपवन में जाकर एक वृक्ष के नीचे बैठ गया था और वहां कुछ झपकी आ गई थी।'

'अब आप शीघ्र तैयारी करें, हम सब आपकी चिन्ता में मृतवत् हो गए हैं।'

महाबल ने प्रस्थान की तैयारी की। लक्ष्मीपुंज हार को एक पेटी में रखा और उसे अपने पास ले लिया।

उषा की प्रथम किरण विश्व का अभिनंदन करे, उससे पूर्व ही सभी ने पृथ्वीस्थानपुर की ओर प्रस्थान कर दिया।

युवराज रथ में नहीं, अपने अश्व पर सवार था।

जाते-जाते उसने राजप्रासाद के झरोखों की ओर देखा, पर वृक्षों की ओट के कारण कुछ भी दिखाई नहीं दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४. स्वयंवर का निर्णय

जो बात विचित्र होती है, उसके प्रति आकर्षण होता है और जो बात गुप्त रखने की होती है, उसके स्वतः पंख आ जाते हैं।

प्रातःकाल हुआ।

कनकावती संकल्प-विकल्पों के झूले में झूलती हुई रात्रि के अंतिम प्रहर में निद्राधीन हुई थी। यही स्थिति महाराज वीरधवल की थी। मलयासुन्दरी को सोने का समय ही थोड़ा मिला था और वह ऊषा की किरणों से स्पृष्ट होकर जाग गई थी।

किन्तु रात्रि में घटित घटना की चर्चा दास-दासियों में व्यापक बन गई थी।

महाराज के साथ रात में आए हुए चारों सैनिकों ने रात में देखी हुई घटना अपने साथियों को सुनायी और वह बात एक कान से दूसरे कान तक पहुंचते-पहुंचते सारे राजभवन में व्याप गई थी।

महादेवी चंपकमाला भी प्रातःकाल जल्दी ही उठ गई और अपने नित्य-नियम के अनुसार सामायिक की आराधना करने बैठ गई।

सामायिक की आराधना संपन्न हुई, तब महारानी की मुख्य परिचारिका ने नमस्कार कर महारानी से कहा—'महादेवी ! आप रात्रि में राजकन्या के कक्ष में गईं और मुझे साथ में नहीं ले गईं।'

यह सुनकर चंपकमाला को आश्चर्य हुआ। उसने पूछा—'क्या हुआ था ?'

'अच्छा ! आप जानती हुई भी अनजान बन रही हैं। रात्रि में आप जब कुमारी मलया से बात कर रही थीं तब छोटी रानी ने महाराजा को जगाकर कहा था कि मलया पर-पुरुष से बातचीत कर रही है…तब महाराजा सैनिकों को साथ लेकर वहां गए…बाहर से दरवाजे पर सांकल थी। महाराजा ने कपाट खोले। उन्होंने अन्दर जाकर देखा कि मलयासुन्दरी आपके साथ बातचीत कर रही है। महाराजा छोटी रानी पर बहुत कुपित हुए…फिर छोटी रानी ने महाराजा से कहा कि आप कुमारी को पूछें कि वह लक्ष्मीपुंज हार कहां है ? तब आपने तत्काल अपने गले से हार निकालकर महाराज को दिखाया था…आप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदि छोटी रानी को नहीं बचाती तो न जाने महाराजा उसकी क्या अवस्था करते ? मलया परम पवित्र और निर्मल है—यह छोटी रानी ने क्यों नहीं जाना ?'

चंपकमाला को यह बात नयी लगी···किन्तु वह अत्यन्त चतुर और धैर्यवान थी। उसने गंभीर स्वर में कहा—'ऐसी बात की चर्चा ही नहीं करनी चाहिए। तू जा, मेरे स्नान की व्यवस्था कर।'

मुख्यदासी मस्तक नमाकर चली गई और महादेवी का मन प्रश्नों की परंपरा से भर गया। यह कैसे हुआ ? मैं तो वहां गई ही नहीं थी, फिर मुझे वहां कैसे देखा गया ? ऐसा चमत्कार तो हो ही नहीं सकता ? फिर यह सब कैसे हुआ ? अथवा दासियां कोई स्वप्न-कथा तो नहीं कह रही हैं ? मैं मलया को जानती हूं। बहन ने यह आरोप कैसे लगाया ? क्या यह बिलकुल मिथ्या है ? हां, मिथ्या ही तो होगा। मेरी बिटिया पवित्र है, गंगाजल-जैसी निर्मल है।

वह इन सारे प्रश्नों में उलझ रही थी। इतने में ही एक परिचारिका ने आकर निवेदन किया—'देवी ! महाराज पधार रहे हैं।'

महादेवी को आश्चर्य हुआ कि महाराज कभी इस वेला में नहीं आते··· आज कैसे ? अभी तक उन्होंने स्नान भी नहीं किया होगा ? इतने में ही महाराज खंड के द्वार पर आ गए।

महादेवी ने उठकर नमस्कार किया।

महाराजा ने कहा—'देवी ! रात्रि की घटना से मेरा मन अत्यन्त व्यथित हुआ है···कनक के हृदय में इतना विष भरा है, इसका मुझे अनुमान भी नहीं था। किन्तु तुम आधी रात की वेला में मलया के खंड में क्यों गई थी ?'

रानी ने मन-ही-मन सोचा, दासी के कथन में सत्यता है। वह बोली—'स्वामिन् ! किसी के मन में कितना ही विष हो···परन्तु वह हमारे परिवार का ही एक अंग है तो हमें उसके प्रति ममता रखनी होगी···आप एक माता के हृदय को जानते ही हैं···पुत्री के मन में क्या है, यह जानने का मन माता के अतिरिक्त किसे हो सकता है ? महाराज ! हमें अब एक चिंतन अवश्य ही कर लेना चाहिए।'

'कैसा चिंतन, प्रिये ?'

'मलया पन्द्रह वर्ष पूरे कर सोलहवें वर्ष में प्रवेश कर चुकी है···अब उसके विवाह का चिन्तन करना चाहिए।'

महाराज विचारमग्न हो गए। दो क्षण पश्चात् वे बोले—'प्रिये ! मलया के योग्य कोई राजकुमार मेरी दृष्टि में तो नहीं आ रहा है।'

'इसके बिना तो क्या यह अच्छा नहीं रहेगा कि हम मलया को अपने भाग्य का निर्णय करने की स्वतन्त्रता दे दें ?'

'मैं नहीं समझ सका···'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मलया का स्वयंवर रचा जाए। देश-विदेश के राजकुमारों को हम आमंत्रित करें और तब मलया अपने मनपसन्द राजकुमार के गले में वरमाला डाले।'

'ठीक है…इस विषय में मुझे मन्त्रियों से परामर्श करना होगा। मुझे लगता है कि रात्रि में मां-बेटी के बीच चर्चा का यही विषय रहा होगा!' कहकर महाराज हंसने लगे।

चंपकमाला मौन रही और मुसकराने लगी।

महाराजा स्नान आदि से निवृत्त होने के लिए वहां से चले गए।

चंपकमाला भी स्नानगृह की ओर गई पर वह रात्रि में घटित घटना को मलया से जानना चाहती थी। फिर उसने सोचा—ऐसा करने पर मलया का मन आहत हो सकता है, यह सोचकर चंपकमाला ने मलया से इस विषय में बात न करने का निश्चय किया।

रानी कनकावती का चित्त आहत-विहत हो चुका था। वह एक घायल सिंहनी की भांति आकुल-व्याकुल हो रही थी। उसने सोचा—मैंने सब कुछ आंखों से देखा था, फिर भी मुझे झूठी प्रमाणित होना पड़ा। क्या मायाजाल है, कुछ समझ में नहीं आता।

रानी कनकावती की प्रिय दासी सोमा ने सारी बात सुनी। उसने महादेवी के अपमान पर अपना रोष प्रकट किया। उसने कहा—'देवी! चंपकमाला और मलया ने मिल-जुलकर आपको अपमानित करने का षड्यन्त्र रचा है।'

'सोमा! तेरे कथन में मुझे कुछ तथ्य नजर आ रहा है। निश्चित ही मां-बेटी ने यह उपक्रम किया और मुझे महाराजा की दृष्टि में गिराने का प्रयत्न किया। वे अपने प्रयत्न में सफल रहीं। मुझे अब मेरे अपमान का बदला अवश्य लेना है! वह बदला कैसे लिया जाए, मात्र यह सोचना है'—रानी कनकावती ने कहा।

सोमा बोली—'महादेवी! आप निश्चिन्त रहें। आपका अपमान या तिरस्कार करने वाले के विनाश का उपाय मैं स्वयं निकाल लूंगी, किन्तु इस कार्य के लिए जल्दबाजी नहीं करनी है; धैर्य से कार्य करना है।'

कनकावती सोमा की ओर देखती रही। सोमा ने कहा—'देवी! अभी पन्द्रह दिनों तक आप ऐसी प्रसन्न मुद्रा में रहें, मानो कुछ घटित ही न हुआ हो। फिर हमें क्या करना है, वह मैं आपको बताऊंगी।'

कनकावती ने सोमा के हाथ को पकड़ते हुए कहा—'सोमा! तू मेरी दासी नहीं, प्रिय सखी है। यदि तू रात में यहां रहती तो तुझे तिरस्कार का विष नहीं पीना पड़ता।'

सोमा ने रानी को धैर्य बंधाया।

रानी स्नानागार में चली गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीन दिन बीत गए ।

एक दिन महाराजा ने सभी मंत्रियों को एकत्रित कर, मलया के स्वयंवर की बात कही और उचित विचारमंथन करने के लिए कहा।

स्वयंवर की बात सुनकर सभी मंत्री चिन्तन में पड़ गए । कुछ क्षणों के मौन के पश्चात् महामंत्री ने कहा—'महाराज ! आपका विचार उत्तम है, किसी स्वयंवर का आयोजन बहुत जोखिमपूर्ण होता है। कभी-कभी इससे युद्ध भी छिड़ जाते हैं और उससे स्थिति बिगड़ जाती है। अच्छा तो यह कि आप योग्य वर की खोज करें और फिर मलया का विवाह कर दें ।'

महाराजा वीरधवल और महारानी चंपकमाला—दोनों ने महामंत्री का कथन सुना। उनका मन स्वयंवर करने के पक्ष में ही था।

बहुत लंबे विचार-मंथन के पश्चात स्वयंवर रचने की बात तय हो गई। राजपुरोहित को मुहूर्त्त देखने का आदेश दिया।

दूसरे दिन…

राजपुरोहित ने स्वयंवर के लिए शुभ मुहूर्त्त महाराजा को बता दिया और स्वयंवर की घोषणा की तिथि भी बता दी।

इधर युवराज महाबल अपने नगर पृथ्वीस्थानपुर पहुंच गया। उसने महाराजा पिताश्री को प्रणाम किया और माता को प्रणाम करने राजप्रासाद में चला गया। माता पद्मावती को प्रणाम कर उसने लक्ष्मीपुंज हार माता के चरणों में अर्पित कर दिया।

माता ने पूछा—'पुत्र ! ऐसा दिव्य और मूल्यवान हार तुम्हें कहां से प्राप्त हुआ ?'

महाबल ने तत्काल एक असत्य बात कही—'मां ! चंद्रावती के युवराज के साथ मेरी मैत्री हो गई थी। मैत्री की स्मृति-स्वरूप उसने मुझे हार भेंट दिया है।'

माता ने महाबलकुमार को आशीर्वाद दिया और नमस्कार महामंत्र का स्मरण कर हार को पहन लिया।

परन्तु महाबल का चित्त अत्यधिक चंचल हो गया था। मलयासुन्दरी ने उसको वश में कर डाला था। मलयासुन्दरी को प्राप्त करने की बात वह माता-पिता से कैसे कहे, इसी विचार में कुछ दिन बीत गए।

महाराजा वीरधवल ने स्वयंवर की बात प्रचारित करा दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. निमंत्रण

स्वयंवर की बात चारों ओर फैल गई। एक दिन महाराजा वीरधवल अपने राज्य के महाबलाधिपति महानाम को बुला भेजा। अन्यान्य वरिष्ठ मंत्रीगण भी आ गए। महाराज ने कहा—'हमें ऐसी योजना बनानी है, जिससे स्वयंवर की सभा में किसी प्रकार का कलह न हो और राजकन्या को बलवान पति मिल जाए, इसलिए हमें बल-परीक्षा का प्रयोग रखना चाहिए।'

महाराजा ने पूछा—'बल-परीक्षा का प्रयोग ? समझा नहीं···'

'महाराज ! देवी सीता के स्वयंवर में धनुष्य-भंग से बल-परीक्षण किया गया था। देवी द्रौपदी के स्वयंवर में मत्स्यवेध से शक्ति-परीक्षण किया गया था। इसी प्रकार के किसी अन्य प्रयोग की यदि हम योजना करते हैं तो वह अच्छा रहेगा।'

महाराजा वीरधवल को महानाम का परामर्श उचित लगा। उन्होंने कहा—'महानाम ! तुम्हारा परामर्श क्षत्रियोचित है···बल-प्रयोग के लिए हमें कौन-सा प्रयोग प्रस्तुत करना होगा ?'

आर्य महानाम कुछ सोचकर बोला—'महाराज ! अपने शस्त्र-भंडार में वज्रसार नाम का एक अतिप्राचीन प्रचंड धनुष्य है। वह अनेक पीढ़ियों से शस्त्र-भंडार में है। ऐसा धनुष्य आज भारत में कहीं नहीं है। इसकी प्रत्यंचा को चढ़ा पाना सरल कार्य नहीं है···जिसकी भुजाओं में शक्ति छलकती है, जिसके हृदय में अपूर्व आत्म-विश्वास है और जिसमें यौवन अठखेलियां करता है, वही व्यक्ति इस महान् धनुष्य की प्रत्यंचा चढ़ा सकता है, दूसरा नहीं।'

'वाह-वाह ! बल-परीक्षण के लिए यह उत्तम योजना है।' महाराज ने प्रसन्न स्वरों में कहा।

इस प्रकार बल-परीक्षण की योजना निश्चित हो गई और विभिन्न राजाओं को योजना की रूपरेखा भेजने के लिए उसका प्रारूप तैयार कर लिया गया।

स्वयंवर के समाचार दूर-दूर के राजाओं तक पहुंचा दिए गए। सारे राज्य में जोर से तैयारियां होने लगीं। लोगों का मन कुतूहल से भर रहा था। सारा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजपरिवार मलया के स्वयंवर की बात से प्रसन्न था, और वह इसलिए कि मलया अपने मनपसन्द वर को चुन पाएगी, जिससे उसका मन समाहित और शान्त रहेगा।

पर···

रानी कनकावती का विष उसको व्यथित कर रहा था। वह अपने तिरस्कार को भूल नहीं पा रही थी। अन्यान्य लोग उसे भूल चुके थे, पर रानी कनकावती उसकी आग में झुलस रही थी। उसने सोमा को बुलाकर कहा—'सोमा! बाहरी आग को सहा जा सकता है, पर भीतरी आग को नहीं सहा जा सकता।'

सोमा बोली—'महादेवी! जल्दबाजी न करें। सब कुछ समय पर होगा।'

'सोमा! मैं यदि निश्चेष्ट बैठी रहूंगी तो कल स्वयंवर हो जाएगा, मलया ससुराल चली जाएगी और फिर मैं अपनी ही आग में जल मरूंगी।'

'महादेवी! मुझे ऐसा लगता है कि हमें कुछ समय तक और प्रतीक्षा करनी चाहिए। बिना अवसर के कार्य पूर्ण नहीं होता।'

'सोमा! यह सब मैं जानती हूं। तू एक काम कर। किसी विष-वैद्य से विष ला दे।'

'देवी! फिर क्या करेंगी?'

'जिसको देखकर मेरे मन की आग भभकती है, उसका मैं विनाश कर दूंगी।'

'महादेवी! कोई भी विष-वैद्य बिना परिचय के विष नहीं देगा और वह इस बात की नोंध रखेगा कि कौन कब विष ले गया है। और एक बात है कि राजकुमारी की मृत्यु से आग बुझेगी नहीं, वह और अधिक भड़केगी। अपमान का बदला इस प्रकार लेना चाहिए कि राजकुमारी के भाल पर कलंक का टीका निकले और वह जीवन भर उस कलंक की आग में झुलसती रहे। विष-प्रयोग की बात छिपी नहीं रहेगी और फिर जब सारा रहस्य खुलेगा तब क्या···?'

'तो क्या मैं निरन्तर जलती ही रहूं?'

'महादेवी! अंगारे को संजोए रखें। उसको फूंक न मारें। जब अवसर आएगा तब सब कुछ हो जाएगा।' सोमा ने कहा।

कनकावती ने सोमा की बात मान ली।

पन्द्रह दिन बीत गए। अब स्वयंवर के समारोह में केवल तीस दिन शेष रह गए थे।

स्वयंवर-मंडप की रचना हो चुकी थी। सारा नगर सजाया जा रहा था। आमंत्रित राजाओं के रहने के लिए अनेक गृह-प्रासाद संवारे जा रहे थे। अनेक चित्रकार लाये गए थे। स्थान-स्थान पर चित्रकला-वीथियों का निर्माण हो रहा था। मलया के लिए वस्त्र-आभूषण और अन्यान्य सामग्री दूर-दूर देशों से आ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चुकी थी।

महाराज वीरधवल ने दूर-दूर के राजाओं को निमंत्रण दे दिए थे। अंत में अपने परममित्र पृथ्वीस्थानपुर के राजा सुरपाल को संदेश अपने विशिष्ट दूत द्वारा भेजा और स्वयंवर में आने का भावभरा आग्रह किया। महाराज वीरधवल ने महाराजा सुरपाल से यह अनुरोध किया कि इस अवसर पर युवराज महाबल को अवश्य भेजें।

दूत ने शक्ति-परीक्षण का विस्तार से ब्यौरा प्रस्तुत किया और वहां उपस्थित होने का आग्रह किया।

दूत के शब्दों से सभा हर्षित हो उठी।

महाराजा सुरपाल ने महाबल की ओर देखकर कहा—'महाबल ! तैयार हो?'

'आपकी आज्ञा और आशीर्वाद से मैं आपकी कुल-परंपरा की मर्यादा को अक्षुण्ण रखूंगा।' महाबल ने कहा।

महाराजा ने दूत को पारितोषिक देकर विदाई दी।

दूत प्रणाम कर चला गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६. लाड़-प्यार की प्रतिमा

स्वयंवर के केवल सात दिन शेष थे।

युवराज महाबल दो दिन पश्चात् प्रस्थान करने वाले थे। तैयारियां हो रही थीं।

युवराज महाबल को विचित्र अनुभव होने लगा'''जब वह शय्या में सोता रहता तब उसे यह अनुभव होता कि कोई हाथ उसका स्पर्श कर रहा है अथवा कोई शयनकक्ष में घूम रहा है'''परन्तु उसे कुछ भी नहीं दीख रहा था। दो दिन बीते।

तीसरे दिन एक चमत्कार घटित हो गया। महादेवी पद्मावती के पास लक्ष्मीपुंज हार था। इस हार को महाबल के गले में पहनाकर वह युवराज को स्वयंवर में भेजने वाली थी'''किन्तु तीसरे दिन की मध्यरात्रि में उसके गले से वह हार अदृश्य हो गया।

कोई गले से हार निकाल रहा है, यह अनुभव रानी को हुआ और उसने आंख खोलकर देखा तो हार गायब था। वह चिल्लायी। दास-दासियां आ गईं। महाराज पार्श्ववर्ती खंड में शयन कर रहे थे। वे भी आ गए। उन्होंने आते ही पूछा—'देवी ! क्या बात है ? इतनी भयभीत क्यों हैं ?'

'स्वामीनाथ ! मेरे गले से किसी ने दिव्यहार गायब कर डाला।'

'क्या यह सही है ?'

'हां, मैं हार पहनकर ही सोयी थी'''मैं चाहती थी कि जब महाबल यहां से प्रस्थान करेगा तब मैं उसका तिलक कर यह हार पहनाऊंगी''' ' यह कहते-कहते रानी अत्यन्त दुःखित होती हुई मौन हो गई।

महाबल भी वहां आ पहुंचा। उसने हार चुराए जाने की बात सुनी और आश्चर्यचकित रह गया। उसने पूछा—'मां ! आपके शयनकक्ष में क्या कोई दासी सो रही थी ?'

'नहीं'''दास-दासी सब बाहर ही सोते हैं'''शयनकक्ष का द्वार भीतर से बंद कर मैं सो रही थी'''केवल दो गवाक्ष खुले थे।'''परन्तु इन गवाक्षों से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोई चोर आ नहीं सकता क्योंकि वहां पहुंचने का कोई मार्ग है ही नहीं।

महाराज सुरपाल ने महाप्रतिहार को हार की खोज करने के लिए कहा।

हार के खो जाने से महारानी अत्यन्त व्यथित हो गई। उसे यह दृढ़ आस्था हो गई थी कि हार कल्याणकारी है, सुख और सौभाग्य देने वाला है···इस हार के खो जाने से विपत्ति निश्चित है। इसका गुम होना विपत्ति के आगमन की पूर्व सूचना है। उसने महाबल के दोनों हाथ पकड़कर कहा—'पुत्र! यदि यह हार प्राप्त नहीं हुआ तो मेरा जीना व्यर्थ है।'

'मां! आप व्यथित न हों। मैं किसी भी उपाय से हार आपको ला दूंगा··· यदि चोर पाताल में प्रवेश कर गया होगा तो भी मैं उसे ढूंढ़ लाऊंगा···मां! आप तनिक भी चिन्ता न करें।'

'पुत्र! लक्ष्मीपुंज हार मात्र रत्नों का हार नहीं है। यह भाग्य-परिवर्तन का साधन है, आशीर्वाद है। यदि यह हार नहीं मिला तो मैं जीवनलीला समाप्त कर दूंगी···जिस हार के द्वारा मैं अपनी पुत्रवधू को समृद्ध करना चाहती थी, जिस हार के द्वारा मैं राज्य-परंपरा को उज्ज्वल बनाना चाहती थी, उस हार का मैं रक्षण नहीं कर सकी।'

युवराज और महाराजा दोनों ने देवी को सान्त्वना दी, धैर्य बंधाया और हार पुनः प्राप्त हो जाएगा, इस आशा को पुष्ट किया।

महाप्रतिहार हार की खोज करने ऊपर-नीचे गया। चोर के निशान ढूंढ़ने के लिए उसने सारे रास्ते छान डाले, पर उसे चोरी का अता-पता नहीं चला।

इस प्रकार की चोरी से सब आश्चर्य में डूब गए थे।

और इधर चन्द्रावती नगरी के राजभवन में भी ऐसा ही एक आश्चर्य घटित हुआ।

रानी कनकावती अत्यन्त व्यथित हो रही थी। ज्यों-ज्यों मलया के स्वयंवर की तिथि निकट आ रही थी, त्यों-त्यों उसके हृदय की उथल-पुथल बढ़ रही थी।

एक रात···

रानी कनकावती विशाल पलंग पर चिन्तामग्न हो, प्रतिशोध की भावना को संजोए हुए सो रही थी। वह निद्राधीन हो गई थी। उसकी प्रिय दासी सोमा पलंग के पास नीचे अपनी शय्या पर सो रही थी।

और अचानक कनकावती की छाती पर लक्ष्मीपुंज हार आकर गिरा··· हार के गिरते ही कनकावती हड़बड़ाकर उठी और 'सोमा! यह क्या हुआ?'—कहकर चिल्ला उठी।

सोमा भी जाग गई। उसने दीपक पर पड़े ढक्कन को हटाया। सारा शयनकक्ष प्रकाश से जगमगा उठा। रानी कनकावती ने देखा—देव-दुर्लभ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लक्ष्मीपुंज हार उसकी शय्या पर पड़ा है। उसने हार को हाथ में लेकर कहा—'सोमा ! यह तो लक्ष्मीपुंज हार ही है। महाराजा ने मलया को भेंट रूप दिया था। किन्तु इसको मेरी छाती पर किसने ला पटका ? निश्चित ही किसी देव ने मेरे पर करुणा कर सहानुभूति प्रदर्शित की है···सोमा ! अवाक् बनकर क्या देख रही है ? जिस अवसर की तू प्रतीक्षा कर रही थी, उस अवसर का लाभ देव ने हमें दिया है। हमें हार कहीं छिपा देना चाहिए और मुझे कल ही महाराजा के पास जाकर सत्य नहीं, किन्तु बनावटी बात रखनी चाहिए। जो व्यक्ति सत्य पर विश्वास नहीं करते, वे व्यक्ति बनावटी बात पर विश्वास कर लेते हैं।'

सोमा ने निकट आकर कहा—'क्या यही लक्ष्मीपुंज हार है ?'

'हां, यही है। इस हार को मैंने अनेक बार देखा है···तू किञ्चित् भी शंका मत कर···किसी देव या देवी ने मेरी व्यथा से द्रवित होकर ऐसा किया है, ऐसा मैं मानती हूं।' सोमा अत्यन्त प्रसन्न हुई और तब कनकावती और सोमा—दोनों ने मिलकर उस हार को ऐसे स्थान में छिपा दिया कि उस स्थान की कोई कल्पना भी नहीं कर सकता।

हार को छिपाकर रानी पुनः शय्या पर आकर सो गई···परन्तु अब नींद कैसे आती ?···मनुष्य में जब हर्ष का अतिरेक होता है अथवा मनोज्ञ वस्तु की प्राप्ति हो जाती है तब उसे नींद से भी प्यारा होता है—जागरण।

प्रातःकाल हुआ।

रानी कनकावती ने सब कार्य त्वरा से संपन्न किए। उसे महाराजा के पास पहुंचने की उतावली थी। स्नान आदि से निवृत्त हो, वह महाराजा के पास पहुंची।

महाराजा अभी दंतप्रक्षालन कर रहे थे···स्नानगृह में जाने की तैयारी थी, इतने में ही महाप्रतिहार ने आकर कहा—'कृपावतार ! देवी कनकावती आपसे मिलना चाहती हैं।'

'अच्छा···'

रानी कनकावती महाराजा के पास आयी, मस्तक झुकाकर मृदु स्वर में बोली—'आपका चित्त तो प्रसन्न है ?'

'हां, प्रिये !···ओह ! आज तो तू बहुत जल्दी आ गई। कहीं प्रस्थान करना है क्या ?'

'मेरे लिए आपके चरण-कमल के सिवाय और स्थान ही कहां है ? मैं आज आपके वंश के कल्याण की बात कहने आयी हूं।'

'बहुत अच्छा ! आ, प्रिये ! अन्दर आकर बैठ। मलया के स्वयंवर की तैयारी में कहीं कोई त्रुटि रह गई हो तो तू मुझे बता, मैं उसका परिष्कार करूंगा।'

रानी एक आसन पर बैठ गई। महाराजा उठे और हाथ-मुंह धोकर आने को कह गए। कुछ क्षणों पश्चात् महाराजा आ गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रानी ने कहा—'प्रिय ! मैं आपके हित की बात लेकर आयी हूं, पर मेरे सामने एक धर्म-संकट है।'

'धर्म-संकट...?'

'हां, यदि मैं वह बात गुप्त रखती हूं तो मेरे स्वामी का अहित होता है और यदि उसे प्रकट करती हूं तो मेरे पर अनेक लांछन लगाए जाते हैं...परन्तु खूब सोच-विचारकर मैंने यह निश्चय किया है कि मेरे पर भले ही आरोपों का पहाड़ टूट पड़े, किन्तु स्वामी के कल्याण की उपेक्षा एक सन्नारी कभी नहीं कर सकती।'

'प्रिये ! मैं समझा नहीं। ऐसा क्या घटित हो गया ? क्या किसी ने तेरा अपमान किया है ?'

'नहीं, प्रभो ! आपके राज्य को हड़पने का एक षड्यन्त्र रचा गया है।'

'कनकावती ! यह तू क्या कह रही है ? हमने ऐसा कुछ जाना ही नहीं और तू...'

'मुझे ज्ञात हो गया है, क्योंकि मैं आपकी धर्मपत्नी हूं...!'

'ऐसा षड्यन्त्र करने वाला नराधम कौन है ?'

'मैं नाम नहीं बताऊंगी। आप स्वयं उसको ढूंढ़ निकालें। एक बार पहले मैंने नाम बताया था और तब जो मेरी दुर्दशा हुई थी उसे मैं अभी तक विस्मृत नहीं कर पायी हूं।'

'नहीं, प्रिये ! यदि तू जानती है तो मुक्त मन से सारी बात बता। संशय मत रख।' राजा ने अभय देते हुए कहा।

रानी कनकावती ने गंभीर होकर कहा—'कृपानाथ ! पिछले तीन दिनों से मैं एक कुतूहल देख रही हूं...प्रतिदिन एक पुरुष राजभवन में आता है और रज्जु के सहारे मलया के खंड में जाता है...यह देखकर मेरा कुतूहल बढ़ा और तब मैंने मलया के कक्ष-द्वार पर जाकर देखा, सुना। मैंने जो कुछ सुना है, वह बहुत ही भयंकर और विस्फोटक है।'

राजा के नयन लाल हो गए। उसका शरीर कांप उठा। उसने कहा—'बोल, वह भयंकर बात मुझे सुना।'

'आपके मित्र पृथ्वीस्थानपुर के महाराजा के युवराज महाबल स्वयंवर के समय अपने साथ बड़ी सेना लेकर आएंगे। इतना ही नहीं, उन्होंने अनेक राजाओं को अपने पक्ष में कर लिया है। वे सब राजा स्वयंवर के समय आएंगे। उस समय महाबल अपनी शक्ति से पूरे राज-परिवार की हत्या कर राजगद्दी को हड़प लेंगे। वे मलया को महारानी बनाएंगे। यह योजना गुप्तरूप में की जा रही है...दूत और मलया के बीच जो बात हुई है, वह यह है...मेरे कथन की सत्यता का एक पुरजोर प्रमाण भी है...।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'बोल···

'कल रात मलया ने उस दूत को लक्ष्मीपुंज हार देते हुए कहा था—युवराज को यह हार दे देना और कहना कि इस हार को धारण करके ही यहां आए··· इस हार के प्रभाव से वे अवश्य ही विजयी होंगे।'

'ओह! बहुत भयंकर योजना है। किन्तु रानी! इस बात के पीछे···।'

बीच में ही कनकावती ने कहा—'कृपानाथ! मुझे भय था कि आप मेरी बात पर विश्वास नहीं करेंगे···किन्तु मैंने सारे अपवादों को एक ओर रखकर बात प्रस्तुत की है···मेरी बात की यथार्थता का परीक्षण करना चाहें तो आप तत्काल मलया से कहें कि वह लक्ष्मीपुंज हार लाकर दे···यदि मेरा कथन सत्य होगा तो मलया हार नहीं दे पाएगी···क्योंकि वह हार पृथ्वीस्थानपुर की ओर प्रस्थित दूत के साथ युवराज को भेजा जा चुका है···और यदि वह हार मलया प्रस्तुत कर दती है तो आप मुझे ईर्ष्या और द्वेष से अंधी बनी दुष्टा मानें और मेरा वध करा दें।'

महारानी के ये शब्द महाराजा वीरधवल को तीर-से चुभे। वे अचानक उठे और क्रोध से लाल-पीले होते हुए अपने कक्ष में इधर-उधर चक्कर लगाने लगे।

कुछ क्षणों के बाद उन्होंने पुकारा—'बाहर कौन है?'

तत्काल महाप्रतिहार हाजिर हुआ।

महाराजा बोले—'महादेवी को तत्काल बुलाकर ले आ। वह चाहे कुछ भी काम कर रही हों, तत्काल आने के लिए कह दो।'

'जी,' कहकर प्रतिहार चला गया।

उस समय एक परिचारक ने आकर निवेदन किया—'स्नान···'

'अच्छा, मैं बाद में स्नान करूंगा।'

परिचारक चला गया।

रानी कनकावती ने कहा—'महाराज! मलया की अपरिपक्व बुद्धि का ही परिणाम है, यह समझकर आप जल्दबाजी में कोई निर्णय न लें।'

'प्रिये! जो कन्या अपने पितृवंश का विनाश कर सुख भोगने का स्वप्न संजोती है वह अपरिपक्व बुद्धि वाली नहीं कही जा सकती। किन्तु उसे दुष्टबुद्धि कहा जा सकता है। ओह! मलया को मैंने कितने लाड़-प्यार से पाला है। यह सदा शांत रहती थी। यदि तेरी बात सत्य होगी तो मुझे मलया को कठोरतम दंड देना होगा···उस समय मैं पिता नहीं, राजा होकर अपने कर्तव्य का पालन करूंगा··· तेरी बात असत्य है, यह मैं नहीं मान सकता, क्योंकि तूने अपने वध की बात कही है···कोई भी व्यक्ति इस प्रकार अपना वैर-भाव प्रदर्शित नहीं कर सकता।'

'फिर भी कृपावतार! आप उतावली न करें, यह मेरी प्रार्थना है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराज कुछ कहें, उससे पूर्व ही सद्यःस्नात महारानी चंपकमाला कक्ष में प्रविष्ट हुई, नमस्कार किया, पूछा—'क्या आज्ञा है, महाराज !'

'मलया का स्वयंवर हमारे महान् परिवार के विनाश का हेतु बनने वाला है।'

'आप यह कैसे कह रहे हैं?···ऐसा क्यों होगा?'

'प्रिये ! जब सन्तान के हृदय में दुर्बुद्धि आती है तब उसमें कर्तव्य और अकर्तव्य का विवेक लुप्त हो जाता है। अपने ही भवन में अपने ही रक्त से एक महान् षड्यन्त्र रचा जा रहा है।'

'मैं नहीं समझी, महाराज !'

महाराजा ने मलया के विषय में जो कुछ रानी कनकावती से सुना था, वह सारा महारानी चंपकमाला को सुनाया।

तत्काल महादेवी बोली—'ओह ! मलया में यह नीचता ? महाराज ! आप अभी मलया को बुला भेजें।'

तत्काल महाराजा ने मलया को बुलाने के लिए महाप्रतिहार को आज्ञापित किया।

थोड़े ही क्षणों में मलया वहां आ पहुंची। उसने आते ही महाराजा, माता चंपकमाला तथा अपरमाता कनकावती को प्रणाम किया और मुसकराते हुए कहा—'क्या आज्ञा है, पिताश्री ?'

'मलया ! इन तीन दिनों से प्रतिदिन निशा में किसका दूत आता है?' महाराजा ने क्रोधभरे शब्दों में पूछा।

मलया यह सुनते ही हड़बड़ा गयी; फिर संयत स्वर में बोली—'पिताश्री ! मेरे शयनकक्ष में किसी का दूत क्यों आएगा ? मैं कुछ भी नहीं जानती।'

'मलया ! तेरा सुन्दर और मासूम चेहरा आज मुझे शान्त नहीं कर पाएगा। मेरे एक प्रश्न का सही उत्तर दे।'

'कौन-से प्रश्न का ?'

'लक्ष्मीपुंज हार कहां है ? जा···अभी उसे मेरे को सौंप।'

'लक्ष्मीपुंज हार !'

मलयासुन्दरी का हृदय कांप उठा। वह हार तो अपने प्रियतम को वरमाला के रूप में दे चुकी थी···पर यह बात कैसे कही जाए ? वह क्षण भर के लिए अवाक् बन गयी।

महाराज ने कहा—'मौन क्यों है ? मेरे प्रश्न का उत्तर दे !'

मलयासुन्दरी ने धड़कते हृदय से कहा—'पिताजी ! वह हार तो कोई चुरा ले गया···।'

'दुष्टा ! शैतान ! वह हार चुरा लिया गया !' यह कहते हुए महाराजा ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्काल उसे थप्पड़ मार दिया।

मलयासुन्दरी को बहुत आघात लगा। वह कांप उठी।

महाराजा ने कहा—'पिता के वंश का विनाश कर महाबल के साथ तुझे इस राज्य का उपभोग करना है? चली जा···मुझे अपना मुंह मत दिखाना। अपने कक्ष से बाहर मत निकलना···अपने भयंकर षड्यन्त्र की सजा भोगने के लिए तैयार रहना।'

'पिताश्री!···'

'मैं कुछ भी सुनना नहीं चाहता···तू चली जा यहां से। तेरे स्नेह के वशीभूत होकर मैंने स्वयंवर के लिए लाखों स्वर्णमुद्राओं का व्यय किया है और तू उस स्नेह को ध्वंस करने के लिए कटिबद्ध हुई है। जा, अपना कलंकित मुंह मुझे मत दिखा···' इतना कहकर महाराजा ने महाप्रतिहार को बुलाया। उसके आते ही महाराजा ने कहा—'मलया को अपने कमरे में नजरबंद कर दो। मेरी आज्ञा के बिना कोई भी इससे मिलने न पाए। कक्ष के चारों ओर पूरी जागरूकता से पहरे की व्यवस्था करो और यदि कोई मेरी आज्ञा के बिना मलया से मिलने का प्रयत्न करे तो उसका वहीं शिरच्छेद कर डालो।'

महाप्रतिहार महाराजा की ओर देखता रह गया। उसकी वाणी स्तब्ध हो गयी।

मलया को यह स्वप्न में भी कल्पना नहीं थी कि स्नेहिल पिता इतने क्रूर हो जाएंगे और प्रेममयी मां मौन भाव से सब कुछ सुनती रहेंगी।

वह रोती-बिलखती हुई खंड से बाहर निकली···उसके हृदय की वेदना अनन्त थी···उसके पीछे-पीछे महाप्रतिहार भी चल दिया।

महाराजा ने चंपकमाला से कहा—'देखी अपने लाड़-प्यार की प्रतिमा की करतूतें···!'

चंपकमाला क्या उत्तर दे? उसके हृदय में भारी उथल-पुथल हो रही थी।

क्रोध से अंधे बने हुए व्यक्ति विवेक, न्याय और कर्तव्य को नहीं जान पाते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७. कर्म-विपाक

महाराजा वीरधवल की आज्ञानुसार मलयासुन्दरी को उसी के कक्ष में नजरबंद कर महाप्रतिहार महाराजा के पास आकर बोला—'कृपावतार ! आपकी आज्ञा का पालन हो चुका है। कक्ष के आसपास तथा चारों ओर सशस्त्र सैनिकों को तैनात कर दिया गया है और उन्हें यह आदेश भी दे दिया है कि राजाज्ञा के बिना कोई भी व्यक्ति राजकुमारी से मिलने का प्रयत्न करे तो उसे वहीं समाप्त कर दो।'

'बहुत अच्छा'''अब तू बाहर रह। मेरी आज्ञा के बिना इस कक्ष में कोई न आए, इसका ध्यान रखना।'

'जी।' कहकर महाप्रतिहार बाहर चला गया।

महाराजा के कक्ष में दो रानियों के सिवाय और कोई नहीं रहा।

राजा वीरधवल ने अपनी प्रिय पत्नी चंपकमाला की ओर देखते हुए कहा—'प्रिये ! तू समझ पायी कि मलया क्या करना चाहती थी ? अब तू बता कि उसे क्या दंड देना चाहिए ?"

'स्वामिन् ! इस विषय में आप ही अधिक सोच सकते हैं। आप न्यायावतार हैं। जैसा उचित समझें वैसा करें।'

'प्रिये ! मलया ने भयंकर अपराध किया है। यह राज्य को हड़पने, परिवार का विनाश करने का जघन्यतम कार्य है। यदि मुझे नीति के प्रति वफादार रहना है तो संतान के अपराध के प्रति तथा अन्य व्यक्ति के अपराध के प्रति भेदभाव नहीं रखना है'''इस जघन्यतम अपराध का दंड है मौत की सजा।'

चंपकमाला बोली—'महाराज ! प्रेम से कर्त्तव्य बड़ा होता है। आप अपने कर्तव्य में अटल रहें, यही मेरी हार्दिक इच्छा है। मलया स्वभाव से शांत, सरल और सुसंस्कारी लगती थी'''परन्तु उसका हृदय इतना मलिन है, यह मैं भी नहीं जान पायी थी। आप जो कुछ करेंगे, वह न्याययुक्त ही होगा, इसमें मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है। कुल की रक्षा के लिए, नीति की पालना के लिए आप मलया को जो भी दंड देंगे, वह उचित ही होगा।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलया की माता चंपकमाला का मंतव्य जानकर महाराजा बहुत प्रसन्न हुए।

फिर उन्होंने कनकावती से पूछा—'प्रिये ! तू भी मलया की माता है। बोल, तेरे विचार क्या हैं ?'

कनकावती ने राजा के आवेश को पढ़ा और यह जान लिया कि महाराजा किसी भी स्थिति में मलया को क्षमा नहीं करेंगे तो मौखिक यश लेने में हानि ही क्या है, यह सोचकर वह बोली—'महाराज ! मैं मानती हूं कि मलया का अपराध असामान्य है, जघन्यतम है। पर आप क्षमासिन्धु हैं, क्षमा कर सकते हैं···यह एकाकी पुत्री है···बाल-बुद्धि है···आप विचार करें। मलया बच्ची है। वह बचपन के वशीभूत होकर ऐसा अपराध कर बैठी, यह अज्ञान का ही फल है।'

'रानी ! मैंने पहले ही स्पष्ट कर दिया था कि प्रेम और कर्तव्य दोनों साथ-साथ नहीं रह सकते। कर्तव्य बड़ा है।'

राजा चिन्तन करने लगा।

दोनों रानियां महाराजा की ओर एकटक देखने लगीं।

महाराजा ने कहा—'न्याय की रक्षा के लिए मैंने यह निर्णय लिया है कि आज की संध्या के पश्चात् मलया का वध कर दिया जाए और स्वयंवर के लिए प्रस्थित राजकुमारों को स्वयंवर-स्थगन का संदेश भेज दिया जाए···जो राजकुमार यहां आ गए हैं, उन्हें मलया की मृत्यु के समाचार देकर लौटा दिया जाए।'

कन्या-वध की बात सुनकर चंपकमाला का हृदय कांपने लगा। वह मूर्तिवत् अप्रकंप रही। रानी कनकावती के हृदय में वैरतृप्ति की शांति होने लगी। वह दिखावटी वाणी में बोली—'महाराज ! मेरी प्रार्थना है कि आप अपने निर्णय पर पुनश्चिन्तन करें। कन्या-वध को टालें।'

रानी को उत्तर दिए बिना ही महाराज ने महाप्रतिहार को पुकारा। उसने आकर प्रणाम किया। राजा ने कहा—'तत्काल महामंत्री और नगर-रक्षक को बुलाओ।'

'जी।' कहकर महाप्रतिहार चला गया।

कुछ समय बीता।

महाप्रतिहार लौट आया। उसने कहा—'कृपावतार ! नगररक्षक प्रस्तुत है।'

'उसको अन्दर भेज दो।'

नगररक्षक कक्ष में आया। महाराजा ने कहा—'राजकन्या मलयासुन्दरी को निकट के किसी वन-प्रदेश में ले जाओ और उसका वध कर मुझे खबर दो।'

नगररक्षक फटी आंखों से राजा को देखता रह गया। वह विचारों में फंस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गया···ऐसी आज्ञा क्यों ?

राजा ने नगररक्षक की भाव-भंगिमा को जानते हुए कहा—'यह न्याय की रक्षा का प्रश्न है···न्याय के पालन के लिए प्रेम और स्नेह को त्यागना होता है। अभी तुम जाओ और मध्याह्न के पश्चात् मलयासुन्दरी को एक रथ में बिठा देना। उससे पूर्व मलया को राजाज्ञा से अवगत करा देना।'

पद कितना ही गुरुतर क्यों न हो, दासता दासता ही होती है। नगररक्षक 'जी' कहकर लौट गया। उसके हृदय में वेदना उछल रही थी···वह मानता था कि मलयासुन्दरी मानवकन्या नहीं, देवकन्या है···निर्दोष और पवित्र···महाराजा ने ऐसी आज्ञा क्यों दी ?

नगररक्षक मलयासुन्दरी के कक्ष की ओर गया। वहां चार सशस्त्र सैनिक खड़े थे। नगररक्षक को देखते ही नमस्कार कर एक ओर हट गए।

नगररक्षक ने पूछा—'राजकुमारी इसी कक्ष में है ?'

'हां। वहां यदि कोई भी व्यक्ति राजाज्ञा के बिना जाता है तो हमें उसका शिरच्छेद करने की आज्ञा प्राप्त है।'

नगररक्षक को और अधिक आश्चर्य हुआ। वह बोला—'हाय, दासत्व !' कपाल पर हथेली ठोकते हुए वह बोला—'तुम सबको यहां किसने नियुक्त किया है ?'

'महाप्रतिहार ने···'

'अच्छा !' कहकर नगररक्षक मुड़ गया। इतने में ही महाप्रतिहार दौड़ता-दौड़ता आया और वहां तैनात सैनिकों से बोला—'नगररक्षक राजाज्ञा सुनाने आए हैं, उन्हें रोकना मत।'

चारों सैनिकों ने मस्तक नमाया।

नगररक्षक ने महाप्रतिहार से कहा—'महाप्रतिहार ! महाराज के रोष का कारण क्या है ? कुछ भी समझ में नहीं आया।'

'हम सब तो आज्ञा के नौकर हैं, कुछ भी कह सकते नहीं।' यह कहकर प्रतिहार वहां से चलने लगा।

इतने में ही महामंत्रीश्वर का रथ आता दीख पड़ा।

नगररक्षक ने मलया के कक्ष के कपाटों पर पड़ी सांकल खोली। अंदर से दरवाजा बंद था। नगररक्षक ने द्वार खटखटाते हुए कहा—'राजकुमारी जी, कपाट खोलें। मैं आपको महाराजा की आज्ञा सुनाने आया हूं। मैं नगररक्षक हूं।'

मलयासुन्दरी ने कपाट खोले। नगररक्षक राजकन्या का चेहरा देखकर अवाक् बन गया। राजकुमारी ने रो-रोकर आंखें सुजा ली थीं। उसका उत्तरीय आंसुओं से भीग चुका था। निरन्तर प्रवहमान आंसुओं से उसके कपोल म्लान हो गए थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नगररक्षक ने कक्ष के चारों ओर देखा, फिर उसने पूछा—'राजकुमारी जी ! आप कक्ष में अकेली ही हैं ?'

मलया कुछ भी नहीं बोली।

नगररक्षक बोला—'यह अन्याय है, अत्याचार है···अपराध कैसा भी क्यों न हुआ हो, पर अपराध करने वाला राजबीज है, सामान्य गुनहगार नहीं। अतिप्रिय और एकाकी कन्या।' एक निःश्वास डालते हुए नगररक्षक ने कहा—'राजकुमारी जी ! महाराजा ने आपके वध का आदेश दिया है और यह जघन्य कार्य मुझे सौंपा गया है।'

'नगररक्षक ! क्या तुम महाराजा के कुपित होने का कारण बता सकते हो ?'

'नहीं, कुमारीजी ! मुझे कुछ भी ज्ञात नहीं है···केवल राजाज्ञा सुनाने आया हूं···मध्याह्न के पश्चात् मैं आपको लेने आऊंगा।'

'अच्छा···' राजकुमारी ने और कुछ भी नहीं कहा।

नगररक्षक वहां से सीधा महाराजा के पास गया। अभी तक महामंत्री सुबुद्धि पहुंचे नहीं थे। नीचे ही कहीं रुक गए थे। नगररक्षक को देखते ही महाराजा ने कहा—'राजाज्ञा सुना दी ?'

'जी हां···'

'तो अब तुम प्रस्थान की तैयारी करो।'

'कृपावतार ! यह एक नियम है कि वध से पूर्व राजकुमारी की अंतिम इच्छा पूरी की जाए। किन्तु उन्होंने मुझे कुछ भी नहीं कहा···यदि आप आज्ञा दें तो उनके पास एक दासी की व्यवस्था करूं।'

'कोई आपत्ति नहीं है।'

नगररक्षक बाहर आया और मलया की प्रिय दासी वेगवती को मलया के पास रहने और उसे धैर्य बंधाने के लिए भेज दिया।

और महामंत्री नीचे सारी बात सुनकर गंभीर मुद्रा में राजा के समक्ष आया।

महाराजा ने महामंत्री का स्वागत करते हुए कहा—'महामंत्रीश्वर ! आपने कुछ सुना है ?'

'मैंने मात्र मृत्युदण्ड देने की बात सुनी है। किन्तु इतनी उतावली क्यों की गई है ?···बहुत बार आवेश में व्यक्ति कर्तव्यच्युत हो जाता है। जो कल तक आपकी प्रिय कन्या थी, क्या वह आज वैसी नहीं है ? कन्या ने ऐसा कौन-सा अपराध कर डाला है कि आप इतने कठोर हो रहे हैं ? कन्या के लिए आपके हृदय में कल तक जो स्नेह-सरिता बह रही थी, आज वह एकाएक कैसे सूख गई ? महाराज ! संसार का प्रत्येक कार्य आगे-पीछे देखकर, सोच-समझकर ही करना चाहिए। उतावलेपन से और अविवेक से किया हुआ कार्य मृत्यु से भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भयंकर हो जाता है और फिर पश्चात्ताप के सिवाय और कुछ नहीं बचता।'

'महामंत्री ! आप तो मेरे स्वभाव से परिचित हैं। मैं कभी उतावलपन नहीं करता, अन्याय नहीं करता। राजकन्या ने भयंकर अपराध किया है। उसने समग्र राज-परिवार को नष्ट करने का षड्यन्त्र रचा था। मेरे प्रख्यात वंश के पुण्यबल से उस षड्यन्त्र का पता लग गया। अन्यथा…'

'महाराज ! बहुत बार शंकाएं निर्मूल होती हैं।'

'मंत्रीश्वर ! यदि शंका निर्मूल हो तो क्या मैं मेरी लाडली कन्या को मृत्युदंड दे सकता हूं ?' कहकर महाराजा ने रानी कनकावती की सारी बात मंत्रीश्वर को बतायी। राजा ने सारी बात इस ढंग से कही कि मंत्रीश्वर अवाक् रह गया।

रानी कनकावती के प्रति मंत्रीश्वर का मान था ही नहीं। उन्हें यह तत्काल संशय हो गया कि रानी कनकावती ने अपने अपमान का बदला लेने के लिए ही तो यह बात नहीं बनाई है ? किन्तु इस तथ्य के असत्य ठहरने पर स्वयं के वध की शर्त लगाई है…और लक्ष्मीपुंज हार की घटना भी ऐसी है कि उससे राजकुमारी दोषी साबित होती है।

महामंत्री गंभीर हो गए। महाराज ने कहा—'मंत्रीश्वर ! जो न्याय के आसन पर आसीन हैं, उन्हें प्रेम या स्नेह के अधीन नहीं होना चाहिए। आप भी तो इसी सूत्र को मानते हैं।'

'हां, महाराज ! स्नेह-संबंध एक क्षणिक आवेश है…किन्तु न्याय के आसन पर बैठने वाले दया तो कर ही सकते हैं।'

'इस स्थिति में दया का प्रश्न ही नहीं उठता। ऐसा भयंकर राजद्रोह करने वाले को तत्काल मौत के घाट उतार देना चाहिए।' महाराज ने कहा।

रानी चंपकमाला बोली—'मंत्रीश्वर ! मलया मेरे हृदय का टुकड़ा है… मुझे अत्यन्त प्रिय है। मैंने उसके लिए अनेक स्वप्न संजोए थे…फिर भी महाराज ने जो निर्णय किया है वह उचित है। इस स्थिति में दया कैसी ? स्वयंवर में भाग लेने के लिए राजकुमार आ रहे हैं…इस स्थिति में मलया को जीवित रखना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता।'

महामंत्री कुछ उत्तर दें, उससे पूर्व ही मलया की प्रिय दासी वेगवती कक्ष में प्रवेश करने के लिए द्वार पर रुकी।

महाराजा ने उसे अन्दर आने की आज्ञा दी। वेगवती ने कक्ष में प्रवेश किया। उसने सबको नमस्कार कर महाराजा से कहा—'कृपावतार ! राजकुमारी जी ने आपको एक संदेश भेजा है।'

'बोल…'

'उन्होंने कहा है—आपने मुझे मृत्युदंड की सजा दी, यह मैंने नगररक्षक से जाना है। मुझे मौत का तनिक भी भय नहीं है। क्योंकि एक दिन तो मरना ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। मेरे मन में एक इच्छा है कि मरने से पूर्व मैं अपने परम दयालु माता-पिता के अंतिम दर्शन कर लूं···यदि मेरी यह अंतिम अभिलाषा आपको मान्य न हो तो आपको, मेरी प्रेममयी मां को और अपरमाता को मेरा अंतिम नमस्कार है। मैं सबसे क्षमायाचना करती हूं।'

महाराजा ने तत्काल दासी की ओर देखकर कहा—'ओह! कितनी माया होती है नारी में! आज तक उसके हृदय को कोई नहीं जान पाया। पापिन के हृदय में कितना विष भरा है और वाणी में कितना अमृत भरा है। वाणी और हृदय में इतनी विषमता होती है, वह अत्यन्त दुष्ट होती है। वेगवती! तू राजकन्या से कह देना—स्वयं का पाप स्वयं से अज्ञात नहीं रहता···मुझे या अन्य किसी को नमस्कार करने की कोई जरूरत नहीं है। मुझे अपना कलंकित मुंह मत दिखाना। नगररक्षक जैसा कहे, वैसे करना है।'

महाराज के इन शब्दों से वेगवती दासी का हृदय भर आया। वह वहीं रो पड़ी। उसने मन-ही-मन सोचा, क्या मां-बाप इतने निर्दय हो सकते हैं? वह बोली—'कृपावतार! यदि यही आपका अंतिम आदेश हो और यदि आप राजकुमारी का मुंह देखना ही नहीं चाहते तो राजकन्या ने एक प्रार्थना की है कि गोला नदी के किनारे 'पातालकूप' नाम का एक कूप है। वह अत्यन्त गहरा और अंधकारमय है। राजकन्या उस कुएं में गिरकर प्राण-विसर्जन करना चाहती हैं। यह उनकी इच्छा है। यदि आप इस इच्छा को पूरी करना चाहें तो नगर-रक्षक को तत्संबंधी आदेश अवश्य दें!'

इतना कहकर दासी वेगवती भारी हृदय से वहां से चली गयी। उसने महाराजा के उत्तर की प्रतीक्षा भी नहीं की।

महामंत्री ने कहा—'महाराज! मृत्युदंड प्राप्त व्यक्ति की अंतिम इच्छा को पूरी करना न्याय संगत है।'

'किन्तु मलया वध के बदले ऐसी मृत्यु को क्यों चाहती है? यह बात मेरी समझ में नहीं आती।'

'महाराज! मलयासुंदरी नहीं चाहती कि कोई दूसरा व्यक्ति उसका वध करे। वह अपने हाथों से स्वयं मृत्युदंड भोगना चाहती है।'

'परन्तु वह कप तो अत्यन्त भयंकर है'—रानी चंपकमाला ने कहा।

'महादेवी! जिसे मौत का भय नहीं होता उसके लिए कोई भी वस्तु भयंकर नहीं होती।' महामंत्री ने कहा।

इधर वेगवती मलया के पास पहुंची और उसने सारी बात कह सुनायी। मलयासुंदरी महाराज का उत्तर सुनकर निःश्वास डालती हुई बोली—'वेगवती! तू क्यों रो रही है? जल्दी या देरी से सबको मृत्यु का वरण करना ही होगा। मेरे पापकर्मों का विपाक है कि मुझे यह अनिष्ट प्रकार की मृत्यु मिल रही है···

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तू धैर्य रख···मेरा एक काम करना है।'

वेगवती मलया की ओर देखती रही।

मलया बोली—'युवराज महाबल यहां आएं तो उन्हें कहना कि मलया ने नमस्कार कहा है और भवबंधन की गांठ को कर्मरूपी चाकू ने काट डाला है, अफसोस मत करना।'

उत्तर में वेगवती रो पड़ी।

मलया ने वेगवती को शांत किया। वेगवती बोली—'राजकुमारीजी! आपने अभी तक कुछ भी नहीं खाया-पीया है। मैं अभी महाप्रतिहार की आज्ञा लेकर भोजन···'

'अरे पगली!···आज तो मैंने अन्न-जल का परित्याग किया है···जिसकी मृत्यु निकट हो उसे सभी रसों का त्याग कर देना चाहिए···अब तो मेरे भव-भव का पाथेय एकमात्र नमस्कार महामन्त्र है···यही मेरे जीवन का अमृत है···यदि दैवयोग से मैं बच गई तो अवश्य अन्न-जल लूंगी, अन्यथा यावज्जीवन कभी ग्रहण नहीं करूंगी।'

'मलया!'

'वेगवती! तू मेरी दासी नहीं, धायमाता है। हृदय में वेदना को संजोए मत रखना। कर्म के विपाक को रोते-रोते सहने की अपेक्षा हंसते-हंसते सहना श्रेयस्कर होता है।'

वेगवती ने मलयासुंदरी को छाती से लगा लिया।

मलयासुंदरी ने नमस्कार महामन्त्र की आराधना प्रारंभ कर दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८. कटा हुआ हाथ

लक्ष्मीपुंज हार को इस प्रकार कौन ले गया होगा ? उसे ले जाने वाला कहां होगा ? उसको कैसे पकड़ा जाए ?—ये सारे प्रश्न युवराज महाबल के हृदय को व्यथित कर रहे थे।

वह जानता था कि यदि लक्ष्मीपुंज हार नहीं मिला तो मां प्राण त्याग देगी। एक ओर स्वयंवर का दिन निकट है और प्रस्थान करना अनिवार्य है तो दूसरी ओर यह नयी चिन्ता उभर आयी है।

शय्या में सोते हुए महाबल अनेक विकल्पों में उन्मज्जन निमज्जन कर रहा था। उसकी आंखें बंद थीं, पर नींद आ नहीं रही थी। उसने लक्ष्मीपुंज हार की खोज में पूरा दिन बिता दिया था। उसके सारे गुप्तचर दौड़धूप कर हार गए थे। चोर का अता-पता नहीं लग रहा था। विशिष्ट गुप्तचर ने अपनी खोज का निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए कहा—'युवराजश्री ! या तो चोर अति कुशल और मांत्रिक होना चाहिए अथवा हार धरती में समा गया होगा।'

गुप्तचर के इस निष्कर्ष से महाबल असमंजस में पड़ गया। पांच दिन के भीतर-भीतर हार को लाने का आश्वासन वह अपनी माता को दे चुका था। यदि इस अवधि में हार की प्राप्ति नहीं होती है तो मां का जीवित रहना असंभव है।

तो फिर अब क्या किया जाए ? चोर का पीछा कैसे किया जाए ?

महाबल अत्यन्त चिन्तामग्न था।

रात्रि का दूसरा प्रहर पूरा हो रहा था···सारा राजभवन नीरव था। अचानक महाबल के मस्तिष्क में एक विचार कौंधा। वह शय्या से उठा। उसने शय्या पर एक तकिया रख, उस पर एक चादर डाल दी, जिससे देखने वाले को यह लगे कि यहां कोई व्यक्ति सो रहा है। फिर वह हाथ में नंगी तलवार लेकर कक्ष के एक कोने में छिपकर बैठ गया। तीन-चार दिनों से उसे ऐसा भान हो रहा था कि ठीक मध्यरात्रि के समय कोई पुरुष आकृति शयनकक्ष में आती है और कुछ ढूंढ़ती है। इतना ही नहीं, वह उसके शरीर का स्पर्श भी कर जाती है। इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुभव से वह तत्काल जाग जाता पर आंख खोलकर देखने पर कुछ भी दिखाई नहीं देता। आज उसे याद आया कि अब मध्यरात्रि का समय होने वाला है। गुप्त प्रकार से कोई आता है या मेरे मन का भ्रम मात्र है—इस का निर्णय करने के लिए वह तलवार लेकर एक कोने में छिप गया।

प्रतीक्षा के क्षण मधुर भी होते हैं और चंचल भी।

रात्रि का दूसरा प्रहर पूरा हुआ। महाबल सजग हो गया। एक घटिका बीत गई। पर कहीं कुछ दिखाई नहीं दिया। महाबल ने सोचा, मैंने व्यर्थ ही भ्रम पाल रखा था। इस कक्ष में भला कौन आ सकता है? मेरा इस प्रकार खड़ा रहना या छिपकर बैठना पागलपन के अतिरिक्त क्या हो सकता है? यह सोचकर महाबल पुनः शय्या की ओर जाने लगा। इतने में ही उसकी दृष्टि चमक उठी··· वातायन से एक कटा हुआ हाथ भीतर आ रहा है, ऐसा उसे आभास हुआ।

शयनकक्ष में मन्द-मन्द प्रकाश था। उस मन्द प्रकाश में महाबल ने स्पष्ट देखा कि यह हाथ है, परन्तु कटा हुआ हाथ है और गतिशील। यह बात समझ से परे थी···वह कटा हुआ हाथ धीरे-धीरे पलंग की ओर बढ़ रहा था; यह महाबल ने देखा···परन्तु यह क्या ?···कटे हुए हाथ में रत्नजटित कंकण हैं··· रत्न चमक रहे हैं···क्या यह हाथ किसी स्त्री का है? यदि यह हाथ किसी स्त्री का हो तो उसका शरीर कहां है? अकेला हाथ क्यों? क्या यह कोई प्रेतिनी, मायाविनी या डाकिनी है? यदि वह है तो मेरे शयनकक्ष में उसके आने का प्रयोजन ही क्या है?

कटा हुआ हाथ शय्या के पास गया और वहीं स्थिर हो गया। महाबल ने सोचा, मैंने जिसे भ्रम माना था, वह सत्य है। संभव है इस मायाविनी ने ही लक्ष्मीपुंज हार चुराया हो। क्योंकि चुराये जाने पर चोर के कोई निशान प्राप्त नहीं हुए···अभी यह मेरे प्राण लेने ही आया है···यदि हाथ को यह ज्ञात हो जाए कि शय्या पर कोई सोया हुआ नहीं है, सोये हुए व्यक्ति की प्रतीति मात्र हो रही है, तो संभव है हाथ लौट जाएगा। फिर लक्ष्मीपुंज हार का अता-पता नहीं मिल सकेगा।

ऐसा विचार कर महाबल ने अपनी तलवार म्यान में रखी और हाथ की ओर बढ़ा।

युवराज महाबल ने एक क्षण का भी विलंब किए बिना तत्काल अपने मजबूत हाथों से उस कटे हुए हाथ को पकड़ लिया।

कटे हुए हाथ ने जोर से झटका दिया। पर महाबल की पकड़ बहुत मजबूत थी।

और कटे हुए हाथ ने अपनी शक्ति लगाकर महाबल को झरोखे की ओर जाने के लिए विवश कर दिया। महाबल ने सोचा, एक स्त्री के हाथ में इतनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शक्ति ! निश्चित ही यह कोई विद्याधरी, खेचरी अथवा कोई अन्य देवी है।

महाबल ने अपनी पकड़ और अधिक मजबूत कर दी। उसने अपनी सारी शक्ति लगाकर हाथ पकड़े रखा। उसने मन-ही मन यह निर्णय कर लिया था कि परिणाम कुछ भी आए, किन्तु मैं इस मांत्रिक नारी को नहीं छोड़ूंगा।

वह कटा हुआ हाथ वातायन से आकाश की ओर उठा। वह धीरे-धीरे आकाश में ऊपर उठने लगा। महाबल उस हाथ को पकड़े हुए ऊपर उठा। उस समय वह ऐसा लग रहा था मानो किसी वृक्ष पर फल लटक रहा हो। उसने सोचा अब हाथ को छोड़ने का कोई अर्थ ही नहीं है; क्योंकि यदि वह हाथ को छोड़ता है तो सीधा नीचे आ गिरता है।

कटा हुआ हाथ महाबल के साथ तीव्र गति से जाने लगा। महाबल ने देखा कि यह हाथ नगरी से भी बहुत दूर-दूर चला जा रहा है···कहां जाएगा ? जहां कहीं भी जाए···अब तो मुझे इसका अंत लेना ही होगा।

कटा हुआ हाथ भी बार-बार प्रबल झटके से महाबल को नीचे गिराने का प्रयत्न कर रहा था···किन्तु महाबल जलोक की भांति उसके साथ चिपका हुआ था।

कटे हुए हाथ ने अनेक प्रयत्न किए पर वह अपने प्रयत्न में सफल नहीं हुआ। एक घटिका के प्रयाण से हाथ बहुत-बहुत दूर चला गया। अनेक छोटे-बड़े उपवन, नदी-नाले पीछे रह गए। महाबल कुछ चिंतित हुआ—अरे ! यह हाथ मुझे कहां ले जाएगा ? ओह ! मुझे तो मलया के स्वयंवर में जाना है··· माता के प्राणों को बचाने के लिए लक्ष्मीपुंज हार को खोज लाना है···पर यह कहां ले जाएगा, कल्पना भी नहीं की जा सकती।

यह कटा हुआ हाथ किसका होगा ? इसके अन्य अदृश्य अंगों को कैसे पकड़ा जाए ? एक हाथ मुक्त कर खड्ग से प्रहार करूं तो क्या वांछित परिणाम आ सकता है ? नहीं-नहीं···ऐसा करने पर तो मुझे मृत्यु का आलिंगन ही करना पड़ेगा। क्योंकि इसके साथ-साथ मुझे भी धरती पर गिरना पड़ेगा। ओह ! कितनी नीचे है धरती ! वहां गिरने पर···?

तब क्या करूं ?

इधर महाबल आश्चर्यचकित हो रहा था। इतने में कटे हुए हाथ ने तीव्र वेग से महाबल को झकझोरा···किन्तु महाबल की पकड़ नहीं छूटी। वह ज्यों का त्यों हाथ से लगा रहा। अपनी असफलता के कारण कटे हुए हाथवाली नारी धीरे-धीरे स्पष्ट होने लगी।

नारी की आकृति को देखते ही महाबल ने प्रचंड वेग से उसके मुंह पर एक मुक्का मारा और तत्काल नारी के दोनों हाथों को पकड़कर मजबूती से जकड़ लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नारी उस प्रचंड मुक्के के त्रास को सहन नहीं कर सकी।

वह करुण स्वर में बोली—'महाबल ! मुझे छोड़ दे···मेरे पर करुणा कर···'

'तू यह मानती है कि मैं तुझे मुक्त कर अपनी मौत को निमन्त्रण दूं ? ऐसा कभी नहीं हो सकता।'

'युवराज ! तुझे नीचे फेंकने का मेरा प्रयास निष्फल हुआ है···मैं तुझे ऐसे स्थल पर उतारूंगी कि तुझे तनिक भी आंच नहीं आएगी'—यह कहती हुई वह नारी सर-सर करती हुई नीचे आने लगी···थोड़े क्षणों बाद बोली—'अब तू मुझे छोड़ दे और इस आम्रवृक्ष पर आराम से उतर जा।'

महाबल ने कहा—'एक बात बता, क्या तूने ही मेरी माता के गले से लक्ष्मीपुंज हार निकाला था ? वह हार अब कहां है ?'

उसने कहा—'छोड़ दे मुझे, मैं नहीं जानती।'

महाबल बोला—'देवी ! मैं तुझे नहीं छोड़ूंगा। मैं मरूंगा भी तो तुझे साथ लेकर ही मरूंगा। तू मुझे बता, मैं छोड़ दूंगा।'

वह व्यन्तरी बोली—'कुमार ! तू मुझे परेशान कर रहा है। मैं इतना बताए देती हूं कि वह हार तुझे कभी-न-कभी प्राप्त हो जाएगा।'

'वह हार अब कहां है ?'

'कुमार आगे मत पूछो।'

'क्यों ? मैं तुझे नहीं छोड़ूंगा।' महाबल ने हाथ की पकड़ और मजबूत कर दी।

वह व्यंतरी तिलमिला उठी।

उसने कहा—'कुमार ! मैंने ही उस हार का अपहरण किया था। तेरा भी अपहरण करना चाहती थी, पर व्यर्थ। तेरे पुण्य प्रबल हैं। वह हार मलयासुन्दरी की अपरमाता रानी कनकावती के पास है।'

महाबल बोला—'अब तू मुझे जहां चाहे उतार दे।'

देवी ने उसे विशाल आम्रवक्ष पर उतार दिया।

महाबल उस आम्रवृक्ष की विशाल शाखा पर खड़ा रहा। उसने हाथ छोड़ दिया। वह नारी तत्काल वायु-वेग से आकाश में उड़ी और अदृश्य हो गई।

महाबल ने सोचा—अरे ! मैंने इसका परिचय नहीं पूछा—इससे मैंने लक्ष्मी-पुंज हार के विषय में ही पूछा। ओह, यह कैसे हुआ ? मैंने हाथ क्यों छोड़ा ? मेरे में मतिभ्रम क्यों हुआ ?

महाबल इसी चिन्तन में निमग्न होकर धीरे-धीरे वृक्ष से नीचे उतरा और वृक्ष के तने के पास खड़ा रहा···उसने आकाश की ओर देखा···अभी रात्रि का तीसरा प्रहर चल रहा था। महाबल ने सोचा—मैं कहां आ गया ? यह कौन-सा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थल है ? अपने नगर से मैं कितना दूर आ गया हूं ? यदि मैं स्वयंवर में नहीं पहुंच सका तो मलया की क्या दशा होगी ? अरे, इससे भी अधिक तो चिन्ता का विषय यह है कि यदि मैं निश्चित अवधि से पूर्व लक्ष्मीपुंज हार माता को नहीं दे पाया तो माता के प्राण-विसर्जन का भागी बनूंगा। ओह ! अब मैं क्या करूं ? कर्म की गति विचित्र है ! एक क्षण में वह हास्य बिखेरती है और दूसरे ही क्षण में क्रन्दन का तांडव दिखाती है। विधि के इस क्रीड़ा के समक्ष राजा और रंक सभी को हार माननी पड़ती है।

अरे, इस अपरिचित भूमि में अब मैं किस ओर जाऊं ? मैंने भयंकर भूल की है। मुझे देवी को कहना चाहिए था कि तू मुझे मेरे भवन में उतार दे···परन्तु मेरी बुद्धि जड़ बन गई थी। ऐसा क्यों हुआ ?

महाबल ने खड़े-खड़े नमस्कार महामंत्र का जाप प्रारंभ किया। चित्त की स्थिरता होने लगी···उसने देखा, चारों ओर भयंकर अरण्य के अतिरिक्त कुछ भी नहीं दीख रहा था। उसे आभास हुआ कि थोड़ी दूरी पर सरिता बह रही है···पर यह स्थल, कौन-सा है ! किससे पूछा जाए ? ऐसी भयावह अटवी में कौन आए ?

यह सोचकर वह एक शिलाखंड पर बैठ गया। उसने पुनः नमस्कार मंत्र की आराधना प्रारंभ कर दी।

महाबल को यह दृढ़ विश्वास था कि मंत्राधिराज महामंत्र नवकार की आराधना मनुष्य को मुक्ति के द्वार तक पहुंचाती है तो साथ-साथ अन्यान्य आपदाओं को भी दूर करती है।

महाबल को यह शिक्षा अपने माता-पिता से बचपन में ही प्राप्त हो चुकी थी। नमस्कार महामंत्र की आराधना उसका स्वभाव बन गया था। वह प्रतिदिन इसकी आराधना करता। कभी इसे विस्मृत नहीं करता था।

महाबल ने आंखें बंद कीं और समस्त वृत्तियों को नवकार मन्त्र के कमलदल पर एकत्रित कर एकाग्र हो गया। रात का तीसरा प्रहर अभी पूरा नहीं हुआ था।

और अचानक उसके कानों में कुछ शब्द सुनाई दिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६. कौन होगा ?

आराधना का पल पूरा हुआ। आवाज किस दिशा से आ रही है, यह जानने के लिए महाबल सतर्क हुआ···उसे प्रतीत हुआ कि कोई सुबक-सुबक कर रो रहा है। अरे, ऐसे निर्जन प्रदेश में, ऐसी नीरव रात्रि में कौन रो रहा है ?

महाबल ने तीक्ष्ण दृष्टि से आवाज की दिशा में देखा। थोड़े ही समय पश्चात् एक भयावह दृश्य देखकर वह चमक उठा।

एक विशालकाय अजगर इसी आम्रवृक्ष की ओर आ रहा था। उसके मुंह में एक मनुष्य था···वह उस मनुष्य को आधा निगल चुका था।

महाबल ने सोचा—इस भयंकर अटवी में, ऐसी अंधेरी रात में अजगर ने किसका शिकार किया है !···नहीं-नहीं, अभी मनुष्य को आधा ही निगला पाया है। अभी तक अजगर ने उसे चबाया नहीं है। मुझे तत्काल इस मनुष्य को मौत के मुख से बचा लेना चाहिए। मैं स्वयं मौत के मुंह से बचा हूं···मेरा कर्तव्य है कि मैं मौत से अभय होकर दूसरों को मौत से बचाऊं। ऐसी विपत्ति में यदि मैं किसी का हित संपादन करता हूं तो प्रकृति भी मेरा सहयोग करेगी···और यदि मेरी मौत आ जाएगी तो इतना तो मानसिक तोष होगा कि मैंने अपने प्राण दूसरे को बचाने में विसर्जित किए हैं।

यह सोचकर महाबल ने नवकार मन्त्र का स्मरण किया और अजगर की ओर आगे बढ़ा। अजगर की आंखें दो धगधगते अंगारों जैसी थीं। किन्तु महान् पराक्रमी और पूर्ण अभीत महाबल अजगर पर जा गिरा और अपने मजबूत हाथों से अजगर के दोनों जबड़े शक्ति लगाकर पकड़ लिये।

अजगर व्यग्र हुआ···क्रोध से भर गया···किन्तु महाबल ने अजगर को चीर डाला। उस अजगर के मुंह में फंसा मनुष्य एक ओर उछलकर गिर पड़ा··· महाबल ने ध्यान से देखा—वह पुरुष नहीं एक स्त्री थी, युवती थी।

मौत के मुंह से रक्षित युवती अति मंद स्वर में बोली—'महाबल !··· महाबल···महाबल···मुझे···तेरा···'

युवती अधिक नहीं बोल सकी, वह मूर्च्छित हो गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मेरे नाम से परिचित यह स्त्री कौन होगी ?' यह सोचकर महाबल अत्यन्त विस्मित हुआ। वह युवती के पास गया···इधर-उधर से युवती का मुंह देखने लगा···मुंह देखते ही वह चमक उठा। हृदय कांपने लगा···अरे, यह तो चंद्रावती नगरी की राजकन्या मलयासुन्दरी है ! ओह ! चन्द्रावती की प्रिय राजकुमारी यहां कैसे आ पहुंची ? अभी-अभी इसका स्वयंवर रचा गया है···इतनी भारी विपत्ति में यह कैसे फंस गई ? यह अत्यन्त दुःखद घटना है। यह भी पुण्ययोग से उचित ही हुआ। अनेक दुःख दीखने में भयावह होते हैं, पर उनका परिणाम सुखद होता है। आकाशचारिणी देवी का कटा हुआ हाथ यदि मैं नहीं पकड़ता और यदि वह देवी मुझे यहां नहीं लाती तो मेरे हृदय की आशा समाप्त हो जाती···जो कुछ होता है वह अच्छे के लिए ही होता है।

ऐसे सोचते हुए महाबल वहां बैठ गया। उसने मलयासुंदरी का मस्तिष्क अपनी गोद में लिया और अपने उत्तरीय से हवा देने लगा। थोड़े समय पश्चात् मलयासुन्दरी में चेतना के स्पंदन दृष्टिगोचर हुए। महाबल हर्षोत्फुल्ल होकर मलया का आनन देखता रहा।

अर्द्ध घटिका के प्रयत्न के पश्चात् मलयासुन्दरी के होंठ फड़क गए। वह मंद स्वर में कुछ गुनगुनाने लगी। महाबल ने सुना। महाबल अत्यन्त प्रसन्न चित्त से मलया को सचेत करने के लिए उसके हाथ-पैर और मस्तक दबाने लगा।

कुछ क्षणों पश्चात् मलया ने आंखें खोलीं···महाबल अत्यन्त हर्षित हो रहा था। वह उस वन-प्रदेश, रात्रिकाल और सारी परिस्थितियों को विस्मृत कर मलया को देख रहा था।

प्रियतमा की आंखें खुली हैं, यह देखकर वह बोला—'मृगनयनी ! स्वस्थ हो जाओ—तेरी यह दशा देखकर मेरा मन अत्यधिक व्यथित हो रहा है···इधर देख—मेरी ओर दृष्टि कर···।'

मलया इन शब्दों के स्वर को सुनकर चमक उठी। अभी तक वह अचेत थी। इस विजन वन में प्रियतम के आने की कोई संभावना ही नहीं थी। उन चिरपरिचित स्वरों को सुनकर मलया का रोम-रोम हर्ष से नाचने लगा। वह अवाक् बनकर महाबल की ओर देखती रही।

'प्रिये ! कुछ स्वस्थ तो हो ?'

'ओह ! आप ?' कहती हुई मलया तत्काल बैठ गई।

महाबल का एक हाथ अपने हाथ में लेकर बोली—'स्वामिन् ! आप यहां कैसे ? मैं कैसे बच गई ? मैं कोई स्वप्न तो नहीं देख रही हूं ?'

'नहीं, मलय ! यह स्वप्न नहीं, जीवंत सत्य है, यथार्थ है। किन्तु ये सारी बातें हम बाद में करेंगे। तू मेरे साथ नदी के किनारे चल···तेरा शरीर और तेरे कपड़े अजगर के कारण मैले हो गए हैं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलया ने कहा—'चलो।'

महाबल ने मलया का हाथ पकड़ लिया।

नदी निकट ही थी। दोनों संभल-संभलकर चले और कुछ ही क्षणों में नदी के तट पर आ पहुंचे।

दोनों ने शरीर और वस्त्र साफ किए। मुख-प्रक्षालन कर पुनः उस विशाल आम्रवृक्ष के नीचे आकर शिलाखंड पर बैठ गए।

मलया ने कहा—'कुमार! अब आप मुझे बताएं कि आप यहां कैसे आए?'

'प्रिये! मैं यहां अचानक आया हूं···मेरी यह निशा-यात्रा रोमांचक और आश्चर्यकारी है'—कहकर महाबल ने पूरा वृत्तान्त ज्यों का त्यों मलयासुन्दरी को कह डाला।

युवराज की इस अभीत और साहसपूर्ण यात्रा की कथा को सुनकर मलया का चित्त पुलकित हो उठा। उसनें प्रसन्न स्वरों में कहा—'प्रियतम! आपने भी मौत के साथ भयंकर संग्राम किया है···'

'मलया! तू अपनी बात बता। महाराज की प्रिय राजकुमारी अजगर के मुंह में कैसे फंसी? जिस राजकुमारी के इशारे पर सकड़ों दास-दासी और सैनिक प्राण न्यौछावर करनें के लिए तत्पर रहतें हैं, वह अकेली कैसे? तुझें इस विकट स्थिति का सामना क्यों करना पड़ा? मेरा मन अभी भी इन प्रश्नों में उलझ रहा है। तू शीघ्र अपनी बात बता।'

'युवराज! कर्म का विपाक बड़ा विचित्र होता है! वह क्या, कब, कैसे कुछ कर डालता है, जिसका किसी को पता ही नहीं लगता। मैं राज-परिवार में परम आनन्द में थी। मेरा स्वयंवर तय हो चुका था। उसकी तैयारियां हो रही थीं। महाराजा और महारानी, मेरे पिताश्री और मातुश्री—दोनों का मन मुझें देख-देखकर बांसों उछल रहा था। हजारों-लाखों स्वर्ण मुद्राएं व्यय की जा चुकी थीं। मेरे लिए वस्त्र और आभरणों का अंबार लग चुका था। किन्तु एक दिन··· अपरमाता नें महाराजश्री से क्या कहा, मैं नहीं जानती, किन्तु मेरे पर यह मिथ्या आरोप लगाया गया कि मैं आपसे मिलकर स्वयंबर के समय पिताश्री का राज्य हड़प लूंगी और पितृकुल का विनाश कर आपको राज्य-सिंहासन पर बिठा, मैं राजरानी बनूंगी।···और कुमार्यावस्था में मैंनें जो आपसे संबंध बनाए रखा था, उससे कुल का गौरव तिरस्कृत हुआ है···इस आक्षेप की बात पिताश्री नें नहीं कही, किन्तु जब मैं मौत की सजा भोगने के लिए नगर के बाहर आयी, तब नगर-रक्षक नें मुझें यह बात बतायी थी।'

बीच में ही महाबल नें पूछा—'किन्तु इस कल्पित बात पर महाराजा ने विश्वास कैसे कर लिया? तेरे पर जो वात्सल्य था, उसमें इस कल्पित वृत्तान्त की सचाई का अस्तित्व ही कहां रह जाता है!'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'कुमार ! महाराजा ने मेरे से लक्ष्मीपुंज हार मांगा। वह हार मैं उन्हें कैसे दे पाती ! मैंने झूठ कहा कि हार चोरी चला गया है। इससे पिताश्री का संशय दृढ़ हो गया। उन्होंने मुझे अपने कक्ष में नजरबंद कर डाला और मौत की सजा की आज्ञा दी। मैं किसी के हाथ से मरना नहीं चाहती थी, इसलिए अंधकूप में गिरकर मृत्यु का वरण करने की प्रार्थना पिताश्री से की। पिताश्री ने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली और मैं मानती हूं कि इस स्वीकृति के पीछे मेरे सद्कर्मों ने कार्य किया है। नगररक्षक के साथ मैंने मौत के मुंह में जाने के लिए इस नदी के तट पर स्थित उस अंधकूप की ओर प्रस्थान कर दिया। मेरी सारी आशाएं छिन्न-भिन्न हो चुकी थीं। इस जन्म में मैं आपको प्राप्त नहीं कर सकूंगी, यह मुझे दृढ़ विश्वास हो चुका था। मैं सन्ध्या के समय कूप पर आयी। नगररक्षक मुझे वहां छोड़ दुःखी मन से मुझे देखता रहा। मैंने नमस्कार महामंत्र की कुछ क्षणों तक आराधना की। और नमस्कार महामंत्र रटते-रटते उस भयंकर अंधकूप में छलांग लगा दी।'

'ओह ! विधि की विडम्बना ! अरे, उस अंधकूप से तुझे किसने निकाला ? तू अजगर के मुंह में कैसे फंस गई ?'

'प्राणेश ! जीवन में जब पाप और पुण्य के बीच संघर्ष होता है, तब नहीं कहा जा सकता कि कौन जीतेगा ! मैं कूप में पड़ी…कूप अत्यन्त गहरा था… उसमें पानी नहीं था…उससे कोई बाहर निकाले, यह अशक्य था…मौत की प्रतीक्षा करती हुई मैं मात्र नवकार महामंत्र का जाप तन्मयता से कर रही थी… मैं कितनी गहराई में जा पड़ी, इसका मुझे अब भी भान नहीं है, किन्तु मैं तल तक नहीं पहुंची। बीच में ही कहीं ऐसी मुलायम झाड़ी पर अटक गई। मैंने आंखें खोलीं। कुछ पवन और प्रकाश का अनुभव हुआ। मैं उस झाड़ी की लटकती डाल को पकड़कर धीरे-धीरे उस ओर लटक गई। मुझे लग रहा था कि यह शाखा टूटेगी और मैं नीचे पाताल में जा गिरूंगी। किन्तु दूसरे ही क्षण मुझे कुछ गड्ढा-सा दीखा…मैंने उस पर अपना पैर रखा…वह गड्ढा नहीं था, एक संकरी सुरंग थी…नवकार मंत्र का स्मरण करती हुई मैंने उस सुरंग में प्रवेश किया…मैं बच जाऊंगी, इसकी कल्पना करना भी मेरे लिए दुरूह था। फिर भी नवकार मंत्र का सहारा ले, मैं लेटकर सरकने लगी। पता नहीं मैं उस सुरंग में कितनी दूर सरकती रही…धीरे-धीरे चलकर जब मैं उस सुरंग से बाहर निकली तब रात हो चुकी थी…मैं बच गई इसका मुझे तनिक हर्ष हो रहा था। किन्तु दूसरे ही क्षण मेरे पापों ने पुण्य को दबोचा और मैं एक विशालकाय अजगर के मुंह में फंस गई…अब मेरी मौत निश्चित थी…उस अजगर के मुंह से निकलने का प्रयत्न करना मेरे लिए अशक्य था…मैं शक्तिहीन हो चुकी थी…मैंने आंखें बंद कर लीं…मेरी चेतना भी लुप्त हो गई…और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फिर क्या हुआ···?'

'पाप और पुण्य के संघर्ष में पाप पुनः पराजित हुआ···तेरे प्रियतम के हाथों ने मौत के मुख से तुझे खींच लिया और तू बच गई।' युवराज ने कहा।

मलया कुछ कहे, उससे पूर्व ही किसी के आने की आहट सुनाई दी। दोनों चौंके।

मलया ने कहा—'प्रियतम ! कोई आ रहा है, ऐसा प्रतीत होता है।'

'हां, किन्तु इस भयंकर वन में कौन आएगा ?'

'संभव है, महाराज के सैनिक···चलो, हम दूसरी ओर खिसक जाएं'—कहकर मलया उठने लगी पर वह उठ नहीं सकी, क्योंकि महाबल ने उसका हाथ पकड़ रखा था।

महाबल ने हंसते-हंसते कहा—'घबराने की कोई बात नहीं है। मेरे पास एक रासायनिक गुटिका है'—कहते हुए उसने एक डिबिया से वह गुटिका निकाली और वह एक आम्रवृक्ष के पास गया। दो-चार पत्ते तोड़ वहां ले आया।

मलया ने पूछा—'क्या है ?'

'यह एक अद्भुत वस्तु है। मैं आम्रपान के रस में इस गुटिका को घिसकर तेरे ललाट पर तिलक करूंगा और तू देखते-देखते पुरुष के रूप में बदल जाएगी।'

'पुरुष ?'

'हां, हमारे रक्षण का यह सुन्दर उपाय है। आने वाला यदि कोई सैनिक होगा तो वह तुझे पहचान नहीं पाएगा। कोई चोर-लुटेरा होगा तो मैं उसका सामना कर लूंगा। यदि साथ में कोई स्त्री हो, तो सामना करने में हिचक रहती है।'

महाबल ने तत्काल आम्र के पत्तों का रस निकाला। दो-चार बूंदें एक पत्थर पर डालीं। उसमें गुटिका घिसी और अपने ही हाथों से मलया के ललाट पर तिलक किया।

उस द्रव्य का स्पर्श होते ही मलया के शरीर में झनझनाहट होने लगी। उसने कांपते हुए कहा—'स्वामिन् ! कुछ हो रहा है।'

'प्रिये ! घबराना नहीं है···यह एक महारसायन का प्रभाव है···समग्र शरीर में एक प्रकार की क्रान्ति होती है···देख···तेरे शरीर का परिवर्तन होने लगा है।'

मलया आश्चर्यभरी दृष्टि से अपना शरीर देखने लगी।

उसके उन्नत उरोज गायब हो गए···मलया चिल्लाते-चिल्लाते रुक गई। 'मेरा स्त्रीत्व···?'

'छिप गया है। इस तिलक का प्रभाव दीर्घकाल तक रहेगा और मैं ही तुझे मूल रूप में ला सकूंगा···अब तेरा कंचुकीबंध व्यर्थ है···अब तू धोती और कमर-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पट्ट धारण कर। उत्तरीय को पुरुष की तरह धारण कर•••अथवा मस्तक पर बांध दे•••'

आश्चर्य से भरी-पूरी मलया महाबलकुमार के कथनानुसार करने लगी।

किसी के आने की आहट निकट सुनाई देने लगी।

दोनों आम्रवृक्ष के तने के पास बैठ गए थे और आवाज की दिशा में तीक्ष्ण दृष्टि से देख रहे थे।

दोनों के मन में एक ही प्रश्न था—'कौन होगा ?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. रानी भाग गई

राजकुमारी मलयासुन्दरी जब पातालमूल उस अंधकूप में मौत का वरण करने कूद पड़ी, तब उसको पहुंचाने आए हुए नगररक्षक और अन्य सैनिक फूट-फूटकर रो पड़े ।

'नगररक्षक ने तो वहीं कह दिया था कि नौकरी कैसी भी क्यों न हो, वह अन्ततोगत्वा है तो पराधीनता ही। मेरा यह सौभाग्य है कि एक निर्दोष राजकुमारी का वध मेरे हाथों से नहीं हुआ ।'

यह कहता हुआ नगररक्षक सैनिकों को साथ ले नगरी की ओर चल पड़ा। महामंत्री सुबुद्धि नगररक्षक की प्रतीक्षा में बैठें हुए थे। रात्रि के प्रथम प्रहर के बाद नगररक्षक आया और उसने राजकुमारी के कुएं में कूद पड़ने की बात रोते-रोते कही।

महामंत्री सुबुद्धि को प्रबल आघात लगा। उसे लगा कि महाराजा के हाथ से एक जबरदस्त अन्याय हो गया है। इस अन्याय का न निवारण हो सका और न महाराजा का निश्चय ही बदला।

महामंत्री जानते थे कि मलया कुल की गौरव है। उससे कुल को कलंक लगे, वैसा आचरण कभी नहीं हो सकता।

महामंत्री ने नगररक्षक से पूछा—'क्या राजकुमारी ने कुछ कहा भी था?'

'नहीं, मैंने राजकन्या से बहुत प्रार्थना की कि आप सच-सच बताएं और इससे बच जाएं—इस विषय में उन्होंने कुछ नहीं कहा। अंत में इतना-सा कहा—नगररक्षक! तुम तनिक भी दुःख मत करना। मुझे अपने ही पूर्वकर्मों को भोगना पड़ रहा है। आप कोई दोषी नहीं हैं। माता-पिता के वात्सल्य को खोकर संतान का जीना व्यर्थ है···इसके अतिरिक्त राजकुमारी ने कुछ भी नहीं कहा।'

'उस लक्ष्मीपुंज हार के विषय में कोई प्रश्न किया था?'

'हां, किन्तु राजकुमारी ने कोई उत्तर नहीं दिया। सब कुछ अपने ही कर्मों का दोष है, हार तो निमित्त मात्र है, इतना ही कहा था।'

'हूं···महाराजा को समाचार ज्ञात करा दिया!'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'नहीं, अब मैं वहीं जा रहा हूं।'

'अच्छा, तुम महाराजा के पास जाओ, मैं भी आ रहा हूं। मुझे विश्वास है कि राजकुमारी पूर्ण निर्दोष है···निष्कलंक है, चंद्र जैसी निर्मल है···अब राजकन्या के प्राण तो नहीं बचाए जा सकते। पर राजा को अपने अन्याय का भान तो कराया ही जा सकता है।'

'महामंत्रीश्वर! अब अन्याय का भान कैसे कराया जा सकेगा! राजकुमारी के बिना सही हकीकत कौन बताएगा?' नगररक्षक ने कहा।

'जैसे सत्य प्रकट होता है वैसे ही असत्य गुप्त नहीं रह सकता। तुम चलो, मैं भी आता हूं।'

नमस्कार कर नगररक्षक चला गया।

महामंत्री ने सोचा—इस सारे षड्यंत्र के पीछे रानी कनकावती का हाथ होना चाहिए। वह ईर्ष्या की प्रतिमूर्ति है। उसने यह जघन्य कार्य नहीं किया हो, इसकी संभावना कैसे की जा सकती है! सोचते-सोचते मंत्रीश्वर ने मन-ही-मन कुछ निश्चय किया और वस्त्र बदलकर रथ में बैठ राजभवन की ओर प्रस्थान कर दिया।

नगररक्षक के द्वारा मलया के सारे समाचार सुन महाराजा निश्चिंत हो गए और रानी कनकावती परम मुदित हुई। महारानी चंपकमाला भीतर-ही-भीतर रोने लगी और अत्यन्त पीड़ा का अनुभव करने लगी।

और महाराज वीरधवल के पास महामंत्रीश्वर आ पहुंचे।

नगररक्षक प्रणाम कर चला गया।

महाराजा ने कहा—'मंत्रीश्वर! सारा कार्य सहजरूप में हो गया। मलया ने ही अंधकूप में गिरने की प्रार्थना की थी।'

महामंत्री नें गंभीर होकर कहा—'महाराजाधिराज! आप इसे उत्तमाकार्य मान रहे हैं? मेरी दृष्टि में यह भयंकर कलंकदायी कार्य हुआ है···महा अनिष्ट हुआ है।···

'महा-अनिष्ट! तो क्या मुझे अपने परिवार का संहार होते देखना चाहिए था?' राजा नें पूछा।

महामंत्री और महाराजा के बीच दो घटिक पर्यन्त बातचीत होती रही। महामंत्री नें महाराजा को अनेकविध रहस्य समझाए। अन्त में कहा—'महाराज! आपके हाथों से महान् अन्याय हो चुका है। राजकुमारी मृत्यु को प्राप्त हो चुकी है, परन्तु आपको अपने कृत्य का भान हो, इसलिए मैंने इतना कुछ कहा है। महारानी कनकावती अभी कहां है?'

'आपके आने से पूर्व ही वह अपने आवास में चली गई है। क्या उसे यहां बुला भेजूं?' महाराजा ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'नहीं, उन्हें बुलाने में कोई लाभ नहीं है। हम दोनों वहां गुप्त रूप में जाएं' महामंत्री ने कहा।

'गुप्तरूप में क्यों?'

'महाराज! जब इच्छानुरूप कार्य हो जाता है अथवा वैर पोषण की तृप्ति होती है तब व्यक्ति हर्षावेश में आ जाता है।' बहुत बार वह हर्ष का आवेश सत्य का भान करा डालता है।' महामंत्री ने कहा।

'तो हम चलें'—कहकर राजा उठा।

'ऐसे नहीं, पूर्ण गुप्तरूप में। कोई पहचान न पाए, इस रूप में जाना है।' महामंत्री ने कहा।

महाराजा ने अपने सेवक को बुलाया और उसे दो 'तमोवस्त्र' लाने के लिए कहा। ये तमोवस्त्र एक प्रकार के वृक्ष की छाल के तंतुओं से निष्पन्न होते थे। अंधकार में ये तमोवस्त्र अदृश्य हो जाते, प्रकाश में ये दृश्य रहते। इन तमोवस्त्रों को धारण करने वाले को रात में कोई नहीं देख सकता था।

सेवक दो तमोवस्त्र ले आया।

महाराजा वीरधवल और महामंत्री ने तमोवस्त्र पहन लिये।

रानी कनकावती आज अत्यन्त प्रसन्न थी। उसकी प्रिय सखी सोमा भी उसकी प्रसन्नता को विविध प्रकार से बढ़ा रही थी।

रानी कनकावती के कक्ष का द्वार भीतर से बंद था। रानी कनकावती प्रसन्नमुद्रा में एक आसन पर बैठी थी। उसके पास दासी सोमा बैठी थी। पास में त्रिपदी पर वह लक्ष्मीपुंज हार पड़ा था।

कनकावती सोमा को यह सारा वृत्तान्त दो-तीन बार सुना चुकी थी कि उसने किस चतुराई से क्या-क्या किया था। फिर भी रानी मानती थी कि वह अपनी विजय-गाथा किसी को नहीं सुना पायी है। वह उसके हृदय में ही अवस्थित है।

तमोवस्त्र को पहने हुए दोनों पुरुष रानी कनकावती के कक्ष के द्वार पर आए और कक्ष के भीतर सोमा और कनकावती के बीच जो वार्तालाप चल रहा था, उसे कान लगाकर सुनने लगे।

बात-ही-बात में सोमा ने कहा—'देवी! मुझे तो एक भय निरन्तर सता रहा था।'

'कौन-सा भय?'

'आपकी बात यदि महाराजा नहीं मानेंगे तो…?'

बीच में ही कनकावती जोर से हंसती हुई बोल पड़ी—'महाराजा…! पगली, उनमें तो बुद्धि ही कहां है? किन्तु आज मुझे अपूर्व आनन्द का अनुभव हो रहा है कि अब से यह लक्ष्मीपुंज हार मेरे कंठ की शोभा बढ़ाएगा। यह मेरे सत्त्व को और अधिक शक्तिशाली बनाएगा…इस हार ने ही मेरे सारे मनोरथ पूर्ण किए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं···इस हार ने ही महाराजा के हृदय में ज्वाला भभकायी है और इसी हार ने मलया के प्राण लिये हैं।'

महामंत्री ने महाराजा का हाथ दबोचा।

सोमा बोली—'महादेवी ! मेरी एक प्रार्थना···'

'बोल, आज मैं तेरे पर प्रसन्न हूं, अत्यन्त प्रसन्न हूं···आज की खुशी में मैं तुझे अपार रत्नहार दूंगी।'

'महादेवी ! मेरी प्रार्थना दूसरी है···इस हार का नाम लक्ष्मीपुंज है, पर मुझे तो यह अपशकुन अथवा अनिष्ट करने वाला प्रतीत होता है···आप इस हार को कभी धारण न करें।'

'अनिष्ट करने वाला !···पगली ! यह तो देवलोक की प्रसादी है···मेरी सौत इसी हार को पहनकर महाराजा पर अनुशासन करती थी···अब मैं महाराजा पर अधिकार करूंगी।'

'महादेवी ! इस हार ने अनेक अनिष्ट किए हैं। इसीलिए अभी कुछ समय तक आप इस हार को बाहर न निकालें अन्यथा···'

'आशंका मत कर। मैं पूर्ण जागरूक होकर ही इस हार को बाहर निकालूंगी ···तब तक यह मेरे पास ही सुरक्षित रहेगा।'

सोमा कुछ कहे, उससे पूर्व ही बाहर खड़े-खड़े सारी बातें सुनने वाले महाराजा अत्यन्त कोपारुण हो गए और उन्होंने द्वार पर धक्का मारा···परन्तु द्वार भीतर से बन्द था इसलिए खुल नहीं सका। महाराजा बार-बार द्वार को खटखटाते हुए गुर्राकर बोले—'दुष्टा···मेरी लाड़ली पुत्री का खून करने वाली नीच नारी···शीघ्र ही दरवाजा खोल !'

महाराजा की आवाज सुनते ही कनकावती और सोमा—दोनों चौंक पड़ीं।

फिर महाराजा की आवाज सुनाई दी—'ईर्ष्या और वैर की जीवित अग्नि जैसी राक्षसी···तेरे पाप का घड़ा तेरे ही हाथों फूट चुका है···जल्दी दरवाजा खोल !' यह कहते-कहते ही महाराजा वीरधवल वहीं बेहोश होकर गिर पड़े।

रानी ने सोमा से कहा—'सोमा ! बचने का एकमात्र उपाय यही है कि हम वातायन के मार्ग से भाग जाएं···जितना धन ले सकें, उतना साथ ले लें और यहां से शीघ्र निकल जाएं। अन्यथा मौत निश्चित है···जल्दी कर···मेरी पेटी खोल···राजा दरवाजा खोलकर अन्दर घुसें, उससे पूर्व ही हमें यहां से पलायन कर जाना है।'

कांपती हुई सोमा ने पेटी खोली।

रानी कनकावती ने रत्नाभरणों की पोटली बांधी···लक्ष्मीपुंज हार भी ले लिया और दोनों रस्से के सहारे वातायन से नीचे उतर गयीं।

राजा मूर्च्छित हो गए थे। नीचे किसी को कोई खबर नहीं थी···महामंत्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ने महारानी चंपकमाला को बुलाने के लिए दो दासियों को कहा और स्वयं महाराजा की मूर्च्छा को तोड़ने का उपचार करने लगे।

यह अवसर रानी कनकावती के पलायन के लिए स्वर्णिम अवसर बन गया। वह राजभवन के बाहर आ गयी। उसने सोमा से कहा—'सोमा! यदि हम दोनों एक साथ रहेंगी तो पकड़े जाने का भय रहेगा। मैं अपनी सखी मगधा के पास जा रही हूं और तू भी कहीं गुप्तरूप से चली जा।'

सोमा ने सोचा—ठीक अवसर पर रानी ने धक्का मारा है। रानी मगधा वेश्या के यहां जाकर छिप जाना चाहती है और मुझे…

सोमा कुछ नहीं बोली। वह अकेली गोला नदी के किनारे पर अवस्थित वन की दिशा में चल पड़ी।

रानी कनकावती ने अपनी सखी मगधा वेश्या का द्वार खटखटाया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१. विधि की क्रूरता

महाराजा वीरधवल रानी कनकावती और दासी सोमा के बीच हो रही बात को सुनकर मर्माहत हो गए। उन्हें अपने अन्याय का भान हुआ और उसकी प्रचुर वेदना से आहत होकर वे मूर्च्छित हो गए।

महाराजा के मूर्च्छित होने की बात सारे राजभवन में फैल गयी और सभी लोग इधर-उधर दौड़-धूप करने लगे।

महाप्रतिहार ने तत्काल वैद्य को बुलाने के लिए एक घुड़सवार को भेजा।

महादेवी चंपकमाला भी आ गयी और वह अत्यन्त व्यथा का अनुभव करने लगी।

महामंत्री ने शीतोपचार प्रारंभ किया और कुछ ही क्षणों के पश्चात् महाराजा में प्रकंपन होने लगे। उन्हें होश आया और वे त्रुटित स्वर में बोल पड़े—'मेरी मलया···कहां है मेरी मलया ? कहां है मेरी लाडली ?'

महामंत्री बोले—'महाराज ! चिन्ता न करें। जो होना था, वह घटित हो चुका है। अब उसका पुनः अनुसंधान नहीं किया जा सकता। आप निश्चिन्त रहें। आप पहले स्वस्थ बनें, चिन्ता न करें।'

इतने में ही राजवैद्य आ पहुंचा।

उसने महाराजा की अवस्था देखी। उसने कहा—'मंत्रीश्वर ! चिन्ता की कोई स्थिति नहीं है। हृदय पर आघात होने से मूर्च्छा आयी है, यह अभी ठीक हो जाएगी।'

राजवैद्य ने पीले रंग की एक गुटिका निकाली। उसे पानी के साथ महाराजा को निगलने के लिए कहा। ज्यों ही वह गुटिका गले के नीचे उतरी, महाराजा के सारे शरीर में झनझनाहट होने लगी और दो-चार क्षणों में ही महाराजा ने आंखें खोल दीं।

महारानी ने अपने उत्तरीय के कोने से आंसू पोंछे और महाराजा की ओर देखा। महाराजा ने चारों ओर देखा। महारानी पर नजर टिकाकर बोले—'देवी ! मेरे से महान् अन्याय हो गया है। परम पवित्र हृदय वाली राजकुमारी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर मैंने अन्याय कर डाला···ओह ! अब क्या होगा ?'

महामंत्री ने कहा—'महाराजाधिराज ! अभी कुछ नहीं करना है, जब करना होगा तब करना होगा।'

राजवैद्य बोला—'महाराज ! आप कुछ विश्राम करें, मौन रहें।'

'राजवैद्य ! पापी को विश्राम करने का अधिकार ही क्या है ? उतावली में मैंने अक्षम्य अपराध किया है। मंत्रीश्वर ! मुझे स्मरण हो रहा है कि आपने मुझे समझाने का भरसक प्रयत्न किया था; पर मैं···। अरे, वह दुष्टा कनकावती कहां है ?' यह कहते-कहते महाराजा बैठ गए।

महामंत्रीश्वर ने कहा—'महाराज ! आप कुछ आराम करें।'

'नहीं, मंत्रीश्वर ! सबसे पहले मेरे सामने कनकावती को हाजिर करो।'

तत्काल महामंत्री ने महाप्रतिहार की ओर इशारा किया। महाप्रतिहार कनकावती के कक्ष की ओर चला। वह कक्ष के द्वार पर पहुंचा। उसने द्वार खटखटाया। द्वार नहीं खुला। तब महाप्रतिहार ने कहा—'देवी ! शीघ्र द्वार खोलो और मेरे साथ महाराजा के पास चलो, अन्यथा मुझे द्वार तोड़ने के लिए विवश होना पड़ेगा।'

परन्तु उत्तर कौन दे ? कौन द्वार खोले ? रानी तो पलायन कर अपनी प्रिय सखी मगधा वेश्या के यहां सुखपूर्वक पहुंच चुकी थी।

महाप्रतिहार ने द्वार खुलने की प्रतीक्षा में कुछ क्षण बिताए। द्वार नहीं खुला। तब उसने अपने सैनिकों को द्वार तोड़ने का आदेश दे दिया। द्वार तोड़ दिया गया। महाप्रतिहार कक्ष के भीतर गया। चारों ओर देखा; वह अवाक् रह गया। उस शयनकक्ष में न रानी ही थी और न कोई दासी। दो-चार पेटियां अस्त-व्यस्त पड़ी थीं···दीपमालिका का मंद प्रकाश योगी की भांति स्थिर था।

महाप्रतिहार ने कक्ष का कोना-कोना छान डाला। वह वातायन की ओर गया। नीचे देखा, पर कुछ भी पता नहीं चला। वह दौड़ा-दौड़ा महाराजा वीरधवल के कक्ष पर पहुंचा। उस समय महाराजा चंपकमाला का हाथ पकड़े फूट-फूटकर रो रहे थे। राजवैद्य औषधि की एक मात्रा देकर विदा हो गए थे। महामंत्री महाराजा को धीरज बंधा रहे थे।

चंपकमाला को वृत्तान्त ज्ञात नहीं था।

इतने में ही महाप्रतिहार ने कक्ष में प्रवेश कर कहा—'कृपानाथ ! देवी कनकावती या कोई भी दासी वहां नहीं है। कक्ष खाली पड़ा है।'

'वह कहां गई है ?'

'शयनकक्ष का द्वार भीतर से बंद था। मुझे उसे तुड़वाना पड़ा। पर अंदर कोई नहीं मिला···संभव है कि देवी कनकावती अपनी दासी को साथ ले वातायन के मार्ग से बाहर चली गई हैं।' महाप्रतिहार ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'नगररक्षक को बुलाओ और उस दुष्टा की चारों ओर खोज करो। जीवित या मृत अवस्था में कनकावती को मेरे समक्ष प्रस्तुत करना होगा।' महाराजा वीरधवल ने कुपित स्वरों में कहा।

महामंत्री ने कहा—'महाराज ! अब आप विश्राम कर लें'''रानी कनकावती भागकर कहां जा पाएगी'''उसको प्राप्त करने का उपाय हो जाएगा'''आप निश्चित रहें, विश्राम करें।'

महाराजा बोले—'मंत्रीश्वर, मेरा आराम मलया के साथ कूच कर गया है। अविचार के कारण जो अनर्थ हुआ है वह मुझे कांटे की भांति चुभ रहा है।'

रानी चंपकमाला एक शब्द भी बोलने की स्थिति में नहीं थी। उसकी आंखों से टप-टप कर आंसू गिर रहे थे और वह उन्हें पोंछने का प्रयत्न कर रही थी।

महाराजा ने मंत्रीश्वर की ओर दृष्टि कर कहा—'मंत्रीश्वर ! उस दुष्टा को पकड़कर मेरे सामने प्रस्तुत करना है और स्वयंवर के लिए आए हुए राजकुमारों को हमने अभी तक कुछ भी नहीं बतलाया है।'

'कृपावतार ! एक जल्दबाजी के निर्णय का अनिष्ट परिणाम हम भोग ही रहे हैं'''अब प्रत्येक प्रश्न पर हमें गंभीरता से विचार करना होगा। आप निश्चिन्त रहें'''मैं सारी व्यवस्था कर दूंगा।' महामंत्री ने कहा।

तत्काल महाराजा ने एक प्रश्न किया—'मंत्रीश्वर ! क्या मलया की मृत्यु के विषय में आपको कुछ सन्देह है ?'

'नहीं, महाराज ! जब नगररक्षक मलया को लेकर वन की ओर प्रस्थान कर रहा था, तब मैंने उससे कहा था कि मलया को जीवित रहने का एक अवसर दे। किन्तु नगररक्षक से ज्ञात हुआ है कि राजकुमारी स्वयं मृत्यु का वरण कर शांति पाना चाहती थी'''वह तनिक भी विचलित हुए बिना उस अंधकारमय पातालकूप में गिर पड़ी'''नगररक्षक राजकुमारी के निश्चय को बदल नहीं सका। मुझे प्रतीत होता है कि राजकुमारी का मन माता-पिता के इस क्रूर व्यवहार से आहत-प्रत्याहत हुआ और उसने प्राणों का विसर्जन कर देना ही श्रेयस्कर समझा।'

'वह पातालकूप तो अत्यन्त भयंकर है !'

'हां, महाराज ! उस कूप में गिरने के पश्चात् मृत्यु के अतिरिक्त और कुछ भी संभव नहीं है।' यह कहते हुए मंत्रीश्वर कक्ष से बाहर आ गए।

रानी चंपकमाला महाराजा को सांत्वना दे रही थी और उन्हें चिन्तामुक्त होकर विश्राम करने के लिए कह रही थी।

उसने औषधि की दूसरी पुड़िया दी।

लगभग आधी घड़ी के पश्चात् पुड़िया का असर होने लगा और राजा निद्राधीन हो गए। रानी राजा के पास ही बैठी रही।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और उस समय आम्रवृक्ष के पास पुरुषवेश में मलया बैठी थी। महाबल आहट की दिशा में कान लगाए बैठा था।

थोड़े समय पश्चात् एक आकृति दिखाई दी। महाबल ने तत्काल जोर से पुकारा—'कौन है?'

आने वाली और कोई नहीं, रानी कनकावती की दासी सोमा थी। वह घबरा गयी। उसने सोचा—राजा के सैनिकों ने मुझे पुकारा होगा। वह करुण स्वर में बोली—'मैं एक अत्यन्त दुःखी नारी हूं।'

महाबल और मलया—दोनों उस ओर गए। सोमा कांपती हुई वहीं खड़ी रह गयी थी⋯उसके दौड़ने का बल और साहस चुक गया था।

अभी प्रातःकाल प्रकट होने में विलम्ब था। अन्धकार फैला हुआ था। भय से कांपती हुई सोमा की ओर देखकर महाबल ने कहा—'बहन! तू क्यों डर रही है? हम परदेशी क्षत्रिय हैं। इस अटवी में मार्ग भूल गए हैं, इसलिए इधर-उधर भटक रहे हैं। यह स्थल कौन-सा है? क्या आसपास में कोई गांव या नगर है?'

सोमा बोली—'क्षत्रियकुमारो! मैंने तो यह समझा था कि आप दोनों राजा के सैनिक हैं और इसीलिए मैं भयभीत हो रही हूं। यहीं पास में चन्द्रावती नाम का सुन्दर नगर है। उस नगरी के स्वामी महाराज वीरधवल मेरे पर और मेरी स्वामिनी कनकावती पर अत्यन्त कुपित हो गए हैं। यह स्थल गोला नदी का किनारा है।'

यह सुनकर महाबल बहुत सन्तुष्ट हुआ। उसने सोचा—'व्यन्तरी देवी ने मुझे यहां छोड़कर मेरा उपकार ही किया है। मुझे जहां पहुंचना था, वहीं पहुंचा हूं⋯यह है पुण्योदय।'

मलया सोमा को पहचान चुकी थी। पर वह मौन खड़ी रही। वह पुरुष बन गयी थी, इसलिए पहचाने जाने की चिन्ता ही समाप्त हो चुकी थी।

महाबल ने कहा—'बहन! तू निश्चित रह। हमारे रहते हुए कोई भी तेरा अहित नहीं कर पाएगा। परन्तु तेरी एक बात समझ में नहीं आयी।'

'कौन-सी बात?'

'तेरे पर और तेरी स्वामिनी पर राजा को कोप क्यों?'

'क्षत्रियकुमार! मेरी स्वामिनी और कोई नहीं, वह महाराजा वीरधवल की दूसरी रानी कनकावती है। उसने एक भयंकर कुकर्म कर डाला। उस कुकर्म के कारण ही निर्दोष राजकन्या मलयासुन्दरी को मृत्यु का वरण करना पड़ा'—इतना कहकर सोमा ने आकस्मिक ढंग से प्राप्त लक्ष्मीपुंज हार की बात तथा अन्य घटनाएं संक्षेप में कह सुनायीं।

'ओह! तब तो सारी विपत्ति का मूल वह लक्ष्मीपुंज हार ही है। वह हार अब कहां है?' महाबल को लक्ष्मीपुंज हार की बात सुनकर परम प्रसन्नता हुई थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसने जान लिया था कि जिस व्यन्तरी ने मुझे यहां ला पटका है, उसी ने वह हार चुराकर रानी कनकावती के पास पहुंचाया है।

सोमा बोली—'वह हार रानी कनकावती के पास है और वह मुझे छोड़कर नगर की प्रसिद्ध वेश्या मगधा के यहां गयी है···वह उसकी प्रिय सखी है···मैं प्राण-भय से भागकर इस ओर आ गयी हूं।'

अब तक मौनभाव से सुनने वाली मलया ने पूछा—'वह लक्ष्मीपुंज हार किसने लाकर रानी कनकावती को दिया था ? क्या रानी ने और तूने उसके रहस्य को जाना है ?'

'नहीं, कुमारश्री ! वह हार अदृश्य रूप से आकर रानी की छाती पर गिरा था···उस समय मैं भी वहीं थी।···रानी ने उस हार के माध्यम से ही परमपवित्र मलया पर लांछन लगाकर मृत्यु का वरण करने के लिए बाध्य किया था।'

महाबल बोला—'देखो, बहन ! रानी ने अन्याय किया और आज वह एक वेश्या के संरक्षण में जी रही है। कल क्या होगा कौन जाने ?'

सोमा बोली—'कल और कुछ नहीं होगा···रानी किसी भी प्रकार से बच-कर निकल जाएगी···पर मुझे दूसरी आशंका हो रही है···"

"कैसी आशंका ?' मलया ने प्रश्न किया।

'मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि महाराजा वीरधवल अपने द्वारा हुए अन्याय का प्रायश्चित्त करने के लिए सूर्योदय होते-होते चिता में प्रवेश कर स्वयं को जीवित जला डालेंगे।'

मलया और महाबल कुछ नहीं बोले।

प्रकाश धीरे-धीरे फैल रहा था। प्रातःकाल होने ही वाला था।

सोमा ने कहा—'क्षत्रियकुमारो ! अब मैं यहां से जा रही हूं। संभव है राजा के सैनिक मुझे ढूंढ़ते हुए यहां आ पहुंचें···मुझे कहीं दूर, बहुत दूर जाकर अपना आश्रय ढूंढ़ लेना चाहिए।'

यह कहकर सोमा चली गयी।

महाबल ने मलया का हाथ पकड़ते हुए कहा—'प्रिये ! अब हमें तीन कार्य करने हैं और वे कार्य तुम्हारे सहयोग के बिना नहीं हो सकेंगे।'

'परन्तु एक काम और करना होगा···'

'मैं समझ गया हूं, प्रिये—तुम्हारे पिताश्री के प्राणों को बचाना मेरे तीन कार्यों में से एक है।' कहता हुआ महाबल मलया का हाथ पकड़कर नदी की ओर चल पड़ा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२. चिता ठंडी हो गई

पुरुषरूप में मलयासुन्दरी और महाबल---दोनों गोला नदी के तट पर पहुंचे। वहां प्रातःकर्म से निवृत्त हो बैठ गए।

मलयासुन्दरी कल से भूखी थी। महाबल इधर-उधर गया। वृक्षों के फल तोड़कर मलया को दिए। दोनों ने फल खाकर जलपान किया।

महाबल ने मलया की ओर देखकर कहा—'प्रिये! मैं यहां के स्थानों से अपरिचित हूं। तू यदि जानती हो तो हम ऐसे स्थान पर जाएं जहां कुछ समय तक विश्राम कर सकें।'

मलया बोली—'प्राणेश! मैं भी इस ओर कल ही आयी हूं। हम नदी के किनारे-किनारे चलते हैं, कहीं-न-कहीं विश्राम-योग्य स्थान मिलेगा ही।'

दोनों नदी के किनारे चलने लगे। थोड़ी दूर जाकर मलया ने कहा—'मेरा यह पुरुषरूप में परिवर्तन किसी की कल्पना में भी नहीं आ सकता।'

महाबल ने मुसकराकर कहा—'तेरे रूप को देखकर मुझे एक भय लग रहा है। हां, यह तिलक भी मेरे सिवाय कोई मिटा नहीं सकेगा, तब तक तुझे कोई भय नहीं है। भय की आशंका भी नहीं करनी चाहिए।'

'मेरे चेहरे पर कोई क्रूरता···'

'नहीं, प्रिये! सुन्दरता उभर आयी है। सुन्दरता क्रूरता से भी अधिक खतरनाक होती है। मुझे यह भय सता रहा है कि तू नगरी में जाएगी और पुरस्त्रियां तेरे रूप को देखकर···'

बीच में ही मलया ने कहा—'बस-बस, रहने दो। मैं नगरी में क्यों जाऊंगी?'

'मलया! हमारे पर एक जबरदस्त दायित्व आ पड़ा है। यदि तू अपने मूलरूप में पिता के समक्ष प्रकट हो तो सभी तुझे मलय का प्रेत मान बैठेंगे।'

'तब हमें अब क्या करना चाहिए?' यह प्रश्न करती हुई मलया ने एक ओर दृष्टि डालते हुए कहा—'सामने एक मंदिर है···मुझे लगता है कि वह मंदिर भट्टारिका देवी का होना चाहिए।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'चलो, हम वहीं जाकर बैठें और सोचें।' कहकर महाबल मंदिर की ओर बढ़ा।

मंदिर छोटा और निर्जन था। मंदिर में भट्टारिका देवी की सुन्दर मूर्ति स्थापित थी।

मंदिर की सोपानवीथी पर चढ़ते-चढ़ते महाबल की दृष्टि दीवार के पास पड़े हुए दो काष्ठ-फलकों पर पड़ी। दोनों फलक समान थे···वे नौका के आकार के बने थे। उन दोनों फलकों के मध्य एक आदमी आराम से सो सकता था। आदमी को अंदर सुलाकर दोनों फलकों को बंद कर देने से किसी को कुछ पता नहीं चल सकता था। देखने वाले को वह वृक्ष का स्कंध मात्र प्रतीत होता था।

इन दोनों फलकों के साथ एक इतिवृत्त जुड़ा हुआ था। किन्तु महाबल और मलया---दोनों इस इतिवृत्त से अनजान थे।

वर्षों पूर्व रानी चंपकमाला ने संतान-प्राप्ति के लिए मलयादेवी की आराधना की थी। वह उस समय इन दोनों फलकों के बीच रही थी। किन्तु यह इतिवृत्त विस्मृत हो चुका था। वे ही फलक दीवार के सहारे खड़े किए हुए पड़े थे।

महाबल फलकों को एक दृष्टि से देख रहा था। मलया ने पूछा---'क्या सोच रहे हैं ?'

'राजकुमारी ! मेरे मन में एक संशय उत्पन्न हुआ है।'

'किस बात का संशय ?'

'तू निर्दोष और निरपराध है, यह सोचकर तेरे पिताश्री अवश्य ही अन्याय का प्रायश्चित्त करेंगे। और यह प्रायश्चित्त होगा मृत्यु का आलिंगन। यदि तेरे पिताश्री ने ऐसा किया तो माता भी जीवित नहीं रह पाएंगी। यदि समय रहते हम सचेत न हों तो बड़ी विपत्ति आ सकती है। इसलिए मैंने कहा था कि हम पर गुरुतर उत्तरदायित्व है। किसी भी प्रकार से हमें तीनों कार्य संपन्न करने हैं। और यह भी सच है कि तेरे सहयोग के बिना वे कार्य पूरे नहीं हो सकते।'

'कुमार ! मेरा सहयोग आपको है ही···तीन कार्य कौन-से हैं ?' मलया ने पूछा।

दोनों मंदिर की चौकी पर बैठ गए थे। सूर्योदय हुए कुछ समय बीत चुका था। परन्तु वह था निर्जन स्थल। महाबल ने कहा---'प्रिये ! पहला कार्य यह है कि तुम्हारे पिताश्री की परिस्थिति को ज्ञात करना और यदि वे प्रायश्चित्त-स्वरूप मृत्यु का वरण करने के लिए उद्यत हैं तो उन्हें बचा लेना चाहिए। दूसरा कार्य है कि स्वयंवर के दिन सभी अन्यान्य राजकुमारों के समक्ष मेरा तेरे साथ पाणिग्रहण करना और तीसरा कार्य है कि लक्ष्मीपुंज हार प्राप्त कर अपनी मातुश्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को अर्पित करना।'

'आप हार की खोज करने गए हैं या अन्यत्र, यह आपकी मातुश्री को कैसे ज्ञात होगा ?'

'तू जो कह रही है, वह उचित है। तत्काल नगर में जाता हूं और महाराजा वीरधवल की स्थिति की जांच करता हूं। फिर मैं कुछ लिखकर भेज दूंगा।'

'क्या मुझे आपके साथ रहना है ?'

'नहीं, तू नगरी में चली जाना···और संध्या के समय मगधा वेश्या के घर जाकर रहना है। वहां रानी कनकावती है। वहां तुझे अपने बुद्धिबल से हार प्राप्त करने का प्रयत्न करना है।'

'लक्ष्मीपुंज हार यदि मेरी अपरमाता कनकावती के पास होगा तो मैं उसे अवश्य प्राप्त कर लूंगी, किन्तु मुझे मेरा वेश-परिवर्तन करना पड़ेगा···परन्तु हमारे पास कुछ भी तो नहीं है।' मलया ने कहा।

'प्रिये ! पहले हम इस मंदिर में देखते हैं कि यहां कोई रहता है या नहीं।' यह कहकर महाबल उठा और मलया को वहीं बिठाए रखकर अकेला ही सारे मंदिर में घूम आया।

उसने कहा—'मलया ! यहां कोई नहीं रहता। यह निर्जन एकान्त है। किन्तु नगर में जाकर मैं तेरे लिए वस्त्र और धन की व्यवस्था करता हूं। और उन्हें यहीं भिजवाता हूं। तू डरना मत। तेरे इस पुरुषरूप का परिवर्तन कोई नहीं कर सकता।'

'किन्तु आप धन कहां से भेज पाएंगे ?'

महाबल ने हंसते हुए अपने गले में पहनी हुई रत्नमाला मलया को दिखायी।

मलया ने भी हंसते हुए कहा—'मैं सारे आभूषण महलों में ही छोड़ आयी हूं। किन्तु मेरी अंगुली में एक रत्नजटित अंगूठी अवश्य रह गई है। वह राज्य-मुद्रा से अंकित है।'

'तुझे यह मुद्रिका देनी होगी, क्योंकि यदि कोई इस मुद्रिका को देख लेगा तो वह तुझे चोर समझकर पीड़ित करेगा।'

मलया ने तत्काल अंगूठी निकालकर महाबल को दे दी। महाबल ने उसे अपनी कमर में बांधते हुए कहा—'थोड़े समय में ही मैं वस्त्र और धन भेज रहा हूं···साथ में कुछ मिष्टान्न भी भेजूंगा—निश्चिन्त रूप से भोजन कर, वस्त्र बदलकर नगरी में चले जाना। आज की रात्रि मगधा के यहां बिताना और कल संध्या के समय यहां आकर मुझसे मिलना।'

'कल संध्या को ?'

'हां, मुझे जो कार्य करना है वह श्रम-साध्य और समय-साध्य है।'

परसों तो मेरे स्वयंवर की तिथि है ?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मुझे याद है'''और परसों मैं तेरे से विधियुक्त विवाह कर अपनी बना लूंगा।' कहते हुए महाबल ने प्रियतमा के मस्तक पर हाथ रखा।

उसके बाद मलया को मंदिर में अकेली छोड़कर महाबल नगरी की ओर चल पड़ा।

चंद्रावती नगरी गोला नदी के तट पर अवस्थित थी। महाबल को पता ही नहीं था कि नगर में जाने का मार्ग कौन-सा है, पर वह नगरी की अट्टालिकाओं को देखकर उसी दिशा में चल पड़ा।

एक प्रहर दिन बीत चुका था।

नगरी निकट थी। महाबल ने नदी के किनारे का पथ छोड़कर गाड़ी का रास्ता लिया, क्योंकि वह नगरी की ओर ही जा रहा था।

थोड़ी दूर जाते ही उसने आश्चर्य के साथ देखा कि एक विशाल वट-वृक्ष के नीचे हाथी खड़ा है। उसके आस-पास अनेक पुरुष खड़े थे। कुछ व्यक्ति हाथी की लीद पानी में घोल रहे थे।

महाबल ने सोचा—लोग ऐसा क्यों कर रहे हैं ? क्या हाथी बीमार है ?

महाबल उन लोगों के पास जाकर विनयपूर्वक बोला—'आप सब ऐसा क्यों कर रहे हैं ? हाथी बीमार हो ऐसा प्रतीत नहीं हो रहा है।'

एक राजपुरुष ने आगे आकर कहा—'भद्रपुरुष ! हमारे महाराजा का यह प्रधान हाथी है। कल लड्डुओं के साथ इसके पेट में अनेक स्वर्ण-मुद्राएं चली गई हैं।'

'लड्डुओं के साथ ?' महाबल ने आश्चर्य के साथ प्रश्न किया।

'हां, श्रीमन् ! बाहर से आए हुए राजकुमारों ने ऐसे ही कुतूहलवश हाथी के लिए तैयार होने वाले लड्डुओं में स्वर्ण-मुद्राएं डाल दी थीं। महावत को इसका पता ही नहीं चला और उसने सारे लड्डू इसको खिला दिए। उदर में धातु के प्रविष्ट होने के कारण हाथी को भयंकर वेदना हुई। तत्काल हस्ति-चिकित्सक को बुलाया गया। उसने उदरस्थ धातु की बात कही और उस धातु को निकालने के लिए उसने औषधि दी।'''इसलिए हम हाथी को लेकर गांव के बाहर आए हैं और उसकी लीद से स्वर्ण-मुद्राएं निकाल रहे हैं।'

'क्या यह हाथी महाराजाधिराज वीरधवल का है ?'

'हां, वे तो केवल एक-दो प्रहर के ही अतिथि हैं'''किन्तु उनकी अंतिम इच्छा है कि इस हाथी के प्राणों को येन-केन-प्रकारेण बचाया जाए।'

'क्या महाराज बीमार हैं ?' महाबल ने दूसरा प्रश्न किया।

'अरे भाई ! तुम तो कोई परदेशी लगते हो। हमारे महाराजा अपने अन्याय का प्रायश्चित्त करने के लिए आज मध्याह्न में जलती हुई चिता में जल जाने वाले हैं। साथ में रानी चंपकमाला भी जल मरने वाली हैं। आप कहां से आए हैं ?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'भाई ! मैं एक परदेशी हूं···मैं निमित्तशास्त्र का ज्ञाता हूं···मेरा ज्ञान सत्य है···किन्तु मार्ग में भटक जाने के कारण अपने एक साथी के साथ इधर चला आया हूं।···आप मेरा एक कार्य करेंगे ?'

'जरूर, क्या आप निमित्तज्ञ हैं ?'

'हां, इसका विश्वास अभी मैं आप सबको कराऊंगा।' कहकर महाबल ने पास में पड़े घास का एक पूला लिया और उसमें किसी को ज्ञात न होने पाए इस रीति से मलयासुन्दरी की राजमुद्रिका रख दी और उस घास के पूले को हाथी को खिला दिया। फिर लोगों की ओर देखते हुए महाबल ने गणित करने का ढोंग रचते हुए कहा—'श्रीमन् ! आपके महाराजा के हाथों भयंकर अन्याय हुआ है···उनकी कन्या ही उस अन्याय की शिकार हुई है।'

'महात्मन् ! आप तो त्रिकालज्ञ हैं···ठीक यही हुआ है।' लोगों ने कहा।

'तो आप मेरा एक काम करें···मैं महाराजा को बचा लूंगा।'

'क्या ? बचा लेंगे ?'

'हां, अवश्य बचा लूंगा। किन्तु उससे पूर्व एक काम आपको करना होगा।'

'कहिए, क्या काम है ?'

'यहां से कुछ दूरी पर भट्टारिका देवी का मंदिर है।'

'हां···'

'वहां मेरा एक साथी बैठा है। उसको कुछ स्वर्ण-मुद्राएं, वस्त्र और मिष्टान्न पहुंचाना है।'

'स्वर्ण मुद्राएं ?'

'हां, किन्तु आप निश्चिन्त रहें···मैं यह अपनी रत्नमाला आपको सौंपता हूं··· मेरा यह कार्य आप करें···' कहते हुए महाबल ने अपने गले से रत्नमाला निकालकर उन राजपुरुषों को दे दी।

रत्नमाला मूल्यवान् थी। राजपुरुष ने कहा—'महात्मन् ! आप अपनी माला अपने पास ही रखें···आपके आदेशानुसार मैं सब कुछ संपन्न कर दूंगा। मेरे पास अभी पन्द्रह-बीस स्वर्ण-मुद्राएं हैं।'

'इतनी मुद्राएं पर्याप्त हैं।'

तत्काल राजपुरुष ने वस्त्र तथा मिष्टान्न लाने के लिए एक आदमी को भेजा और फिर महाबल से पूछा—'श्रीमन् ! आपके साथी का नाम क्या है ?'

'सुन्दरसेन।'

'आपका नाम क्या है ?'

'आचार्य बलदेव।'

'महात्मन् ! अब आप विलम्ब न करें। मेरे साथ चलें और महाराजा को बचा लें। आपका कार्य अभी पूरा हो जाएगा।' कहकर राजपुरुष ने अपने दास को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पन्द्रह स्वर्ण-मुद्राएं देते हुए कहा—'वस्त्र और मिष्टान्न आते ही तू भट्टारिका देवी के मंदिर में जाना और वहां सुन्दरसेन नाम वाले पुरुष को सौंप आना।'

उसके बाद महाबल और राजपुरुष वहां से आगे बढ़े।

थोड़ी दूर जाते ही नगरी का भव्य श्मशानघाट आया। वहां हजारों व्यक्ति एकत्रित हो रहे थे। यह देखकर महाबल ने पूछा—'श्रीमन्! ये सारे लोग यहां क्यों एकत्रित हो रहे हैं?'

'देखो···जो ऊपर के मंच पर खड़े हैं, वे हमारे महाराजा हैं और जो उनके पास बैठी हैं वह महादेवी चंपकमाला हैं।' राजपुरुष ने कहा।

दोनों तेजी से आगे बढ़े। निकट आते ही महाबल ने देखा कि एक चिता तैयार है। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ है। हजारों लोग रुदन कर रहे हैं। मंच पर राजा खड़ा है और अर्द्धमूच्छित अवस्था में रानी बैठी है।

चिता को प्रज्वलित कर दिया गया है। राजा के सभी मंत्री उदास होकर एक ओर खड़े हैं।

इस दृश्य को देखते ही महाबल दोनों हाथ ऊपर उछालते हुए जोर से चिल्ला उठा—'राजन्! ठहरें। आपकी प्रिय पुत्री मलयासुन्दरी अभी जीवित है।'

लोगों की दृष्टि महाबल पर स्थिर हो गई।

महाबल लोगों को चीरता हुआ मंच के पास पहुंच गया। वह बोला—'राजन्! मैं एक निमित्तज्ञ हूं। जिसके लिए आप प्रायश्चित्त करने के लिए मौत के मुंह में जा रहे हैं, वह मलयासुन्दरी जीवित है। एक अन्याय हो चुका है, अब दूसरा अन्याय न करें।'

महामंत्री सुबुद्धि तत्काल इस निमित्तज्ञ के पास आए।

अर्द्ध-मूच्छित रानी चंपकमाला कुछ सचेत हुई।

राजा ने निराशा भरी दृष्टि से निमित्तज्ञ की ओर देखा।

लोग हर्ष से जयजयकार करने लगे।

वे चिल्ला रहे थे—हे निमित्तज्ञ महात्मन्! तू जल्दी बता, हमारी प्रिय राजकुमारी मलयासुन्दरी कहां है? हम तुझे स्वर्ण और रत्नों से ढंक देंगे···तेरा यह उपकार चंद्रावती की जनता कभी नहीं भूलेगी।'

महाप्रतिहार ने हाथ ऊंचे कर लोगों को शांत रहने का संकेत दिया।

महामंत्री सुबुद्धि ने पूछा—'आप कौन हैं?'

'मैं बंगदेश का निवासी आचार्य बलदेव हूं। अपने निमित्त ज्ञान से मैंने जान लिया था कि इस नगरी का राजा मरने की तैयारी कर रहा है, इसलिए यहां आ पहुंचा।'

'क्या राजकुमारी जीवित है?'

'हां, आपको सारी बात बताऊं, उससे पूर्व यह चिता ठंडी हो जानी चाहिए।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निमित्तज्ञ के ये वचन सुनकर सैनिक और अन्य लोग चिता को बुझाने में लग गए।

महाबल ने राजा की ओर देखकर कहा—'हे राजन्! हे प्रजा-पालक! आप व्याकुल न होते हुए अपने निश्चय को बदलें। मैं अपने निमित्त ज्ञान के आधार पर आपको विश्वास दिलाना चाहता हूं कि आपकी प्रिय कन्या किसी-न-किसी स्थान पर जीवित है।'

निमित्तज्ञ के वचनों से कुछ शान्त होते हुए राजा ने कहा—'हे निमित्तज्ञ! आप मुझे मिथ्या विश्वास दिला रहे हैं, ऐसा प्रतीत होता है'''मेरे पुण्य पूरे हो गए हैं, चुक गए हैं'''अब मैं कभी अपनी लाडली बेटी को नहीं देख पाऊंगा।'

'महाराज! मैं आपको झूठा विश्वास क्यों दिलाऊंगा? मेरा इसमें स्वार्थ ही क्या है?'

'निमित्तज्ञ! मेरी कन्या ऐसे अंधकूप में गिरी है कि उसके जीवित रहने की तनिक भी आशा नहीं है।'

'महाराज! आप मेरे वचनों पर विश्वास करें। आप अपने राजप्रासाद में पधारें। वहां मैं आपको पूरा समाधान दूंगा।'

महामंत्री ने निमित्तज्ञ के कथन का समर्थन किया।

लोगों ने निमित्तज्ञ का जयजयकार किया।

राजा वीरधवल और रानी चंपकमाला मंच से नीचे उतरे।

चिता पूरी तरह बुझ चुकी थी।

लोगों ने महाराज का जयनाद किया।

महामंत्री ने एक रथ को तैयार करने की आज्ञा दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३. मध्यरात्रि के पश्चात्

हमने देखा कि एक ही रात्रि में कितने बनाव बन जाते हैं। कितनी अनहोनी घटनाएं घटित हो जाती हैं।

संसार वास्तव में ही इन्द्रजाल के समान है। मनुष्य आशाओं के अंबार खड़ा करता है और कर्म के एक धक्के से वह अंबार बिखरकर नष्ट हो जाता है। कर्म मनुष्य की आशाओं को पीस डालता है।

ज्ञानी पुरुष इसीलिए कहते हैं—संयोग में फूलो मत, गर्व मत करो।

शोक को पचाना सरल है, परन्तु हर्ष को हजम कर पाना कठिन है। जिसके हृदय में ज्ञान की ज्योति प्रज्वलित हो जाती है, वही व्यक्ति हर्ष को पचा सकता है। इसीलिए ज्ञानी पुरुष शोक को अमृत और हर्ष को विष मानते हैं।

रानी कनकावती साधारण स्त्री नहीं थी। वह चन्द्रावती के नृप की रानी थी···वह असीम सुख में पल रही थी···दास-दासियां प्रतिपल पलकें बिछाए खड़ी रहती थीं।···हां, एकमात्र कमी यह थी कि वह निःसंतान थी, किन्तु सौतेली रानी की संतान कहां परायी होती है! जिसको वह अपना स्वामी मानती थी, उसी की तो वह संतान थी।

परन्तु यह सत्य उसके प्राणों का स्पर्श नहीं कर पाया था···जहां सत्य का स्पर्श नहीं होता वहां अंधकार ही अंधकार छाया रहता है। ईर्ष्या, वैर और असंतोष घोर अंधकार है। रानी कनकावती इसी में घुल रही थी। उसने उपाय किया···उपाय कारगर भी हुआ···किन्तु उपाय की सफलता को वह पचा नहीं सकी।

एक चोर की भांति लक्ष्मीपुंज हार और आभरणों को लेकर उसे महलों से भागना पड़ा। फिर भी उसका विवेक नहीं जागा। सदा साथ रहने वाली सोमा को उसने बीच में छोड़ दिया। उसे कुछ भी नहीं दिया।

आज जिसके भवन में वह निवास कर रही है, वह राजरानी के लिए उपयुक्त स्थान नहीं है।···अरे! राजरानी की बात तो दूर रही, एक कुलवधू के लिए भी वह स्थान रहने योग्य नहीं है···वह मगधा वेश्या का भवन है। रानी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रात्रि के तीसरे प्रहर में वहां पहुंची और वेश्या के द्वार खटखटाए।

कहां तो महाराजा वीरधवल की पत्नी कनकावती'''और कहां वह लज्जाहीन वेश्या!

मगधा की मुख्य परिचारिका ने द्वार खोला। कनकावती ने पूछा—'मगधा क्या कर रही है?'

'अभी-अभी शयनगृह में गई है।'

'उसको जगा।' कहकर कनकावती भवन में प्रविष्ट हुई।

परिचारिका कनकावती से परिचित नहीं थी। कभी राजा की शोभायात्रा या अन्यत्र कहीं देखा भी हो तो आज उसे चादर में लिपटी होने के कारण पहचान पाना कठिन था। उसने पूछा—'आपका नाम?'

'नाम जानने की आवश्यकता नहीं है। तू मुझे पहले एक खंड में ले चल'''फिर मगधा को जगाकर बता कि तेरी प्रिय सखी महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए आयी है।'

रानी के स्वर, रूप, आज्ञा देने के ढंग से परिचारिका स्तब्ध रह गई। तत्काल उसने कनकावती को ऊपर के कक्ष में बिठाया और कहा—'मैं अभी देवी मगधा को यहां भेजती हूं।'

कनकावती मौन रही।

परिचारिका चली गई।

मगधा का भवन अत्यन्त विशाल था। उसके पास बीस-पचीस नव यौवनाएं रहती थीं। इस समय वे सब अपने-अपने खंड में अपने किसी-न-किसी प्रेमी की बाहों में सो रही थीं।

रात्रि का तीसरा प्रहर पूरा हो रहा था। भवन के दास-दासी सो गए थे। भवन के रक्षक भी नींद में खर्राटे भर रहे थे।

मगधा और कनकावती का संबंध पुराना था। मगधा यदा-कदा कनकावती से मिलने राजप्रासाद में जाती थी। परन्तु मगधा का परिचय केवल सोमा को ही प्राप्त था। शेष यही समझते थे कि मगधा किसी धनाढ्य की पत्नी है और रानी कनकावती की प्रिय सखी है।

रानी कनकावती अपने खंड में अकेली बैठी थी। अभी तक चादर से उसने मुंह ढांक रखा था। केवल आंखें खुली थीं। वह द्वार की ओर मगधा की प्रतीक्षा कर रही थी।

मगधा अभी-अभी शैया पर सोयी थी। उसकी आंखों में नींद थी। मुख्य परिचारिका ने द्वार पर धक्का दिया। द्वार खुल गया। वह मगधा के पलंग के पास गई और धीरे से बोली—'देवी!'

मगधा स्वप्न में नहीं खो गई थी, किन्तु अभी-अभी श्रम से श्लथ होकर नींद की गोद में चली गई थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिचारिका ने फिर पुकारा—'देवी···'

मगधा ने चौंककर कहा—'कौन ?'

'मैं सुन्दरी···'

'बोल, क्या है ?'

'कोई स्त्री आयी है और वह आपसे इसी समय मिलना चाहती है।'

'स्त्री !' मगधा को आश्चर्य हुआ···वेश्या के घर इस भयंकर रात्रि में अकेली स्त्री का आना ···। 'क्यों ? क्यों आयी है ? क्या वह इसी नगरी की है ?' कहते-कहते मगधा शैया से उठकर बैठ गई।

'देवी ! उसने अपना परिचय देने से इनकार कर दिया। उसने इतना मात्र कहा है कि वह आपकी प्रिय सखी है।'

'मेरी प्रिय सखी ?' मगधा विचार में खो गई। उसने सोचा—रानी कनकावती मेरे घर भला क्यों आएगी और फिर इस भयंकर रात्रि में तो उसका आना असंभव है। तो फिर यह कौन है ?'

मगधा उठी और बोली—'ला, मेरा उत्तरीय दे···यह कंचुकी के बंध ठीक कर। मुझे लगता है कि यह कोई कुलवधू है और अपने शराबी पति को ढूंढ़ने के लिए वेश्या के घर आयी है। कुल के गौरव की सुरक्षा के लिए संभव है परिचय न दिया हो।'

सुंदरी ने मगधा का कंचुकी-बंध ठीक किया और उत्तरीय देते हुए कहा—'देवी ! आप मेरे साथ चलें।'

दोनों वहां से चलीं।

कनकावती प्रतीक्षा कर रही थी। सबसे पहले सुन्दरी ने खंड में प्रवेश किया। वह बोली—'देवी आ रही हैं।'

सुंदरी के पीछे-पीछे मगधा ने खंड में प्रवेश किया।

रानी कनकावती ने सुन्दरी से कहा—'तू बाहर जा और द्वार को बन्द करते जाना।'

अधिकारयुक्त वचन !

मगधा ने अपनी प्रिय सखी का स्वर पहचान लिया···पर मन में विश्वास नहीं हुआ।

सुन्दरी ने स्वामिनी की ओर देखा। मगधा ने आंख के संकेत से उसे बाहर चले जाने के लिए प्रेरित किया।

सुंदरी तत्काल खंड से बाहर चली गई और द्वार का दरवाजा बन्द कर दिया।

तत्काल कनकावती ने मुंह पर से चादर हटायी। मगधा चौंकी। एकदम उसके निकट आकर बोली—'आप ?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'हां, मगधा ! यहां बैठ।'

किन्तु आश्चर्य से अभिभूत मगधा ने पूछा—'महादेवी ! आप और इस समय•••?'

'तू पहले यहां बैठ। मुझे इस खंड में आश्रय दे जिससे कि मुझे कोई जान न पाए।'

'यह सारा भवन आपका है। आप स्वयं आश्रयदाता हैं। आप आश्रय की याचना न करें।'

'मगधा ! पहले तू मुझे निर्भय स्थान में ले चल, फिर मैं तुझे सारा वृत्तान्त बताऊंगी।'

'चलें, मेरे शयनकक्ष के पास वाला कक्ष अत्यन्त निरापद है। आप वहां निर्भय होकर रहें।'

दोनों खंड से बाहर निकलीं।

सुंदरी बाहर ही खड़ी थी। मगधा ने कहा—'सुरा के दो पात्र और मिष्टान्न मेरे शयनकक्ष में रख आ।'

'जी', कहकर सुंदरी चली गई।

कनकावती को लेकर मगधा अपने शयनकक्ष में गई। उसके भीतर एक दूसरा खंड और था। वह मगधा का क्रीड़ागृह था। मगधा ने देवी को वह खंड दिखाया और एक वीरासन पर बैठने के लिए कहा।

सुंदरी सुरापात्र तथा मिष्टान्न लेकर आ गई थी। दोनों से सुरापान किया, मिष्टान्न लिया। सुंदरी चली गई।

कनकावती ने मगधा से कहा—'भारी विपत्ति के कारण मैं यहां आयी हूं। अपने भवन में मुझे शरण देनी है•••' कहते-कहते महारानी ने सारा पूर्व वृत्तान्त कह सुनाया। कनकावती ने कहा—'मगधा ! मुझे ढूंढ़ने के लिए राजपुरुष चारों ओर भेजे जाएंगे।'

'आप निश्चित रहें। मगधा अपनी प्रिय सखी की सुरक्षा करना जानती है। अब आप भीतर के खंड में जाएं और आराम करें। जब आप जागेंगी तो आपको उत्तम वस्त्र तैयार मिलेंगे।'

'प्रिय मगधा ! मैं तेरा यह उपकार कभी नहीं भूलूंगी।' कहते हुए कनकावती ने अपना एक हाथ मगधा के कंधे पर रखा।

तत्पश्चात् मगधा रानी कनकावती को अपने केलिगृह में ले गई। कनकावती बोली—'जा, अब तू भी आराम कर•••मैंने आज तुझे बहुत परेशान किया है•••परन्तु लाचार हूं, क्या करूं ? मनुष्य को अनेक बार लाचारी से गुजरना पड़ता है।'

रानी को आश्वासन दे मगधा अपने शयनकक्ष में आयी और शय्या पर सो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गई ।

कनकावती मगधा के केलिगृह में बिछी हुई शैया के पास गई और अपनी आभरणों की पोटली एक कोने में छिपाकर रख दी। उसने खंड में पड़े दीपक को बुझा डाला और मृदु शैया पर नींद की शरण ले ली।

चिंता की चिनगारी से जले हुए व्यक्ति को नींद नहीं आती।

कनकावती का चित्त संकल्प-विकल्प का जाल बुनने लगा।

पर उसको अभी तक यह ज्ञात नहीं था कि जिस मलयासुंदरी को वह मृत मान रही है, वह आज भी जीवित है और उसके प्रियतम ने ही उसे जीवनदान दिया है।

रात बीती। प्रातःकाल हो गया।

वातायन की जाली से प्रातःकाल का मंद-मंद पवन आ रहा था।

कनकावती की आंखें नींद से भारी हो गई थीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४. कर्म की गति

चिता बुझ गई। महाराजा वीरधवल और महारानी चंपकमाला राजप्रासाद की ओर जा रहे हैं। इसकी प्रसन्नता से सारी प्रजा जय-जयकार की ध्वनि से आकाश को गुंजा रही है।

सभी राजप्रासाद पर पहुंच गए। जनता साथ थी। राजप्रासाद पर पहुंचकर महाराजा ने आचार्य बलदेव से कहा—'निमितज्ञ ! आपने मुझे अपने प्रायश्चित्त से क्यों रोका ? आपने ऐसा आश्वासन दिया है कि वह कभी संभव नहीं माना जा सकता। जो मर चुकी, वह जीवित कैसे रह सकती है ? आप सही बताएं।'

महामंत्री ने पूछा—'ज्ञानी पुरुष ! आप हमें बताएं कि राजकन्या अभी कहां हैं ?'

'मंत्रीश्वर ! राजकन्या यहीं कहीं है।'

'हम हमारी प्रिय राजकुमारी से कब मिल पाएंगे ?'

गणित करने का ढोंग करते हुए महाबल बलदेव ने कहा—'परसों राजकुमारी के स्वयंवर का शुभ दिन है। स्वयंवर-मंडप में हजारों राजकुमार एकत्रित होंगे। उस समय राजकुमारी भव्य वस्त्रालंकारों से सज्जित होकर आप सबको दिखलाई देगी।'

'इससे पूर्व क्या राजकन्या नहीं आ सकती ?'

'नहीं···।'

'यदि परसों स्वयंवर-मंडप में राजकन्या न आए तो अत्यन्त भीषण स्थिति उत्पन्न हो सकती है।' महामंत्री ने कहा।

'मंत्रीश्वर ! निमित्त-ज्ञान कभी अन्यथा नहीं हो सकता···आप आनंदपूर्वक स्वयंवर की तैयारी करें···बाहर से समागत राजकुमारों को लौटने न दें···उनका आतिथ्य करें···राजकन्या आयेगी, इसमें तनिक भी संशय नहीं है।' महाबल ने कहा।

महादेवी ने कहा—'महात्मन् ! आपका कथन यथार्थ हो सकता है, परन्तु आप अपनी बात के लिए कोई प्रमाण प्रस्तुत करें।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'हां, यदि महाराज की आज्ञा हो तो मैं प्रमाण पेश कर सकता हूं।' महाराजा वीरधवल ने तत्काल मस्तक हिलाकर स्वीकृति दी।

निमित्तज्ञ बने हुए महाबल ने आंखें बंद कीं। ध्यानस्थ होने का ढोंग रचा। कुछ क्षणों बाद वह बोला—'महाराज! जब राजकन्या मृत्यु का वरण करने राजप्रासाद से निकली थी, तब उसने अपने साथ कोई आभूषण नहीं लिये थे। सारे अलंकार यहीं रखकर गई थी। उसकी अंगुली में नामांकित एक मुद्रिका मात्र रह गई थी।'

महामंत्री सुबुद्धि ने तत्काल कहा—'श्रीमन्! आपने जो कहा, वह अक्षरशः सही है।'

'तो आप प्रमाणरूप में यह भी सुन लें कि वह नामांकित मुद्रिका आज रात में या प्रातःकाल आपको प्राप्त हो जाएगी।'

यह सुनकर सब अवाक् रह गए। निमित्तज्ञ ने कहा—'अब मैं आपके समक्ष तीसरा प्रमाण देता हूं। इस नगरी के पूर्व दिशा के नगरद्वार के बाहर परसों प्रातःकाल, स्वयंवर में आए हुए राजकुमारों के पराक्रम की परीक्षा करने के लिए, आपकी कुलदेवी छह हाथ प्रमाण का एक सुन्दर और कला से परिपूर्ण एक स्तंभ रख देगी।'

'स्तंभ?' राजा ने प्रश्न किया।

'हां, वह स्तंभ आपकी कुलदेवी द्वारा प्रदत्त प्रसाद होगा। उस स्तंभ को आप स्वयंवर के बीच में स्थापित करवाना। उसके सामने वेदिका पर अपने शस्त्रागार का प्राचीनतम धनुष्य वज्रसार को रखना। उस धनुष्य को उठाकर, उस पर बाण चढ़ाकर, जो राजकुमार या राजा, उस स्तंभ का छेदन करेगा, वही आपकी प्रिय कन्या का पाणिग्रहण करेगा।'

सभी मंत्री बोल उठे—'धन्य है आपके ज्ञान को! धन्य है आपके निमित्त शास्त्र को!'

महाबल ने महामंत्री की ओर देखकर कहा—'जो स्तंभ आपकी कुलदेवी प्रस्तुत करे, उसकी विधिवत् पूजा भी करनी होगी।'

महामंत्री ने कहा—'श्रीमन्! आपको ही पूजा-विधि संपन्न करनी होगी··· आपको स्वयंवर सम्पन्न होने तक यहीं रुकना होगा।'

'क्या आपके मन में संदेह है कि मेरा कथन असत्य होगा? महामंत्री! मैं सबके समक्ष यह एलान करता हूं कि यदि मेरे सारे कथन सही न निकलें और राजकन्या स्वयंवर-मंडप में आकस्मिक ढंग से प्रकट न हो जाए तो महाराज को जो प्रायश्चित्त करना हो वह करें···मैं अवश्य ही जलती हुई चिता में गिरकर जल मरूंगा।'

महामंत्री निमित्तज्ञ के चरणों में मस्तक झुकाते हुए बोले—'महात्मन्! मुझे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपके कथन में तनिक भी सन्देह नहीं है। मुझे तो आपके महान् ज्ञान पर श्रद्धा है, आस्था है।'

'महामंत्रीश्वर ! मैं अवश्य रुकूंगा और मुझे साधना के लिए कहीं जाना-आना होगा तो महाराजश्री की आज्ञा लेकर ही जाऊंगा···किन्तु स्वयंवर के दिन मैं अवश्य ही उपस्थित रहूंगा।'

महामंत्री ने प्रसन्न स्वरों में कहा—'महात्मन् ! आप पर मुझे पूर्ण श्रद्धा है···अब आपको हमारी भावना को स्वीकार करना होगा···' कहते हुए मंत्रीश्वर ने अपने कंठों से मणिमाला निकाली।

तब महाराजा ने भी कहा—'महाप्रतिहार ! जाओ, स्वर्णमुद्राओं के पांच थाल ले आओ···उत्तम वस्त्र भी ले आओ।'

तत्काल निमित्तज्ञ बलदेव खड़ा हुआ और बोला—'महाराज ! आप अन्यथा न मानें। मैं अपनी विद्या के विनिमय में कुछ भी नहीं ले सकता···किन्तु राजकुमारी का स्वयंवर संपन्न होते ही मैं स्वयं मांग लूंगा।'

निमित्तज्ञ की इस निःस्पृहता पर सब मुग्ध हो गए। निमित्तज्ञ सुन्दर था, नवयुवक था। उसकी आंखों में तेजस्विता थी। सभी उसके निमित्त ज्ञान पर आश्चर्य कर रहे थे। संभव है, यह मनुष्य नहीं, देव हो !

महाराज ने पूछा—'श्रीमन् ! एक प्रश्न मन में उभर रहा है। आप उसे अनुचित न समझें। मैं यह जानना चाहता हूं कि मेरी पुत्री मलयासुन्दरी का पति कौन होगा ? आप कृपा कर बताएं।'

तत्काल महाबल ने आंखें बन्द कर ध्यानस्थ होने की मुद्रा बना ली। कुछ क्षणों के बाद ध्यान संपन्न कर बोला—'वाह-वाह ! यह तो सोने में सुगन्ध हो गई। किन्तु महाराज, यदि मैं नाम बताऊंगा तो आए हुए राजकुमार असंतुष्ट हो जाएंगे। परन्तु मैं एक पत्र में नाम लिख देता हूं। उसको सीलबन्द करके महामंत्री को सौंप देता हूं। यह पत्र आप परसों स्वयंवर-मंडप में खोलें···राजकुमारी जिस पवित्र राजकुमार के गले में वरमाला पहनाएगी, उसी का नाम पत्र में अंकित मिलेगा।'

महाबल ने एक पत्र में नाम लिखा। उसे सीलबंद कर मंत्रीश्वर को दे दिया। मध्याह्न का समय व्यतीत हो गया।

महाबल ने अपनी सेवा में नियुक्त राज्य-कर्मचारी से कहा—'एक दूत बुला भेजो। मुझे कुछ संदेश भेजना है।'

'कहां, श्रीमन् ?'

'पृथ्वीस्थानपुर में।'

'अभी उसे हाजिर करता हूं'—कहकर राज्यकर्मचारी बाहर गया।

महाबल ने अपनी माता के नाम एक पत्र लिखकर तैयार रखा। एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अश्वारोही कर्मचारी आ गया। उसको एकान्त में बुलाकर कहा—'पृथ्वीस्थानपुर के राजभवन में जाकर इस पत्र को वहां के रक्षक को सौंप आना। पत्र यथास्थान पहुंच जाएगा।'

'क्या इसका प्रत्युत्तर लाना है ?'

'नहीं···तेरा पारिश्रमिक तुझे वहां से प्राप्त हो जाएगा।'

'नहीं, महात्मन् ! आपने हमारे महाराजा के प्राण बचाए हैं। मैं कुछ भी नहीं लूंगा। यदि आप मांगें तो मैं अपना मस्तक भी काटकर रख दूं।' उस कर्मचारी ने विनयपूर्वक कहा।

महाबल ने उसे बिदाई दी और स्वयं एक शैया पर सो गया।

उसके मन में मलय के विचार घूम रहे थे। वह मगधा के यहां गई है या नहीं ? वहां वह कनकावती से मिलेगी क्या ? ओह ! वहां गए बिना लक्ष्मीपुंज हार की प्राप्ति नहीं होगी और लक्ष्मीपुंज हार की प्राप्ति के बिना मेरी माता··· नहीं-नहीं, मलया चतुर है···किसी भी उपाय से वह हार को हस्तगत कर लेगी।

महाबल इस प्रकार राजकुमारी की चिन्ता कर रहा था, उस समय मलया-सुन्दरी भट्टारिका देवी के मन्दिर में ही थी। अभी तक वह नगरी की ओर नहीं गई थी।

महाबल द्वारा भेजे गए वस्त्र और मिष्टान्न प्राप्त हो गए थे। फिर वह स्नान करने के लिए नदी के तट पर गई। स्नान आदि से निवृत्त होकर उसने मिष्टान्न खाया और आराम करने के लिए लेट गई। श्रम की अधिकता के कारण वह तत्काल निद्रादेवी की गोद में चली गई। मध्याह्न के बाद ही वह जागृत हुई थी।

उसने तब नगरी की ओर जाने के लिए प्रस्थान कर दिया।

जब वह नगरी में पहुंची तब उसने देखा कि सारी जनता अपार हर्ष से हर्षित हो रही है। चारों ओर निमित्तज्ञ की यशोगाथा सुनाई दे रही थी।

मलया ने समझ लिया कि महाबल ने पिताश्री और मातुश्री को बचा लिया है। इससे उसका मन भी परम प्रसन्नता की अनुभूति कर रहा था।

संध्या बीत चुकी थी। सारा नगर दीपमालिका से जगमगा उठा।

उसने मगधा वेश्या के घर की जानकारी की और चलते-चलते मगधा के विशाल भवन के आगे आ पहुंची।

भवन के सामने आते ही मलया ने सोचा—जीवन एक प्रवहमान सरिता के सदृश है। यह आघात-प्रत्याघात सहता हुआ ही आगे गतिमान् होता है। मुझे एक वेश्या के घर आना पड़ेगा, ऐसी कल्पना स्वप्न में भी नहीं थी।

ओह ! कर्म की गति बड़ी विचित्र होती है।

मलया अन्दर गई। द्वार पर खड़ी परिचारिकाओं ने उसे नया ग्राहक मानकर नमस्कार किया। मलया ने कहा—'देवी मगधा भवन में हैं ?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'हां, महाशय ! उसकी मुख्य परिचारिका आपको भीतर ले जाएगी···आप आगे चलें।'

नवकार मंत्र का स्मरण करती हुई मलया भवन में आगे चली। कुछ ही क्षणों के पश्चात् उसे मगधा की मुख्य परिचारिका सुन्दरी मिली। उसने मलया को देखा। उसे एक सजे-सजाए खंड में बिठाकर बोली—'श्रीमन् ! आप कोई परदेशी लग रहे हैं। आपका नाम क्या है ?'

'मेरा नाम है सुन्दरसेन, तुम्हारा नाम क्या है ?'

'मेरा नाम है सुन्दरी।' सुन्दरी ने लज्जा भरे स्वरों में कहा।

'ओह ! कितना सुन्दर संयोग ! मुझे सर्वप्रथम सुन्दरी के दर्शन हुए। महादेवी मगधा कहां है ?'

'श्रीमन् ! वह आज कुछ अस्वस्थ हैं। आप रात भर यहीं विश्राम करें। प्रातः वह आपसे मिलेंगी।'

सुन्दरी ने सुन्दरसेन के लिए एक सज्जित खंड खोल दिया।

सुन्दरी सुन्दरसेन पर मुग्ध हो गई। उसके यौवन की ऊर्मियां नाच उठीं। सुन्दरसेन ने उसकी भावना को समझ लिया। उसके साथ हंसी-मजाक करता हुआ अपने लिए निर्धारित सुन्दर-सज्जित खंड में रात बिताने चला गया।

सुन्दरी मगधा के पास जाकर बोली—'महादेवी ! आज एक ऐसा युवक अपने भवन में आया है, जो कामदेव से भी अधिक सुन्दर है। वह कोई श्रेष्ठी-पुत्र है।' उसने सारी बात कही।

रानी कनकावती उस समय मगधा के पास ही बैठी थी। उसका मन युवक की सौन्दर्यगाथा को सुनकर विह्वल हो गया था। उसने भी बात में बहुत रस लिया।

मगधा ने कहा—'सुन्दरी ! चल, मैं उसे देखने तेरे साथ चलती हूं।'

'अभी तो वे सो गए हैं।'

'तो कल प्रातःकाल···'

रानी कनकावती ने बीच में कहा—'सखी ! उसको यहीं बुला लो।'

'यहां ?' मगधा ने कनकावती की ओर देखा।

'हां, मैं उसे गुप्तरूप से देखना चाहती हूं···राजा का कोई गुप्तचर तो नहीं है ?'

'ठीक है, हमें पग-पग पर सावधान रहना है'—मगधा ने कहा।

सुन्दरी ने कहा—'देवी ! मैं प्रातः उसे ले आऊंगी।'

मगधा ने स्वीकृति दे दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५. अपरिचित

चंद्रावती नगरी की प्रसिद्ध वेश्या मगधा के भवन में मलया निश्चिन्त सो रही थी। अतिश्रम के कारण वह तत्काल निद्राधीन हो गई। रात्रि के दूसरे प्रहर में अचानक उसकी नींद खुली और दासियों की फुसफुसाहट उसके कानों में पड़ी। वह स्पष्ट रूप में कुछ भी जान न सकी। पर इतना उसे ज्ञात हो गया था कि कल रात में कोई अपरिचित रूपवती नारी यहां आयी थी और वह देवी मगधा के खंड में ही ठहरी है। कोई भी दास-दासी उस खंड में प्रवेश नहीं कर सकते। केवल सुन्दरी ही वहां आ-जा सकती है। कौन होगी वह नारी ?

यह सारी भावना उस चर्चा में थी और मलया को यह निश्चित हो गया था कि रानी कनकावती यहां आ पहुंची है।

उसने अपने मिष्ट व्यवहार से सुन्दरी को वश में कर लिया था, इसलिए निश्चिन्त होकर सो गई।

ठीक इसी समय महाबल राज्य के अतिथिगृह में शय्या पर सोए-सोए अनेक विकल्पों के आवर्त में घूम रहा था। उसके मन में मलया की चिन्ता उभरती थी। उसने सोचा—मगधा के यहां से कनकावती यदि अन्यत्र चली गयी होगी तो ? ओह···यदि ऐसा हो गया तो लक्ष्मीपुंज हार नहीं मिल पाएगा और मेरी माता अवश्य ही प्राणों का विसर्जन कर देगी।

दूसरा विचार उसके मन में यह भी उभर रहा था कि यदि राजकुमारी की नामांकित मुद्रिका प्राप्त हो जाती है तब तो दांव सफल हो जाता है, अन्यथा···

उसने सोचा—परसों स्वयंवर की पवित्र तिथि है। कल मुझे एक गुप्त कार्य में व्यस्त रहना है···परसों प्रातःकाल होने से पूर्व मुझे वह स्तंभ स्वयं वहां रखना है···उस स्तंभ को तैयार करने के लिए मुझे कुछ साधन एकत्रित करने हैं···और अत्यन्त गुप्तरूप से कल मुझे सारे कार्य व्यवस्थित करने हैं।

इस प्रकार एक-एक कर अनेक विचार उसके मन में प्रश्नों की परंपरा खड़ी कर रहे थे।

इतने में ही वहां नियुक्त राज्यकर्मचारी दौड़ा-दौड़ा आया और बोला—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'श्रीमन् ! महाप्रतिहार पधार रहे हैं । '

महाबल तत्काल शय्या से उठा, खंड के बाहर आया···इतने में ही महाप्रतिहारी ने नमस्कार करते हुए कहा—'महान् निमित्तज्ञ ! आपकी जय हो। महाराजा ने आपको याद किया है···पूरा राजपरिवार और मंत्रीमंडल आपकी प्रतीक्षा कर रहा है।'

'क्यों ? क्या कोई घटना घट गयी ?'

'हां, आप वहां पधारें। आपका मन प्रसन्न हो जाएगा।'

महाबल ने वस्त्र धारण किए और तत्काल राजभवन की ओर प्रस्थान कर दिया।

राजभवन में सब एकत्रित थे। महाबल वहां पहुंचा। राजा ने आसनदान दिया। वह एक सुखासन पा बैठ गया। महाराजा ने कहा—'श्रीमन् ! आपकी भविष्यवाणी सिद्ध हो गई है। राजकुमारी मलयासुन्दरी की राजमुद्रिका अभी-अभी प्राप्त हुई है।'

निमितज्ञ ने मुसकराते हुए कहा—'महाराजश्री ! मुझे विश्वास था कि प्रातःकाल तक यह मुद्रिका मिल जाएगी···क्योंकि निमित्तज्ञान एक प्रकाश है।'

महाराजा ने कहा—'किन्तु मुद्रिका बहुत ही विचित्र ढंग से मिली है। हमारे अतिबलवान् राजहाथी के मल में से यह मिली है, यह सभी के आश्चर्य का विषय है।'

'ठीक है···अब और भी निश्चय हो गया कि राजकुमारी जीवित है और वह स्वयंवर में प्रकट हो जाएगी। आप अब संशय न करें।' महाबल ने कहा।

महादेवी बोलीं—'श्रीमन् ! हाथी के मल से राजमुद्रिका की प्राप्ति बहुत ही आश्चर्यकारी घटना है। आप इसका समाधान दें।'

'महादेवी ! आपकी कुलदेवी की शक्ति अपार है···कुछ भी हो, मुद्रिका प्राप्त हो गयी, चाहे वह कैसे भी क्यों न मिले।'

उसी समय एक परिचारक दो थाल लेकर आया। दोनों ढंके हुए थे। महामंत्री ने निमित्तज्ञ की ओर दृष्टिपात करते हुए कहा—'अब आप कुछ भी आनाकानी मत करना। यह पत्र-पुष्पं आप स्वीकार करें और महाराजश्री की भावना का सत्कार करें।'

एक थाल में स्वर्ण-मुद्राएं और रत्नजटित हार था और दूसरे थाल में बहुमूल्य वस्त्र थे।

महाबल को स्वर्ण-मुद्राओं की आवश्यकता तो थी ही। क्योंकि कल उसे अनेक चीजें खरीदनी थीं। वह बोला—'कृपावतार ! मैं आपकी भावना को शिरोधार्य करता हूं।'

तब मंत्रीश्वर ने महाप्रतिहार से कहा—'ये दोनों थाल अतिथिगृह में पहुंचा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो।'

महाप्रतिहार ने तत्काल आज्ञा का पालन किया।

ज्योतिषशास्त्र की चर्चा करते हुए महाबल ने महाराजा से कहा—'अब कल मैं आठ प्रहर तक एकान्त में साधना करना चाहूंगा, जिससे कि राजकुमारी का आगमन कुशलक्षेम से हो जाए। क्रूर ग्रहों के कारण उसे भयंकर विपत्तियां झेलनी पड़ी हैं। अब ग्रहों की शांति के लिए मुझे कुछ उपक्रम करने होंगे, इसलिए मुझे आराधना में बैठना होगा।'

'मेरी पुत्री के लिए आप जो कुछ करना चाहें, करें। आप पर मुझे पूरा भरोसा है।' महाराजा ने कहा।

इस प्रकार राजा की स्वीकृति हो जाने पर सभी उठे और अपने-अपने गन्तव्य की ओर चल पड़े।

महाबल अतिथि भवन में आया और अपने कक्ष में शय्या पर सो गया।

रात बीत गई।

सुन्दरसेन के वेश में आयी हुई मलया प्रातःकाल जल्दी उठी। उसने सबसे पहले नवकार मंत्र की आराधना की। फिर वह वातायन के पास गई। उसने देखा कि जो-जो युवक रात्रि बिताने के लिए मगधा के यहां आए थे, वे अपने-अपने निवास की ओर जाने के लिए बाहर निकल रहे हैं।

मलया को एक प्रश्न कचोट रहा था। उसने सोचा—'मेरे पास मात्र दस मुद्राएं हैं। वस्त्रों का जोड़ा भी नहीं है। अब कैसे क्या होगा?'

परन्तु जब भाग्य सहारा देता है तब सब कुछ अनुकूल बन जाता है। मलया ने सोचा, मैं मगधा के घर में तो आ गयी, परन्तु रानी कनकावती से कैसे मिलना हो? उसके साथ परिचय कैसे किया जाए और उससे लक्ष्मीपुंज हार कैसे लिया जाए? यह कार्य आज संध्या से पूर्व संपन्न कर देना है, क्योंकि संध्या के बाद भट्टारिका देवी के मंदिर में लौट जाना है। कैसे करूं?

वह इन विचारों के सागर में निमग्न थी, इतने में ही द्वार पर किसी ने दस्तक दी। मलया ने द्वार खोला। सुन्दरी ने हंसते हुए कहा—'श्रीमान् की जय हो। रात्रिवास तो सुखपूर्वक बीता?'

'हां, प्रिये! प्रवास का सारा श्रम दूर हो गया।...अंदर आ।' कहकर सुन्दरसेन अंदर मुड़ा।

मलया ने कहा—'सुन्दरी! मेरे परिचारक अभी वस्त्र लेकर नहीं आए हैं। मुझे देवी से शीघ्र मिलना है। विलम्ब होगा, ऐसा लगता है।'

सुन्दरी बोली—'आप इस छोटी-सी बात के लिए क्यों चिन्तित हो रहे हैं? यदि आप श्रीमान् को आपत्ति न हो तो मैं उत्तम वस्त्रों की व्यवस्था कर देती हूं।'

मलया पांच स्वर्ण मुद्राएं देती हुई बोली—'सुन्दरी! वास्तव में ही तू सुन्दरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। मैं तुझ पर मुग्ध हूं। अभी ये पांच मुद्राएं ले जा। परिचारिका के आने पर मैं तुझे अलंकरणों से शृंगारित करूंगा।'

सुन्दरी मलया को नमस्कार कर चली गयी।

मलया स्नान आदि से निवृत्त हुई और सुन्दरी द्वारा उपहृत वस्त्र पहनकर मगधा से मिलने की उत्सुकता लिये बैठ गयी।

इतने में ही सुन्दरी आयी और सुन्दरसेन के वेश में मलया को चलने के लिए कहा। मलया उसके पीछे-पीछे चल पड़ी।

वे दोनों मगधा के कक्ष में प्रविष्ट हुए। सुन्दर और बलिष्ठ युवक को देखकर मगधा उठी और प्रसन्नमुद्रा में बोली—'पधारो, श्रीमन्! आप इस आसन पर विराजें।'

मगधा की ओर देखते हुए सुन्दरसेन एक आसन पर बैठ गया। औपचारिक वार्तालाप प्रारंभ हुआ। एक-दूसरे का कुशलक्षेम पूछा। मगधा नवयुवक के रूप और सौन्दर्य पर मुग्ध हो गयी। वह उसकी वाणी की मधुरता और चतुराई से अभिभूत हो गई।

केलिगृह के परदे के पीछे खड़ी कनकावली एकटक इस नवयुवक को देख रही थी। उसके मन में अनेक कल्पनाएं उठीं। उसको लगा कि यदि इस नवयुवक का सहवास मिले तो नारी-जीवन धन्य हो जाए···रूप और अतृप्ति की आग में झुलसते यौवन को रस-माधुर्य के छींटे प्राप्त हों···

उसने यह निश्चय कर लिया था कि यह नवयुवक गुप्तचर नहीं है, किन्तु परदेशी श्रेष्ठीपुत्र है।

रानी सुन्दरसेन को देखकर कामविह्वल हो चुकी थी। उसको अपनी परिस्थिति का भी भान नहीं रहा कि वह एक राजा की रानी है और घर से भागकर यहां शरण ली है। वह अपनी भावना को रोकने में असमर्थ थी। उसके मन में उतावलापन उभर रहा था।

नारी के मन में जब पिपासा जागती है तब वह अपनी परिस्थितियों को भूल जाती है।

मगधा ने सुन्दरसेन के हाथ दुग्धपान करने का पात्र दिया···और इतने में ही परदा सरका और आषाढ़ की बिजली की चमक की तरह रानी कनकावती इस नवयुवक को देखती हुई बाहर आयी।

मलया दुग्धपात्र हाथ में थामे हुए खड़ी हुई और प्रश्नसूचक दृष्टि से मगधा की ओर देखा। मगधा ने तत्काल कहा—'श्रीमन्! यह मेरी प्रिय सखी वल्लभा है।'

मलया ने रानी की ओर देखते हुए कहा—'मैं वल्लभा के दर्शन कर धन्य हुआ।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रानी कनकावती एक आसन पर बैठती हुई बोली—'मेरी सखी ने ही कल आपका परिचय दिया था।'

मलया ने हंसते-हंसते कहा—'देवी ! निश्चित ही मैं परम भाग्यशाली हूं। मैं सर्वथा अपरिचित आज सबका परिचित बन गया हूं।'

मगधा और कनकावती ने इस वाक्य को मुसकराकर स्वीकार किया।

सभी अल्पाहार और दुग्धपान में लग गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६. आशा का अनुबंध

रानी कनकावती और मगधा—दोनों मलया के प्रति मुग्ध हो गए थे।

मगधा ने सोचा—ऐसा सुन्दर, स्वस्थ, सुकुमार नवयुवक आज तक मैंने नहीं देखा। कितनी मधुर है इसकी वाणी ! कितनी मादकता है इसकी आंखों में ! कितना उभार है इसके यौवन का ! यदि इसके साथ अपने यौवन का आनंद लूं तो जीवन निहाल हो जाए।

रानी कनकावती ने भी इसी भाषा में सोचा था।

दासी सुन्दरी भी इसी आशा को मन में संजोए समय की प्रतीक्षा कर रही थी।

इस प्रकार तीनों स्त्रियों का मन चंचल और विकारग्रस्त हो गया था। मगधा सुन्दरसेन से बातचीत करने लगी। उसे यह प्रतीति हुई कि युवक कामशास्त्र का ज्ञाता है। उसने पूछा—'श्रीमन् ! आपने इतनी छोटी वय में कामशास्त्र का इतना गहरा ज्ञान कैसे प्राप्त कर लिया ?'

मलया बोली—'देवी ! मेरे पिता ने मुझे राजगृह की प्रसिद्ध वेश्या के घर दो वर्ष तक रखा था। वे मानते थे कि गणिका के यहां रहने से बुद्धि, चातुरी और रसशास्त्र का तलस्पर्शी ज्ञान किया जा सकता है। मैंने सब कुछ वहीं सीखा है।'

'आपका विवाह...?' रानी कनकावती ने पूछा।

'अभी तक नहीं। एक-दो वर्ष बाद विवाह होगा।' मलया ने कहा।

'धन्य होगी वह नारी, जिसे आप पतिरूप में प्राप्त होंगे।' मगधा ने कहा। वह आगे कुछ कहने वाली थी, इतने में ही मलया ने उठते हुए कहा—'अब मुझे मेरे परिचारिकों की तलाश करने के लिए पान्थशाला में जाना पड़ेगा। मेरा सारा सामान उन्हीं के पास है। सारे आभूषण और स्वर्णमुद्राएं उन्हीं को देकर इधर चला आया था।'

मगधा बोली—'यह भी आपका ही भवन है। स्वर्णमुद्राओं की यहां कोई कमी नहीं है। मैं अपने आदमियों को भेजकर उनकी खोज करवा लेती हूं। आप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहीं ठहरें।'

मलया बोली—'देवी ! मुझे यहां रात रहना है तो आपके योग्य उपहार भी देना पड़ेगा, अन्यथा मन उस मस्ती में नहीं आएगा। अब मुझे जाना ही पड़ेगा। मैं शीघ्र ही लौट आऊंगा।'

मलया वहां से चली। सोपानवीथी से नीचे उतरने लगी।

रानी कनकावती ने सुन्दरसेन के जाने की बात सुनी। उसने सुन्दरी के साथ सन्देश कहलाया और अपने खंड में उसे बुला लिया।

कनकावती मलया को लेकर केलिगृह में गयी। एक आसन पर बिठाकर कहा—'प्रिय ! आज आप मेरी भावना पूरी करेंगे ?'

'कहो।'

'मेरा मन आपमें उलझ गया है। मैं चाहती हूं कि आप मेरे बनकर यहां रहें।'

'देवी ! मेरे मन की बात आपने कह दी। जब से मैंने आपको देखा है, मेरा मन आपके यौवन में अटक गया है। परन्तु…'

'परन्तु क्या, कुमार ? मैं आपकी बनकर रहना चाहती हूं। आज रात आप यहीं मेरे कक्ष में रहें।'

'देवी ! नर-नारी के मिलन का आनंद एकांत और निर्जन में ही आ सकता है।'

'हां।'

'यह भवन इसके लिए उचित स्थान नहीं है। भवन की प्रत्येक शय्या अनेक पुरुषों के स्पर्श से विषाक्त बन चुकी है। देवी ! यदि आप जीवन की रति का सच्चा आनंद लेना चाहती हैं तो मेरे साथ एकांत में चलें, जहां प्रकृति का मधुर वातावरण आनंद के गीत गाता है।'

'ऐसा स्थान ?'

'अभी जब मैं नगर से यहां आ रहा था तब एक स्थान दृष्टि में पड़ा। वह नीरव और शांत स्थल था। वहां चलेंगे।'

'किन्तु…'

'आप क्यों डरती हैं। कोई संशय न करें।'

'परन्तु लोकदृष्टि से…'

'इसको मैं जानता हूं। जिसको मैं अपनी प्रेयसी बनाकर ले जाऊंगा, क्या मैं उसका दायित्व नहीं निभाऊंगा ? मध्याह्न के बाद हम दोनों एक रथ में बैठकर उस स्थान पर जाएंगे और मधुर यामिनी वहीं बिताएंगे।'

'तो वनप्रदेश में…?'

'मुक्त-विहार के लिए मुक्त प्रकृति का होना आवश्यक है। वह भवन सुन्दर है, किन्तु मिलन का उत्तम स्थान नहीं है। देवी ! क्या आप मेरे साथ सदा-सदा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के लिए रहना चाहेंगी ?'

'हां, इच्छा तो ऐसी ही है।

'अच्छा, मैं आपको पत्नी के रूप में नहीं, प्रेयसी के रूप में स्वीकार कर लूंगा।'

'आपका प्रस्ताव मोहक है। परन्तु मेरा त्याग तो नहीं कर देंगे ?'

'ऐसा संशय क्यों उठा ?'

'अनेक पुरुष स्वार्थ सधने के बाद प्रियतमा का त्याग कर देते हैं।'

'मैं वैसा पुरुष नहीं हूं। यदि आप मेरे मन में नहीं बसी होतीं तो मैं यह प्रस्ताव नहीं रखता। हमें यहां से राजगृह की ओर चले जाना पड़ेगा। मैं वहां आपको अपने एकान्त भवन में रखूंगा। मेरे परिवारवालों को कुछ भी कल्पना नहीं हो पाएगी।'

रानी विचार करने लगी—यहां से निकल जाने का इससे अच्छा योग नहीं मिलेगा। यहां रहने से राजा के सैनिकों के हाथों पकड़े जाने का भय बना ही रहेगा।···सुन्दरसेन अपनी इच्छा से मुझे यहां से ले जाने के लिए तैयार है। मुझे इस अवसर का लाभ उठाना चाहिए।

मलया ने पूछा—'देवी ! क्या सोच रही हैं ?'

'आपका प्रस्ताव मुझे स्वीकार है।'

तत्काल मलया उठी। रानी के दोनों हाथ पकड़कर वह बोली—'प्रिये ! आज मेरा मन बहुत प्रसन्न है। मुझे जैसी नारी की आवश्यकता थी वह आज मुझे प्राप्त हो गयी। प्रिये ! अब मुझे पूर्व तैयारी के लिए यहां से जाना पड़ेगा। तुम तैयार रहना। रथ में हमें यहां से चलना है।'

मलया ने रानी का आश्लेष लिया। उसे भुजपाश में जकडकर बोला—'देवी ! अब मुझे आज्ञा दो।'

रानी बोली—'इतनी जल्दी क्या है ? एकान्त स्थान···।

'नहीं, प्रिये ! विलम्ब होगा। मुझे वापस आना ही है।'

मलया भवन के बाहर निकल गयी।

मगधा ने रानी कनकावती से सारी बात जान ली।

सुन्दरी अनमनी हो गयी।

मलयासुन्दरी मगधा के भवन से निकलकर बाजार में से जा रही थी, एक दूकान पर उसकी दृष्टि पड़ी। वह चौंकी। महाबल कुछ खरीद रहा था। मलयासुन्दरी उसकी तरफ गयी।

मलया को अपनी ओर आते देख महाबल दूकानदार से सारी चीजें बांधने के लिए कहते हुए बोला—'मैं अभी अपने मित्र से मिलकर आता हूं।' यह कहकर महाबल मलया की ओर चल पड़ा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दस-बारह कदम चलते ही दोनों मिल गए। महाबल ने धीरे से कहा—'बाहर कैसे निकलना पड़ा?'

'आपको···?'

'मुझे कल की तैयारी करनी है। इसीलिए इस बाजार में आना पड़ा है। तेरे लिए उत्तम वस्त्र और अनेक वस्तुएं ली हैं। परन्तु तेरा चेहरा कुछ थका हुआ-सा लगता है, क्यों?'

'आपने मेरे पर गुरुतर दायित्व दिया था। परन्तु वेश्या के घर में क्षणभर के लिए भी कैसे रहा जा सकता है?'

'कर्मों की गति के आगे सबको लाचार होना पड़ता है। वहां रानी थी?'

'हां, आज मध्याह्न के पश्चात् उसको मैं भट्टारिका देवी के मंदिर में लाने वाली हूं।'

'क्यों?' महाबल ने पूछा।

'जो वस्तु उससे प्राप्त करनी है, वह उसी के पास है। और···'

'और क्या?'

'वह आ रही है मेरे पर आसक्त होकर···' कहकर मलया हंस पड़ी।

'अरे! तेरे पर कौन अभागी मुग्ध नहीं होगी? ले, तुझे एक शुभ संवाद सुनाता हूं कि तेरे माता-पिता बच गए हैं।' यह कहते हुए महाबल ने निमित्तज्ञ के रूप में अपने अभिनय की पूरी जानकारी मलया को दी।

मलया ने भी मगधा के भवन में स्वयं को कौन-कौन से अभिनय करने पड़े थे, उसकी पूरी जानकारी महाबल को देते हुए कहा—'देवी कनकावती मेरे साथ राजगृह चलने के लिए तैयार हो गई है।'

महाबल बोला—'शाबास, सुन्दरसेन! अब यह सावधानी बरतनी है कि तुझे सन्ध्या के समय भट्टारिका देवी के मंदिर में पहुंच जाना है···उससे पहले नहीं···क्योंकि मेरा कार्य उस समय तक संपन्न हो जाएगा।'

'ऐसा कौन-सा कार्य है?'

'यह तो जब तू वहां आएगी तब स्वयं ज्ञात हो जाएगा। अब हम वियुक्त हों, आगे के मिलन की चाह लिये।'

'प्रिय! एक बात है। मुझे आज एक बंद रथ की आवश्यकता है।'

'सुन्दरसेन! मध्याह्न के पश्चात् एक रथ मगधा के भवन पर आ जाएगा, मैं इसकी व्यवस्था कर दूंगा। और कुछ?'

'कुछ स्वर्णमुद्राएं भी आवश्यक हैं।'

'मेरे पास बहुत हैं। तेरे पिता ने मुझे उपहार में दी हैं।' यह कहते हुए महाबल ने अपने थैले में से सौ स्वर्णमुद्राएं मलया को दीं। मलया ने उन्हें अपने उत्तरीय के छोर पर बांध लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फिर दोनों अलग हो गए। दोनों के चित्त एक-दूसरे के मिलन से हर्षित ह रहे थे।

महाबल दूकान की ओर आया। मलया एक मस्त युवक की भांति अन्य दिशा में चली गई।

उसने कुछ वस्त्र खरीदे। कमरपट्ट, कंचुकीबंध तथा अन्यान्य वस्तुएं ले वह मगधा के भवन की ओर गयी।

सभी सुन्दरसेन के वेश में मलया की प्रतीक्षा कर रहे थे। उसको आते देख सभी प्रसन्न हुए। मगधा ने सुन्दरसेन से कहा—'मैंने मेरी प्रिय सखी वल्लभा से सारी बात जान ली है। वह आपके साथ राजगृह जाने के लिए तैयार है। श्रीमन्! ध्यान रखें। मेरी सखी बहुत कोमल और संवेदनशील है। आप उसके सुख-दुःख में···।'

बीच में ही मलया बोली—'देवी! आप चिन्ता न करें। मैं उसको अपनी प्रेयसी बनाकर रखूंगा। उसका कष्ट मेरा कष्ट होगा। उसका सुख मेरा सुख होगा। वह मेरी, मैं उसका।'

इतने में ही एक बंद रथ वहां आ पहुंचा।

मलया ने कहा—'देवी! समय हो गया है। अब मुझे आपसे विदा लेनी होगी। यहां से जाने की इच्छा ही नहीं होती, पर जाना पड़ रहा है। फिर कभी मैं इधर आया तो आपके साथ रात बिताना नहीं भूलूंगा।'

रानी कनकावती ने अपना पूरा साज-सामान रथ में रखा। उसने अपने आभूषणों की पेटी भी साथ में ले ली।

रथ गतिमान हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७. हार मिल गया

रथ बंद था। बाहर से ऐसा प्रतीत नहीं हो पाता था कि अन्दर कोई होगा। सुन्दरसेन ने रथवाहक से कहा—'रथ को धीरे-धीरे ले जाना। कहां जाना है, यह तो तुम जानते ही हो।'

'हां, श्रीमन्! आप आराम से बैठें।' रथवाहक ने कहा।

रानी ने मन-ही-मन सोचा—सुन्दरसेन कौन है? इसकी आकृति मुझे परिचित-सी लगती है। यह मेरी अपरपुत्री मलया जैसा है। उसकी आकृति और इसकी आकृति में कितना सादृश्य है! अरे, वह स्त्री, यह पुरुष! होता है, संसार विचित्र है। आकृतियां मिलती हैं।

रानी सुन्दरसेन की गोद में सिर रखकर बोली—'प्रिय! आज मैं अत्यन्त सुखी हूं।'

मलया रानी के मस्तक पर हाथ फेरने लगी।

रथ आगे से आगे चला।

इधर महाबल अपनी सारी तैयारी संपन्न कर, सारा सामान ले भट्टारिका देवी के मंदिर में आ गया। उसने महाराजा से मंत्र की आराधना का बहाना बनाकर प्रस्थान किया था। महाराजा को इसके अभिनय पर तनिक भी सन्देह नहीं हुआ था क्योंकि इसने जो कहा, वह प्रत्यक्ष होता जा रहा था।

जब वह भट्टारिका देवी के मंदिर में पहुंचा तब वहां कोई नहीं था। उसने मिष्टान्न का भोजन किया और अगले दिन की तैयारी करने लगा।

मंदिर के एक कोने में एक पोला स्तंभ था। उसको देखकर उसके मन में एक कल्पना उभरी थी और आज उस कल्पना को मूर्त रूप देने के लिए वह सारी तैयारी करके आया था।

उसने सबसे पहले उस स्तंभ को बीच में से चीर डाला, फिर एक भाग को कपाट का रूप देकर, भीतर एक जंजीर डाल दी थी कि भीतर में रहा हुआ मनुष्य उस जंजीर को कपाट में डाल दे तो फिर कपाट खुले ही नहीं।

यह कार्य पूरा कर उसने स्तंभ को विविध प्रकार के रंगों से रंग डाला।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल को इन सारी कलाओं का ज्ञान था। वह चित्रकला भी जानता था। परन्तु उस स्तंभ पर उसने कोई चित्र नहीं बनाया, क्योंकि उसमें समय लगने का भय था, इसलिए केवल तरंगाकार रेखाएं खींचकर उसने स्तंभ को आकर्षक बना दिया था।

जब स्तंभ का कार्य पूरा हुआ, तब अपराह्न का समय पूरा हो रहा था। सूर्य अस्ताचल की ओर गतिमान् था। आकाश में रक्तवर्ण उभर रहा था।

ठीक इसी समय मंदिर के पिछले भाग में किसी के पदचाप सुनाई दिए।

महाबल तत्काल खड़ा हुआ। उसने देखा कि पांच मनुष्य एक बड़ी पेटी लेकर आए हैं। उन पांचों में एक सरदार जैसा लग रहा था। उसकी आकृति से प्रतीत हो रहा था कि यह उन पांचों में मुखिया है। वह बोला—'अरे कालिया ! तुझे इस पेटी की सार-संभाल करने के लिए यहीं बैठे रहना है···हम नगरी में जा रहे हैं···विलंब से आएं तो भी चिन्ता मत करना।'

कालिया ने सिर झुकाकर अपनी सहमति प्रकट की।

शेष चारों व्यक्ति तत्काल वहां से चले गए।

महाबल ने सोचा—ये चोर हैं और कहीं से चोरी करके आए हैं। यह व्यक्ति यहां बैठा रहेगा तो मेरी योजना···। संध्या बीतते ही मलया आएगी··· साथ में रानी कनकावती भी होगी। ऐसा सोचकर महाबल ने चोर की भाषा में संकेत किया और कालिया के पास गया। कालिया ने इस तेजस्वी युवक को देखकर कहा—'अरे ! तू भी हमारी ही जाति का लगता है !'

'हां, मित्र ! मैं आधी रात के पश्चात् नगरी में जाऊंगा···तुमने यह माल कहां से चुराया ?'

'चार कोस की दूरी पर एक गांव है। वहां हमने चोरी की थी। मित्र ! मेरा एक काम करोगे ?'

'बोल, क्या काम है ?

'इस पेटी का ताला मेरे से नहीं खुल रहा है···'

'अरे ! इसमें क्या रहस्य है ?' यह कहकर महाबल अपने पास लाये हुए औजारों में से एक औजार ले आया और तत्काल ताला खोल डाला।

कालिया ने पेटी खोली। उसमें कुछ वस्त्र थे और अलंकारों की एक पोटली थी। कालिया ने अलंकारों की पोटली को बाहर निकालकर पेटी बंद कर दी। फिर उसने महाबल से कहा—'हमारा सरदार दुष्ट है···एक वर्ष से मैं उसके साथ हूं। परन्तु उसने मुझे कुछ भी नहीं दिया है।'

'तो तू भी उसे पाठ पढ़ा। पोटली लेकर भाग जा।'

'परन्तु ऐसा करने पर वह मेरे पदचिह्नों की खोज से मुझे पकड़ लेगा। तुम आज रात भर कहीं छिपा दो। मैं तुम्हारा उपकार जीवन भर नहीं भूलूंगा।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चारों ओर दृष्टिपात कर महाबल बोला—'इस मंदिर के ऊपर शिखर पर तू कहीं छिप जा। चल, मैं तेरे लिए छिपने का स्थान बना देता हूं।' दोनों मंदिर के ऊपर गए। महाबल ने शिखर के एक पत्थर को हटाया। उस पोलाल में चोर को छिप जाने के लिए कहा। चोर उसमें समा गया, छिप गया। महाबल पत्थर ज्यों का त्यों रखकर नीचे आ गया।

सूर्य अस्ताचल में जा छिपा।

पक्षियों का मधुर कलरव शान्त हो गया।

प्रकाश और अंधकार का संग्राम चरम सीमा पर था।

मलया अभी पहुंचेगी, इस विचार से महाबल ने उस स्तंभ को एक ओर रखा और साथ वाली सारी सामग्री एक पोटली में बांध दी। उसकी दृष्टि मंदिर के प्रांगण से कुछ दूरी पर स्थित एक वटवृक्ष पर पड़ी। वह वहां गया। वटवृक्ष विशाल था। उसके स्कंध (तने) में पोलाल थी। उसने सारा सामान वहां रख दिया और मलया रानी के साथ आकर क्या करती है, इसे देखने के लिए वटवृक्ष पर चढ़कर बैठ गया। जिस शाखा पर वह बैठा था, वह बड़ी थी। वहां से मंदिर का बहुत बड़ा भाग दीख रहा था।

महाबल वटवृक्ष पर बैठा-बैठा विचार कर रहा था। उसने सोचा—प्रकाश और अंधकार के बीच अनंतकाल से संग्राम होता रहा है। कभी अंधकार जीतता है और कभी प्रकाश। प्रातःकाल के समय अंधकार हारता है और प्रकाश जीतता है, किन्तु रात्रि में प्रकाश हारता है और अंधकार जीतता है।

विचारमग्न बने हुए महाबल को आहट सुनाई दी। उसने मंद प्रकाश में देखा कि मलया और रानी दोनों आ रहे हैं।

मलया एक नौजवान की भांति रानी कनकावती का हाथ थामे आ रही थी। उसकी गति में मस्ती थी। रानी कनकावती की गतियां भी वासना की उर्मियों से भरी हुई थीं।

दोनों वटवृक्ष के पास से गुजरे तो रानी कनकावती बोली—'अरे! यह तो भट्टारिका देवी का मंदिर है!'

'मैं कुछ नहीं जानता। मुझे तो यह मंदिर निर्जन और एकान्त लगता था।'

'इस मंदिर में कोई नहीं आता। केवल मृगसिर के मास पुरवासी लोग यहां आते हैं।' कनकावती ने कहा।

दोनों मंदिर के प्रांगण से गुजरे और ऊपर चढ़ने लगे।

महाबल देख रहा था। पर अब शब्द पूरे सुनाई नहीं दे रहे थे। कनकावती बोली—'प्रिय! यहां कोई है तो नहीं?'

'कोई हो, ऐसा नहीं लगता···फिर भी मैं देख लूं···' कहकर सुन्दरसेन मन्दिर में गया और मन्दिर के पिछले भाग में एक बड़ी पेटी को देखकर चौंका।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्काल उसने पेटी को खोला। उसमें वस्त्र थे। उसने सोचा—'यह पेटी किसकी है ? ये वस्त्र कहां से आये ?' इस पेटी को यहां कौन ले आया ? '

अधिक सोचे बिना मलया कनकावती के पास आकर बोली—'प्रिये ! यहां कोई नहीं है···ऐसे स्थान पर कौन आए ? क्या तुझे यहां भय लगता है ? पश्चिम-रात्रि में तो मेरा रथ यहां आ ही जाएगा।'

'क्या हमें यहीं रात बितानी है ?'

रानी का एक हाथ चादर में ही था, क्योंकि उस हाथ में पोटली थी।

'क्या तुझे यह स्थान अच्छा नहीं लगा ? रात बीतते समय नहीं लगेगा। मनुष्य जब क्रीडारत होता है तब रात जल्दी बीत जाती है।'

मलया ने रानी के हाथ की ओर संकेत करते हुए कहा—'अरे ! तू साथ में क्या ले आयी ? तू जानती है कि मैं रात में कुछ भी नहीं खाता।'

'इसमें खाद्य पदार्थ नहीं हैं।'

'तो फिर···?'

'मेरे अलंकार हैं।'

'इसकी इतनी सार-संभाल क्यों ? पोटली यहां रख दे···मुक्त विहार में सर्वथा बंधनमुक्त रहना चाहिए।'

रानी ने बिना कुछ कहे, वह जोखिम की पोटली एक ओर रख दी।

मलया ने रानी को बाहुपाश में बांध लिया।

रानी मलया से लिपट गई।

महाबल ने सोचा—अब अवसर आ गया है। वह सावधानी से नीचे उतरा, मन्दिर में आया और संकेत-स्वर का धीमे से उच्चारण किया।

मलया और रानी दोनों के कानों में यह शब्द पड़ा। रानी ने कहा—'कोई आ रहा है !'

'हां, मुझे भी ऐसा प्रतीत हो रहा है', यह कहकर मलया ने चारों ओर देखा। वह संकेत को समझ गई थी।

कनकावती बोली—'राजपुरुष तो···?'

'तू डर मत।'

'आप मुझे कहीं छिपा दें, फिर आप खोज करें।'

'ठीक है, सावधान रहना अच्छा है।' कहकर मलया ने कनकावती का हाथ पकड़ा और उसे मन्दिर के पिछले भाग की ओर ले गई।

उतावली में रानी लक्ष्मीपुंज हार और अलंकारों की पोटली वहीं भूल गई।

मलया पेटी के पास आकर बोली—'प्रिये ! तू इस पेटी में आराम से छिप सकेगी।'

'परन्तु मेरी जोखिम की पोटली···?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'तू पेटी में बैठ जा, मैं पोटली ले आता हूं'''जब वातावरण भयरहित हो जाएगा तब मैं बाहर आने के लिए कहूंगा।' मलया पोटली लाने चली गई।

रानी पेटी में बैठ गई। उसमें कपड़े मात्र थे इसलिए कोई व्यवधान नहीं आया।

थोड़े समय पश्चात् मलया ने रानी को पोटली देते हुए कहा—'अरे! इतने थोड़े अलंकारों के लिए इतनी चिन्ता! राजगृह पहुंचकर मैं तेरे पूरे शरीर को ही हीरे और मोती से जड़ दूंगा।'

रानी ने पोटली को संभालते हुए कहा—'अब आप खोज करें'''रंग में भंग हो गया।'

मलया ने कहा—'रंग में भंग होना भी तो उत्तेजना का कारण बनता है''' देख! मैं पेटी का दरवाजा बन्द कर देता हूं, जिससे किसी को कुछ भी संदेह न हो।' मलया ने पेटी का दरवाजा बन्द कर, ताला लगा दिया।

फिर उसने पोटली में से निकाले लक्ष्मीपुंज हार को उत्तरीय के कोने में बांध लिया।

जब वह मन्दिर के अगले भाग की ओर गयी तब उसने देखा कि महाबल दोनों हाथों में दो पोटली लिये आ रहा है। मलया को देखते ही महाबल बोला—'रानी कहां है?'

'मन्दिर के पीछे एक बड़ी पेटी में उसे छिपा रखा है।'

'लक्ष्मीपुंज हार मिला?'

'हां', कहती हुई मलया ने हार दिखाया।

'अच्छा हुआ। अब हमें एक बड़ा काम सम्पन्न करना होगा।'

'इससे पूर्व रानी को यह आभास नहीं होने देना है कि यहां कोई आया है।'

'तू बहुत बुद्धिमान है। चल हम वहीं चलते हैं।'

'पहले मैं जाती हूं, फिर आप आएं।' मलया ने लक्ष्मीपुंज हार महाबल को सौंप दिया और वहां चली गई।

उसने आकर रानी से कहा—'प्रिये! कोई आया है, पर तू निश्चित रह।'

इतने में महाबल ने गंभीर स्वरों में कहा—'कौन खड़ा है?'

'क्यों? तू कौन है?' मलया ने ललकारते हुए जवाब दिया।

'मैं महाराजा का एक सैनिक हूं। ऐसे निर्जन स्थान में तू क्यों आया है?'

'मुझे तो यहां रात बितानी है। मैं अपने साथियों की प्रतीक्षा कर रहा हूं।'

'क्या तूने इस ओर दो स्त्रियों को आते देखा है?'

'नहीं, मित्र!' ऐसे निर्जन स्थान में स्त्रियां कहां से आएंगी? चल, हम बैठकर बातचीत करें'''कहती हुई मलया ने महाबल का हाथ पकड़ा और दोनों मन्दिर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के अगले भाग की ओर चल दिये।

रानी का हृदय धड़कने लग गया था। उसने सोचा—बुद्धिमान् सुन्दरसेन ने मुझे छिपाने के लिए पेटी का जो प्रस्ताव रखा था, वह कितना सुन्दर और कारगार सिद्ध हुआ।

मलया और महाबल—दोनों मन्दिर के अगले भाग में आए। महाबल ने कहा—'रात्रि का प्रथम प्रहर बीत गया है। पेटी को यहां रखकर जो चार चोर नगर में गए हैं, उनके आने का समय हो रहा है। हमें उनके आगमन से पूर्व अपना काम कर लेना है।'

'चार चोर?'

'हां, मलया!' कहकर पांचों चोरों की बात विस्तार से बताते हुए महाबल ने शिखर में छिपे पड़े चोर की बात भी कही।

फिर दोनों स्तंभ के पास गये···महाबल ने स्तंभ की करामात को समझाते हुए कहा—'प्रिये! तुझे इस स्तंभ की पोलाल में छिप जाना है। फिर तू अन्दर से जंजीर लगा देना जिससे कि यह द्वार खुले ही नहीं···जब तू जंजीर खोलेगी तब ही यह द्वार खुलेगा···अच्छा, एक बार तू स्तंभ में खड़ी रह।'

मलया अन्दर आ गयी। जंजीर को अटका दिया। भीतर खड़े रहने और बैठने के लिए पर्याप्त स्थान था। शरीर के लिए वह किसी भी प्रकार से कष्टप्रद नहीं था।

मलया स्तंभ से बाहर आ गयी।

महाबल ने कहा—'प्रिये! तुझे अलंकार पहनकर इसमें खड़े रहना है। यह स्तंभ कल प्रातः राजा के सिपाहियों को मिलेगा। वे इसे स्वयंवर-मंडप में ले जाकर एक वेदिका पर रखेंगे। वहां मेरे संकेत-स्वर के पश्चात् ही भीतर से जंजीर खोलना, पहले मत खोलना।'

'यह मेरा पुरुष अवतार···'

'ओह! मैं जब अपने हाथों से तिलक को मिटा दूंगा तब तू मूल रूप में आ जाएगी'—कहकर तिलक को मिटाने के लिए हाथ आगे बढ़ाया। मलया बोली—'क्या इसी वक्त मुझे स्तंभ में प्रवेश करना है?'

'हां। क्यों?'

'फिर इस स्तंभ को उठाकर पूर्व द्वार पर कौन ले जाएगा?'

'ओह! तब···'

'पहले हम दोनों इस स्तंभ को पूर्व द्वार पर ले जाकर रखें···वहां मैं मूल रूप में आकर वस्त्राभूषण पहनकर स्तंभ में समा जाऊंगी।'

'ठीक है।' महाबल ने कहा।

फिर वे दोनों स्तंभ के पास आए। मलया ने पूछा—'रानी का क्या होगा?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'ओह ! यदि उसको बाहर निकाल देंगे तो राजपुरुष उसे पकड़कर ले जाएंगे। अच्छा तो यह है कि हम इस पेटी को गोला नदी के तेज प्रवाह में बहा दें। प्रातःकाल होते-होते यह पेटी संभवतः मेरे राज्य की सीमा में चली जाएगी…' कहकर महाबल ने कुछ सोचा और कहा—'चोर को भी मैं मुक्त कर दूं।' कहते हुए महाबल शिखर पर चढ़ा और चोर को बाहर निकाल दिया।

चोर ने पूछा—'मेरे साथी आ गये ?'

'नहीं…वे यदि विलम्ब से आयेंगे तो तू दिन में भी प्रवास नहीं कर सकेगा। तू इस पेटी को उठा। हमने इसमें पत्थर भरकर इसे भारी कर दिया है। यह नदी के प्रवाह में तैरती हुई चली जाएगी। तू इसकी दूसरी दिशा में चला जा। जब तेरे साथी आयेंगे तो मैं उन्हें पेटी की दिशा की ओर रवाना कर दूंगा।'

'आपके साथ यह युवक कौन है ?'

'यह मेरा मित्र सुन्दरसेन है।' महाबल ने उत्तर दिया।

'आप दोनों राजघराने के लगते हैं, पर आपने चोरी का धन्धा क्यों अपना रखा है ?' चोर ने पूछा।

'भाई, कर्म की गति विचित्र होती है। साहूकार चोर बन जाता है और चोर साहूकार बन जाता है।' महाबल ने कहा।

'आपका उपकार मैं जीवन-भर नहीं भूलूंगा।' चोर ने कृतज्ञता प्रकट की।

फिर तीनों ने मिलकर पेटी को नदी के किनारे बहा दिया। रानी को कुछ भी ज्ञात नहीं हो पा रहा था।

चोर चोरी का माल लेकर दूसरी दिशा की ओर चला गया।

पेटी तेजी से बही जा रही थी।

मलया और महाबल निश्चिंत हो स्तंभ लेकर विदा हुए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८. निराशा के बादल

रात्रि का तीसरा प्रहर प्रारम्भ हो चुका था।

मलया और महाबल उस स्तंभ को लेकर पूर्व द्वार पर स्थित एक वृक्ष के पास पहुंच गये।

अभी नगरद्वार बन्द हो चुका था और उसे खुलने में कुछ विलम्ब था।

महाबल ने उस स्तंभ को एक स्थान पर रखा। मलया ने सुन्दर वस्त्र धारण कर लिये और चमचमाते लक्ष्मीपुंज हार को पहन लिया। और मलया अपने मूल स्त्री रूप में परिवर्तित हो गई। यह तिलकजिसने किया हो और वह व्यक्ति स्वयं अपनी जीभ से उस तिलक को मिटाए तो जाति परिवर्तन हो सकता है, अन्यथा नहीं। आचार्य पद्मविजय ने यह वस्तु महाबल को भेंटस्वरूप दी थी।

वस्त्रालंकारों से सज्जित मलयासुन्दरी उस समय त्रिभुवनसुन्दरी के समान दीख रही थी।

उसके मन में कल होने वाले स्वयंवर की ऊर्मियां उछल रही थीं और वह इस बात से बहुत प्रसन्न थी कि वह कल अपने प्राणप्रिय को पा लेगी, जिसके प्रति उसने सर्वस्व समर्पित किया था। उसका रोम-रोम पुलकित हो रहा था।

महाबल के चरणों में प्रणाम कर मलया उस स्तंभ के पोलाल में घुस गयी। उसके द्वार को बन्द करते हुए महाबल ने धीरे से कहा—'प्रिये! नवकार मंत्र का स्मरण निरंतर चालू रखना।'

मलया मधुर स्वर में बोली—'महामंत्र ही हमारे जीवन का कवच है।' मलया ने भीतर से जंजीर लगा दी।

तत्काल महाबल ने स्तंभ पर तेल चुपड़ा और उस पर 'स्वर्ण' के 'बरख' चढ़ाए।

कार्य पूरा कर महाबल बोला—'अब मैं जा रहा हूं। मुझे दूसरे मार्ग से राजभवन में पहुंचना होगा।'

मलया अन्दर से बोली—'अब आपके दर्शन स्वयंवर-मंडप में ही होंगे।'

महाबल ने चारों ओर देखा। उसे विश्वास हो गया कि आसपास कोई है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं। वह वहां से चला।

सबसे पहले वह भट्टारिका देवी के मन्दिर में गया और वहां बिखरी पड़ी सारी वस्तुएं—रंग आदि लेकर उसने गोला नदी में डाल दी।

फिर वह समय की प्रतीक्षा करता हुआ मन्दिर की एक चोटी पर बैठकर विश्राम करने लगा।

रात्रि का तीसरा प्रहर बीत गया। महाबल ने सोचा, नगर में चोरी करने गये चारों चोर अब आने वाले ही हैं। उनके आगमन से पूर्व मुझे यहां से चला जाना है।

एकाध घटिका के पश्चात् चारों चोर वहां आ पहुंचे। अपनी पेटी और साथी को न पाकर वे महाबल के पास आये। मुख्य चोर ने पूछा—'अरे, हमारा एक साथी और एक बड़ी पेटी यहां पड़ी थी। उनका क्या हुआ ?'

'आप सब कौन हैं ? यहां पेटी की रक्षा के लिए बैठा हुआ आदमी आपका साथी था ?'

'हां···।'

'तब तो वह बड़ी मुश्किल से पेटी को सिर पर रखकर नदी के किनारे गया है। उसने मुझे सहयोग के लिए कहा था। हम साथ-साथ गये और पेटी को नदी में बहा दिया। वह उस पेटी पर बैठ गया था।' महाबल ने बताया।

मुख्य चोर ने पैर पटकते हुए कहा—'विश्वासघात ! अरे भाई ! उसको गये कितना समय हुआ होगा ?'

'रात्रि के दूसरे प्रहर के बाद गया है।'

तत्काल चोरों के सरदार ने अपने साथियों से कहा—'शीघ्र चलो, हम उसका पीछा करेंगे।'

'सरदार ! नदी का प्रवाह इतना तेज है कि न जाने वह पेटी पर बैठा-बैठा कितनी दूर चला गया होगा।'

'अरे ! वह जाएगा कहां ? अभी हम एक नौका में बैठकर उसका पीछा करते हैं।' कहते हुए सरदार ने महाबल की ओर देखा और कहा—'मैं आपका आभारी हूं, आपने हमें सारी जानकारी दी।'

'आपका परिचय ?' महाबल ने पूछा।

'यदि तुम्हारे पास धन या अलंकार होते तो हमारा परिचय स्वयं प्राप्त हो जाता'—कहता हुआ चोरों का सरदार अपने साथियों को साथ ले चला गया।

थोड़े समय पश्चात् महाबल भी मन्दिर से चला गया जब वह राजभवन के मुख्य द्वार पर पहुंचा तो वहां के प्रहरियों ने नमस्कार कर कहा—'निमित्तज्ञ महाराज की जय हो !'

प्रहरियों को आशीर्वाद देता हुआ महाबल अपने आवास में न जाकर सीधा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजभवन मे गया।

राजभवन में सब जागृत हो गए थे। निमित्तज्ञ को देखकर मंत्री, महाराजा तथा महादेवी बहुत प्रसन्न हुए।

महादेवी ने पूछा—'श्रीमन् ! मंत्र की आराधना पूरी हो गई ?'

'नहीं, पूरी नहीं हुई, कुछ अधूरी है।'

'क्यों ? क्या कोई विघ्न आ गया था ?' महादेवी ने पूछा।

निमित्तज्ञ बोला—'विघ्न तो नहीं आया, किन्तु मुझे यहां जल्दी पहुंचना था, इसलिए उसे बीच में ही छोड़कर आना पड़ा। अच्छा, जो मैंने कहा था कि पूर्वी द्वार पर स्तंभ मिलेगा, क्या वह मिला ?'

मंत्रीश्वर ने कहा—'अभी-अभी हमने चार प्रहरियों को भेजा है, वे सारी खोज कर बताएंगे।'

इतने में ही महाप्रतिहार ने कक्ष में प्रवेश करते हुए कहा—'कृपावतार ! पूर्व के द्वार पर एक दिव्य स्तंभ अवतरित हुआ है।'

'अच्छा !' कहकर महाराजा हर्ष-विभोर हो गए।

महाबल बोला—'महाराज ! इस स्तंभ को अत्यन्त आदर और सम्मान सहित स्वयंवर-मंडप में पहुंचाना चाहिए। पांच-सात व्यक्ति उसको धीरे से उठाएं और धीरे-धीरे चलते हुए वहां पहुंचें। मैं स्नान आदि से निवृत्त होकर आता हूं और मंत्रोच्चारण कर स्तंभ की स्थापना-विधि सम्पन्न करता हूं।'

महामंत्री ने महाप्रतिहार को सारी बात बताई और पूर्ण सावधानीपूर्वक स्तंभ लाने का आदेश दिया।

महाप्रतिहार वहां से विदा हुआ।

महाबल भी स्नान करने के लिए चला गया।

सूर्योदय हो चुका था। सबके हृदय आनन्द की ऊर्मियों से उछल रहे थे। सबको यह निश्चय हो गया था कि निमित्तज्ञ के कथनानुसार कुलदेवी की कृपा से मलयासुन्दरी स्वयंवर-मंडप में प्रकट होगी।

स्वयंवर-मंडप सजाया जा चुका था। एक वेदिका पर मखमल की चादर बिछी हुई थी। उस पर वज्रसार नाम का विराट् धनुष्य रखा गया था। सभी राजकुमार और राजा अपने-अपने नियत स्थान पर बैठ सकें, इसकी पूरी व्यवस्था कर दी गई थी। स्थान-स्थान पर स्वर्ण के आसन बिछे हुए थे।

महाबल स्नान आदि से निवृत्त होकर आ गया था।

मलयासुन्दरी जिसमें छिपी हुई थी, वह स्तंभ भी स्वयंवर-मंडप में पहुंच गया था। महाबल ने उस स्तंभ को एक निश्चित स्थान पर खड़ा कर दिया और वह गिर न पड़े, इसलिए उसके चारों ओर अन्य लक्कड़ रख दिए थे।

फिर महाबल ने स्तंभ की प्रतिष्ठा की, पूजा की महाराजा और महादेवी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ने भी पूजाविधि संपन्न की।

महाबल ने मंत्रोच्चारण का अभिनय करते हुए स्तंभ की तीन बार परिक्रमा की और धीरे से बोला—'वीणावादन हो तब सावचेत हो जाना और जब उस पर तीर का प्रहार हो तब शीघ्रता से द्वार खोल देना।'

स्तंभ के पास कोई नहीं था। सब दूर थे। इसलिए किसी ने महाबल की बात नहीं सुनी। सबने यही माना कि महा निमित्तज्ञ मंत्रोच्चारण कर रहे हैं।

स्तंभ की स्थापना और पूजा हो जाने पर महाबल ने महाराजा से कहा—'अब आप सभी राजपुत्रों को बुला लें।'

महाराजा ने कहा—'राजकुमारों को एकत्रित करने के लिए मंत्री गए हुए हैं। अभी सब आ जाएंगे।'

महादेवी ने पूछा—'निमित्तज्ञजी! मलया तो दीख ही नहीं रही है।'

'महादेवी! आप चिन्ता न करें। राजकन्या अवश्य ही आएगी, मेरे वचनों पर भरोसा रखें।' कहता हुआ महाबल दूसरी दिशा में चला गया।

अतिथि आने लगे। महाबल उनके आतिथ्य में लग गया।

अवसर का लाभ उठाता हुआ महाबल वहां से छिटक गया। अतिथिवास में जाकर अपने वस्त्र ले वह एक पांथशाला में चला गया। इस पांथशाला में उसने कल ही एक खंड सुरक्षित रख लिया था और वहां वीणा आदि साधन जुटाकर रख छोड़े थे।

स्वयंवर-मंडप में विभिन्न देशों से समागत राजकुमार अपने-अपने नियत स्थान पर बैठ चुके थे। इस स्वयंवर में पांच-सात प्रौढ़ राजा भी आए थे। उनके मन में दक्षिण भारत की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी मलया को प्राप्त करने की लालसा अभी युवा थी।

रूप का आकर्षण आज से नहीं, अनादिकाल से चला आ रहा है। जब से नर और नारी की सृष्टि हुई है, तब से यह है।

शौर्य के प्रति नारी के हृदय में आकर्षण होता है।

रूप और यौवन के प्रति मनुष्य में आकर्षण जागता है।

महाराजा, महादेवी, मंत्रीश्वर तथा सभी मंत्रीगण अपने-अपने स्थान पर बैठ गए थे। सभी चारों ओर देख रहे थे। परन्तु मलयासुन्दरी के आगमन के कोई आसार दृष्टिगोचर नहीं हो रहे थे। सब चिन्तातुर हो गए।

महाराजा ने मंत्रीश्वर से पूछा—'निमित्तज्ञ महोदय कहां गए हैं?'

'महाराजा! मैं भी उन्हीं को खोज रहा हूं। स्तंभ की स्थापना कर वे कब कहां चले गए हैं, पता नहीं है।'

'आश्चर्य! सभी राजकुमार और राजा राजकन्या मलयासुन्दरी को देखने के लिए तरस रहे हैं।' महाराजा ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इतने में राजपुरोहित ने आकर कहा—'महाराज ! अब विलंब नहीं होना चाहिए। सभी राजकन्या की प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

महामंत्री ने कहा—'तुम जाओ, तैयारी करो, मैं घोषणा करता हूं।'

महाराजा ने कहा—'बहुत बड़ी विपत्ति में फंस गए।'

महामंत्री ने खड़े होकर एलान किया—'चंपावती नगरी के महाराजा वीरधवल के निमंत्रण को सम्मान देखकर आप सब यहां आए हैं। मैं महाराजा की ओर से आपका सत्कार करता हूं। आप जानते हैं कि इस पीठिका पर पड़े विराट् धनुष्य पर बाण चढ़ाकर जो व्यक्ति स्तंभ पर बाण छोड़ेगा, राजकुमारी मलयासुन्दरी उसके गले में वरमाला डालेगी। आप सब मलयासुन्दरी को देखने के लिए उतावले हो रहे हैं। वह इसी मंडप में है। जिस राजकुमार की भुजाओं में बल होगा, जो इस वज्रसार धनुष्य को उठाकर बाण चढ़ाएगा, तत्काल मलयासुन्दरी आगे आकर उसके गले में वरमाला पहनाएगी। उसी समय वह प्रकट होगी। राजकन्या का पहले प्रकट न होने का यह एक रहस्य भी है कि उसका सौन्दर्य इतना लुभावना और तेजस्वी है कि सारे बल उसके सामने नगण्य हो जाते हैं। अतः राजकुमारों में वैसी स्थिति न आए, इसलिए राजकुमारी अभी अदृश्य है।'

सभी ने सुना। 'धन्य-धन्य' के शब्द उच्चरित होने लगे।

बाजे बजने लगे। शंखनाद होने लगा और बल-परीक्षण का कार्य प्रारंभ हो गया।

एक राजकुमार ने कहा—'मैं अभी इस पुराने धनुष्य को उठाकर बाण चढ़ाता हूं और स्वयंवर की रस्म को यहीं संपन्न कर देता हूं।' वह आगे बढ़ा। धनुष्य को पकड़ा, पर वह उसे उठा नहीं पाया। वह धनुष्य बहुत भारी था। उसको उठाने वाले पांच-सात मनुष्य भी हांफ जाते। वह राजकुमार नीचा मुंह कर चला गया।

और भी राजकुमार आए।

किसी को सफलता नहीं मिली।

सब निराश लौट गए।

सारी सभा में सन्नाटा छा गया। सभी का मन एक ही प्रश्न से आन्दोलित हो रहा था कि इस विराट् धनुष्य को उठाएगा कौन ? निराशा का बादल स्वयंवर-मंडप में छा गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६. लोभसार

स्वयंवर का परिणाम प्रकट हो, उससे पूर्व हम रानी कनकावती की पेटी की सुध-बुध लें।

वर्षाकाल प्रारंभ हो चुका था। गहरी वर्षा के कारण गोला नदी का प्रवाह तीव्र हो चुका था।

वह बंद पेटी वेगवान् प्रवाह में यात्रा कर रही थी। रात का समय था। पेटी में अंधकार था। बाहर से ताला लगा हुआ था।

रानी कनकावती को यह भान हो चुका था कि जिस पेटी में वह छिपकर बैठी है, वह पेटी नदी के प्रवाह में बह रही है। सुन्दरसेन ने राजपुरुषों से बचाने के लिए ही यह कार्य किया है। ऐसा रानी विश्वासपूर्वक मानती थी। किन्तु उसके मन में एक प्रश्न अकुलाहट पैदा कर रहा था कि इस पेटी के साथ सुन्दरसेन होगा या नहीं? यदि वह नहीं होगा तो?...नहीं...नहीं...नहीं...ऐसा नहीं हो सकता। राजा के सिपाहियों से मुझे बचाने के लिए उसने उत्तम मार्ग ढूंढ़ा है...संभव है वह भी पेटी के साथ ही तैरता हुआ आ रहा होगा...आह! आज की आनंद की रात्रि में कैसा अंतराय आ गया?

कितना सुन्दर युवक! अवस्था में छोटा होने पर भी कितना स्वस्थ और कितना रसिक!

किन्तु यह पेटी कहीं अटक गई तो?—रानी कनकावती सोच रही थी। पेटी वेग से बह रही थी। उसने सोचा—पेटी के साथ अवश्य ही सुन्दरसेन होगा।

यह सोचकर रानी ने दो-चार बार पेटी के ढक्कन पर हाथ मारा। किन्तु ढक्कन नहीं उघड़ा।

सुन्दरसेन को कैसे बताऊं कि मैं पेटी के भीतर बैठी-बैठी व्याकुल हो रही हूं। मेरी अकुलाहट बढ़ रही है। मुझे इस पेटी में कितने समय तक बैठे रहना होगा।

समय इतना लंबा और उमस पैदा करने वाला हो रहा था कि रानी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कनकावती क्षण-क्षण में नये-नये प्रश्न पैदा करती और उनकी तरंगों में डूबती रहती।

गोला नदी के तरंगों से भी अधिक तरंगित था रानी का मन।

मन की तरंगें सागर से भी विराट् होती हैं। रानी की मानसिक तरंगें क्षण भर के लिए विश्राम नहीं ले रही थीं।

समय कभी नहीं रुकता।

जब पेटी को प्राप्त करने के लिए चारों चोर एक नौका में बैठकर पेटी का पीछा करने के लिए गोला नदी में उतरे, तब तक पेटी बहुत दूर जा चुकी थी। कोई भी नौका पेटी को पकड़ पाने में समर्थ नहीं थी। फिर भी चोर आशा के नशे में गोला नदी के प्रवाह में चले जा रहे थे। सरदार का मन पेटी को प्राप्त करने के लिए ललचा रहा था।

रानी कनकावती को अपने भीतर छिपाकर ले जाने वाली पेटी तीव्रगति से प्रवाह में बही जा रही थी।

उसका पीछा करने वाली नौका चारों चोरों को अपने में बिठाए एक निश्चित गति से चल रही थी, क्योंकि वेग से गति करने में नौका के उलटने का खतरा था। सरदार ने दोनों नाविकों से कहा—'सावधानी से चलो, पर विलम्ब मत करो। किसी भी उपाय से मुझे पेटी तक पहुंचना है। मैं तुम दोनों को मालामाल कर दूंगा।'

मालामाल होने की आशा उन दोनों चालकों के हृदय का स्पर्श कर चुकी थी और वे तन्मयता से नौका खेते जा रहे थे।

और रात्रि का अवसान होने लगा।

प्रातःकाल हुआ।

किन्तु प्रातः की नयी किरणें रानी का स्पर्श कैसे कर पातीं। चारों चोर उषाकाल के मन्द प्रकाश में इधर-उधर देखने लगे कि कहीं पेटी दीख जाए।

क्या दीखे? तब तक पेटी इतनी दूर निकल गई थी कि जिसकी कल्पना करना भी चोरों के लिए कठिन था।

सरदार ने नौका-चालक से कहा—'अभी भी तेजी से चलो···नदी के वेग से भी नौका का वेग तीव्र होना चाहिए।'

नाविक बोला—'महाराज! यदि वेग के अनुकूल न चलें तो नौका के उलट जाने का भय रहता है।'

'नौका नहीं उलटेगी। तू नौका को मध्य में खेता चल; किनारे पर नहीं।' नाविक ने नौका को मध्य प्रवाह में ला दिया।

नौका कुछ आगे बढ़ी और उलट गई।

चारों चोरों की आशा पर तुषारापात हो गया। सौभाग्य चारों चोर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तैरना जानते थे।···वे तैरकर नाविकों के साथ किनारे पर आए। पर उनकी आशा पर पानी फिर चुका था।

दिन का पहला प्रहर बीत गया।

पेटी पृथ्वीस्थानपुर नगर के पास पहुंच रही थी। वह नगर अब केवल चार कोश दूर था। यदि वह पेटी नगर के पास वाले किनारे पर पहुंचती तो संभव है कि किसी-न-किसी मानव की दृष्टि उस पर पड़ती और वह उसे खींच लेता।

किन्तु रानी के भाग्य में कुछ और ही लिखा था। रानी को यह कल्पना ही नहीं थी कि इसी समय चंद्रावती नगरी के स्वयंवर-मंडप में वज्रसार धनुष्य को उठाने के लिए अनेक देश से समागत राजकुमार अपने-अपने पराक्रम का परीक्षण दे रहे हैं। और उसके मन में बसने वाला युवक सुन्दरसेन पुरुष नहीं, किन्तु उसकी सौत की पुत्री मलया है···और वह अभी एक स्तंभ के भीतर छिपी है।

नदी के तीव्र प्रवाह में तीव्र गति से बहने वाली पेटी एक स्थान पर आकर मुड़ी और कुछ दूर जाकर अटक गई।

'क्या हुआ ?'

यदि पेटी खुली होती तो रानी समझ लेती कि पेटी धनंजय यक्ष के मंदिर की सोपान श्रेणी, जो नदी के पानी का स्पर्श कर रही थी, में अटक गई है ! और वह यह भी जान लेती कि उस सोपान श्रेणी पर तीन भीमकाय पुरुष खड़े हैं और वे पेटी की ओर देख रहे हैं। पर वह क्या करे ? पेटी बंद थी। भीतर अंधकार के सिवाय कुछ था ही नहीं।

तीन पुरुषों में से एक पुरुष, जो सरदार जैसा लग रहा था, बोला—'जल्दी करो, पेटी को खींच लो अन्यथा प्रवाह में बह जाएगी।'

उसके दोनों साथी पानी में उतरे और पेटी को उठाकर सोपान श्रेणी पर रख दिया।

सरदार ने जोर से कहा—'ऊपर ले आओ।'

तत्काल दोनों ने पेटी उठा ली।

सोपान श्रेणी से चढ़कर दोनों व्यक्ति पेटी को मंदिर के विशाल प्रांगण में ले आए। सरदार पेटी के पास आया और ताले को झटका दिया। ताला खुला था, वह नीचे आ गिरा। सरदार ने पेटी का ढक्कन खोला।

रानी कनकावती की देह को पवन का स्पर्श हुआ···वह अंधकार से पूरे प्रकाश में आ गई।

और सरदार चौंका—अरे ! इतनी सुन्दर नारी, इस पेटी में ? कौन होगी ? कहां से आयी होगी ? रानी आंखों को मसलकर देखने का प्रत्यन कर रही थी कि सरदार ने कहा—'सुन्दरी ! तेरी ऐसी दशा किसने की ?'

एक पूरी रात और दिन के एक प्रहर तक पेटी में रहने के कारण कोमलांगी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की कोमल काया अकड़ गई थी। उसने सरदार की ओर देखा। स्वस्थ, सुन्दर और बलिष्ठ व्यक्ति सामने खड़ा था।

रानी ने मृदु स्वरों में कहा—'आप कौन हैं?'

'सुन्दरी! घबराओ मत···जिस दुष्ट ने तेरी यह गति की है उसका नाम तू मुझे बता···उसे मैं पाताल से भी खोज लूंगा और तेरे चरणों में ला पटकूंगा। तेरे जैसी सुन्दर और राजा की रानी जैसी कोमल नारी की यह दशा करने वाला कौन नराधम है?"

रानी ने सरदार के चमकते नयनों की ओर देखा···उठने का प्रयत्न किया, पर अकड़न के कारण उठ नहीं सकी।

सरदार इस कठिनाई को भांप गया। उसने धीमे से रानी को पेटी से उठाया और बाहर रख दिया।

रानी ने कहा—'मेरे जीवनदाता का परिचय मुझे नहीं मिलेगा?'

'अवश्य मिलेगा···मैं इस प्रदेश का महाचोर लोभसार हूं···मेरे नाममात्र से आसपास के राजा कांप उठते हैं···तू अब निर्भय है···तुझे इस अवस्था में लाने वाला पापी कौन है?'

'एक अनजान व्यक्ति ने मुझे अपने मायाजाल में फंसा डाला'—कहकर उसने अपने अलंकारों की पोटली की ओर देखा। अभी तक उसको खोलने का विचार भी रानी के मन में नहीं उभरा था।

'उस दुष्ट का नाम तू जानती है?'

'राजगृह के सार्थवाह का पुत्र सुन्दरसेन···'

'राजगृह! यह तो पूर्व भारत में है···।'

'उसी ने मुझे इस पेटी में बंद कर नदी में प्रवाहित कर दिया।'

'उसका कारण क्या था?'

'उसके मन में क्या था, मैं कैसे बताऊं। मैं पति से दुःखी होकर घर से निकली थी और उसने मुझे अपने जाल में फंसा डाला। उसने मुझे राजगृह ले जाने की बात कही···परन्तु···अब आप मेरे पर एक कृपा करें···

'बोल···'

'मुझे किसी सुरक्षित स्थान पर पहुंचा दें···मैं कहां आ गई हूं, इसका भी मुझे भान नहीं है···मेरे पास कुछ काल तक जीवन-निर्वाह करने योग्य धन है'—कहती हुई रानी ने पोटली खोली।

पोटली को खोलते ही वह चिल्ला उठी—'अरे! ओह!···'

'क्या हुआ, सुन्दरी?'

'उस मधुरभाषी परदेशी ने मेरी बहुमूल्य वस्तु चुरा ली है। मेरा एक बहुत मूल्यवान् हार इस पोटली में था।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'ओह, अब मैं समझ गया उस दुष्ट की दुष्टता का कारण। अब तू मेरे स्थान पर चल।···वहां कुछ विश्राम कर स्वस्थ हो जा। फिर तू जैसा चाहेगी वैसा कर दूंगा।' यह कहते हुए महाचोर लोभसार ने पेटी में कुछ खोजा··· वस्त्र थे···इसलिए उसने तत्काल पेटी को पानी के प्रवाह में डाल दिया। उसने रानी को पकड़कर खड़ा किया और कहा—'सुन्दरी ! आज मुझे तेरे जैसा मनोहर रत्न मिला है···तू मेरे स्थान पर आ···तेरी इच्छा होगी तो मैं तुझे स्वामिनी बना दूंगा।'

रानी के हृदय में नयी आशा जागृत हुई। उसने प्रेमभरी दृष्टि से लोभसार की ओर देखा।

लोभसार ने अपने दोनों साथियों से कहा—'तुम दोनों यहां से चलते बनो··· यक्ष महाराज की कृपा से मिले अतिथि के सत्कार की तैयारी करो। मैं आ रहा हूं।'

दोनों साथी प्रणाम कर चले गए।

रानी कनकावती इस भीमकाय पुरुष का हाथ पकड़े पर्वत की ओर चलने लगी।

नदी का कलरव अब सुनाई नहीं दे रहा था। यक्ष का मंदिर भी बहुत दूर पीछे रह गया था और गाढ़ वन-प्रदेश का पर्वतीय स्थल सामने आ गया।

रानी को चलने में कष्ट हो रहा था। पेटी में पड़ी रहने की अकड़न, मस्ती की रात में आए हुए अन्तराय की स्मृति और लक्ष्मीपुंज हार की चोरी—इन सारी बातों से रानी का हृदय टूटता जा रहा था। शरीर के कष्ट से भी भारी हो रहा था मन का कष्ट।

लोभसार ने पूछा—'सुन्दरी ! तेरा नाम क्या है? मैं तुझे किस नाम से पुकारूं?'

'मेरा नाम कनकावती है···आप मुझे दासी कहकर पुकारें।'

'दासी नहीं, सुन्दरी !···तू मेरे हृदय की रानी है···तुझे देखकर मैं यथार्थ में परवश जैसा हो गया हूं···तू बहुत थक गयी है, ऐसा मुझे प्रतीत हो रहा है।'

'हां, प्रिय ! मेरा शरीर अकड़ गया है।'

'ओह !' कहते हुए लोभसार बोला—'तो मैं तुझे उठाकर ले चलता हूं।'

रानी कुछ कहे, उससे पूर्व ही लोभसार ने रानी को दोनों हाथों से उठा लिया।

प्रचंड पुरुष के स्पर्श से रानी की सुप्त चेतना जाग गयी और स्वाभाविक आश्लेष से वह तरंगित हो उठी।

लोभसार ने रानी को चुंबन से भर डाला।

रानी को यह भी ध्यान नहीं रहा कि वह एक राजा की रानी है···कुछ दिनों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहले अनेक व्यक्तियों का जीवन-मरण उसके हाथों में था। उसके इशारे पर अनेक कार्य होते थे। और आज एक कुख्यात चोर के बाहुपाश में बंधकर सुख और आनंद का अनुभव कर रही है।

किन्तु आदमी जब दुष्ट वृत्तियों के अधीन होता है तब उसका विवेक नष्ट हो जाता है।

पर्वतीय गुफा के पास पहुंचते ही रानी ने देखा कि दस-बीस व्यक्ति अपने सरदार का अभिनंदन कर रहे हैं।

सरदार ने अपने साथियों से कहा—'साथियो! जिस वस्तु का अभाव मेरे हृदय को कचोट रहा था, वह आज मुझे प्राप्त हो गयी है···आज से यह देवी तुम सबकी रानी है···इसकी आज्ञा का उल्लंघन करने वाले की मौत मेरे हाथ से होगी।'

सबने हर्षध्वनि के साथ रानी का सत्कार किया।

स्नान आदि से निवृत्त होकर रानी ने लोभसार द्वारा प्रदत्त वस्त्र पहने और अलंकारों से सज्जित होकर बैठ गयी।

रानी ने लोभसार के साथ-साथ भोजन किया।

फिर लोभसार कनकावती को अपने गुप्तखंड के पास ले गया और बोला—'इस खंड में मेरी अपार संपत्ति है।···आज तक किसी ने इसे नहीं देखा है···आज तू इसे देख···यह सारी संपत्ति तेरे चरणों की रज बन रही है'—कहते हुए लोभसार ने उस खंड का द्वार खोला।

दोनों भीतर गए।

अनेक प्रकार के अलंकार और स्वर्ण-मुद्राओं की थैलियां देखकर रानी हर्ष से उछल पड़ी।

उसने लोभसार की छाती पर अपना सिर टिकाकर कहा—'इस संपत्ति की मुझे कोई आवश्यकता नहीं है···आप मुझे प्राप्त हुए हैं, यह मेरी महान् संपत्ति है।'

लोभसार ने रानी को बाहुपाश में जकड़ लिया।

मोहान्ध मनुष्य नरक को भी स्वर्ग ही मानता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०. शक्ति-परीक्षण

दक्षिण भारत की श्रेष्ठ सुन्दरी मलया को प्राप्त करने के लिए देश-विदेश से समागत राजकुमार निराश होकर स्वयंवर-मंडप में बैठ गए। सारा मंडप निराशा की बदली से ढंक गया। कोई भी राजकुमार वज्रसार धनुष्य को उठा नहीं पाया।···केवल चार राजाओं ने उसे उठाया था, किन्तु वे उस पर बाण चढ़ा पाने में समर्थ नहीं हुए।

स्वयंवर में आए हुए राजकुमार ही निराश नहीं थे, मलया के माता-पिता और राज्य के मंत्रीगण भी निराशा में डूब चुके थे।

महाराज वीरधवल चारों ओर दृष्टिपात कर निमितज्ञ को ढूंढ़ रहे थे··· किन्तु निमित्तज्ञ कहीं नहीं दिख रहा था।

महादेवी और महामंत्री भी इधर-उधर देख रहे थे।

महामंत्री ने चारों ओर आदमी भेजे, पर वे सब निराश होकर लौट आए। निमित्तज्ञ की प्रतीक्षा सबको थी। सब जानते थे कि जब निमित्तज्ञ की सारी बातें सच हो चुकी हैं तो एक यह बात क्यों नहीं सच होगी?

वातावरण अत्यन्त गंभीर हो गया था।

इस गंभीर वातावरण के मध्य एक सुन्दर नवयुवक हाथ में वीणा लेकर स्वयंवर-मंडप में आ पहुंचा। सब की दृष्टि उस पर थी। वह सीधा उस वेदिका के पास पहुंचा जहां स्तम्भ स्थापित किया गया था। वह बिना कुछ कहे वीणा बजाने लग गया।

इस उदास वातावरण में वीणा के मधुर नाद के प्रति सब आकृष्ट हो गए। महाराज वीरधवल, महारानी चंपकमाला और महामंत्री सुबुद्धि—तीनों अपलक उस अपरिचित सुन्दर और स्वस्थ युवक की ओर देख रहे थे।

यह और कोई नहीं, किन्तु युवराज महाबल था और वीणावादन के द्वारा मलयासुन्दरी को सावधान कर रहा था।

सभी उपस्थित राजकुमारों ने तो यही सोचा था कि गंभीर वातावरण को हल्का बनाने के लिए वीणावादन का उपक्रम किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल अब अपने मूल वेश में था। कोई भी उसे पहचान नहीं सका। निमित्तज्ञ के रूप में उसकी वेशभूषा और हाव-भाव भिन्न थे, इसलिए उसे पहचान पाना कठिन था।

वीणा के मधुर वादन से स्वयंवर-मंडप का वातावरण रसमय बनने लगा।

वीणा की स्वरध्वनि स्तम्भ के भीतर मलया के कानों से टकरायी और उसने पूर्व सूचना के अनुसार स्तम्भ के दरवाजे की सांकल खोल दी। किन्तु द्वार खुल न जाए इसलिए उसने भीतर से उसे पकड़े रखा।

सभी की दृष्टि वीणावादक पर स्थिर हो चुकी थी।

महाराजा ने मंत्रीश्वर से पूछा—'कौन है ?'

'कोई दर्शक-जैसा लग रहा है···मंडप का वातावरण निराश और गम्भीर हो गया था। उसे आनन्दमय बनाने के उद्देश्य से यह यहां आया है।' मंत्रीश्वर ने कहा।

और सबके देखते-देखते वीणावादक ने वीणा को एक ओर रख पीठिका को तीन बार प्रणाम कर स्तम्भ की ओर देखा।

वह मन-ही-मन नवकार मंत्र का स्मरण कर रहा था।

महामंत्री ने उसे पागल समझकर मंडप से बाहर निकालने के लिए एक सेवक को भेजा।

वह सेवक वहां पहुंचे उससे पूर्व ही महाबल ने अपने शक्तिशाली हाथों से वज्रसार धनुष्य को उठाया, उस पर बाण चढ़ाकर उसने स्तम्भ पर बाण छोड़ दिया।

सारा सभामंडप जय-जय की ध्वनि से कोलाहलमय बन गया। वह कोलाहल शान्त हो उससे पहले ही स्तम्भ के द्वार खुल गए और उसमें से साक्षात् रूप की देवी मलयासुन्दरी बाहर आ गयी।

सभी सभासद् इस चमत्कार को देख अवाक् बन गए। अनेक राजकुमार रूप की देवी मलया को एकटक देखने लगे।

एक परिचारिका स्वर्णथाल में पुष्पमाला लेकर आयी और मलया ने वह माला महाबल के गले में डाल दी।

उसी समय महाराज वीरधवल, महादेवी और महामंत्री वेदी के निकट आए।

मलयासुन्दरी माता-पिता के चरणों में नत हो गई। मलया के उन्नत उरोजों पर शोभित होने वाला लक्ष्मीपुंज हार चमक रहा था।

माता ने हर्ष के आंसुओं से पुत्री को नहलाया, उसे उठाया और छाती से चिपका लिया।

इतने में ही बल-परीक्षण में पराजित एक राजकुमार अपने आसन से उठा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और प्रचंड स्वर में बोला—'महाराज वीरधवल ! एक अज्ञात कुल-शील और वीणावादक के साथ अपनी पुत्री को ब्यहाना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता···यदि आप इस पागल लगने वाले व्यक्ति को जामाता के रूप में स्वीकार करेंगे तो स्वयंवर-मंडप में रक्त की नदी बह जाएगी···यह युद्धभूमि बन जाएगी।'

इतने में ही दूसरे दस-बीस राजकुमार उठे और बोले—'हम इसका बदला यहीं, अभी लेकर रहेंगे।'

महामंत्री ने युवक की ओर देखकर कहा—'श्रीमान् का परिचय ?'

'क्षत्रियपुत्र का परिचय उसके बाहुबल से होता है···किन्तु मैं इस आनंदमय अवसर को रक्तरंजित करनेवाली प्रवृत्ति में नहीं बदलूंगा···आप निश्चिन्त रहें··· मैं ही सबको उत्तर दे देता हूं।' यह कहकर महाबलकुमार पीठिका की चौकी पर चढ़ा और प्रचंड आवाज में बोला—'महानुभावो ! मैं अज्ञात कुलशील वाला नहीं हूं और बिना निमंत्रण के भी यहां नहीं आया हूं। मैं महाराजा सुरपाल का पुत्र महाबलकुमार हूं। मुझे स्वयंवर का निमंत्रण प्राप्त है। मार्ग में विपत्ति आ गई; इसलिए मुझ अकेले को यहां आना पड़ा और मैं अभी-अभी यहां पहुंचा हूं। इतना परिचय प्राप्त कर लेने पर भी यदि आप संग्राम करना चाहते हैं तो मैं तैयार हूं।'

महाराजा वीरधवल, महादेवी चंपकमाला और मंत्रीश्वर तीनों हर्षित हो गए।

महाबल का परिचय सुनकर हजारों प्रेक्षकों ने जय-जयकार के नाद से स्वयंवर-मंडप को गुंजायमान कर दिया।

चंपकमाला ने पुत्री मलया के मस्तक पर हाथ फेरते हुए कहा—'पुत्री ! मैं तेरी जननी नहीं, शत्रु हूं। जब तक तू मुझे क्षमा नहीं करेगी, तब तक मुझे संतोष नहीं होगा।'

'मां ! आपके उपकार का बदला मैं कभी नहीं दे सकती। मेरे हृदय में आपके प्रति तनिक भी रोष नहीं है। मैंने जो कुछ कष्ट सहे, जो आरोप मेरे पर आए, उन सबका कारण मेरे अपने ही कर्म हैं, आप स्वस्थ रहें···चित्त को स्वस्थ रखें और मन को सन्तुष्ट बनाएं।'

महाराजा वीरधवल पास में ही खड़े थे। उन्होंने पुत्री के दोनों हाथ पकड़कर कहा—'पुत्री ! मैंने क्षमा न करने योग्य अपराध···'

बीच में ही मलया बोली—'पिताश्री ! आप आगे कुछ भी न कहें। आपने कोई अपराध नहीं किया। माता-पिता के रोष से भी संतान का हित ही होता है, यह तथ्य मेरी घटना से स्पष्ट हो गया है। यदि आप वैसा नहीं करते तो आज का यह रोमांचक दृश्य देखने को नहीं मिलता और मुझे ऐसे प्रतापी और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्चस्वी स्वामी…'

राजा ने कन्या का मस्तक चूमा और महामंत्रीश्वर से कहा—'महामंत्री ! निमित्तज्ञ महाराज कहां हैं, उन्हें ढूंढ़ना चाहिए। विवाह की तैयारी करो। लग्न गोधूलिका के समय में सम्पन्न हो जाना चाहिए।'

महामंत्री ने कहा—'महाराज ! मैंने निमित्तज्ञ को ढूंढ़ने के लिए व्यक्तियों को इधर-उधर भेजा है। वे उनकी खोज में गए हैं।'

महाराजा वीरधवल स्वयंवर में भाग लेने के लिए आए हुए राजकुमारों के आसन पर गए। सबको तिलक किया, फूल-मालाएं पहनायीं, एक-एक बेशकीमती पोशाक उन्हें भेंट की और वापसी यात्रा के लिए मंगलकामना प्रस्तुत की।

महादेवी चंपकमाला राजकुमारी के साथ ही खड़ी थी, क्योंकि लग्न की पूरी क्रिया सम्पन्न हुए बिना राजकुमारी को राजप्रासाद में नहीं ले जाया जा सकता था। उस समय का यह नियम था।

महाबल को एक चिन्ता सता रही थी कि यदि लक्ष्मीपुंज हार माता को यथासमय नहीं मिलेगा तो संभव है अनर्थ हो जाए। उसने माता-पिता को संदेश भेज दिया था। पर वे स्वयंवर में नहीं आए। महाबल चिन्तातुर हो उठा। वह वहां से शीघ्र जाना चाहता था, परन्तु प्रातःकाल से पूर्व प्रस्थान करना असंभव था; क्योंकि विवाह की सारी विधियां सम्पन्न होने में विलम्ब था।

मलया ने मां से पूछा—'मां ! स्वयंवर के समय मैंने चारों ओर देखा परन्तु अपरमाता मुझे कहीं नहीं दिखीं। क्या वे कहीं गई हैं?'

'मलया ! तेरी अपरमाता के कारण ही तो यह सब षड्यन्त्र हुआ था…अब तेरे पिताश्री उसका नाम सुनना भी नहीं चाहते…संभव है वह पीहर चली गई हो।'

मां-पुत्री का जब मिलन होता है तब बातों का अन्त ही नहीं आता। एक बात से दूसरी बात निकलती जाती है।

मलया की लग्नविधि के लिए तैयारी होने लगी। उसके मर्दन, स्नान, अभ्यंगन आदि की सामग्री एकत्रित थी ही।

अनेक कर्मकर इस कार्य में लगे।

गोधूलिका का पावन समय।

मलया और महाबल का पाणिग्रहण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१. विपत्ति के बादल

राजकुमारी मलयासुंदरी और युवराज महाबल की लग्न-विधि ठीक गोधूलिका के समय प्रारम्भ हो गई।

इस प्रसंग पर स्वयंवर में भाग लेने के लिए आए हुए राजकुमार वहां उपस्थित थे।

जिस समय लग्न की कुछेक शेष विधियां चल रही थीं, उस समय मलयासुंदरी के रूप पर मुग्ध बना हुआ एक राजकुमार अपने पांच-सात साथी राजकुमारों के साथ एक भयानक चिन्तन कर रहा था। उस चिन्तन का सार-संक्षेप यह था—'महाबल अकेला आया है। इसके साथ न कोई मंत्री है; न सामंत है और न सेना है। स्वयंवर में भाग लेने के लिए आने वाला राजकुमार इस प्रकार नहीं आ सकता। हमें महाराजा वीरधवल को यह चेतावनी देनी चाहिए कि यदि कल सायंकाल तक युवराज महाबल के मंत्री या सामंत यहां नहीं पहुंचते हैं तो हमें मानना चाहिए कि यह असली युवराज नहीं है, कोई उठाऊ राहगीर है। फिर रात्रि में महाबल की हत्या कर हमें मलयासुंदरी का अपहरण कर लेना चाहिए।'

जब ऐसी भयंकर विचारणा हो रही थी, उस समय विवाह-मंडप में मंत्रोच्चारण की ध्वनि चारों ओर गूंज रही थी।

निमित्तज्ञ की खोज के लिए गए हुए राजपुरुष निराश लौटे। वे इतना मात्र बता सके कि स्वयंवर-मंडप में स्तंभ की स्थापना कर निमित्तज्ञ महाराज एक तंबू में गए थे। उस तंबू से उन्हें बाहर निकलते किसी ने नहीं देखा।

इतने में चंपकमाला को कुछ स्मृति हो आयी। उसने महाराजा वीरधवल से कहा—'महाराज! मुझे याद है कि निमित्तिज्ञ को जब मैंने पूछा कि मलया का विवाह किसके साथ होगा, तब उन्होंने एक पर्चे में मलया के भावी पति का नाम लिखकर देते हुए कहा था—मलया का विवाह होने के पश्चात् इसे खोलकर देख लेना। आप उस पत्र को मंगाएं। संभव है निमित्तज्ञ ने अपना नाम-पता उसमें लिखा हो।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्काल महाराजा ने महामंत्री से पत्र लाने के लिए कहा, क्योंकि मंत्री के पास ही वह पत्र था।

महामंत्री ने तत्काल अपने अनुचर को अपने भवन की ओर भेजा और उस पत्र को लाने के लिए सारी बात समझाई।

लग्नविधि पूरी हुई।

महामंत्री के हाथ में वह पत्र आ गया।

महाबल तिरछी दृष्टि से सब देख रहा था और मन-ही-मन हंस रहा था।

महामंत्री ने वह सीलबंद पत्र महाराजा वीरधवल को दे दिया। महाराजा ने दीपमालिका के प्रकाश में उसे पढ़ा। उसमें लिखा था—'राजन्! आपकी प्रिय पुत्री मलया पृथ्वीस्थानपुर के युवराज महाबल के गले में वरमाला पहनाएगी।'

नीचे और कुछ लिखा हुआ नहीं था। निमित्तिज्ञ का नाम और स्थान का कोई उल्लेख नहीं था। महादेवी ने कहा—'महाराज! मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि अपनी कुलदेवी ने ही निमित्तज्ञ के रूप में यह सारा सहयोग किया है। यदि ऐसा नहीं होता तो निमित्तज्ञ अचानक कहां लुप्त हो जाते।'

'संभव है!' कहकर महाराजा अन्यत्र चले गए।

राजकुमारी को राजभवन में ले जाने की तैयारी होने लगी। उसके लिए एक कक्ष का शृंगार किया गया था और उसे देवरमण जैसा मनोहर और सुन्दर बना दिया था।

ठीक मुहूर्त्त में राजकुमारी मलयासुन्दरी अपने पति महाबल के साथ राजप्रासाद में प्रविष्ट हुई। उस समय वह अपने दासियों और धाय माता से घिरी हुई थी, पर महाबल अकेला ही था। यहां उसके कोई मित्र या सगे-संबंधी नहीं थे।

इसी समय वे पांच-सात राजकुमार राजप्रासाद के उद्यान में आए और महाराजा वीरधवल से एकान्त में बातचीत करने का प्रस्ताव पहुंचाया।

उनके संदेश का सम्मान करते हुए महाराजा वीरधवल उपवन में गए। साथ में महामंत्रीश्वर भी थे। दोनों में से किसी को भी यह कल्पना नहीं थी कि ये राजकुमार किसी खतरनाक योजना को लेकर आए हैं।

आठों राजकुमार वहां उपस्थित थे। कलिंग के राजपुत्र ने कहा—'महाराज! आपने अपनी पुत्री का विवाह जिससे किया है, वह वास्तव में युवराज महाबलकुमार नहीं है। वह राजपुत्र नहीं है।'

मंत्रीश्वर ने पूछा—'इस संशय का आधार क्या है?'

वह बोला—'मंत्रीश्वर! यदि यह पृथ्वीस्थानपुर का युवराज होता तो यहां अकेला नहीं आता। साथ में सेना होती, सगे-संबंधी और मित्र होते। हमें प्रतीत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है कि आपने धोखा खाया है। यह कोई छद्मवेशी और ठग है। इसके साथ राजकन्या का विवाह होना राजकुमारों का भयंकर अपमान है।'

महाराजा ने कहा—'आप सब अपने संशय को मिटा दें। जिसके साथ विवाह हुआ है, वह वास्तव में ही युवराज है, तेजस्वी राजकुमार है।'

'इसका प्रमाण ?'

'हमारी कुलदेवी से हमें यह सारा ज्ञात हो चुका है। आप संशय न करें और अपने मन को शांत रखें। आपको यह भी ज्ञात होना चाहिए कि वज्रसार धनुष्य को उठाने की शक्ति राजपुत्र में ही हो सकती है, ऐसे-वैसे छद्मवेशी में नहीं हो सकती।'

'महाराज ! अनेक ऐन्द्रजालिक मंत्रबल के आधार पर ऐसा करने में समर्थ होते हैं।' एक दूसरे राजकुमार ने कहा।

महामंत्री ने शांतभाव से कहा—'अनुभवी की दृष्टि छद्मवेशी को पहचानने में समर्थ होती है। हमको पूरा विश्वास है कि यह राजपुत्र ही है। फिर भी यदि कुछ 'किन्तु-परन्तु' रहता है तो अब कुछ भी नहीं किया जा सकता, क्योंकि राजकन्या का विवाह हो चुका है और आर्य नारी एक बार ही पाणिग्रहण करती है।'

कुछ समय के लिए सन्नाटा छा गया। कलिंग के राजकुमार ने कहा—'स्वयंवर-मंडप में वज्रसार धनुष्य को उठाने वाले उस छद्मवेशी ने कहा था कि मार्ग में विपत्ति आ जाने के कारण सेना पीछे रह गई। महाराज ! यदि उसकी सेना सायंकाल तक नहीं आयी तो हम उस छद्मवेशी का सिर धड़ से अलग कर देंगे।'

महाराजा और महामंत्री अवाक् रह गए। क्षणभर बाद महामंत्री ने कहा—'राजकुमार ! जो राजपुत्र वज्रसार धनुष्य को उठा सकता है वह अपने मस्तक का मूल्य भी समझता है···ऐसा कुछ प्रयत्न करने से पूर्व आप सब यह सोच लें कि आपके मस्तक कहीं धरती की धूल चाटने न लग जाएं।'

आठों राजकुमार क्रोध से लाल-पीले हो गए। महामंत्री ने महाराजा वीरधवल से कहा—'महाराजश्री ! स्थिति गंभीर है। आप इस स्थिति की जानकारी युवराज महाबल को दें।'

महाराजा तत्काल चंपकमाला के पास गए और उसे साथ ले मलयासुन्दरी के कक्ष की ओर चले।

उस समय कक्ष-प्रवेश की अंतिम विधि सम्पन्न हो रही थी।

महाराजा को आते देख महाबल उनके सामने गया और नमन कर खड़ा रह गया।

औपचारिक वार्तालाप के पश्चात् महाबल ने कहा—'महाराजश्री ! एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कार्य…।'

'कहें, क्या कार्य है ?'

'बड़ी कठिन समस्या खड़ी हो गई है। मुझे दो-तीन दिन के भीतर-भीतर पृथ्वीस्थानपुर पहुंचना जरूरी है। यदि इस अवधि में मैं वहां नहीं पहुंचता हूं तो मेरी माता का जीवन संकट में पड़ जाएगा और संभव है मेरे पिताश्री भी अपने जीवन की बाजी लगा बैठें। इसलिए एक बार मैं वहां जाकर पुनः लौट आऊंगा।'

महाराजा वीरधवल यह सुनकर अवाक् रह गए। मन में एक संदेह उभरा कि क्या राजकुमारों का संदेह सही है? इस प्रकार यह नौजवान यहां से छिटक जाना चाहता है? नहीं…नहीं…यह संशय व्यर्थ है। निमित्तज्ञ के पत्रानुसार यही महाबल है। वे बोले—'युवाराजश्री! इस प्रकार आप यहां से जाएं, यह उचित नहीं। अरे, आपकी सेना तो कल यहां पहुंचने वाली है।'

महाबल बोला—'महाराज! लग्नमंडप में रक्तपात न हो, इसलिए मुझे असत्य का सहारा लेना पड़ा। मैं अपनी माता का एक कार्य सम्पन्न करने के लिए घर से निकला था। मार्ग में विपत्तियों में फंस गया और अचानक यहां आ पहुंचा। यदि मैं अपनी माता का कार्य पूरा नहीं करता हूं तो मातुश्री देह का विसर्जन कर देंगी और उसके दोष का भागी मैं बनूंगा। इसलिए मुझे जाना ही होगा।'

'युवराजश्री! मुझे आपके प्रति तनिक भी संदेह नहीं है; क्योंकि आप मेरे जामाता बनेंगे, यह बात एक निमितिज्ञ ने लग्न से कुछ दिन पूर्व ही लिखकर दे दी थी। किन्तु यहां एक विपत्ति खड़ी हो गई है। कल मनोरंजन के कार्यक्रम में कुछेक राजकुमार आप का वध कर मलयासुन्दरी का अपहरण करेंगे। वे आपको कोई ऐन्द्रजालिक छद्मवेशी मानते हैं। यदि आप इस प्रकार यहां से चले जाएंगे तो उनका संशय दृढ़ होगा और तब स्वयंवर में आए हुए सभी राजे एकत्रित होकर बड़ी समस्या खड़ी कर देंगे।'

महाबल बोला—'महाराजश्री! आप चिन्ता न करें। मैं कल सायंकाल तक यहीं रुक जाऊंगा, किन्तु मध्यरात्रि के बाद मुझे जाना ही पड़ेगा और आप उसकी यथायोग्य व्यवस्था कर दें।'

'युवराजश्री! मैं प्रबन्ध कर दूंगा…मेरे पास एक यंत्रनौका है और एक शीघ्रगामी ऊंटनी है।'

'महाराजश्री! आप यंत्रनौका की व्यवस्था रखें, जिससे मैं प्रभात के पूर्व वहां पहुंच जाऊं।'

'ऐसा ही होगा।'

महाराजा मलया के पास गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुत्री को आशीर्वाद दे महाराजा और चंपकमाला दोनों अपने महलों की ओर चले गए।

मलया अपने शृंगारित शयनकक्ष में गई। वहां उसकी सखी सागरिका ने कान में कहा—'प्रिय मलया ! अब तुझे इस सुन्दर एकान्त में रहना होगा और युवराज महाबल के हृदय-सिंहासन पर अपना स्थान बनाना होगा···किन्तु जल्दी मत···।'

तत्काल मलया बोली—'सागरिका ! तुझे यहीं मेरे पास रहना होगा··· मेरा हृदय कांप रहा है।'

'हृदय नहीं कांपता, प्रियमिलन की चाह तूफान मचा रही है'—कहती हुई सागरिका ने मलया के गाल पर धीरे से अंगुली का प्रहार किया।

और महाबल खंड में आया। सागरिका तथा अन्य सखियों ने उसका फूलों से वर्धापन किया और वाचाल सागरिका बोल उठी—'युवराज ! पुष्प अत्यन्त कोमल होता है···।'

'आभार ! आप विश्वास रखें कि जीवन की कविता जैसा कोमल फूल जीवन की संपति होती है।' महाबल ने कहा।

सभी सखियां हंसती हुई खंड से बाहर निकल गईं और जाते-जाते सागरिका ने शयनखंड का द्वार बंद कर दिया।

मलया और महाबल शयनकक्ष में अकेले थे।

दोनों का मनोवांछित कार्य सफल हो चुका था।

आज पिया-मिलन की प्रथम रात्रि थी।

दोनों के मन उमंग से उछल रहे थे। दोनों एक आसन पर बैठे और बीती बात में रस लेते हुए दोनों एकाकार हो गए। दोनों का संस्तव बहुत पुराना नहीं था, पर था बहुत ही गाढ़ और पवित्र।

'मलया ! आज की खुशी का पार नहीं है। मेरा तन-मन आनन्द के महासागर में उन्मज्जन-निमज्जन कर रहा है। इन दो-चार दिनों में क्या-क्या नहीं हुआ ? हम दोनों ने क्या नहीं सहा ? पर पुण्यों का संचय भारी था और आज हम इस अवस्था में हैं। मलया ! मुझे नवकार महामंत्र के प्रभाव का प्रत्यक्षीकरण हुआ। एक बार नहीं, अनेक बार।'

'प्रिय ! मैं भी उसी महामंत्र के प्रभाव से आज इस स्थिति में पहुंची हूं। जब मैंने अंधकूप में छलांग लगाई थी, तब उसी का जाप चल रहा था और जब तक मैं सचेत रही, एक क्षण के लिए भी उसे विस्मृत नहीं किया। मैं प्रारम्भ से ही इसका जाप करती रही हूं और मैंने सुना है मुनियों से कि महामंत्र सर्वतुष्टि देने वाला है। आत्मबल और मनोबल को बढ़ाने वाला है। इसका प्रत्यक्ष अनुभव आपको भी हुआ और मुझे भी हुआ।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'प्रिये ! आज इस आनन्द की यामिनी के बीतते ही मुझे एक नूतन विपत्ति से जूझना होगा।'

'हैं, नूतन विपत्ति !···मलया ने चौंककर कहा।

'हां', महाबल ने महाराजा द्वारा कथित सारा वृत्तान्त मलया को कह सुनाया।

मलया का प्रसन्न वदन उदास हो गया। उसके चेहरे पर चिन्ता की रेखा खचित हो गई।

महाबल बोला—'मलया ! तू चिन्ता मत कर। क्या तुझे विश्वास नहीं है कि जो व्यक्ति महान् व्रजसार धनुष्य को उठा सकता है, वह इन राजकुमारों द्वारा प्रस्तुत विपत्ति को नहीं झेल सकेगा?'

'आपकी शक्ति और साहस में मुझे तनिक भी शंका नहीं है, किन्तु रक्तपात न हो तो अच्छा है।'

जीवन की पहली यामिनी। मिलन की कविता पास में बैठी है···फिर भी मलया और महाबल उद्दाम यौवन के आवेश के पराधीन न होते हुए दो मित्रों की तरह वार्तालाप कर रहे हैं।

उस समय महाचोर लोभसार के गुफा-खंड का दृश्य इससे अत्यन्त विपरीत था।

लोभसार आज अत्यन्त प्रसन्न था। उसने अपने साथियों को निमंत्रण दिया था। महफिल में मदिरापान का दौर चल रहा था और चोर के दो साथी कामोत्तेजक गीत गा रहे थे।

रानी कनकावती पूरा शृंगार कर लोभसार के पास बैठी थी।

लोभसार इस अनोखे रत्न की उपलब्धि पर मन-ही-मन उछल रहा था और बार-बार रानी के शरीर का स्पर्श कर अपना मनोभाव जता रहा था।

रानी कनकावती अपने हाथों से लोभसार को बार-बार मदिरापान करा रही थी।

मदिरा मनुष्य के मन को व्यग्र बनाती है, काम-ज्वाला को प्रज्वलित करती है और विवेक को भ्रष्ट करती है।

रानी प्रारम्भ से ही छिप-छिपकर मदिरापान करने की आदी हो चुकी थी। महाराजा वीरधवल जैन परम्परा के उपासक थे। वे मदिरापान को बुरा मानते थे। उनके राजप्रासाद में कोई भी व्यक्ति मदिरापायी नहीं था। परन्तु दासी सोमा के माध्यम से रानी कनकावती गुप्त रूप से मदिरा मंगाती और उसका पान कर लेती थी।

इतना होने पर भी उसने आज जितनी मदिरा कभी नहीं पी थी।

रात का दूसरा प्रहर पूरा हो, उससे पूर्व ही रानी मदिरा के नशे में धुत्त हो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गई···उसकी आंखों में मदिरा की मादकता छलकने लगी···वह अचेत हो, उससे पूर्व ही गोष्ठी सम्पन्न कर दी गई। क्योंकि लोभसार अब अपनी कामवासना को रोकने में असमर्थ था।

रानी का हाथ पकड़कर लोभसार गुफा के दूसरे खंड में गया। रानी के पैर लड़खड़ा रहे थे···मदिरा का नशा कुछ मंद हो इसलिए लोभसार ने रानी को एक औषधि खिलायी।

औषधि खाकर रानी ने जलपान किया···कुछ क्षणों के पश्चात् उसे अनुभव होने लगा कि वह स्वर्ग की सुन्दरी है···उसका तीव्र नशा मंद हो चुका था।

लोभसार ने रानी कनकावती को भुजपाश में जकड़ लिया और···

यौवन उदयंगत होता हो या अस्तंगत, किन्तु हृदय का विकार जब उन्मत्त होता है तब आदमी अंधा हो जाता है।

महाराजा वीरधवल की रानी एक कुख्यात और दुर्दान्त चोर के भुजपाश में बंधेगी, ऐसी कल्पना कौन कैसे कर सकता है?

कहां चन्द्रावती नगरी का वैभव! कहां राजा की रानी होने का गौरव? और कहां आज की स्थिति!

महाचोर लोभसार और रानी कनकावती के वासना का युद्ध तीव्र से तीव्रतर हो रहा था।

इधर मलया और महाबल सुहाग के प्रथम मिलन में शांत और सहज रूप में बातचीत कर रहे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२. लोभसार का अन्त

महाचोर लोभसार का मूल नाम 'लोहखुर' था, किन्तु वह जहां भी चोरी करता, वहां एक कौड़ी भी पीछे नहीं छोड़ता, इसलिए उसका नाम 'लोभसार' प्रसिद्ध हो गया।

पिछले पांच वर्षों से उसे पकड़ने के लिए आसपास के राजा प्रयत्न कर रहे थे, पर वह पकड़ में नहीं आ रहा था। वह पृथ्वीस्थानपुर के परिसर में ही रहता था, परन्तु उसके गुप्तस्थान का पता किसी को नहीं था।

किन्तु अभी तीन दिन पूर्व पृथ्वीस्थानपुर के निकटवर्ती एक राजा जयसेन ने यह प्रतिज्ञा की कि जब तक वह लोभसार को नहीं पकड़ लेगा, तब तक राज्य में पैर नहीं रखेगा। इसलिए वह अपने साथ सौ वीर सैनिकों को लेकर निकल पड़ा था। वह लोभसार के अड्डे के आसपास वन-प्रदेश में आ पहुंचा था।

लोभसार उस निशा में मदिरा के नशे में धुत्त होकर रानी कनकावती के साथ यौवन की मस्ती का आनन्द ले रहा था। उसी रात को जयसेन लोभसार के स्थान के आस-पास चक्कर लगा रहा था। उसे यह निश्चित ज्ञात हो चुका था कि महाचोर का आवास-स्थान यहीं कहीं है।

राजा जयसेन ने उस अलंबगिरि के दुर्गम प्रदेश में रहना निश्चित किया।

लोभसार के साथ निरन्तर रहने वाले साथियों की संख्या ग्यारह थी। वे सब आज अपने सरदार की अपूर्व उपलब्धि की प्रसन्नता में आकंठ मदिरापान कर, नशे में मत्त होकर गुफा के अन्य कक्ष में सोए पड़े थे।

आस-पास के प्रदेश की चौकसी रखने वाला चोर भी आज कहीं सोया पड़ा था।

और कनकावती के साथ प्रथम और अंतिम रात भोगने वाला महाचोर रात्रि के अंतिम प्रहर में निद्राधीन हो चुका था।

रानी कनकावती भी थककर अनग्न अर्द्धवस्था में लोभसार के पास नींद ले रही थी।

पहले लोभसार की इतनी व्यवस्था थी कि दो-चार कोस की दूरी पर आने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाले की खबर उसे तत्काल मिल जाती थी। स्थान-स्थान पर उसके आदमी कार्यरत थे। उनके संदेश से वह सावचेत हो जाता और आने वाला बेचारा भटक जाता, मारा जाता।

लोभसार को यह कल्पना भी नहीं थी कि आज रंगराग में डूबा हुआ उसका यह गुप्तस्थान मृत्यु की किलकारियों से चीख उठेगा।

मनुष्य कितना ही पराक्रमी हो, बुद्धिमान और चतुर हो, परन्तु जब वह कामासक्त होता है तब अपना सर्वस्व भूल जाता है।

उषा की रश्मियां फैलने लगीं···मंद-मंद प्रकाश हुआ किन्तु गुफा में सब निद्रादेवी की गोद में सो रहे थे।

महाराजा जयसेन के साथ आया हुआ पथ-दर्शक आगे बढ़ा। उसे एक धनुष्य और तीर पड़े दीखे। उसने तत्काल कहा—'महाराज ! चोर का अड्डा यहीं है। अब आप पराक्रम और बुद्धिमत्ता से काम करें।' इतने में ही प्रातःकर्म से निपटने के लिए तीन चोर उधर से आते दिखायी दिए। जयसेन का सेनानायक उतावला हो उठा और सात-आठ सिपाहियों को साथ ले उन्हें पकड़ने दौड़ा। उन चोरों ने उन्हें देख लिया था। वे तत्काल मुड़े। दो भाग गए, एक पकड़ा गया।

उन दोनों ने अपने साथियों से सारी बात कही। वे सब चिन्तातुर हो गए। सरदार लोभसार अभी सो रहे थे। उनको जगाने के लिए एक चोर उस गुफा-कक्ष की ओर गया।

सरदार के गुफा-द्वार पर एक परदा लगा हुआ था। साथी ने वहां जाकर पुकारा—'सरदार···सरदार···सरदार···!'

सरदार लोभसार अभी सो रहा था। रानी कनकावती जागकर अपने वस्त्र व्यवस्थित कर रही थी। उसने आवाज सुनी। वह तत्काल लोभसार के पास आयी और उसको जागृत करते हुए बोली—'कोई बुला रहा है।'

लोभसार ने आंखें खोलीं और कनकावती को दोनों हाथों से पकड़कर भुजपाश में बांध लिया।

फिर आवाज आयी—'सरदार···सरदार !'

लोभसार ने पूछा—'कौन है ?'

'सरदार ! गजब हो गया। सात-आठ सैनिक हमारे परिसर में आ पहुंचे हैं। हमारा एक साथी पकड़ा गया है।' बाहर से साथी ने कहा।

'हैं, कहता हुआ लोभसार शय्या से उठा और गुफा से बाहर निकल गया।

रानी का मन भयभीत हो चुका था। उसने सोचा, मुझे मनपसंद का आश्रय मिला था। क्या यह भी छूट जाएगा ? राजा वीरधवल के राजपुरुष तो मेरी टोह में यहां नहीं आ गए हैं ? इन विचारों में रानी खो गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक घटिका पश्चात् लोभसार खण्ड में आया। भयभीत रानी कुछ आश्वस्त हुई। लोभसार ने रानी के कंधे पर हाथ रखकर कहा—'प्रिये! चिंता का कोई कारण नहीं है। जितने आए हैं उन सबके लिए मैं अकेला ही पर्याप्त हूं। अभी उनको यमलोक पहुंचाकर आता हूं। तू डर मत।'

कनकावती रुदन के स्वर में बोली—'प्राणेश! मैं आपके बिना एक पल भी नहीं जी सकती।'

'तू अपने मन को मजबूत बनाए रखना। मैंने कल तुझे अपना गुप्त भंडार दिखाया था। उसको खोलने और बंद करने की विधि भी मैं तुझे बता देता हूं। यदि मैं आज सांझ तक न लौटूं और तुझे यहां से निकलना पड़े तो तुझे उस गुफा का प्रवेश-द्वार कैसे खोलना है, वह सारा रहस्य मैं तुझे अभी बता दूंगा।'

'सैनिक कौन हैं?'

'मैं भी नहीं जानता', कहते हुए लोभसार ने रानी का आलिंगन किया और उसे सारे रहस्य बता दिये।

अब वह अपने आठ-सात साथियों को साथ लेकर भागने के लिए तैयार हुआ।

उसे यह ज्ञात नहीं था कि जिस गुप्त द्वार से वह भाग जाना चाहता है, वहीं महाराज जयसेन अपने पांच वीर सैनिकों को साथ लेकर छिपे बैठे हैं। मुख्य द्वार पर सेनानायक पन्द्रह सैनिकों को साथ लेकर खड़ा था।

जहां जयसेन बैठे थे, वहां से आठ-दस हाथ की दूरी पर एक गुप्त सुरंग थी। उस पर एक शिलाखंड रखा हुआ था। यही लोभसार का गुप्त स्थान था। परन्तु इसकी खबर किसी को नहीं थी। सब चोरों की प्रतीक्षा कर रहे थे और यह सोच रहे थे कि चोर इस रास्ते से ही आयेंगे।

इतने में ही एक सैनिक की दृष्टि आठ-दस हाथ की दूरी पर एक शिलाखंड पर पड़ी, जो धीरे-धीरे खिसक रहा था। उसने संकेत से महाराजा जयसेन को बताया।

महाराजा जयसेन ने देखा कि जो पत्थर दो-चार मनुष्यों से भी नहीं खिसकाया जा सकता, वह स्वतः खिसक रहा है।

सभी छिपकर, दुबककर बैठ गए।

गुप्त द्वार का विशाल शिलाखण्ड खिसका और छोटे द्वार जितना छिद्र दिखाई दिया, जिसमें से एक व्यक्ति निकल सकता हो।

सबसे पहले लोभसार, हाथ में नंगी तलवार लिये उस द्वार से बाहर निकला। विकराल आंखें, श्याम वर्ण, लंबा-चौड़ा शरीर···उसको देखते ही देखने वाला हड़बड़ा जाता है। लोभसार बाहर आया। उसने चारों ओर देखा। फिर कहा—'बाहर आ जाओ। हमें मुख्य द्वार पर खड़े सैनिकों को समाप्त कर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देना है···शीघ्रता करो।'

एक के बाद एक सारे चोर बाहर आ गए···अंतिम चोर के बाहर निकल जाने पर लोभसार ने पैरों से कुछ किया और वह विशाल शिलाखंड पूर्ववत् हो गया।

जयसेन और उसके साथी चुपचाप बैठे थे। उन्होंने देख लिया था कि पत्थर कैसे बंद हो गया। वे अवसर की प्रतीक्षा करने लगे।

लोभसार अपने दस साथियों के साथ आगे बढ़ा और मुख्य द्वार की तरफ जाने लगा। जब जयसेन ने यह जान लिया कि लोभसार अपने गुप्त द्वार से इतनी दूर चला गया है कि वह पुनः इसमें नहीं आ सकता, तब उसने पीछे से शंखनाद किया। तत्काल चारों ओर खड़े सशस्त्र सैनिक खड़े हो गए। जयसेन ने ललकारते हुए कहा—'लोभसार! आज तू नहीं बच सकता। या तो तू हार मानकर शरणागत हो जा, अन्यथा मृत्यु की तैयारी रख।'

लोभ्सार और उसके साथी वहीं खड़े रह गए। चारों ओर सैनिकों का घेरा था। उसे लगा कि अब गुफा में जाना दुष्कर है। साहस के बिना छुटकारा नहीं है। उसने जयसेन की ओर देखकर कहा—'अच्छा! तू आया है? जयसेन! आज मेरा जो कुछ भी हो परन्तु तेरा मस्तक इस अलंबगिरि की माटी चाटेगा।'

इतना कहकर लोभसार अपने साथियों के साथ जयसेन की ओर बढ़ा। इतने में ही चारों ओर से बाणों की वर्षा होने लगी और देखते-देखते लोभसार के पांच साथी धराशयी हो गए।

लोभसार नंगी तलवार ले जयसेन की ओर बढ़ा। जयसेन तैयार था। लोभसार ने तलवार ऊंची कर प्रहार किया···जयसेन भी खिलाड़ी था, वह पीछे हट गया और लोभसार की तीखी तलवार से एक सैनिक कट गया।

तलवार के वार चलते रहे।

न जयसेन हताहत हुआ और न लोभसार पराजित हुआ।

महाराजा जयसेन रस्सी का फंदा लगाने में निष्णात था। उसने कमर से वह कौशेय रज्जु निकाली और उसे वर्तुलाकार बना, अवसर देख, लोभसार की ओर फेंकी। वह रज्जु सीधी लोभसार के गले में पड़ी। जयसेन ने रज्जु को खींचा। लोभसार के हाथ से तलवार गिर पड़ी और वह स्वयं धड़ाम से भूमि पर गिर गया।

उसके गले में फंदा पड़ चुका था। वह खड़ा होकर उस फंदे को निकाले, इतने में ही वहां जयसेन के दस सैनिक आ गए और लोभसार को दबोच लिया।

वह निढाल होकर गिरा पड़ा था। एक सैनिक उसकी गर्दन को काटने के लिए आगे बढ़ा। जयसेन ने उसे रोक लिया।

जयसेन लोभसार के पास आ गया। उसने देखा, लोभसार निष्प्राण होकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूमि पर पड़ा है। उसके गले में पड़ा हुआ फंदा उसकी मौत का कारण बन गया था।

जयसेन ने अपने सैनिकों से कहा—'साथियो! दक्षिण भारत का एक दुर्दान्त और भयंकर डाकू अपने ही भयंकर पापों से मारा गया है। अब इस दुष्ट लोभसार और इसके साथियों को नीचे के वन-प्रदेश में ले जाओ। मैं इसके गुप्त-स्थान की तलाशी लेकर आता हूं।'

सात सैनिक लोभसार का शव लेकर नीचे की ओर प्रस्थित हुए।

जयसेन दूसरे सैनिकों को साथ ले पीछे मुड़ा। सेनानायक भी अपने सैनिकों के साथ महाराजा के पास आ गया।

जयसेन और सेनानायक ने गुप्तद्वार खोलने का पूरा प्रयत्न किया, पर असफल रहे।

गुफा में जाने का द्वार न मिलने के कारण जयसेन नीचे आ गया और वहां लोभसार की अन्त्येष्टि की व्यवस्था करने का निर्देश दिया।

जयसेन ने सेदानायक से कहा—'इस दुष्ट के भय से इस वन-प्रदेश में कोई भी आने में हिचकता था। इसलिए इस शैतान को एक वृक्ष की डाल पर बांध-कर औंधा लटका दो'''आते-जाते पथिक इसको देखेंगे और धीरे-धीरे यह वन-प्रदेश भयमुक्त हो जाएगा।'

तत्काल सेनानायक ने व्यवस्था की। लोभसार को औंधा लटका दिया और पास में एक जलती मशाल छोड़ दी।

उसके पश्चात् सभी गोला नदी के तट पर गए, स्नान आदि से निवृत्त होकर, कुछ खा-पीकर अपने-अपने घोड़ों पर गंतव्य की ओर चल पड़े।

रात हो गई थी।

कनकावती अत्यन्त आकुल-व्याकुल हो रही थी। दिन में उसने सारी गुफा देख ली। अन्यान्य काम-काज भी उसने निपटाए'''तेरह घोड़ों को उसने दाना-पानी दिया'''पर दिन बहुत लम्बा हो गया। मध्याह्न के पश्चात् उसने लोभसार के गुप्त-भंडार को खोला और वहां का सारा सामान देखा। धन प्रचुर था। अलंकारों के ढेर लग रहे थे। कनकावती ने सोचा, जब लोभसार आएगा तो उसको समझाकर एक नगर में जा बसूंगी। उसको चोरी-डकैती छोड़ने के लिए कहूंगी। धन इतना है कि अर्जन की आवश्यकता ही नहीं है। जीवन भर यह समाप्त नहीं होने वाला है, फिर और अधिक धन के लिए इतनी मारामारी क्यों?

सांझ हो गई।

कनकावती के धैर्य का बांध टूट गया। उसने गुप्त-भंडार का द्वार बंद किया और बाहर आयी। बाहर सुनसान था। कहीं कुछ हलचल नहीं थी। अंधकार फैल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रहा था। वह डरी। फिर भी हिम्मत कर एक शिलाखण्ड पर चढ़कर उसने चारों ओर देखा। सारा वन-प्रदेश सुनसान पड़ा था। उसका हृदय बैठ गया।

कनकावती पुनः गुफा में लौट आयी। कुछ समय पश्चात् एक लाठी लेकर वह बाहर निकली और लोभसार के कथनानुसार उसको खोजने के लिए चल पड़ी।

रात्रि का समय···अजाना प्रदेश···वन की भयंकरता···सब कुछ होते हुए भी कनकावती अपने नये प्रियतम को ढूंढ़ने निकल पड़ी।

आज वह महाराजा वीरधवल को भूल चुकी थी, चन्द्रावती नगरी की राजरानी की गौरव-गाथा भी उसे याद नहीं थी।

कोमलांगी नारी में ऐसा बल कहां से आता होगा? इस प्रश्न का समाधान कोई नहीं दे पाता। नारी कोमल है, पर वह अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए वज्र से भी कठोर बन जाती है। एक चूहे से डरने वाली नारी वन-प्रदेश में सिंह को देखकर भी प्रकंपित नहीं होती।

कनकावती को दिशा का भान नहीं था। वह चल रही थी। ऊंची-नीची भूमि को पार करती हुई वह वन-प्रदेश की नीची भूमि में पहुंच गई।

अरे, यह क्या है? उसकी दृष्टि राख के ढेर एक पर गई। वह निर्ममतापूर्वक उस ओर बढ़ी···उसने देखा कि राख का ढेर है, जहां जयसेन के सैनिकों ने लोभसार के ग्यारह साथियों के शवों को जलाया था।

कनकावती ने अपनी लाठी से राख के ढेर को इधर-उधर किया। उसने देखा कि अभी उस राख के ढेर में नीचे अंगारे सुलग रहे थे। उसने सोचा—अरे, यहां अग्नि किसने जलायी?

कुछ ही दूरी पर बिखरी पड़ी पगड़ियों पर कनकावती की दृष्टि गई।

वह चौंकी। वह साहस कर उन पगड़ियों के पास गई। उसने पहचान लिया कि वे सारी पगड़ियां लोभसार के साथियों की हैं। अरे, तो क्या यह राख का ढेर उन्हीं साथियों का है?

यह विचार आते ही कनकावती कांप उठी। उसने सोचा तो फिर लोभसार कहां है? क्या वह भाग गया? अथवा किसी ने उसे पकड़ लिया?

वह पुनः उस राख के ढेर के पास गई। लकड़ी से राख को कुरेदा। हड्डियों के टुकड़े दीखने लगे। कुछ राख हो चुके थे, कुछ अधजले थे, कुछ वैसे ही थे।

कनकावती के मन में प्रश्न हुआ—क्या ये सब मेरे प्रियतम के साथियों की हड्डियां हैं? क्या उन्हें किसी ने मार डाला? अथवा मेरे साहसी प्रियतम ने शत्रुओं को मारकर चिता जलाई है? नहीं, यदि ऐसा हुआ होता तो वे शीघ्र ही गुफा में आ जाते।

तब?

कनकावती आगे बढ़ी। वह बिलकुल अजान थी। वह दिशा-शून्य होकर चल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रही थी।

रात्रि का प्रथम प्रहर बीत गया।

अंधकार सघन होता गया।

वह अपनी धुन में ठोकरें खाती, गिरती-पड़ती चल रही थी। इतने में ही उसे कुछ ही दूरी पर मन्द-मन्द प्रकाश दिखाई दिया। उसने सोचा, संभव है यहां कोई रहता हो।

वह त्वरित गति से उस ओर चली।

प्रकाश निकट आया। उसने देखा कि एक मशाल जल रही है। किन्तु उसका तेल खत्म हो चुका था, अतः वह टिमटिमा रही थी।

वह निकट गई। सहसा उसकी दृष्टि वृक्ष की शाखा से लटकते हुए शव पर पड़ी।

कनकावती डरकर चार कदम पीछे हट गई—अरे, यह कौन है? कोई प्रेत है या भूत?

मन में साहस कर वह मशाल के पास गई। उसको उठाकर शव की ओर मुड़ी। मंद प्रकाश में उसने शव की ओर देखा। उसके हाथ से मशाल गिर पड़ी। वह चीख उठी···यह और कोई नहीं, स्वयं लोभसार था।

जयसेन जब लोभसार के शव को लटकाकर चला था, तब एक सुलगती मशाल रख दी थी, जिससे कि प्रकाश के कारण कोई भी वन्य पशु उस लाश के पास न आए।

कनकावती दो पल स्तंभित होकर खड़ी रही।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३. प्रेत की बात

जिस समय रानी कनकावती अपने नये प्रियतम की लाश को वृक्ष पर लटकते हुए देख रही थी, उसी समय चन्द्रावती नगरी के राजभवन के विशाल प्रांगण में स्वयंवर के निमित्त आए हुए राजाओं और राजकुमारों के मनोरंजन के लिए एक भव्य कार्यक्रम नियोजित किया गया था।

इस प्रसंग को आनन्दमय बनाने के लिए राज्य की अन्यान्य नर्तकियों और सुप्रसिद्ध नर्तकी चन्द्रसेना का आगमन भी हुआ था।

चन्द्रसेना स्वयं सुन्दर थी। उसके आभूषणों और वस्त्रसज्जा ने उसके रूप को शतगुणित कर दिया था।

महाबल की हत्या कर मलयासुन्दरी का अपहरण करने के इच्छुक राजकुमार एकत्रित हो चुके थे। इतना ही नहीं, उनके अपने-अपने सशस्त्र अंगरक्षक उनके पीछे सावचेत खड़े थे।

मनोरंजन काक ार्यक्रम प्रारम्भ हुआ।

मलयासुन्दरी अनेक स्त्रियों से परिवृत होकर एक ओर बैठी थी। युवराज महाबल महाराजा वीरधवल के पास बैठा था। वह पूर्ण सावधान था। महाराजा ने वहां चारों ओर सशस्त्र सैनिक तैनात कर रखे थे।

मलया का अपहरण करने के इच्छुक राजकुमार उतावले हो रहे थे। उन्हें यह भय था कि यदि यह कार्यक्रम रातभर चलेगा तो कैसे—क्या होगा?

नर्तकियों के नृत्य से सारे प्रेक्षक प्रसन्न हो रहे थे और जब नर्तकीवृन्द ने अपना नृत्य पूरा किया तब राजाओं ने हर्ष-ध्वनि से उनका वर्धापन किया। नर्तकियां अपने-अपने स्थान पर लौट गईं।

राजकुमारों का विद्रोही दल इस अवसर का लाभ उठाने के लिए तैयार हुआ। परन्तु इतने में ही चन्द्रसेना ने अपना नृत्य प्रारम्भ कर दिया। राजकुमारों ने चन्द्रसेना को देखा। वे सब उसके रूप पर मुग्ध हो गए। उसका नृत्य मनोमुग्धकारी था। राजकुमारों ने सोचा—इसका नृत्य पूरा होते ही हम महाबल को मारने के लिए तत्पर हो जाएंगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रात्रि का दूसरा प्रहर बीत गया।

चन्द्रसेना का नृत्य पूरा हुआ।

दूसरा कार्यक्रम प्रस्तुत हो उससे पूर्व ही महाबल अपने आसन से उठा और वज्रसार धनुष्य के पास आकर ललकारते हुए कहा—'कौन हैं वे विद्रोही जो अपने आपको श्रेष्ठ और दूसरों को हीन मान रहे हैं? उनके संशय के पीछे अपमान की गंध आ रही है। स्वयं की दुर्बलता दूसरों पर थोपकर अपने को शक्तिशाली मानने वाले मेरे सामने आकर प्रश्न करें।' यह कहते-कहते महाबल ने उस प्रचंड वज्रसार धनुष्य को उठाया और प्रत्यंचा को खींचा।

सारी सभा में सन्नाटा छा गया।

सभी स्त्री-पुरुष चले गए।

एक भी विद्रोही राजकुमार सामने नहीं आया।

महाबल ने कहा—'किसी राजकुमार का परिचय जानना हो तो उसके भुजबल से जानो। यही उसकी सही पहचान है। जो यहां कुछ अनिष्ट घटित करना चाहते हैं, वे स्वयं समझ लें, उनका अनिष्ट तो निश्चित ही हो जाएगा।'

सभी विद्रोही राजकुमार नीचा मुंह लटकाए धीरे-धीरे खिसक गए।

कार्यक्रम सम्पन्न हो चुका था।

मलयासुन्दरी और महाबल तत्काल वहां से घोड़े पर चढ़, भट्टारिका देवी के मंदिर में चले गए। साथ में किसी को नहीं लिया। यह वही मंदिर था जहां घटनाओं-कल्पनाओं का सर्जन हुआ था, इसलिए मलयासुन्दरी स्वयंवर होते ही वहां जाना चाहती थी।

दोनों वहां आए। मंदिर में देवी के दर्शन किए और कुछ विश्राम कर लौटने लगे।

मलया ने कहा—'प्रियतम! आज अवसर मिला है। रात्रि-भ्रमण का आनन्द लें। कुछ देर घूम-फिर लें, पश्चात् चलेंगे।'

महाबल मलया के साथ बाहर निकल गया।

अश्व मंदिर के बाहर ही बंधे हुए थे।

वे कुछ दूर गए। इतने में ही मलया चौंकी। उसने कहा—'प्रियतम! कोई आ रहा है। मेरे कानों में शब्द सुनाई दिये हैं।'

कुछ क्षणों बाद उन्होंने सुना—'अरे! आज मैं सारे दिन तेरा इन्तजार करता रहा···कहां चला गया था?'

'अरे मित्र! आज तो बहुत दूर चला गया था।'

'अरे, उसके पीछे तो नहीं गया था?'

'नहीं रे, नहीं। उस रांड के पीछे कौन जाए? वह तो सागर के किनारे किसी का घर आबाद कर रही है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल और मलयासुंदरी—दोनों आश्चर्यचकित थे। कुछ भी दिखाई नह दे रहा था, कौन बात कर रहे हैं? कोई प्रेत आत्माएं तो नहीं हैं? आवाज भी ऊपर से आ रही है।

फिर आवाज सुनाई देने लगी।

'अरे दोस्त! कल संध्या के समय एक कार्य होगा। पृथ्वीस्थानपुर की रानी पद्मावती आत्मघात कर मरने वाली है।'

'अरे, तूने यह कहां से सुना? राजा की रानी और आत्मघात! ऐसा क्यों हो? रानी को दुःख ही क्या होता है?'

'तू नहीं जानता। उनमें अनेक दुःख होते हैं। उनसे तो हम भूत-प्रेत अच्छे हैं। हम जहां जाना चाहें जाते हैं, हमें कोई देख नहीं सकता।'

'अरे, रहने दे अपना अहम्। हमारा भी कोई जीवन है। जीवन भर घूमते रहो और दर-दर की ठोकरें खाते रहो।'

'रानी आत्मघात क्यों कर रही है?'

'केवल रानी ही नहीं; राजा भी साथ-साथ मरेगा।'

'अरे, उसका कारण तो बता।'

'रानी का कुछ खो गया है। वह मिला नहीं और एकाकी पुत्र भी कहीं चला गया। रानी अत्यन्त दुःखी होकर प्राण-त्याग कर रही है।'

'अरे, तब तो हम भी वहां चलेंगे। हजारों लोग एकत्रित होंगे। बड़ा मजा आएगा।'

'तुझे चलना है?'

'हां।'

'तो चल!' दूसरे प्रेत ने कहा।

तत्काल महाबल ने प्रियतमा से कहा—'प्रिये! माता-पिता को बचाने के इस अवसर का लाभ उठा लूं। तू जल्दी मुझे लक्ष्मीपुंज हार दे। तू राजभवन में चली जा।'

'परन्तु आप जाएंगे कैसे?'

'इस वट-वृक्ष का कोटर बहुत बड़ा है। इसमें तीन-चार व्यक्ति छिप सकते हैं।' महाबल बोला।

'स्वामिन्! मैं भी साथ ही चलूंगी। अब मैं एक क्षण भी आपसे विलग नहीं रह सकती।'

'अधिक चर्चा करने का समय नहीं है।'

महाबल प्रियतमा को साथ ले विशाल वटवृक्ष के कोटर में बैठ गया और कुछ ही क्षणों के पश्चात् वह वट-वृक्ष विमान की भांति आकाश में उड़ने लगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४. शव का चमत्कार

व्यंतर देवों की अद्‌भुत शक्ति होती है।

भट्टारिका देवी के मंदिर के पास से दोनों व्यंतर मित्रों द्वारा उड़ाया हुआ वह विशाल वट वृक्ष कुछ ही समय में अलंबगिरि के वन-प्रदेशों में पहुंच गया।

जब वट-वृक्ष एक निश्चित स्थान पर पृथ्वी पर टिका, महाबल तत्काल उस वृक्ष के कोटर से बाहर निकला और बोला—'प्रिये ! जल्दी बाहर आ जा, क्योंकि यह वट-वृक्ष तत्काल अपने मूल स्थान पर चला जाएगा।'

मलया बाहर निकली···उसी क्षण वह वृक्ष जैसे आया था, वैसे ही लौट गया। दोनों व्यंतर भी चले गए।

महाबल ने इधर-उधर देखकर कहा—'प्रिये ! हम पृथ्वीस्थानपुर के परिसर में आ गए हैं···हम कुछ विश्राम कर लें···कुछ दिनों से तुझे नींद लेने का अवसर भी नहीं मिला था···प्रातः जल्दी उठकर हम यहां से रवाना हो जाएंगे।

'जैसा आप चाहें···किन्तु यह स्थल तो···'

'यह मेरा परिचित स्थान है···यहां से दो-चार कोस की दूरी पर ही मेरा नगर है···हम सूर्योदय के समय राजभवन में चले जाएंगे।'

'सुन्दर वन-प्रदेश है,' कहकर मलया चारों ओर देखने लगी।

अंधकार व्याप्त था, किन्तु आधी रात के बाद चांद की निर्मल चांदनी सारे वन-प्रदेश को नहाने लगी। मंद-मंद और मीठा प्रकाश चारों ओर फैल गया। इस मधुर यामिनी में दोनों प्रकृति के सौन्दर्य का आनन्द लेने लगे।

और उसी क्षण दोनों के कानों में किसी नारी का करुण क्रन्दन सुनाई दिया।

'कुछ सुनाई दे रहा है'—मलया ने स्वामी की ओर देखते हुए कहा।

'इसके रुदन में करुणा प्रवाहित हो रही है। कौन है···?'

महाबल और मलया दोनों ध्यान से रुदन को सुनने लगे।

इस नीरव वातावरण में किसी के दुःख-दर्द भरे स्वर स्पष्ट सुनाई दे रहे थे।

महाबल बोला—'तेरे में हिम्मत हो तो मैं अभी इसकी खोज-खबर लेकर आता हूं···संभव है कोई नारी इस विकट वन-प्रदेश में भटक गयी हो···अथवा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह किसी आकस्मिक विपत्ति में फंस गयी हो···।'

'कोई भूत-प्रेत या पिशाचिनी होगी तो ?'

महाबल ने प्रियतमा के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा—'प्रिये ! यदि ऐसा कुछ भी होगा तो भी भयभीत होने का कोई कारण ही नहीं है। मेरा कलेजा मजबूत है। तू यहीं इसी वृक्ष के नीचे खड़ी रह, मैं अभी कुछ ही क्षणों में लौट आता हूं।'

वह बोली—'मैं भी साथ ही चलूंगी।'

'प्रिये ! तू थककर चूर हो गयी है। कुछ समय विश्राम कर ले। अच्छा, ठहर···मैं तुझे पुरुषरूप में बदल देता हूं···मेरे पास वह गुटिका है···फिर तुझे किसी बात का भय नहीं रहेगा···यह लक्ष्मीपुंज हार भी मैं अपने पास रख लेता हूं।'

यह कहकर महाबल ने अपनी विज्ञानसिद्ध उस गुटिका को निकाला, आम्र के पत्ते के रस में घिसकर मलया के ललाट पर तिलक किया और मलया ने अपने गले से लक्ष्मीपुंज हार निकालकर महाबल को सौंप दिया।

थोड़े क्षणों में मलया पुरुष-रूप में आ गयी। महाबल बोला—'प्रिये ! अब ये वस्त्र तुझे शोभा नहीं देंगे।'

'दूसरा कोई उपाय नहीं है।'

'मुझे याद आ रहा है कि जब हम वट-वृक्ष की कोटर में बैठे थे तब मेरे पुराने वस्त्रों की पोटलियां थीं। जब मैं उसमें से बाहर निकला तब मेरे पैरों की ठोकर से वह वट वृक्ष से बाहर आ पड़ी थी। संभव है, वह वट वृक्ष के पास वहीं पड़ी हो'···कहकर महाबल तत्काल वहां गया और अपने पुराने वस्त्रों की पोटली ले आया।

मलयासुन्दरी ने अपने स्वामी के वस्त्र धारण कर लिये और अपने पुराने वस्त्र तथा शेष अलंकार उतारकर एक पोटली बांध दी।

महाबल ने वह पोटली एक वृक्ष की डाल पर बांध दी। फिर उसने कहा—'मलया ! अब तू नौजवान पुरुष बन गयी है···मुझे डर लग रहा है कि कोई देवांगना आकाश में जाते समय तुझे देखकर मोहित न हो जाए।'

स्वामी की ओर देखकर मुसकराते हुए मलया ने कहा—'अब आप पधारें···शीघ्र लौट आना। मैं इसी वृक्ष के नीचे खड़ी-खड़ी आपका इन्तजार करूंगी।'

वहां से चलने से पूर्व महाबल ने अपनी अंगुली से राजमुद्रित अंगूठी निकालकर मलया की अंगुली में पहना दी। फिर महाबल वहां से चला। मलया ने कांपते हृदय से प्रियतम को विदाई दी और महाबल जिस ओर से वह करुण स्वर आ रहा था, उसी दिशा में प्रस्थित हो गया।

ज्यों-ज्यों महाबल उस दिशा में आगे बढ़ रहा था, वह स्वर निकट होता जा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रहा था। महाबल को प्रतीत हुआ कि रोने वाली नारी कहीं आसपास ही है। चलते-चलते एक स्थान पर वह सहमकर रुका। उसके कानों में शब्द पड़े—'अरे ओ भाग्यशाली! रुक। मेरा एक काम कर...।'

उसने सोचा—'कौन बोला ?'

महाबल ने तलवार की मूठ पर हाथ रखते हुए चारों ओर देखा। कुछ ही दूरी पर अग्नि के जलने का आभास हुआ। उसने उस अग्नि के मंद प्रकाश में देखा कि एक योगी खड़ा है। वह मात्र कोपीन धारण किए हुए है और कह रहा है—'भाई! थोड़ा इधर आ।'

रुदन करने वाली नारी का स्वर भी निकट हो रहा था। महाबल निर्भयता-पूर्वक योगी की ओर बढ़ा।

योगी एक पत्थर के शिलाखण्ड पर खड़ा था...उससे चार हाथ की दूरी पर अग्नि जल रही थी।

महाबल को निकट आते देख योगी बोला—'वत्स! तेरे चेहरे पर तेज है... तू सामान्य पुरुष तो नहीं है, किन्तु कोई तेजस्वी राजकुमार है। मैं यहीं रहता हूं। मेरा आश्रम यहीं है। मैं स्वर्ण का 'सिद्धपुरुष' तैयार करना चाहता हूं। किन्तु एक उत्तम और साहसी उत्तर-साधक के अभाव में यह महान् सिद्धि उपलब्ध नहीं हो सकेगी। यदि तू मेरे पर कृपा करे तो मेरे वर्षों का स्वप्न साकार हो जाए।'

'किन्तु मैं एक स्त्री का रुदन सुनकर खोज करने निकला हूं...'

'मेरे कार्य की निष्पत्ति में तेरा कार्य भी हो जाएगा...तेरा शुभ नाम...?' योगी ने पूछा।

'मैं पृथ्वीस्थानपुर का युवराज महाबल हूं।'

'ओह! तब तो मेरा कार्य अवश्य ही पूरा होगा। मैं तुझे अधिक समय तक नहीं रोकूंगा। जहां एक नारी रो रही है, वहीं वृक्ष की शाखा से एक शव लटक रहा है। यह शव अखंड है। मेरी क्रिया के लिए यह बहुत उपयोगी है...मैं उसे उठाकर यहां ला नहीं सकता...तू जा...उस बहन को शांत करना और शव को कंधे पर उठाकर ले आना।'

दो क्षण विचार कर महाबल बोला—'महाराज! आपके कार्य को निष्पन्न करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं...किन्तु प्रातः होते-होते मुझे नगरी में पहुंचना है।'

योगी बोला—'वत्स! मेरे कार्य में विलम्ब नहीं होगा। तू इधर आ, मैं मंत्र से तुझे शुद्ध कर देता हूं।'

महाबल योगी के सामने खड़ा रहा।

योगी ने कुछ मंत्रोच्चारण किया और सात बार पानी की अंजली महाबल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर छिड़की और कहा—'वत्स ! मैंने तुझे उत्तर-साधक की दीक्षा दी है···शव यहां आते ही मेरा कार्य सम्पन्न हो जाएगा। किन्तु जब तक कार्य-सिद्धि न हो, तब तक तुझे यहीं रहना होगा।'

परोपकार की भावना से ओत-प्रोत महाबल ने योगी को स्वीकृति दे दी फिर वह वृक्ष पर लटकते शव को लेने आगे बढ़ा। वहीं वह नारी रुदन कर रही थी।

महाबल उसके पास जाकर बोला—'बहन ! इस विकट वन-प्रदेश में आप अकेली बैठी हैं, रो रही हैं। क्या किसी ने आपका अपहरण किया है या और कुछ···?'

यह स्त्री और कोई नहीं, मलयासुन्दरी की अपरमाता रानी कनकावती थी। अपने प्राणदाता प्रियतम के शव के पास बैठी हुई वह करुण क्रन्दन कर रही थी। इस भयंकर वन-प्रदेश में किसी भद्रपुरुष के मधुर स्वरों को सुनकर उसने महाबल की ओर देखा···किन्तु वह उसे पहचान नहीं पायी। वह बोली—'भाई ! मेरा सर्वस्व लुट गया है···शत्रुओं ने मेरे प्रियतम की हत्या कर उसके शव को इस वृक्ष पर लटका दिया है।'

'आपके प्रियतम का नाम ?'

'इस वन-प्रदेश का विख्यात चोर लोभसार मेरा आश्रयदाता था। उसके बिना मेरा जीवन अस्त-व्यस्त हो गया है।' रानी कनकावती ने दीन स्वरों में कहा।

महाबल को स्वर परिचित-से लगे···किन्तु वह पहचान नहीं सका। दो क्षण विचार कर वह बोला—'बहन ! रोने से कुछ नहीं होगा। आप शांत रहें और अपने स्थान पर लौट जाएं। आप कहें तो मैं आपको आपके स्थान पर पहुंचा दूं। आप कहें तो आपके प्रियतम का अग्नि-संस्कार कर दूं···आप धैर्य रखें और इस भयंकर वन-प्रदेश को छोड़कर अपने निवास-स्थान पर चली जाएं।'

उत्तरीय के कोने से आंसुओं को पोंछती हुई कनकावती बोली—'भाई ! मेरा एक काम करोगे ?'

'बोलो।'

'यह शव कुछ ऊंचाई पर है। इसे नीचा करो। मैं अपने प्रियतम के मुंह का अंतिम बार स्पर्श कर लूं। फिर मैं अपने स्थान पर चली जाऊंगी, आप शव का जो करना चाहें करें।'

महाबल ने मन-ही-मन सोचा—मोहग्रस्त व्यक्ति कितना अंधा हो जाता है ? मरे हुए के स्पर्श में कोई आनन्द नहीं आता, कोई तृप्ति भी नहीं होती। फिर भी उसने मधुर स्वर में कहा—'बहन ! खड़ी हो जाएं···मैं नीचे झुकता हूं··· आप मेरी पीठ पर चढ़कर अपने प्रियतम के मुंह का स्पर्श कर लें।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कनकावती राजी होकर खड़ी हो गई।

महाबल वृक्ष के नीचे गया और लटकते हुए शव के नीचे 'घोड़ी' बनकर खड़ा हो गया।

रानी कनकावती तत्काल महाबल की पीठ पर चढ़ी और लोभसार के मुंह का अंतिम चुंबन लेने लगी।

और तब अकल्पित चमत्कार हुआ···लोभसार के मुंह का चुंबन लेते समय ही शव ने कनकावती का नाक मुंह से काट खाया।

कनकावती जोर से चिल्ला उठी। शव के मुंह में कनकावती की नाक का टुकड़ा रह गया। महाबल भी उस चिल्लाहट से चौक पड़ा। कनकावती अपने उत्तरीय से नाक को ढंककर नीचे उतर गई।

'मेरी नाक···' कनकावती आगे बोल नहीं सकी।

'आपकी नाक ! क्या हुआ ?'

'मुझे आश्चर्य भी हो रहा है और भय भी लग रहा है। मैं अपने प्रियतम का मुंह सहलाने लगी तो शव ने मेरो नाक को काट खाया।'

'अशक्य ! मरा हुआ व्यक्ति ऐसा कभी नहीं कर सकता। संभव है यहां निवास करने वाले किसी व्यंतर का यह कार्य हो···अब आप जल्दी अपने स्थान चली जाएं और नाक पर···बहन ! कुछ ठहरें। मैं एक वनस्पति जानता हूं। यदि वह प्राप्त हो गई तो आपकी कटी नाक से बहने वाला रक्त रुक जाएगा।' यह कहकर महाबल उस वनस्पति को ढूंढ़ने गया। भाग्य से वह मिल गई। महाबल ने उस वनस्पति के कुछ पत्तों को हाथों से मसला, रस निकालकर रानी की नाक पर लगाया और देखते-देखते रक्त का प्रवाह रुक गया।

कनकावती की वेदना शांत हुई और वह अपने स्थान की ओर जाने के लिए मुड़ी।

महाबल ने साथ चलने के लिए कहा···परन्तु उसने अकेली जाना ही अच्छा समझा।

कनकावती के चले जाने के पश्चात् महाबल ने शव को नीचे उतारा और उसे अपने कन्धों पर लादकर योगी की ओर चला।

योगी इन्तजार में ही बैठा था। उसने साधना की पूर्व तैयारी सम्पन्न कर ली थी।

महाबल को शव के साथ आते देखकर योगी ने प्रसन्न स्वरों में कहा—'वत्स ! तेरा कल्याण हो। इस भयंकर वन-प्रदेश में मैंने तुझे कष्ट दिया है···किन्तु इसका फल अवश्य मिलेगा।'

महाबल बोला—'इस शव को कहां रखना है ?'

'इस वर्तुलाकार रेखा के मध्य में रख दे।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल ने शव वहां रख दिया।

योगी बोला—'वत्स ! यह स्वर्ण-सिद्धपुरुष की सिद्धि अपूर्व है। मैं इस शव को अग्नि में डालूंगा और मंत्र-विज्ञान के प्रभाव से यह तत्काल स्वर्ण का बन जाएगा। फिर इसमें से कितना ही स्वर्ण निकाला जाए, यह कभी पूरा नहीं होगा।'

'कभी पूरा नहीं होगा ?' महाबल ने आश्चर्य के साथ कहा।

'हां, यह शव स्वर्णसिद्धि बन जाएगा। इस स्वर्ण-पुरुष के किसी भी अंग को काटकर स्वर्ण लिया जाएगा तो तत्काल वह अंग मूल रूप में हो जाएगा।' योगी ने कहा।

महाबल बोला—'भव्य सिद्धि...। अब क्या आज्ञा है ? मैं शीघ्र यहां से जाना चाहता हूं।'

'मैं जानता हूं, कुमार ! मैं इस शव का होम कर दूं। यह स्वर्ण-सिद्ध हो जाए। अब तू अपने हाथों में नंगी तलवार लेकर इस वर्तुल में खड़ा रह।'

महाबल निर्भयतापूर्वक उस निर्धारित स्थान में खड़ा हो गया। उसके हाथ में तलवार थी।

योगीराज ने तत्काल मंत्रोच्चारण प्रारम्भ किया और शव पर जल छिड़का ...तीसरी बार शव पर पानी की अंजली छिड़ककर ज्यों ही योगी मंत्रोच्चारण करने लगा, तब तत्काल शव उठा और उस ओर जाने लगा जहां वह लटक रहा था।

योगी अवाक् रह गया।

महाबल को आश्चर्य हुआ।

योगी ने कहा—'मंत्रोच्चारण में कोई अशुद्धि नहीं रही तो फिर ऐसा क्यों हुआ ? वत्स ! तुझे पुनः कृपा करनी होगी...तू जल्दी जा और शव को पुनः ले आ।'

महाबल तत्काल चला। उसके मन में मलया का प्रश्न घुलने लगा। उसने सोचा—'वह बेचारी कितनी चिन्ता कर रही होगी ? कोई वन्य पशु आ जाएगा तो क्या होगा ? मैं उसे अकेली क्यों छोड़ आया ? यह कोई उचित नहीं हुआ। साथ में ले आता तो ठीक रहता। वह भी निश्चिंत रहती और मैं भी निश्चिंत रहता। अब यहां से कब छुटकारा मिले और कब उससे जा मिलूं।'

इन विचारों में उलझा हुआ महाबल योगी का कार्य सम्पन्न करने के लिए उसी वृक्ष के पास आ पहुंचा।

उसने आश्चर्य के साथ देखा कि लोभसार का शव उसी शाखा पर लटक गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५. विपत्ति के बादल

इस भयंकर वन में नारी का जो विकट और करुण क्रन्दन सुनाई दे रहा था, वह कुछ समय पूर्व ही बंद हो चुका है। फिर भी स्वामी अभी तक क्यों नहीं आए? यह प्रश्न मलया के हृदय को मथने लगा। क्या स्वामी किसी विपत्ति में फंस गए? रात भी थोड़ी अवशिष्ट है। मुझे अकेली यहां कितने समय तक बैठना होगा? कब तक मैं इन्तजार करती रहूंगी? अरे, मैं प्रतीक्षा न करूं तो फिर जाऊं किस ओर? यह प्रदेश सर्वथा अनजाना है···विकट और भयंकर अटवी···अटवी कितनी भी भयंकर क्यों न हो, मुझे अपना कर्तव्य करना ही होगा···मुझे ही स्वामी की खोज में निकल जाना चाहिए।

यह सोचकर मलया ने चारों ओर देखा···मुझे किस दिशा में जाना चाहिए? स्वामी तो सीधे गए थे···नहीं···नहीं, बाएं गए थे···नहीं-नहीं; दाएं गए थे। ओह, चिन्ता के कारण मन भ्रमित हो गया है क्या?

उसने सोचा—मैं यहां से जाऊं और यदि स्वामी आ गए तो···? नहीं, वे यदि आते तो कभी के पहुंच जाते···निश्चित ही वे किसी-न-किसी विपत्ति में फंस गए हैं···संभव है रुदन करने वाली वह नारी इनको अपने साथ ले गई हो···और वह नारी किसी प्रेतयोनि की होगी और निश्चित ही उसने मेरे स्वामी को अपने जाल में फंसा लिया होगा।

यह विचार आते ही मलया कांप उठी। उसको यह ज्ञात ही कैसे हो कि परोकार करने में प्रवीण महाबल अभी एक योगी का सहयोग कर रहा है।

मलया ने आकाश की ओर देखा। उसने जाना कि रात्रि का तीसरा प्रहर पूरा हो चुका है और थोड़े समय बाद ही प्रातःकाल हो जाएगा···नहीं-नहीं, मुझे भयमुक्त होकर उनकी टोह में निकल जाना चाहिए।

और मलयासुन्दरी महाबल की टोह में निकल पड़ी।

किन्तु जिस दिशा में महाबल गया था, उस ओर न जाकर वह विपरीत दिशा में चली। वह दिग्भ्रान्त थी।

वह आगे बढ़ती रही। वह सोच रही थी कि यदि वह स्वामी के साथ चली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाती तो इस विपत्ति का सामना नहीं करना पड़ता ।

मलया ने नमस्कार महामंत्र का जाप प्रारम्भ किया और आगे कदम बढ़ाए ।

इधर महाबल उस वृक्ष की डाल पर लटक रहे लोभसार के शव को आश्चर्य भरी दृष्टि से देख रहा था। ऐसा चमत्कार उसने न सुना था और न देखा था...वह शव को पुनः उठाने के लिए ऊपर चढ़ा और इस आश्चर्य पर हंसने लगा। इतने में ही शव भी जोर-जोर में हंस पड़ा। उसने कहा—'याद रखना... तू मेरी इस दशा पर हंस रहा है, परन्तु तुझे इस वृक्ष की डाल पर लटकना होगा और उस समय तेरा मुंह औंधा होगा।'

यह सुनकर महाबल अवाक् रह गया। निष्प्राण शरीर कभी इस प्रकार बोल नहीं सकता...यह कैसा चमत्कार है? संसार में किसी ने शव को बोलते नहीं सुना...ऐसा होना संभव भी नहीं है...क्योंकि चेतना निकल जाने पर सारी शक्तियां चुक जाती हैं...तो फिर यह शव क्यों, कैसे बोल रहा है?

इस स्थान पर यदि कोई दूसरा व्यक्ति होता तो उसकी छाती फट जाती और वहीं प्राण छोड़ देता। परन्तु महाबल निडर और साहसी था। उसने लोभसार का शव उतारा और अपने कंधों पर लादकर ले चला।

योगी प्रतीक्षा कर ही रहा था। उसकी दृष्टि आकाश की ओर बार-बार जा रही थी...इस सिद्धि के लिए जिन तारों-नक्षत्रों की उपस्थिति आवश्यक थी, वे सारे अस्त होने ही वाले थे।

और महाबल शव को लेकर पहुंच गया।

योगी ने तत्काल क्रिया प्रारम्भ की...शव को एक वर्तुल में रखा, उस पर अंजली फेंकी और तत्काल शव उठकर पुनः चला गया।

योगी और महाबल अवाक् बनकर देखते रहे...महाबल ने कहा—'योगीराज! यह कैसे हुआ?'

'मन्त्रोच्चारण में यदि कोई अशुद्धि रह जाए तब ही ऐसा हो सकता है, अन्यथा नहीं। मुझे विश्वास है कि मन्त्र के उच्चारण में कोई त्रुटि नहीं है। अब तो अवसर बीत गया। कल ही कुछ हो सकेगा।'

महाबल बोला—'महाराज! मैं कल रात यहां नहीं रुक सकता। मुझे नगर में जाना ही होगा।'

'युवराजश्री! आप दयालु हैं। आपने मेरे पर कृपा की है और मैंने आपको उत्तर-साधक के रूप में मन्त्रपूत किया है। यदि आप नहीं रुकेंगे तो मेरा कार्य अधूरा रह जाएगा। और अब मैं आपके सिवाय दूसरे किसी को उत्तर-साधक नहीं बना सकता। आप कल रात तक यहां रुकें। मैंने वर्षों के प्रयत्न से इस सिद्धि को प्राप्त किया है, मुझे निराश न करें।'

उदारमना महाबल सोचने लगा। एक ओर पत्नी के अकेली होने की चिन्ता,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूसरी ओर यदि नगर में न जाए तो माता-पिता आत्मदाह कर लेंगे। उसने कहा—'योगिराज ! परिस्थिति विकट है···यदि मैं कल मध्याह्न तक नगर में न पहुंचूं तो माता-पिता के प्राण-विसर्जन का दोषी बनता हूं और इस वन में मैं अपने एक मित्र को अकेले ही छोड़ आया हूं।'

योगी ने बहुत प्रार्थना की तो महाबल ने उसको स्वीकृति दे दी।

महाबल मलया को जहां छोड़ गया था, वहां त्वरित गति से आ पहुंचा।

किन्तु वहां मलया नहीं थी। महाबल चिन्तातुर हो गया। मलया कहां गई होगी ? क्या किसी ने उसका अपहरण कर डाला ? महाबल ने चारों ओर देखा। प्रातःकाल का प्रकाश प्रसृत हो रहा था···उसकी दृष्टि में मलया का पता नहीं चला। केवल मलया के वस्त्रालंकार जो एक वस्त्र-खंड में बंधे हुए वृक्ष की डाल पर लटक रहे थे, वे दिखे। आस-पास दो-चार चक्कर लगाकर महाबल ने जोर से पुकारा—'मलया···मलया···!'

परन्तु कौन उत्तर दे ? मलया तो स्वामी को ढूंढ़ते-ढूंढ़ते बहुत दूर चली गई थी।

महाबल ने नवकार मन्त्र का जाप प्रारम्भ किया और पुनः योगी के पास लौट आया।

योगी ने पूछा—'युवराजश्री ! क्या आपका मित्र साथ में नहीं आया ?'

'योगीराज ! जिस स्थान पर मैं उसे छोड़कर आया था, वहां वह है नहीं।'

'संभव है वे आपकी प्रतीक्षा करते-करते थक गये हों और पृथ्वीस्थानपुर की ओर चले गये हों ?'

'मेरा मित्र इस प्रदेश में सर्वथा अनजान है।' महाबला ने चिन्ता भरे स्वरों में कहा।

'आप चिन्ता न करें···वे अवश्य आपको मिलेंगे, मेरा आशीर्वाद है कि वे तथा आपके माता-पिता सकुशल रहेंगे। उनका बाल भी बांका नहीं होगा'—कहते हुए योगी ने आंखें बंद कीं, दोनों हाथ ऊंचे किए और मन्त्रोच्चार किया।

उषा का स्वर्णिम प्रकाश वन-प्रदेश में फैल चुका था···सूर्य का उदय होने वाला था। योगी ने कहा—'कुमारश्री ! आप निश्चिंत रहें। प्रातःकर्म से निवृत्त होकर कुछ फलाहार करें।'

सूर्योदय हो गया।

महाबल प्रातःकर्म से निवृत्त हुआ।

योगी ने उत्तम प्रकार के फल दिए। महाबल ने उन्हें खाकर ताजगी और तृप्ति का अनुभव किया। योगी ने कहा—'कुमारश्री ! अब आप उस कुटीर में रहें। मैं कुछ वनस्पति द्रव्यों को एकत्रित करने वन में जा रहा हूं। सायंकाल तक लौटूंगा।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'अच्छा···परन्तु क्या यहां आप अकेले हैं ?'

'हां, मैं अकेला हूं। ठीक स्मृति दिलायी आपने। यह वन बहुत भयंकर है, किन्तु मुझे एक समाधान दीख रहा है···।'

'क्या ?'

'यदि आप चाहें तो योनिप्राभृत विज्ञान के प्रयोग द्वारा मैं आपको मनुष्येतर प्राणी के रूप में बदल देता हूं। फिर आप निर्भय होकर यहां बैठे रहें।'

महाबल बोला—'योगीराज ! मुझे किसी प्रकार के भय की आशंका नहीं रहती। मैं आपके योनिप्राभृत विज्ञान का चमत्कार देखना चाहता हूं···आप मुझे अन्य योनि में बदल दें।'

योगी ने तत्काल अपनी झोली से एक वनस्पति का मूल निकाला और कहा—'कुमारश्री ! आपको नग्न होना पड़ेगा।'

'कोई आपत्ति नहीं है'—कहता हुआ महाबल नग्न हो गया और अपने सारे कपड़े एक पोटली में बांध दिए, किन्तु लक्ष्मीपुंजहार को अपने मुंह में छिपा लिया।

योगी ने वनस्पति के उस मूल को घिसा और उसे एक सुक्ति में निकाल दिया। फिर उसमें दो द्रव्य और मिलाए, अंगुली से उन सबका मिश्रण कर, उसका तिलक महाबल के ललाट पर किया।

और देखते-देखते पदार्थ-विज्ञान का अद्भुत चमत्कार घटित हुआ। महाबल कुछ ही क्षणों में नाग बन गया—पुष्ट, दीर्घ और अत्यन्त कृष्ण। योगी बोला—'युवराजश्री ! आप किसी प्रकार का संशय न करें। मैं आपको सामने वाली शिला की एक लघु गुफा में रख देता हूं···सायंकाल के समय आकर मैं आपको मूलरूप में ला दूंगा।'

नाग बने हुए महाबल ने फन को झुकाकर नमस्कार किया।

योगी नागरूपी महाबल को एक छोटी गुफा में रख आया। फिर वह वनस्पति द्रव्यों का संग्रह करने वन-प्रदेश में चला गया।

महाबल उस गुफा में पड़े-पड़े अनेक विचार करने लगा। यदि यह योगी वापस न आए तो फिर क्या होगा ? मुझे नाग से मूलरूप में कौन लायेगा ? यदि किसी कारणवश योगी की मृत्यु हो जाए तो फिर मेरी क्या दशा होगी ? ओह ! कुतूहल के वशीभूत होकर मैंने यह भयंकर भूल कर डाली। इस वन-प्रदेश में मुझे कुछ भी भय नहीं था। मैं दिन में नगर में जाकर सायं यहां आ सकता था। परन्तु अब क्या हो ? इस प्रकार के अनेक प्रश्नों में महाबल का मन उलझ गया।

मलया चली जा रही थी। उसकी दशा भी विपत्तिमय थी। वह स्वामी को ढूंढ़ते-ढूंढ़ते बहुत दूर निकल गई थी। उसे कहीं महाबल दृष्टिगोचर नहीं हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उस वन-प्रदेश में किसी भी आदमी का मुंह तक उसने नहीं देखा। वह असमंजस में पड़ गई। वन-प्रदेश से वह सर्वथा अपरिचित थी। किससे पूछे पृथ्वीस्थानपुर का मार्ग? वह अजानी दिशा में मन में अनेक संकल्प-विकल्पों को संजोए चली जा रही थी।

सूर्योदय हुए तीन घटिका काल बीत चुका था।

रास्ते में चलते-चलते मलया ने एक सुन्दर सरोवर देखा। वह तत्काल उसके निकट गई…हाथ-मुंह धोकर कुछ स्वस्थ हुई। भूख लग चुकी थी। पास में कुछ पाथेय था नहीं। उसने इधर-उधर देखा और उसकी दृष्टि एक फलवान वृक्ष पर जा टिकी।

वह तत्काल फल लेने गई। फलों को देखकर उसने सोचा, ऐसे फल मैंने कभी खाए हैं, यह सोच उसने कुछ फल तोड़े और क्षुधा को शांत किया। मलया का चित्त स्वस्थ हुआ। थकावट मिटी और वह आगे बढ़ गई।

दिन का पहला प्रहर बीत गया। कोई राहगीर नहीं मिला।

कुछ दूर आगे जाने पर उसने राज्य के दो सैनिकों को देखा।

राज्य के कुछ सैनिक जिस दिन से महाबल राजप्रासाद छोड़कर गया था, उसी दिन से उसकी खोज में दर-दर भटक रहे थे। ये दोनों सैनिक भी उसी खोज में निकले हुए थे।

मलया ने सोचा, इन सैनिकों को पूछूं कि पृथ्वीस्थानपुर का मार्ग कौन-सा है?…इतने में ही वे पुरुषवेशधारी मलया के सामने आ गए।

मलया खड़ी रह गई।

सैनिक निकट आए। मलया कुछ कहे उससे पूर्व ही सैनिकों ने मलया द्वारा पहने हुए महाबल के वस्त्रों को पहचान लिया। एक सैनिक ने पूछा—'तू कौन है?'

'मैं एक परदेशी पथिक हूं।'

'तूने जो वस्त्र पहन रखे हैं, ये कहां से लिये?'

मलया मौन रही।

सैनिक ने पुनः पूछा।

मलया ने कहा—'ये वस्त्र मेरे हैं।'

'नहीं, ये वस्त्र हमारे युवराज के हैं…अवश्य ही तूने हमारे युवराज को लूटकर या मारकर ये वस्त्र लिये हैं…पकड़ो इस शैतान को!'

मलया गंभीर विपत्ति में फंस गई। फिर भी उसने जान लिया कि ये सैनिक और कोई नहीं, पृथ्वीस्थानपुर के ही हैं।

यह सोचकर मलया ने समर्पण कर दिया।

सैनिकों ने उसे तत्काल बंदी बना लिया। दोनों सैनिक पुरुषवेशधारी मलया को साथ ले पृथ्वीस्थानपुर की ओर चल पड़े।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६. कौन सही ?

मलया ने अपना नाम सुंदरसेन बताया। दोनों सैनिक राजभवन में पहुंचे। मध्याह्न अभी हुआ नहीं था। सारा राजप्रासाद शोकाकुल था। महादेवी पद्मावती और महाराजा सुरपाल आत्मदाह की तैयारी कर नगर के बाहर जाने के लिए तैयार खड़े थे।

सारा नगर शोकाकुल था। सभी मंत्री और परिजन महाराजा से बार-बार प्रार्थना कर रहे थे और पुनश्चिन्तन के लिए कह रहे थे। पर महाराजा अपने प्रण पर अटल थे।

इतने में ही महामंत्री ने जाकर महाराजा से निवेदन किया—'महाराजश्री ! युवराज के कुछ समाचार प्राप्त हुए हैं···अपने सैनिक एक नौजवान को पकड़कर लाये हैं। वह युवक युवराज के वस्त्र पहने हुए है और उसकी अंगुली में भी युवराज की ही नामांकित मुद्रिका है।'

'उसको तत्काल यहां उपस्थित करो !' निराशा में आशा की बिजली कौंध गई।

थोड़े ही क्षणों में महाप्रतिहार सुंदरसेन के वेश में मलया को लेकर खंड में आया।

मलया के तेजस्वी वदन को देखते ही महाराजा और महादेवी बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने युवराज के वस्त्र पहचान लिये···राजमुद्रिका को भी पहचान लिया।

महामंत्री ने पूछा—'युवक ! तेरा नाम क्या है ?'

'सुन्दरसेन···'

'कहां रहते हो ?'

मलया मौन रही।

महाराजा ने पूछा—'भाई ! तेरा निवासस्थान कौन-सा है ?'

मलया मौन खड़ी रही। असत्य बोलने से तो मौन श्रेष्ठ है, यह सोचकर वह बोली नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महामंत्री ने पूछा—'ये वस्त्र तुझ कहां मिले ?'

'ये वस्त्र मेरे प्रिय मित्र महाबल ने मुझे दिए हैं। यह राजमुद्रिका भी उन्होंने ही मुझे पहनाई है।'

'असत्य ! यदि तू मेरे पुत्र का मित्र होता तो राजभवन में कोई-न-कोई तुझे अवश्य पहचान लेता। मुझे लगता है कि तू हमारे प्रदेश का दुर्दान्त चोर लोभसार का ही कोई साथी है। उस चोर को महाराजा जयसेन ने मार डाला है, ये समाचार अभी-अभी मुझे प्राप्त हुए हैं। उस दुष्ट चोर ने महाबल को मार डाला होगा और उसने उसके ये वस्त्र तुझे दिए होंगे। सच बता !' महाराजा ने पूछा।

'महाराज ! मैं सच कह रहा हूं। महाबलकुमार मेरे अत्यन्त प्रिय मित्र हैं। हम कब से मित्र बने, यह मैं अभी नहीं बता सकता।'

'तो फिर महाबल कहां है ?'

'इसी वन-प्रदेश में होंगे।'

महाराजा सुरपाल इस उत्तर को सुनकर तमतमा उठे। वे बोले—'सुन्दरसेन ! तेरा चेहरा जितना सुन्दर है, उतना ही काला है तेरा हृदय। महाबल यदि यहीं होता तो मेरे से मिले बिना कैसे रहता ? सैनिक उसकी खोज में चारों ओर भटक रहे हैं। सच बता अन्यथा तुझे कठोरतम दंड मिलेगा।'

मलया मौन रही।

महाराजा ने तत्काल आज्ञा दी—'इस दुष्ट नौजवान को वन में ले जाओ और वहां इसका वध कर डालो।'

यह आज्ञा सुनते ही मलया असमंजस में पड़ गई। अरे; यह कैसी विपत्ति आ गई ? महाबल को ढूंढ़ने के लिए ही तो मैं इस ओर आ रही थी…और यहां उनकी कोई खोज-खबर ही नहीं है। मलया विचारों में उलझ गई। तत्काल वह जागी। उसने सोचा, आन्तरिक बल को क्षीण नहीं करना चाहिए। वह महामंत्र नवकार का जाप करने लगी।

महामंत्री ने कहा—'महाराजश्री ! जब तक दोष प्रमाणित न हो जाए, तब तक इतना कठोर दंड न्याय नहीं कहा जा सकता। संभव है यह युवक सच कहता हो। आप पुनः सोचें।'

'महामंत्रीश्वर ! अनेक धूर्त व्यक्ति अपने अपराध को छिपाने के लिए भोलेपन का अभिनय करते हैं और अत्यन्त चतुर व्यक्ति को भी धोखा दे देते हैं।'

'तो फिर महाराज ! हमें इस नौजवान को 'दिव्य'[1] करने के लिए कहना

---

१. प्राचीन काल में, एक प्रकार की परीक्षा, जिससे किसी का अपराधी या निरपराध होना सिद्ध होता था। (मानक हिन्दी कोश) राजस्थानी भाषा में इसे 'धीज' कहा जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चाहिए। इससे हमें स्वयं विश्वास हो जाएगा।'

महादेवी ने पूछा—'कैसा दिव्य ?'

'घटसर्प का दिव्य बहुत भयंकर गिना जाता है। दिव्य करने से पूर्व यदि यह युवक सच-सच बता देता है तो हमें युवराज की प्रतीक्षा करनी चाहिए।'

महामंत्री ने तत्काल दो गारुड़िकों तथा चार सिपाहियों को अलंबादि के पर्वत से भयंकर नाग पकड़कर लाने के लिए भेजा।

महामंत्री ने यह भी कहा कि वे सीधे धनंजय यक्ष के मंदिर में पहुंचे।

दूसरी ओर महाराजा, महादेवी तथा सभी मंत्रीगण और नगर के संभ्रान्त व्यक्ति धनंजय मंदिर की ओर प्रस्थित हुए।

जब सब वहां पहुंचे तब तक दिन का तीसरा प्रहर बीत चुका था।

एक बड़े घड़े में सर्प लेकर गारुड़िक आ पहुंचे थे। उन्होंने महामंत्री को घड़ा दिखाते हुए कहा—'मंत्रीश्वर ! अत्यन्त श्याम, बहुत दीर्घ और भयंकर सर्प हम पकड़कर लाये हैं।'

महामंत्री ने उस सर्पघट को धनंजय के मंदिर में रखवाया।

उसके पश्चात् सब मंदिर के भीतर गए। महाराजा, महादेवी आदि एक ओर बैठ गए। महामंत्री ने मलया को भीतर बुलाकर कहा—'युवक ! इस घट में एक भयंकर सर्प है। ऐसी कठोर 'धीज' करने से पूर्व तुझे जो कहना है; बताना है, बता डाल।'

मलया मन में नवकार महामंत्र का जाप कर रही थी। सुन्दरसेन धीमे स्वरों में बोला—'महाराज ! मनुष्य परिस्थिति के समक्ष लाचार हो जाता है। मैं कुछ बातें बता नहीं सकता। इतना मैं अवश्य कहता हूं कि महाबल मेरा परम मित्र है। हमारी मैत्री जीव एक, शरीर दो जैसी है। ये वस्त्र उन्होंने ही मुझे पहनाए थे। यह मुद्रिका उन्हीं की दी हुई है। परिस्थितिवश वे मुझे वन में छोड़कर गए थे। लंबे समय तक वे लौटे नहीं तब मैं उनकी टोह में निकल पड़ा। आपके सैनिकों ने मुझे बंदी बनाकर यहां ला उपस्थित किया।'

महाराजा ने पूछा—'महाबल के पास कोई विशेष वस्तु थी ?'

'हां।'

'कौन-सी ?' महामंत्री ने पूछा।

'लक्ष्मीपुंज हार। वे किसी भी उपाय से माता को बचाना चाहते थे···मैंने ऐसा अनुभव किया था कि वे नगरी की ओर गए होंगे···किन्तु वे यहां नहीं आए। मुझे पता नहीं वे कहां गए हैं ?'

क्षण भर सब विचारमग्न हो गए। सबने सोचा, इसको लक्ष्मीपुंज हार का वृत्तान्त ज्ञात है तो अवश्य ही यह महाबल का निकटतम मित्र होगा। किन्तु महाबल को ऐसा अपरिचित मित्र कहां से मिला ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराजा ने कहा—'नौजवान ! इस घट के समक्ष बैठ जा। इस घट का ढक्कन खोलकर उसमें दायां हाथ डाल। यदि तेरा कथन सही होगा तो तेरा कुछ नहीं बिगड़ेगा। यदि तेरा कथन असत्य होगा तो सर्पदंश से तेरी तत्काल मृत्यु हो जाएगी।'

'मुझे मेरे सत्य पर पूरा विश्वास है'—कहती हुई मलया घट के समक्ष बैठ गई। मन में नवकार महामंत्र का स्मरण करती हुई बोली—'हे सर्पदेव ! यदि मेरा यह कथन कि महाबल मेरा प्रिय मित्र है, उसने ही मुझे ये वस्त्र दिए हैं, सत्य हो तो तुम मुझे मत डसना; अन्यथा मुझे डस डालना।'

ऐसा कहकर मलयासुंदरी ने घट में दायां हाथ डाला। नवकार महामंत्र का जाप चल रहा था।

उसी क्षण वह सर्प मलया के हाथ पर चढ़ा और ललाट पर लगे तिलक को साफ कर डाला और मुंह से लक्ष्मीपुंज हार निकालकर मलया की गोद में डाल दिया। सर्प पुनः घट में चला गया।

सब आश्चर्य की दृष्टि से देखने लगे। एक अद्‌भुत चमत्कार घटित हुआ। मलया के ललाट का तिलक मिटते ही वह सुंदर नारी बन गई…और लक्ष्मीपुंज हार उसकी गोद में चमकने लगा।

वहां बैठे हुए सभी बोल उठे—'निर्दोष ! निर्दोष !'

किन्तु पुरुष से यह नारी कैसे हो गई? लक्ष्मीपुंज हार इस सर्प के पास कहां से आया ? क्या यह कोई देवसर्प है ?

सभी के मन में ऐसे अनेक प्रश्न उभर रहे थे।

किन्तु सबसे अधिक मलया विस्मित हो रही थी। इस सर्प के पास लक्ष्मीपुंज हार कहां से आया ? इस सर्प ने मेरे तिलक को क्यों मिटाया ? इसने मुझे पुरुष से स्त्री क्यों बनाया ? मेरे स्वामी महाबल की जीभ के सिवाय उस तिलक को कौन मिटा सकता है ? क्या यह सर्प कोई देव है ?

महामंत्री ने महाप्रतिहार से कहा—'यह दिव्य-सर्प है। गारुड़िकों को कहो कि वे इस सर्प को जहां से लाएं हैं; वहीं छोड़ आएं। इस सर्प को तनिक भी हानि नहीं पहुंचनी चाहिए; इसकी वे सावधानी रखें। सर्प को दुग्धपान करवाकर भेजना है।'

महाप्रतिहार ने तत्काल घट को ढंका और उसे उठाकर बाहर ले गए।

महाराजा ने कहा—'युवक ! मेरा आश्चर्य सीमा पार कर रहा है। तू पुरुष से नारी कैसे हो गई ?'

'महाराज ! मैं भी इस बात से आश्चर्यचकित हूं। अब तो आपको विश्वास हो गया होगा कि महाबल मेरा परम मित्र है। ये वस्त्र उन्हीं के दिए हुए हैं।'

महाराजा ने कहा—'आज मैं एक महान् अन्याय के दोष से बचा हूं। यदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह दिव्य नहीं किया जाता तो बड़ा अनर्थ हो जाता।'

मलया लक्ष्मीपुंज हार महादेवी को देती हुई बोली—'कुछ भी हो, लक्ष्मीपुंज हार प्राप्त हो गया है। आप निश्चित बनें और युवराजश्री की प्रतीक्षा करें।'

'मेरा महाबल कहां होगा?' महादेवी ने वेदना के स्वरों में कहा।

महामंत्री ने कहा—'महादेवी! जैसे लक्ष्मीपुंज हार मिला है, वैसे ही युवराजश्री भी आ मिलेंगे। आप चिन्ता न करें।'

सूर्यास्त के बाद सभी नगर की ओर चल पड़े।

रथ में बैठने के पश्चात् मलया ने सोचा—रात को जो नारी रूदन कर रही थी, संभव है वह प्रेतनी हो और उसी ने मेरे स्वामी को सर्परूप में बदला हो? क्योंकि मेरे तिलक की और लक्ष्मीपुंज हार की बात उनके सिवाय किसी को ज्ञात नहीं थी।

तत्काल मलया के मन में दूसरा विचार उभरा—यदि उस प्रेतनी ने महाबल को सर्परूप में बदला होता तो यह सर्प इन गारुडिकों के हाथ में नहीं आता।

'तो यह सब क्या है?'

महादेवी ने कहा—'मैं आपको किस नाम से पुकारूं?'

'महादेवी! अब मेरा पुरुषरूप जाता रहा, इसलिए आप मुझे सुंदरी कहकर पुकारा करें।'

'सुंदरी! मैं सोच रही हूं, तेरा यह योनि-परिवर्तन कैसे हुआ?'

बीच में मलया बोली—'महादेवी! संसार की माया विचित्र है। यहां अघटित घटित हो जाता है। इसकी चिन्ता हम क्यों करें? जब आप मेरा पूरा वृत्तान्त जानेंगी, तब आपको अपार हर्ष होगा।'

'तो तू मुझे अपना वृत्तान्त बता क्यों नहीं देती?'

'मेरे मित्र के मिल जाने पर, मैं सब कुछ बता दूंगी। तब तक आपको धैर्य रखना होगा।'

'जैसी तेरी इच्छा।'

रात्रि के दूसरे प्रहर में सब राजभवन में पहुंच गए। उस समय रक्षक ने महादेवी को एक पत्र देते हुए कहा—'चंद्रावती नगरी का एक दूत आया है और उसने एक निमित्तक का यह पत्र दिया है।'

'निमित्तक का पत्र'—महादेवी का आश्चर्य वृद्धिगत हुआ। उसने वह पत्र महाराजा को दे दिया।

किन्तु मलया समझ गई थी। निमित्तक के रूप में महाबल ने ही माता को संदेश-पत्र भेजा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराजा ने संदेश पढ़ा। वे अवाक् रह गए। संदेश महाबल का था और जल्दबाजी में कुछ भी अनर्थ कार्य न करने की प्रार्थना की गई थी।

आश्चर्य! सुंदरी कह रही है कि कल रात महाबल उसके साथ था और संदेश आ रहा है चंद्रावती नगरी से! दोनों में सही कौन?

मलया ने कहा—महादेवीजी! आप एक बार दूत को यहां बुलाएं।'

रक्षक बोला—'महादेवीजी! जब आप धनंजय मंदिर की ओर गई थीं, तब यह दूत आया था। वह पत्र देकर चला गया। जाते-जाते उसने इतना-सा कहा कि यह पत्र महत्त्वपूर्ण है। मैं रास्ते में ज्वरग्रस्त हो गया था, इसलिए दो दिनों की देरी हुई, अन्यथा यह पत्र दो दिन पूर्व ही दे आता।'

महाराजा के सेनाध्यक्ष ने सैनिकों को वन-प्रदेश में महाबल को ढूंढ़ने के लिए भेजा और वह स्थान पर आ पहुंचा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७. अचिन्त्य घटना घटी

सूर्यास्त हो चुका था।

रात्रि आगे बढ़ रही थी। अंधकार धीरे-धीरे छा रहा था। दो घटिका रात बीत गई। योगी अपने कुटीर पर आ पहुंचा। उसने वन-प्रदेश से लाये वनस्पति-द्रव्य एक ओर रखे और वह तत्काल सर्परूपी महाबल के पास पहुंचा।

सर्परूपी महाबल बोलने में असमर्थ था। परन्तु वह असह्य वेदना भोग रहा था। उसको एक बात का संतोष हो चुका था कि उसकी प्रियतमा जीवित है और वह मेरे माता-पिता के पास है। दूसरा संतोष इस बात का था कि लक्ष्मीपुंज हार मिल जाने के कारण माता-पिता का आत्म-दाह रुक गया और महान् अनर्थ टल गया। किन्तु यदि मैं उनसे न मिला तो वे पुनः प्राण-विसर्जन का प्रयत्न करेंगे। परन्तु बुद्धिमती मलया वहीं है। वह स्थिति को संभाल लेगी। संभव है उसने अपना मूल परिचय भी न दिया हो। मेरे बिना वह अपना परिचय कैसे देगी? कौन विश्वास करेगा? संभव है वह मेरी राह देख रही होगी। यदि मैं प्रातःकाल तक वहां नहीं पहुंचा तो विपत्ति आ सकती है। पिताश्री निराश होकर मौत को आमन्त्रित भी कर सकते हैं।

इस प्रकार अनेक विचारों के वर्तुल में महाबल फंस गया था। एक ओर हर्ष का अनुभव हो रहा था तो दूसरी ओर विपत्ति की घनघोर घटा मंडराती-सी दीख रही थी। इसमें भी सबसे बड़ी विपत्ति तो यह हो सकती है कि यदि योगी न आए तो मुझे इसी सर्प योनि में अपना पूरा जीवन बिताना पड़े। कैसे होगा यह? अब मैं कभी इस प्रकार की भूल नहीं करूंगा।

इस प्रकार संकल्प-विकल्पों में उन्मज्जन-निमज्जन करता हुआ महाबलरूपी सर्प नमस्कार महामंत्र का स्मरण करने लगा और उसमें तल्लीन हो गया।

और कुछ ही क्षणों के पश्चात् योगी आ पहुंचा। उसने महाबल रूपी सर्प के फन को पंपोलते हुए कहा—'युवराज! आपने मेरे लिए बहुत कुछ सहा है··· परमात्मा आपका अवश्य कल्याण करेगा।'

ऐसा कहकर योगी ने आकड़े के दूध में कुछ द्रव्य मिलाए और उससे सर्प

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के ललाट पर लगे तिलक को पोंछ दिया। कुछ ही क्षणों के पश्चात् भयंकर सर्प महाबल के मूल रूप में आ गया।

योगी ने पूछा—'किसी प्रकार का कष्ट तो नहीं हुआ?'

'नहीं, योगिराज!'

'आपको भूख लगी होगी?'

'हां, पर मुझे रात्रि-भोजन का त्याग है, इसलिए आप चिन्ता न करें।' महाबल बोला।

फिर दोनों अग्निकुण्ड के पास गए। योगी स्नान से शुद्ध होकर आया। फिर मंत्रोच्चार के साथ अग्नि में विशेष द्रव्य डाले। अग्नि प्रज्वलित हुई, तब योगी ने महाबल से कहा—'युवराज! आज ठीक मध्यरात्रि के समय उस नक्षत्र का योग होगा···किन्तु आज मैं इतनी कड़ी व्यवस्था करूंगा कि कोई भी यक्ष या व्यन्तर देव शव को न ले जा सके···इसलिए आप अब शव को सावधानीपूर्वक ले आएं···आज मेरा यह अनोखा प्रयोग सिद्ध होगा और शताब्दियों के बाद मेरे हाथ से 'स्वर्ण-पुरुष' की सृष्टि होगी।'

महाबल योगी को प्रणाम कर चला और कुछ ही क्षणों में वट-वृक्ष के पास आ पहुंचा। उसने लोभसार के शव की ओर देखा। शव पूर्ववत् लटक रहा था। शव अखंड था। उसमें कोई विकृति नहीं हुई थी। आश्चर्य की बात तो यह थी कि शव से किसी प्रकार की दुर्गन्ध नहीं आ रही थी।

महाबल वट-वृक्ष पर चढ़ा। उसने सबसे पहले शव का परीक्षण किया··· शव निष्प्राण और निश्चेष्ट था। उसने शव की चोटी को पकड़कर वृक्ष से नीचे उतारा और उसे कंधे पर लादकर चल पड़ा। चलते-चलते उसने वट-वृक्ष की ओर एक बार देखा।

योगी ने मंत्रित वर्तुल तैयार कर रखा था। इस वर्तुल में जल और अनेक गंध द्रव्य छिड़के जा चुके थे और अग्निकुंड में अग्नि भी तीव्रता से प्रज्वलित हो गई थी।

महाबल शव को कंधे पर लादे आ पहुंचा। योगी ने शव पर पड़े सारे आवरण हटाए और शव को मंत्रपूत कर महाबल से कहा—'युवराज! शव को इस वर्तुल में रख दो···अब यह शव किसी भी परिस्थिति में यहां से हिल नहीं सकता···कोई भी शक्ति इसको उठाकर नहीं ले जा सकती।'

महाबल ने लोभसार के नग्न शव को सावधानी से वर्तुल में रखा।

योगी ने मंत्रोच्चारण करते हुए शव पर पानी की अंजलियां छोड़ीं। फिर योगीराज ने मंत्रों का उच्चारण करते हुए शव के चारों ओर पानी की कार लगा दी।

फिर योगी ने महाबल को दूसरे वर्तुल में नंगी तलवार हाथ में लिये खड़े

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रहने का निर्देश दिया।

महाबल खड़ा रह गया।

योगी ने महाबल को भी मंत्रपूत किया और आकाश की ओर देखा। फिर उसने आंखें मूंदकर मंत्रोच्चारण प्रारम्भ किया। एक-एक मंत्र के अन्त में वह अग्नि में घृत की आहुति देता और उस समय शव कुछ ऊपर उठता और पुनः नीचे गिर पड़ता।

इस प्रकार दो घटिका बीत गईं और जिस नक्षत्र के योग में यह क्रिया सिद्ध करनी थी, उस नक्षत्र की ओर दृष्टि कर योगी सुवर्ण-पुरुष की सिद्धि का मुख्य मंत्र बोलने लगा।

शव बार-बार उछलने लगा।

योगी के मंत्रोच्चारण का घेरा सघन होता गया। जैसे-जैसे मंत्रोच्चारण का घेरा सघन होता गया, वैसे-वैसे अग्निकुंड की ज्वाला तीव्र होती गई।

और स्वर्णपुरुष की सिद्धि के लिए शव को अग्निकुण्ड में हुत करने की घड़ी निकट आ गई।

महाबल आश्चर्यचकित होता हुआ कभी उछलते हुए शव की ओर देख रहा था और कभी योगी की मुद्राओं को देख रहा था। उसे अब पूरा विश्वास हो रहा था कि योगी का कार्य सिद्ध होगा।

किन्तु अनन्त को मथने वाला मनुष्य आखिर वामन ही तो होता है…

अचानक आकाश में भयंकर शब्द होने लगा। महाबल ने उस शब्द को स्पष्ट रूप से सुना—'योगी! मैंने तेरी अविधि के लिए तुझे एक बार क्षमा दी है परन्तु आज मैं तुझे क्षमा नहीं कर सकता…यह शव अपवित्र है और अपवित्र होने के कारण अयोग्य है।'

योगी कांप उठा…वह कुछ कहे, उससे पूर्व ही उसका शरीर ऊपर उठा और अग्निकुण्ड में जा गिरा।

महाबल अवाक् रह गया। अब क्या करे? शव भी उड़कर चला गया था… महाबल ने सोचा—शव तो अखंड था, फिर भी यह कैसे हुआ…इसमें कुछ अपवित्रता होगी? महाबल इस प्रश्न का समाधान ढूंढ़े, इतने में ही उसका शरीर भी ऊपर उठा और उसके कानों से आवाज टकराई—'नौजवान! साधक और उत्तरसाधक दोनों के प्राण लेना चाहती थी…किन्तु तेरे रूप, यौवन और उदार हृदय से आकृष्ट होकर मैं तुझे प्राणदान देती हूं। शव अपवित्र है। उसके मुंह में स्त्री की नाक है, इसलिए वह अयोग्य है।'

महाबल को कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था…परन्तु उसे यह अनुभव हो रहा था कि कोई उसे उठाकर ले जा रहा है। उसने सोचा—अरे, उस करुण क्रन्दन करने वाली नारी की नाक की बात ही याद नहीं रही, अन्यथा योगी अवश्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बच जाता।

वह कुछ नहीं बोला…जहां लोभसार का शव लटक रहा था, उसी वट वृक्ष की दूसरी शाखा पर वह भी औंधे मुंह लटक गया। उसने देखा, उसके दोनों हाथ नागपाश की भांति जकड़ लिये गए हैं। उसके पैर भी बांध दिए गए हैं। अब यहां से कैसे छुटकारा मिले? इस निर्जन वन-प्रदेश में कौन आकर मुझे बंधन-मुक्त करे?

महाबल को तब लोभसार के शव ने जो भविष्यवाणी की थी, उसकी स्मृति हो आयी। तत्काल वह शांत हुआ। उसने सोचा, नाग के स्वरूप से छुटकारा मिला तो नागपाश में बंध गया। अवश्य ही किसी देवी ने कुपित होकर यह किया है। अरे, मैं योगी को भी नहीं बचा सका। कर्म की गति बड़ी विचित्र होती है। कौन समझ सकता है इसके प्रभाव को? ऐसी स्थिति में धर्म की शरण और स्मरण ही उत्तम है, कल्याणकारी है। यदि कोई मुझे बंधनमुक्त नहीं करेगा तो मुझे इसी प्रकार लटकने-लटकते मौत का वरण करना होगा। मौत न बिगड़े, इसका मुझे ध्यान रखना है। जीवन न सुधर सका तो कोई बात नहीं, मृत्यु को नहीं बिगाड़ना है। उसको सुधारना तो मेरे हाथ में है। महाबल सभी विचारों को दूर कर, नवकार मंत्र का जाप करने लगा। उसने अरिहंत की सौम्य आकृति को हृदय में स्थापित कर नमस्कार महामंत्र की आराधना प्रारम्भ कर दी।

रात्रि की जिस विकट वेला में महाबल भयानक विपत्ति में फंस चुका था, उसी समय सैकड़ों आदमी महाबल की खोज में उस वन-प्रदेश में घूम रहे थे। कुछ सैनिक नदी के तट पर घूम रहे थे, कुछ अन्य दिशाओं में घूम रहे थे, परन्तु कोई भी इस ओर नहीं आ रहा था। वन-प्रदेश इतना गहन था कि यदि कोई इस वटवृक्ष के पास से भी गुजर जाता तो भी उसे लटकते शव नहीं दिख पाते।

महाराजा और महादेवी अत्यधिक चिन्तातुर हो रहे थे। वे बार-बार महाबल के विषय में पूछताछ कर रहे थे।

इस प्रकार आधी रात बीत गई।

महाराजा और महादेवी को नाग से मिले लक्ष्मीपुंज हार के विषय में आश्चर्य हो रहा था। वे सोच रहे थे, नाग कौन था? उसके पास लक्ष्मीपुंज हार कैसे आया? क्या नागदेव था? इस प्रकार के प्रश्नों में दोनों उलझ रहे थे।

इधर मलया अपने खंड में एक शय्या पर सो रही थी। उसे भी नींद नहीं आ रही थी। उसका मन होता कि वह अपना सही परिचय दे दे। परन्तु फिर सोचती, कौन विश्वास कर पाएगा! विपत्ति और बढ़ेगी। महाबल के आने के पश्चात् ही सारा रहस्य खुलेगा। वह सोचती, महाबल कहां होगा? वह नाग कौन था? उसके पास लक्ष्मीपुंज हार कहां से आया? मैंने वह हार तो महाबल को सौंपा था। क्या महाबल नाग बन गया? नहीं-नहीं, मनुष्य नाग कैसे बन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सकता है ? अरे, फिर उसे मेरे तिलक को पोंछने को किसने कहा ? उसने तिलक क्यों पोंछा ? मुझे असली रूप में क्यों लाया ?

मलया को ये प्रश्न व्याकुल कर रहे थे। वह इनका उचित समाधान नहीं निकाल पा रही थी। उसने सोचा, जो नारी क्रन्दन कर रही थी, वह मानवी नहीं, कोई व्यन्तरी होगी। उसी ने मेरे स्वामी को अपने मायाजाल में फंसाया होगा। उसी व्यन्तरी ने नागरूप धारण कर यह सारा कांड किया होगा।

उसे यह कल्पना ही नहीं थी कि परोपकार-परायण उसका स्वामी महाबल एक वट-वृक्ष की शाखा पर नागपाश से जकड़ा हुआ लटक रहा था। उसके पैर ऊपर और सिर नीचे है। यदि समय पर उसे सहायता नहीं मिली तो वह अनन्त वेदना को सहता हुआ प्राण त्याग देगा।

उसे इस वृत्तान्त का पता कैसे चलता ?

संसार विचित्र है। इसमें अचिन्त्य और अकल्पित घटनाएं घटती हैं और अनन्तशक्ति को धारण करता हुआ मानव भी उसके सामने तुच्छ हो जाता है।

महाबल को ढूंढ़ने के लिए गए हुए सैनिकों ने वन का चप्पा-चप्पा छान डाला, पर कहीं भी युवराजश्री का अता-पता नहीं लगा। जो भी, जिधर भी जाता, वह निराश होकर लौट आता। पर प्रयत्न चालू था।

महादेवी की आतुरता बढ़ रही थी। उनके प्राण महाबल की याद में सूख रहे थे। उसने सोचा—मेरे कारण ही तो महाबल घर से निकला था। मेरे कारण ही तो उसको विपत्तियों का सामना करना पड़ा था। अरे, सब कुछ हुआ, पर अब वह है कहां ? क्या वह मर गया ? क्या किसी ने उसका अपहरण कर डाला ? अनर्थ हुआ। मैं अपने इस अपराध के लिए कड़ा प्रायश्चित करूंगी। मुझे प्राण-त्याग करना होगा। यही मेरे लिए श्रेयस्कर है।

महादेवी ने अपना अंतिम निर्णय महाराजा सुरपाल को बताया और प्राण-त्याग की वेला निश्चित कर दी।

इस अप्रत्याशित वृत्तान्त से सारा पृथ्वीस्थानपुर नगर शोक में डूब गया। आबालवृद्ध नर-नारी इस वृत्तान्त को सुनकर दहल उठे। महादेवी अपने निश्चय पर दृढ़ थी। उसे समझाने का प्रयत्न हुआ, पर सब व्यर्थ।

महाराजा सुरपाल भी महादेवी की अतुल व्यथा से व्यथित हो गए। उन्होंने भी आत्मविसर्जन का निश्चय कर लिया और महादेवी के साथ ही जलती चिता में आत्म-दाह करने का विचार व्यक्त किया।

सारा नगर करुण-क्रन्दन से गूंज उठा। सर्वत्र हाहाकार, रुदन और क्रन्दन। अपने प्रियरक्षक महाराजा और महादेवी के आत्मदाह के कथन ने सबको विचलित कर डाला।

इधर मात्र आधे कोस की दूरी पर सघन वन के बीच एक वट-वृक्ष पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

औंधे मुंह लटकता हुआ महाबल अत्यन्त व्यथा का अनुभव कर रहा था। उसने नागपाश को तोड़ने का एक अवसर सूर्योदय के समय प्राप्त कर लिया था। महाबल के दोनों हाथों पर परिवेष्ठित नाग की पूंछ हिलते-डुलते उसके मुंह के पास आ गई थी और तब महाबल ने तत्काल उस पूंछ को दांतों तले दबा दी थी। इससे नाग विचलित हो उठा। उसका बंधन शिथिल हो गया और वह नाग नीचे लटक गया। इतने में ही महाबल ने उस पूंछ को छोड़ दिया। नाग धड़ाम से जमीन पर गिरा और तीव्र व्यथा का अनुभव करने लगा। कुछ ही क्षणों में वह अदृश्य हो गया। महाबल के दोनों हाथ नागपाश के बंधन से मुक्त हो गए थे। किन्तु पैरों का नागपाश ज्यों का त्यों था। वहां तक हाथों का पहुंचना शक्य नहीं था।

जैसे-जैसे सूर्य तपने लगा, महाबल भूख और प्यास से आकुल होने लगा। भूख से भी अधिक पीड़ा होती है प्यास की। किन्तु ऐसे निर्जन स्थान में कौन आए और कौन महाबल को मुक्त करे!

कर्म का परिपाक विचित्र होता है। महाबल तीव्रतम व्यथा का अनुभव कर रहा था। वह उसे अपने ही कर्म का विपाक मानकर धैर्यपूर्वक सह रहा था। उसका मन जिनेश्वर देव के शासन और नमस्कार महामंत्र की परिधि में क्रीड़ा कर रहा था। वह समझता था कि जैसे व्यथा मनुष्य के चित्त में विचलन पैदा करती है, वैसे ही वह मनुष्य को सद्विचारों की ओर भी प्रस्थित करती है। वह यह भी जानता था कि जो जन्मता है वह अवश्य ही मरता है। और जब मृत्यु सामने खड़ी होती है तब मनुष्य को अधिक से अधिक स्वस्थ मन से मृत्यु का आलिंगन करने के लिए तैयार रहना चाहिए।

इन विचारों से ओतप्रोत महाबलकुमार ताप, तृषा और क्षुधा की परवाह किए बिना और अधिक स्थिरता से महामंत्र के जाप में तल्लीन हो गया। उसका मन सभी संसारी संबंधों को तोड़कर एकमात्र नमस्कार महामंत्र में तल्लीन हो चुका था। वह मानता था कि अतिप्रिय वस्तु व्यक्ति के मन में मृत्यु के प्रति भय पैदा कर देती है और तब व्यक्ति आसक्ति से मूढ़ होकर और अधिक रच-पच जाता है।

और तीसरे प्रहर की अंतिम घटिका के समय कर्मनट का अट्टहास रुक गया, उसकी लीला ने एक नया मोड़ लिया।

सैनिक वन-प्रदेश में घूम रहे थे। अलंबादि के पर्वत आज खोज के मुख्य-स्थल बन रहे थे। दस-बारह सैनिकों की एक टोली सीधे रास्ते से न जाकर, वक्रमार्ग से खोज में चल रही थी। उनकी पगडंडी भाग्यवश उसी वट-वृक्ष की ओर आ रही थी। वे सभी सैनिक पगडंडी पर पैर बढ़ाते जा रहे थे और चारों ओर देख रहे थे। अचानक एक सैनिक की दृष्टि वट-वृक्ष की ओर गई और वह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चौंककर चिल्लाया—'बाप रे बाप !'

'क्या है ? सिंह, बाघ या अजगर ?'

'नहीं, नहीं। देखो ! सामने कोई औंधा लटक रहा है। एक नहीं, दो हैं।'

सबने वट-वृक्ष की ओर देखा। सबसे पहले उनकी दृष्टि लोभसार के शव की ओर गई। वह निश्चेतन लटक रहा था। सब चौंके। आगे बढ़ने का साहस टूट गया। एक सैनिक ने कहा—आगे चलो, देखें तो सही क्या मामला है ?'

सबने कहा—'अरे, भूत होंगे।'

वह बोला—'दिन में भूत बेचारे कहां से आयेंगे ?' इतना कहकर वह साहसी सैनिक आगे बढ़ा। शेष सब वृक्ष से दूर ही खड़े रह गए।

साहसी सैनिक ने लोभसार के शव को देखा। वह निर्जीव लटक रहा था। फिर उसकी दृष्टि दूसरे की तरफ गई और वहां अटक गई। वह निकट गया, देखा। महाबल आंखें बंद कर नवकार महामंत्र का स्मरण कर रहा था। उसके होंठ हिल रहे थे।

साहसी सैनिक चिल्ला उठा—'युवराजश्री ! युवराजश्री ! आपकी यह दशा किसने की ?'

युवराज महाबल ने आंखें खोलीं''' अत्यन्त मंद स्वर में बोला—'मेरे पैर नागपाश के बंधन से वट-वृक्ष की शाखा से बंधे हुए हैं। यह पाश ऐसे नहीं खुलेगा। अग्निशलाक से खुल सकेगा।'

वह सैनिक बोला—'युवराजश्री ! आपके माता-पिता आपके वियोग के कारण आत्मदाह करने, अग्नि में झंझापात करने नगर के बाहर चले गए हैं। मैं भागता-भागता जा रहा हूं, आपके मिलन की खबर देकर उनके प्राणों की रक्षा करता हूं। फिर मैं शीघ्र ही आकर आपको बंधनमुक्त कर दूंगा। तब तक आप कुछ और कष्ट सहन करें।'

'हां, भाई ! तू शीघ्रता कर। माता-पिता को समाचार दे। तू मेरी चिन्ता मत कर। यदि तू पहले बंधन खोलने में समय लगाएगा तो संभव है माता-पिता प्राण-विसर्जन कर बैठें। यह अनर्थ हो जाएगा। तू जा, जल्दी जा और उनके प्राणों की रक्षा कर।'

'अब आप निश्चिंत रहें'—यह कहकर सैनिक वहां से दौड़ा। उसके सारे साथी भय से कांपते हुए वट-वृक्ष से दूर ही खड़े रह गये थे। उस साहसी सैनिक ने उन्हें कहा—'चलो, दौड़ो, महाराजा-महादेवी को शुभ समाचार देकर उनके प्राण बचाएं। युवराज मिल गए हैं।'

साहसी सैनिक तेजी से भागा जा रहा था। सभी साथी बहुत दूर पीछे रह गए थे। वह एक ही धुन में दौड़ रहा था।

और वह जब नगर के बाहर पहुंच रहा था तब अपार भीड़ के बीच

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराजा और महादेवी—दोनों जनसमूह को नमस्कार करते-करते अग्निकुण्ड की ओर आगे बढ़ रहे थे। वे मन में नमस्कार महामंत्र और इष्टदेव का स्मरण कर रहे थे।

सारी जनता के नयन अश्रुपूरित थे। बड़े-बूढ़े, छोटे बच्चे, नारी-पुरुष—सब रुदन कर रहे थे।

इतने में ही वह युवक हांफता हुआ वहां पहुंचा और ऊंचे शब्दों में चिल्लाया—'महाराजा को रोको ''युवराश्री मिल गए हैं।'

महाप्रतिहार और महामंत्री ने युवक सैनिक की ओर देखा।

वे दोनों आगे बढ़े और महाराजा से कहा—'कृपावतार! महादेवी को रोकें, युवराजश्री मिल गए हैं।'

सब आश्चर्यचकित रह गए। महाराजा और महादेवी वहीं खड़े रह गए।

चिता प्रज्वलित हो चुकी थी। उसकी लपटें आकाश को छू रही थीं।

महाराजा ने पूछा—'कहां हैं युवराज ?'

साहसी सैनिक बोला—'महाराजश्री ! यहां से आधे कोस की दूरी पर एक वट-वृक्ष है। वहां युवराजश्री एक शाखा से बंधे हुए औंधे मुंह लटक रहे हैं। वे नागपाश के बंधन में बंधे हुए हैं। आप सबसे पहले युवराजश्री को बन्धनमुक्त करने का उपाय करें, फिर आगे की बात पूछें।'

नवयुवक की बात सुनकर वहां उपस्थित मलयासुन्दरी अवाक् रह गई।

महाराजा, सेनाध्यक्ष, महाप्रतिहार तथा कुछ सैनिक अश्वों पर आरूढ़ होकर वट-वृक्ष की ओर चले। साथ में वह सैनिक भी चला।

जनता का कुतूहल भी बढ़ चुका था। वे भी विभिन्न समूहों में विभक्त होकर उसी दिशा में चल पड़े।

महादेवी प्रिय पुत्र की प्रतीक्षा करने लगी। उसकी आंखें पुत्र को देखने के लिए तरस रही थीं।

मलयासुन्दरी का मन प्रिय-मिलन के लिए तड़प रहा था।

सभी के हृदय आतुर थे।

विषाद के क्षण हर्ष में परिवर्तित हो गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८. विपत्ति के बादल फट गए

महाराजा सुरपाल तथा अन्य राजपुरुष उस वट-वृक्ष के पास पहुंच गए, जहां महाबल लटक रहा था।

महाराजा पुत्र की ऐसी अवस्था देखकर चीख पड़े···किन्तु दूसरे ही क्षण वे आश्वस्त होकर वृक्ष पर चढ़ गए। ऊपर जाकर उन्होंने 'विषापहार' मंत्र का स्मरण कर पैरों में बंधे हुए नागपाश बंधन को तोड़ डाला।

मंत्रियों ने युवराज को सावधानीपूर्वक झेल लिया। महाराजा वृक्ष से नीचे उतरे। महाबल ने आंखें खोलीं···पिताश्री सामने ही खड़े थे···अन्य अनेक लोग उपस्थित थे। महाबल ने हाथ जोड़कर पिताश्री को प्रणाम किया।

महाराजा तत्काल जमीन पर बैठ गए। पुत्र के मस्तक को अपनी गोद में लेकर सहलाते हुए बोले—'महाबल ! कैसे हो ? तेरी यह दशा किस दुष्ट ने की ?'

महाबल क्षुधा और पिपासा से पीड़ित हो रहा था। उसने आकाश की ओर देखा। अभी सूर्यास्त नहीं हुआ था। उसमें बोलने की शक्ति नहीं थी। उसने संकेत से पानी मांगा।

उसी समय एक घुड़सवार पानी का घड़ा ले आया और महाराजा ने अपने हाथों से पुत्र को जलपान कराया।

जलपान करने के पश्चात् महाबल कुछ स्वस्थ हुआ। वहां सैकड़ों पौरजन आ पहुंचे थे और वे जोर-जोर से युवराज की जय-जयकार कर रहे थे।

महाबल बैठने लगा। इतने में ही महाराजा ने कहा—'नहीं-नहीं, वत्स ! कुछ समय तक विश्राम और करो।

'पिताश्री ! अब मैं स्वस्थ हूं। मुझे और कोई वेदना नहीं है, आप चिन्ता न करें।'

उसने पुनः एक बार जलपान किया और खड़े होकर हाथ-पैरों को इधर-उधर कर अपनी अकड़न मिटायी।

महामंत्री ने युवराज का हाथ पकड़ा। युवराज ने मुसकराते हुए कहा—'अब मैं पूर्ण स्वस्थ हूं। बंधन की अवस्था के कारण शरीर मात्र अकड़ गया था।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराजा ने पूछा—'पुत्र ! किस दुष्ट ने तेरी यह दशा की ?'

'पिताश्री ! इसकी कहानी बहुत लम्बी है। फिर कभी सुनाऊंगा। मातुश्री कुशल से हैं न ?'

'तेरे वियोग की व्यथा से पीड़ित होकर वे मृत्यु का वरण करने आयी थीं। इतने में ही भाग्यशाली युवक सैनिक ने तेरे जीवित रहने की सूचना दी और वह दुर्घटना टल गई।'

महाराजा ने युवक सैनिक को पास बुलाया और कहा—'तू मुझे सभा-भवन में मिलना।'

सैनिक प्रणाम कर चला गया।

वहां से प्रस्थान कर सभी नगर के परिसर में आए। वहां हजारों की भीड़ युवराज को देखने, स्वागत करने की प्रतीक्षा कर रही थी। युवराज को देखते ही आकाश जय-जय की ध्वनि से गूंज उठा।

युवराज राजभवन में पहुंचे। दूर से अपने एकाकी पुत्र को आते देख महादेवी उस ओर दौड़ी। उसे अपार हर्ष हो रहा था। महाबल ने आते ही मातुश्री के चरण छुए। माता ने उसे छाती से चिपका लिया। उसकी आंखों से हर्ष के आंसू उमड़ पड़े। वह बोल नहीं सकी। वहां खड़े सभी दास-दासी रो पड़े। माता-पुत्र का मिलन हृदय को द्रवित करने वाला था। माता ने कहा—'वत्स ! यदि आज तू नहीं मिलता तो मैं प्राण-विसर्जन कर देती। मेरा भाग्य, तू आ गया। यह सारा पुण्य का प्रभाव है। वत्स ! एक अनोखी बात है। तेरा मित्र सुन्दरसेन यहां आया था। वह पुरुष से स्त्री बन गया। अभी तक उसने अपना परिचय नहीं बताया है।'

'मां ! यह मेरे मित्र से अधिक है...मेरी जीवनसंगिनी है...मैं सारा वृत्तान्त फिर सुनाऊंगा। पहले आप हम दोनों को आशीर्वाद दें'—कहते हुए महाबल ने मलया की ओर संकेत किया। मलया महाबल के पास आ गई। दोनों ने माता-पिता को चरण छूकर नमस्कार किया।

माता-पिता अवाक् रह गए। महाबल यह क्या कह रहा है ? महाबल ने पिताश्री की उलझन को कुछ सुलझाते हुए कहा—'पिताश्री ! यह आपके परममित्र महाराजा वीरधवल की कन्या राजकुमारी मलयासुन्दरी है। मैंने स्वयंवर में इसे पाया है।'

रानी पद्मावती ने तत्काल मलया को छाती से लगाते हुए कहा—'बेटी ! तूने यह बात पहले क्यों नहीं बतायी ?'

'मां ! वह परिस्थिति ऐसी थी कि मेरी बात पर किसी को विश्वास नहीं होता।'

रानी पद्मावती बोली—'बेटी ! तुझे क्षमा करना होगा। हमने तेरे से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'दिव्य' करवाकर अपराध किया है।'

बीच में ही मलया ने कहा—'उस दिव्य के कारण ही सारी स्थिति में परिवर्तन आया है और आपके मूल्यवान् प्राणों का रक्षण हुआ है।'

रात बीत रही थी। रात्रि का दूसरा प्रहर बीतने वाला था।

सभी निद्राधीन हो गए।

मलया बहुत थकी हुई थी, फिर भी वह प्रातः जल्दी उठ गई। उसने देखा, महादेवी अभी सो रही है। मलया शय्या पर बैठे-बैठे ही नवकार महामंत्र का जाप करने लग गई।

स्वयंवर के दूसरे दिन महाबल और मलयासुन्दरी मधुरयामिनी का आनन्द लेने भट्टारिका देवी के मन्दिर पर गए थे और उसके पश्चात् उन दोनों की मिलन-घड़ी विपत्ति में फंस चुकी थी।

अब विपत्ति के सारे बादल छिन्न-भिन्न हो गए थे और दोनों के जीवन में नया प्रभात नयी उमंगें लेकर आया था।

मलया ने जब नवकार मंत्र का जाप पूरा किया; तब सूर्योदय हो चुका था। महादेवी भी जाग गई थी।

दूसरे दिन।

राजभवन में सभा जुड़ी। हजारों लोग उपस्थित थे। राज-परिवार के सभी सदस्य आ पहुंचे थे। सभी के मन महाबल से वृतान्त सुनने को उत्सुक थे।

महाबल ने अथ से इति तक सारा वृत्तान्त सुनाया।

श्रोता आश्चर्यचकित हो महाबल की ओर देखने लगे। वे महाबल के साहस, विवेक और धैर्य की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे।

महाराजा ने पूछा—'पुत्र ! लोभसार की पत्नी फिर कहां गई ?'

'पिताश्री ! मुझे पता नहीं। वह अपने गुप्त-स्थान की ओर चली गई थी।'

'महाबल ! और सभी आश्चर्यों से अत्यन्त दुःखद घटना यदि कोई घटित हुई है तो वह है योगी का मरण। बेचारा थोड़े दोष के कारण मारा गया।'

'हां, पिताजी ! यह मेरी असावधानी का ही परिणाम है। यदि मैं शव के मुंह का परीक्षण कर लेता तो उसके मुंह से स्त्री की कटी नाक निकाल लेता··· किन्तु जब शव उड़कर चला गया, तब मैं उस आश्चर्य में उलझ गया···मुझे कुछ भी याद नहीं रहा।'

महाराज ने पूछा—'महाबल ! क्या वह योगी पूरा जलकर राख हो गया था या किसी ने उसे अग्निकुण्ड से बचा लिया ?'

'पिताश्री ! मैंने योगी को अग्निकुण्ड में गिरते देखा था···फिर मुझे वट-वृक्ष की डाल पर बांध दिया गया। आप साथ चलें तो अभी वह सारा देख लेते हैं'। महाबल ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराजा ने कहा—'वत्स ! अब तुझे नहीं जाना है । मैं स्वयं उसकी खबर ले लूंगा ।'

'पिताजी ! विपत्ति बार-बार नहीं आती और जो आती है उसे रोका भी नहीं जा सकता । मैं अब स्वस्थ हो चुका हूं । आप चलें ।'

जब वे अग्निकुण्ड के पास आए, तब दिन का दूसरा प्रहर चल रहा था ।

अग्निकुण्ड ठंडा हो चुका था । अग्निकुण्ड की ओर दृष्टि जाते ही महाबल चौंका । अग्निकुण्ड में स्वर्ण पुरुष पड़ा था । उसका रूप योगी का-सा था । उस पर सूर्य की किरणें पड़ रही थीं और वह स्वर्ण-पुरुष दूसरे सूर्य की भांति चमक रहा था ।

महाबल बोला—'महाराजश्री ! योगी स्वयं स्वर्ण-पुरुष बन गया । उसकी सिद्धि सिद्ध हो गई ।···पर बेचारा इस सिद्धि का उपयोग···?'

सब आश्चर्य से अवाक् होकर देख रहे थे ।

'पिताश्री ! इस स्वर्ण-पुरुष की महत्ता बतलाते हुए योगी ने मुझे कहा था कि संध्या के समय स्वर्ण-पुरुष के मस्तक को छोड़कर कोई भी अंग काटा जाता है तो वह अंग प्रातः होते-होते ज्यों का त्यों निर्मित हो जाता है । इस प्रकार इस स्वर्ण-पुरुष से अटूट स्वर्ण की प्राप्ति हो सकती है ।' महाबल ने कहा ।

महामन्त्री बोला—'महाराजश्री ! इस स्वर्ण-पुरुष को हम अपने कोशागार में ले चलें और इसका उपयोग प्रजा के कल्याण के लिए करें । इससे प्रजा सुखी होगी और योगी की स्मृति भी बनी रहेगी ।'

वे स्वर्ण-पुरुष को लेकर राजभवन में आ गए ।

दिन बीत गया । संध्या आयी । वह भी बीत गई । देखते-देखते रात्रि का प्रथम प्रहर भी बीत गया ।

आज मिलन-यामिनी थी ।

युवराज नववधू के साथ शयन-कक्ष में गए । वह अत्यन्त सुन्दर और सज्जित था । मलया का हृदय तरंगित था ही, उस अनुकूल सामग्री से और अधिक तरंगित हो उठा ।

युवराजश्री शयन-कक्ष में आए । मलया के लिए नियुक्त तीन दासियां—अनुरेखा, अपर्णा और यक्षदत्ता वहीं थीं । यक्षदत्ता विनोदप्रिय थी । युवराज को देखते ही बोली—'पधारो, युवराजश्री ! दर्द और विवशता के बादल हट गए हैं । पृथ्वीस्थानपुर में अमृत बरसाने वाला चांद गगन में आने का साहस नहीं कर रहा है···क्योंकि इस कक्ष में चन्द्रमा को भी लज्जित करने वाली मेरी चन्द्रानना देवी आपका इन्तजार कर रही हैं ।'

हंसते-हंसते युवराज खंड के बीच बिछे पंलग पर जा बैठे ।

दासियां चली गईं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल और मलया दोनों देर रात तक बातचीत करते रहे। मिलन की यामिनी बीतने लगी और दोनों···

आज दोनों की चिरवांछित मिलन-यामिनी थी।

दोनों के चिर-स्वप्न की एक मंगलमय माला थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६. वर की अग्नि

एक दिन मलया और महाबल—दोनों वातायन में बैठे-बैठे नगर की सुषमा देख रहे थे। अचानक महाबल की दृष्टि राजभवन के प्रांगण की ओर गई···देखते ही वह चौंका। जिसकी नाक कट गयी थी, वह स्त्री आ रही थी। कुछ क्षणों तक देखने के पश्चात् उसने विस्मय से मलया को कहा—'प्रिये! देख, वह स्त्री जो आ रही है, वही उस दिन वन-प्रदेश में करुण क्रन्दन कर रही थी। उसके प्रियतम के शव ने उसकी नाक काट खाया था। संभव है वह यहीं आ रही है।'

मलया भी उस स्त्री को देखकर चौंकी। वह तत्काल अपनी अपरमाता कनकावती को पहचान गई। उसने सोचा, एक महाराजा की पत्नी की यह दुर्दशा? राजसुख को छोड़कर एक चोर के पाले पड़ना पड़ा! ओह! कर्म का विपाक आदमी को कहां से कहां ला पटकता है!

'स्वामी! आपने इस स्त्री को नहीं पहचाना?'

'मुझे ठीक याद है कि यह वही स्त्री है।'

'यह कथन ठीक है। पर क्या आप इसका नाम जानते हैं?'

'नहीं।'

'यह मेरी अपरमाता कनकावती है।'

'ओह! मैंने तो इसे उस रात्रि को देखा था···किन्तु तू अन्दर चली जा··· संभव है तुझे देखकर यह कोई भी बात न बताए।'

मलया उठकर भीतर के कक्ष में चली गई।

थोड़े समय पश्चात् एक दासी ने कक्ष में प्रवेश कर युवराजश्री से कहा—'महाराजकुमार! एक बहन आपसे मिलना चाहती है।'

'ठीक है, उसे ससम्मान अन्दर ले आ।'

प्रणाम कर दासी चली गई।

कुछ समय बाद वह कनकावती को साथ लेकर खंड में आयी।

युवराज ने खड़े होकर कनकावती की ओर देखते हुए कहा—'पधारो! मैंने आपको अपना सामान्य परिचय मात्र दिया था···किन्तु आपने मुझे आपके निवास-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थान के विषय में कुछ भी नहीं कहा, अन्यथा मैं स्वयं वहां आकर आपकी सार-संभाल करता।'

'कुमारश्री! मुझे मात्र इतना ही याद रहा था कि आप इस राज्य के राजकुमार हैं···मैं कल नगर में आ पहुंची थी। मेरा आने का उद्देश्य है आपसे मुलाकात करना।'

'आप निश्चिन्त होकर मुझे सारी बात कहें। सेवा हो तो बताएं। क्या आपकी नाक का घाव भर गया?'

'हां, किन्तु नाक के कटने का चिह्न रह गया है।'

'देवी! क्या आप अकेली ही वहां रहती हैं या अन्य पुरुष भी हैं?'

'कुमारश्री! मैं वहां अकेली ही रहती थी। मुझे अलभ्य सुख का लाभ मिला था···किन्तु उसका उपभोग भाग्य में नहीं था, इसलिए ज्यों-ज्यों वह प्राप्त होता गया, त्यों-त्यों छूटता गया।'

'देवी! कर्मों के विपाक दुष्कर होते हैं। यह सारी उन्हीं की माया है।'

'कुमारश्री! मैं एक प्रयोजन को लेकर आयी हूं। मैं आपबीती आपको क्या बताऊं? मेरा नाम कनकावती है। मेरे स्वामी ने मुझे बिना किसी अपराध के घर से निकाल डाला। एक धूर्त नवयुवक ने मुझे मायाजाल में फंसाया और एक पेटी में बंद कर नदी में बहा दिया। वह पेटी एक यक्ष-मन्दिर के किनारे अटक गई और तब मुझे लोभसार चोर के साथ जाना पड़ा। उसने मुझे हृदय की रानी बनाया। भोग भोगने की लालसा उद्दाम हुई। पर वह भाग्य में नहीं था। मेरा प्रियतम मारा गया। शत्रुओं ने उसे वट-वृक्ष पर लटका दिया। मैं प्रियतम की टोह में घर से निकली। खोजते-खोजते उस वट-वृक्ष के पास पहुंची। लटकते शव को पहचानकर मैं करुण क्रन्दन करने लगी। मुझे भारी आघात लगा। नारी के पास रुदन के सिवाय और है ही क्या! फिर आप आए···'

'ओह! आपने बहुत कष्ट सहे। आप अब आने का प्रयोजन बताएं?'

'कुमारश्री! महाचोर लोभसार ने लूट-लूटकर अपार संपत्ति एकत्रित की है। वह सारी उसके गुप्त भंडार में सुरक्षित है। ऐसे आह भरे धन का परिणाम भयंकर होता है और उसने वह परिणाम भोगा है। मुझे भी वैसा दारुण परिणाम नहीं भोगना पड़े, इसलिए आपके पास आयी हूं···आप लोभसार की अपार संपत्ति को यहां जैसे भी लाना चाहें ले आएं और उसका उपयोग करें।'

'आपके विचार बहुत उत्तम हैं। निश्चित ही चोरी के धन के पीछे लोगों की आंहों से निकले दर्द-भरे निःश्वास होते हैं और वे इस धन का उपयोग करने वाले व्यक्ति को कभी सुख की नींद नहीं सोने देते। लोभसार के गुप्त खजाने का माल उन्हीं के मूल स्वामी को प्राप्त हो, ऐसा ही कोई प्रयत्न करना होगा।'

एक दासी दूध का पात्र और मिष्टान्न लेकर आयी। महाबल के आग्रह से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कनकावती ने मिष्टान्न खाया, दूध पीया···उसने सोचा, एक दिन वह था जब मैं स्वयं राजभवन में इस प्रकार आतिथ्य किया करती थी।

अल्पाहार से निवृत्त होकर कनकावती महाबल के साथ महाराजा सुरपाल के पास गयी और लोभसार की संपत्ति के विषय में सारी बात कही।

महाराजा ने तत्काल महामंत्री को बुलाकर कहा—'यह देवी धन्यवादार्ह है। इतनी संपत्ति को भला कौन छोड़ सकता है?'

'देवी! लोभसार के खजाने में कितना धन होगा?'

'दस-बारह गाड़ियां भर सकें, इतना धन तो अवश्य ही होगा।' कनकावती ने कहा।

महाराजा ने महामंत्री को व्यवस्था करने के लिए कहा।

महाराजा ने पूछा—'देवी! आप कहां रहती हैं?'

'एक पांथशाला में।'

'नहीं, देवी कनकावती! आप हमारी अतिथि हैं। यहां अतिथिगृह में आ जाएं। सारी व्यवस्था हो जाएगी।'

कनकावती राजभवन के अतिथिगृह में आ गयी।

महाबल और मलयासुन्दरी ने कनकावती का सही परिचय किसी को नहीं बताया।

दूसरे दिन उस अटूट संपत्ति को हस्तगत करने बीस-पचीस गाड़ियां और अनेक सैनिक तथा अन्यान्य साधनों को लेकर बीसों व्यक्ति लोभसार के भंडार की ओर चले।

संध्या के बाद सब वापस आ गए। लोभसार की संपत्ति से अठारह गाड़ियां भरी थीं।

उस सम्पत्ति को नगर के एक विशाल मकान में रखने की व्यवस्था की गयी और सारे नगर में तथा आस-पास के प्रदेश में यह घोषणा करवायी गई कि प्रमाण देकर अपना-अपना लूटा हुआ माल ले जाएं। यह बात वायुवेग की भांति फैल गयी और लोग सबूत देकर अपना-अपना सामान ले जाने लगे।

चार महीने तक यह कार्य चलता रहा।

लोगों ने राजा की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

इतना देने पर भी अटूट संपत्ति शेष रह गयी। महाराजा ने कनकावती को जितना चाहा उतना धन दिया और शेष धन जन-कल्याण के लिए रख दिया।

मलया और महाबल के सुमधुर जीवन-स्वप्न में आनन्द की एक नूतन रेखा उभरी।

मलयासुन्दरी गर्भवती हो, ऐसे लक्षण प्रतीत होने लगे।

राज-परिवार की दाई ने भी मलया का परीक्षण कर इसी बात की पुष्टि की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलयासुन्दरी को गर्भ धारण किए तीन महीने पूरे हो चुके थे।

कनकावती कभी-कभी राजभवन में आती-जाती थी। वह महारानी पद्मावती से मिलती और कभी-कभी युवराज महाबल से भी मिलने आ जाती। मलया उससे दूर ही रहना चाहती थी; क्योंकि संभव है उसको वहां देखकर वह क्षोभ का अनुभव करे।

किन्तु एक दिन…

महाबल और मलयासुन्दरी राजभवन के उपवन में घूम रहे थे और उस समय उधर से कनकावती निकली। उसने मलया को देखा और तत्काल पहचान लिया। उसके मन में वैर की अग्नि भभक उठी। जिस अग्नि पर राख आ चुकी थी, वह अकस्मात् हटी और अग्नि तीव्र वेग से धधकने लगी। उसने मन-ही-मन सोचा—मलया यहां कैसे? क्या यह अंधकूप से जीवित निकल गयी? क्या इसका विवाह महाबल के साथ हुआ है? अरे, रात को जो मेरा रुदन सुनकर आया था, वह महाबलकुमार ही होना चाहिए।

जब वैर की अग्नि प्रचंड वेग से धधकती है, तब आदमी की शांति भंग हो जाती है और उसका विवेक नष्ट हो जाता है।

कनकावती अपने मकान में चली गयी…किन्तु उसके मन में एक ही बात घुलने लगी…जिस दुष्ट कन्या के लिए मुझे अपना सुख छोड़ना पड़ा और दर-दर भटकना पड़ा, वह कन्या आज अपने प्रियतम के साथ अनुपम सुख भोग रही है।

नहीं-नहीं; इस सुख में मुझे आग लगानी ही पड़ेगी…मेरा सच्चा आनन्द और सुख मलया की वेदना में छिपा है।

उसने मन में निश्चय कर लिया—मलया के साथ परिचय बढ़ाना और अवसर मिलने पर वैर का बदला लेना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०. हृदय का दंश

विचित्र है यह संसार ! जहां अनेक बार चतुर और राजनीतिकुशल व्यक्ति भी मार खा जाते हैं, तो वहां महाबल जैसे सहृदय और परोपकारी व्यक्ति यदि मार खा जाए तो इसमें कोई नयी बात नहीं है।

वह जानता था कि रानी कनकावती के मन में मलयासुन्दरी के प्रति विष भरा है और उसके कारण ही मलया को अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ा था। इतना ही नहीं, वह यह भी जानता था कि जो नारी अपनी कुल-मर्यादा और शील का रक्षण भी नहीं कर पा रही है, उसे अपने ही राजभवन के एक कक्ष में रहने की अनुमति देना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं है, फिर भी महाबल ने उसे आश्रय दिया। उसने समझ लिया कि इस नारी ने लोभसार चोर की सारी संपत्ति को संभलाकर अपने दोषों का प्रायश्चित कर लिया है। मलया ने भी यही सोचा था।

दिन बीतने लगे।

मलया का गर्भ बढ़ने लगा। सात महीने पूरे हो गए। महाबल भी राज्य के कार्यों में व्यस्त हो गया। कनकावती ने राजभवन में जाना-आना बढ़ाया और जब भी वह आती तब मलया के प्रति अटूट प्रेम का दिखावा करती।

पृथ्वीस्थानपुर में अचानक महामारी का प्रकोप हुआ।

एक दूसरा गंभीर प्रश्न भी पूरे राज्य के समक्ष उपस्थित हो गया।

नगर से पचीस कोस की दूरी पर, राज्य की सीमा के अन्तर्गत, एक प्रदेश में डाकू पल्लीपति ने अपना सिर उठाया। वह यदा-कदा अनेक गांवों में डाका डालने लगा और राज्य के पूरे रक्षकवर्ग को परेशानी में डाल दिया। इस पल्लीपति डाकू को पकड़ने के लिए राज्य का सेनाध्यक्ष अपने पांच सौ सैनिकों के साथ गया था, परन्तु बुरी तरह हारकर खाली हाथ लौटा। महाराजा सुरपाल और उनका मंत्रीमंडल बहुत चिंतित हो उठा। उन्हें आशंका थी कि यह अ-भीत डाकू कभी-न-कभी पृथ्वीस्थानपुर के बाजार को लूटेगा।

इन संवादों से राज्य की सारी जनता त्रस्त थी और वह इतस्ततः अव्यवस्थित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हो रही थी। एक ओर महामारी का प्रकोप और दूसरी ओर डाकू का महान् आतंक।

महाराजा सुरपाल ने पल्लीपति के प्रश्न का समाधान पाने के लिए महाबलकुमार से पूछा—'पुत्र ! पल्लीपति के बारे में सुना तो है ?'

'हां, पिताश्री ! हमें इस समस्या का समाधान तत्काल करना होगा।'

'तुम्हारा कथन उचित है। मैं स्वयं उससे निपटने के लिए प्रस्थान करने की बात सोच रहा हूं।'

'नहीं, पिताश्री ! यह कोई बहुत बड़ी समस्या नहीं है, जिससे आप को स्वयं जाना पड़े। आप आज्ञा दें तो मैं उस दुर्दान्त डाकू को सदा-सदा के लिए समाप्त कर विजय प्राप्त कर आऊं।'

'नहीं, पुत्र ! मैं तुझे इस विकट परिस्थिति का सामना करने के लिए प्रस्थान करने की आज्ञा नहीं दे सकता। फिर युवराज्ञी मलयासुन्दरी को सातवां मास चल रहा है। मैं ही दो-चार दिनों में यहां से निकल पड़ूं तो अच्छा है।'

'पिताश्री ! यह नहीं हो सकता। मैं यहां बैठा रहूं और आप भयंकर विपत्ति का सामना करने जाएं, यह मेरे लिए कभी उचित और शोभास्पद नहीं होगा।'

पुत्र के अत्याग्रह को देखकर महाराजा ने आज्ञा दे दी।

महाबलकुमार ने माता को भी समझा-बुझाकर अपने पक्ष में कर लिया।

और रात को उसने मलया से कहा—'प्रिये ! मैं कल प्रातःकाल पल्लीपति को नष्ट करने के लिए प्रस्थान करूंगा। उस कार्य में एक-आध महीना लग सकता है। मैं विजय प्राप्त कर शीघ्र ही लौट आऊंगा।'

'स्वामी ! मैं आपको अकेले नहीं जाने दूंगी। मैं भी साथ ही चलूंगी।' मलया ने कहा।

'मलया !' 'हंसते हुए महाबल ने कहा—'अभी तेरी स्थिति मेरे साथ चलने योग्य नहीं है। एक-दो महीने बाद तू मां होने वाली है। ऐसी स्थिति में मैं तुझे साथ कैसे ले जाऊं ?'

'तो फिर आप भी न जाएं···महाबलाधिपति को भेज दें। मैं आपके बिना एक क्षण भी नहीं रह सकती।' मलया ने दर्दभरे स्वरों में कहा।

'मलया ! तू क्षत्राणी है। ऐसी निर्बलता तुझे शोभा नहीं देती। जो नारी साहस कर अकेली मगधा वेश्या के यहां रहकर रानी कनकावती से बहुमूल्य हार ले आए, वह नारी क्या अपने पति को कर्तव्य-च्युत होने की बात कहेगी ? नहीं, मलया ! तू धैर्य रख, मैं शीघ्र ही लौट आऊंगा। एक महीना लंबा नहीं होता। दिन बीतते पता ही नहीं लगेगा।'

मलया ने भारी हृदय से पति को स्वीकृति दे दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और प्रातःकाल होते ही महाबल दो सौ वीर सैनिकों को साथ ले उस दुर्दान्त डाकू पर विजय प्राप्त करने चल पड़ा।

रानी कनकावती के हृदय में यह निश्चय हो चुका था कि मलया ने ही महाराजा वीरधवल के समक्ष मेरी बात असत्य प्रमाणित की थी और उसी ने मेरी स्थिति को खराब किया था। यदि मलया मेरी बात को असत्य प्रमाणित नहीं करती तो मैं आज दर-दर की भिखारिन नहीं बनती।

महाबल के प्रस्थान करते ही रानी कनकावती अवसर की टोह में रहने लगी कि जिससे मलया के सुख में आग लग जाए और उसके हृदय की आग ठंडी हो जाए।

जिसके हृदय में वैर और ईर्ष्या की आग धधकती है, वह दूसरों को ही नहीं जलाता, अपने आपको भी भस्मसात् कर डालता है। किन्तु कितना अज्ञान! मनुष्य इस भट्ठी में जलते हुए भी नहीं समझ सकता।

कनकावती प्रतिदिन मलया के पास आती और उससे प्रेमभरी बातें कर उसका मन बहलाती।

महाबल को प्रस्थान किए एक सप्ताह बीत चुका था। कनकावती ने अपने प्रेमपूर्ण व्यवहार से मलया के हृदय को जीत लिया। मलया ने सोचा, कनकावती का हृदय स्नेह और ममता से परिपूर्ण है।

दूसरी ओर महामारी का प्रकोप दिनोंदिन बढ़ता जा रहा था। अब दो-चार नहीं, प्रतिदिन दस-बीस व्यक्ति मरने लगे। राज्य के वैद्यों को एकत्रित कर महामंत्री ने उपायों की खोज की। उन्होंने विविध प्रकार के द्रव्यों के मिश्रण से निष्पन्न धुआं सारी नगरी में प्रसृत कराया। लोगों को अनेक गुटिकाएं बांटीं, जिससे महामारी के कीटाणु नष्ट हो जाएं।

महामारी के भय से त्रस्त होकर नगर के अनेक साधन-संपन्न व्यक्ति अन्यत्र चले गए।

मलयासुन्दरी कनकावती के साथ बातचीत करते-करते दिन बिता देती थी, किन्तु रात्रि में उसे पति की चिन्ता सताती रहती थी। एक दिन मलया ने ही कनकावती से कहा—'देवी! यदि रात-भर आप मेरे पास ही रहें तो मुझे आनन्द होगा, मेरा मन लगा रहेगा और अन्यान्य संकल्प-विकल्पों से मैं मुक्त रहूंगी।'

'मेरा अहोभाग्य! मैं आपके पास सो जाऊंगी।' कनकावती ने प्रसन्नता के स्वरों में कहा।

और उसी दिन से कनकावती मलया के कक्ष में दिन-रात रहने लग गई।

दो-चार दिन बीते। एक दिन कनकावती ने मलया से कहा—'बेटी! दो दिनों से मुझे ऐसा आभास हो रहा है कि तेरे गर्भ को नष्ट करने के लिए कोई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राक्षसी आती है। कल रात मैं उस वातायन में खड़ी थी। मैं जागती रही। मैंने देखा और उसे ललकारा। वह चली गयी। परन्तु वह लौटकर न आए, इसलिए मैं एक उपाय करना चाहती हूं।'

मलया ने प्रश्नभरी दृष्टि से कनकावती की ओर देखा।

कनकावती बोली—'राक्षसी के सामने मैं भी राक्षसी का रूप धारण कर उसे ललकारूं तो संभव है वह भयभीत होकर फिर यहां कभी आने का साहस न करे। मैं कुछ मंत्र-तंत्र भी जानती हूं। यदि तुझे कोई आपत्ति न हो तो मैं यह करना चाहती हूं।'

मलया ने सहज स्वरों में कहा—'मां! आप मेरी बहुत देख-भाल, सार-संभाल कर रही हैं। मेरे हित के लिए आप जो करना चाहें, करें।'

'तो मैं कुछ ही समय में लौट आती हूं। कुछ साधन जुटाने पड़ेंगे।' कहती हुई कनकावती खड़ी हुई और मलया के मस्तक पर हाथ रख, बाहर चली गयी।

मलया को बरबाद करने का उसे यह स्वर्णिम अवसर मिल गया। वह अपने कक्ष की ओर नहीं गई। वह महाराजा सुरपाल के कक्ष की तरफ चली।

महाराजा को नमन कर खड़ी रह गयी। महाराजा ने पूछा—'युवाराज्ञी प्रसन्न रहती हैं न?'

'हां, महाराज!···किन्तु यदि आपकी दृष्टि कठोर न हो तो मैं एक हित की बात कहना चाहती हूं।'

'बोलो, जो कुछ कहना चाहो, निःशंक होकर कहो।'

कनकावती बोली—'महाराजश्री! नगरी में महामारी फैल रही है। हजारों उपाय कर लेने पर भी वह काबू में नहीं आ रही है। इसका कारण कुछ और है। कोई योजनापूर्वक इसे संचालित कर रहा है।'

'योजनापूर्वक कोई कर रहा है? यह समझ में नहीं आया।'

'महाराज! ऐसा नीच कार्य करने वाला मंत्र-तंत्र का जानकार होता है और राक्षसी का रूप धारण कर रोग फैलाता है। गत दो रात्रियों से मैं यह सारा प्रत्यक्ष देख रही हूं।'

'आप क्या कह रही हैं? कौन है वह? ऐसा करने का प्रयोजन ही क्या है? निर्दोष प्रजा का प्राण लूटने वाला कौन है वह दुष्ट?'

'कृपावतार! मैं आपके समक्ष उसका नाम लेने में कांपती हूं···किन्तु राजपरिवार और पौरजनों की हितकामना से प्रेरित होकर मैं आपके पास उपस्थित हुई हूं।'

'आप बिना संकोच किए सारी बात स्पष्ट कहें।'

'कृपावतार! यह सारा कार्य दूसरा कोई नहीं, आपकी पुत्रवधू मलयासुंदरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर रही है।'

'क्या ? यह कभी नहीं हो सकता···!' कहकर महाराजा खड़ हो गये।

कनकावती ने तत्काल कहा—'मुझे विश्वास था कि आप मेरी बात नहीं मानेंगे···किन्तु मैंने यह सारा प्रत्यक्ष अपनी आंखों से देखा है—दो दिन से मैं नींद का बहाना कर सो जाती हूं और फिर जो कुछ होता है, वह देखती हूं।'

'किन्तु मलयासुंदरी तो एक धर्मनिष्ठ और संस्कारी···'

बीच में ही कनकावती बोल पड़ी—'मेरी बात पर विश्वास करने का एक सरल उपाय है।'

कौन-सा उपाय ?'

'आपकी पुत्रवधू मध्यरात्रि के समय शयनकक्ष के वातायन में राक्षसी का रूप बनाकर घूमती है और हाथों की मुट्ठियों से चारों ओर कुछ फेंकती है। आप रात को कहीं छिपकर यह सारा दृश्य देख सकते हैं। यहदृश्य केवल आपको ही दीखेगा, दूसरों को नहीं।'

'ओह कनकावती ! यदि यह बात असत्य हुई तो···'

'महाराज ! आपकी पुत्रवधू को मैं अपनी पुत्री के समान मानती हूं···मेरा उस पर अपार स्नेह है···आपके पुत्र ने मेरा कितना उपकार किया है, फिर मैं असत्य क्यों कहूंगी ! फिर भी यदि आपको विश्वान न हो, मेरी बात असत्य निकले तो आप मेरा सिर मुंड़वाकर गधे पर बिठाकर सारे नगर में घुमाएं और फिर किस वन-प्रदेश में छोड़ दें।'

कुछ क्षणों तक चिन्तन करने के पश्चात् महाराजा ने कहा—'आपने यह बात और किसी से तो नहीं कही है ?'

'नहीं; महाराज ! नहीं···क्या ऐसी बात किसी को कही जा सकती है ?'

'ठीक है। आज रात्रि में मैं यह दृश्य देखूंगा। आप यह बात मन में ही रखें।' महाराजा ने कहा।

वैर की तृप्ति के लिए छोड़ा गया विषबाण राजा को लग चुका था।

अत्यन्त प्रसन्न होती हुई कनकावती वहां से अपने निवास-स्थान पर आयी और राक्षसी के रूप-निर्माण के अनुरूप सामग्री लाने के लिए बाजार की ओर चल पड़ी।

कनकावती का हृदय आज आनन्द से उछल रहा था। आज उसके बैर की तृप्ति होने वाली थी। उसके हृदय का दंश आज शांत होने वाला था। उसने सोचा—मलया की बरबादी हो जाने पर उसकी प्रतिशोध की चिता ठंडी हो जाएगी।

महाबल को इस घटना की कल्पना तक नहीं थी। उसे गए बीस दिन हो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चुके थे। उसने पल्लीपति को शरणागत हो जाने के लिए एक सप्ताह का समय दिया था। आज अंतिम दिन था। यदि आज पल्लीपति शरणागत नहीं होगा तो कल प्रातःकाल महाबल उसकी नगरी पर धावा बोलकर नष्ट-भ्रष्ट कर देगा।

महाबल को यह कल्पना भी नहीं थी कि उसकी प्रियतमा मलयासुंदरी के सुख में आग लगाने का कार्य उसकी अपरमाता कनकावती कर चुकी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१. घोर अरण्य में

रात्रि का दूसरा प्रहर चल रहा था। कनकावती ने मलया को सोने के लिए आग्रह करते हुए कहा—'पुत्री ! तू सो जा। मुझे तो मंत्र-तंत्र के साथ उस राक्षसी से लड़ना है। इस स्थिति में तू उसे देखे, यह उचित नहीं है। एक बात और है कि तू गर्भवती है। राक्षसी की छाया भी तेरे शरीर पर नहीं पड़नी चाहिए, इसलिए तू सो जा। यदि आवश्यकता होगी तो मैं तुझे जगा दूंगी।'

मलया को अपरमाता के कथन में स्वयं का हित ही दीखा। सज्जन व्यक्ति सबको अपने-जैसा ही मानते हैं। मलया के हृदय में यह कल्पना भी नहीं आयी कि कनकावती ने एक भयंकर षड्यन्त्र रचा है। यदि उसका यह षड्यन्त्र सफल हो जाए तो मलया को अनजानी विपत्ति में फंसना पड़ सकता है।

मलया बुद्धिमती और तेजस्वी थी। साथ-ही-साथ वह ऋजुमना और सरल-हृदया भी। कनकावती की बात पर विश्वास कर वह नवकार मंत्र का स्मरण करती हुई शय्या पर सो गई।

इसी शयनकक्ष के भीतर एक छोटा कक्ष और था। इस खंड में पानी से भरे दो बर्तन पड़े रहते थे।

मलया निद्राधीन हो गई है, यह विश्वस्त जानकारी कर कनकावती राक्षसी का रूप धारण करने के लिए उस लघु कक्ष में गई।

एक छोटा-सा दीपक लेकर उसने उस कक्ष के एक कोने में रखा। फिर कक्ष का द्वार बंद कर, उसने सारे कपड़े उतारे। उसने पानी में हरा और लाल रंग घोला और अपने पूरे शरीर पर उसका विलेपन किया। उस पर उसने काले रंग की रेखाएं बनाईं और मुंह पर चमकता लाल रंग चुपड़ा।

गले में कौड़ियों की दो मालाएं पहनीं। फिर घोड़े के बालों से बनी घघरी पहनी। वह घघरी इतनी ऊंची थी कि उसकी जंघा स्पष्ट दृष्टिगोचर होती थी। देखने वाले को वह स्पष्ट रूप से राक्षसी जैसी लगती थी।

फिर उसने एक जलता हुआ पदार्थ मुंह में भरा।

इस प्रकार तैयार होकर वह बड़े वातायन की ओर गई और दोनों हाथों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को उछालती हुई नाचने लगी।

सामने के मकान में राजा अपने सुभटों के साथ यह सारा दृश्य देख रहा था।

उसने देखा—निश्चित ही कोई राक्षसी है और नग्न होकर नृत्य कर रही है···बार-बार वह दोनों हाथों को उछालती है और मुंह से आग बरसा रही है।

अपनी पुत्रवधू का यह रूप देखकर महाराजा सुरपाल अत्यन्त व्यथित हो गए। उन्होंने सोचा, जिसको मैं संस्कारी और उत्तम कुल की राजकन्या मानता था, तेजस्वी पुत्रवधू मिलने का मुझे सात्विक गर्व था, वह क्या इतनी नीच और भयंकर होगी ?

राजा यह दृश्य लंबे समय तक देख नहीं सका···वह तत्काल युवराज के कक्ष में जाने की सोचने लगा।

रानी कनकावती ने देखा राजा और सुभट इसी ओर आ रहे हैं, तब वह मलया के पास जाकर बोली—'महाराज इस ओर आ रहे हैं···संभव है मुझे इस वेश में देखकर वे अत्यन्त रुष्ट हो जाएं···बेटी ! मैं छोटे कक्ष में जा रही हूं, तू बाहर से सांकल लगा देना।'

'ठीक है···परन्तु आपने ऐसा रूप क्यों बनाया है ?'

'तेरे कल्याण के लिए···राक्षसी सदा-सदा के लिए परास्त होकर चली गई है। अब भय का कोई कारण नहीं है।' कहती हुई कनकावती लघु खण्ड में चली गई। मलया ने बाहर से उस खंड का द्वार बन्द कर दिया।

इतने में ही महाराज अपने सुभटों को साथ लेकर आ पहुंचे। उन्होंने द्वार को खटखटाया।

मलया ने पूछा—'कौन ?'

एक सुभट बोला—'द्वार खोलो। महाराजा आए हैं।'

मलयासुंदरी ने तत्काल द्वार खोल दिया।

पांच सुभटों को साथ ले महाराजा खंड में आए और मलया को मूलरूप में देखकर विस्मित हो गए। यह रूपवती नारी कितनी मायाविनी और जादूगरनी है। थोड़े समय पूर्व क्रूर राक्षसी थी और अब विनीत पुत्रवधू बन गई है।

मलया ने दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए पूछा—'क्या आज्ञा है, पिताश्री ! मध्य रात्रि में आप कैसे पधारे ? क्या युवराजश्री के कोई समाचार आए हैं ?'

राजा ने सोचा—चर्चा करने से बात बढ़ेगी और राज-परिवार की निंदा होगी, इसलिए उन्होंने शांत स्वर में कहा—'बेटी ! अभी तुझे यहां से रथ में बैठकर प्रस्थान करना है।'

'अभी ?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'हां, अभी ।'

'किस ओर, पिताश्री ?' कहती हुई मलया के हृदय में अनिष्ट आशंका उत्पन्न हुई, कि क्या महाबलकुमार किसी विपत्ति में फंस गए हैं ?

'पुत्री ! यह सब चर्चा मार्ग में होगी। अभी एक क्षण का विलंब सह्य नहीं होगा।' राजा ने कहा।

मलया बोली—'मैं तैयार हूं।'

'तो नीचे चल···रथ तैयार होकर आ गया होगा···तुझे कुछ साथ में लेना हो तो···'

'नहीं, मेरा चित्त स्वामी के विषय में अनेक आशंकाएं कर रहा है···मैं एक क्षण का भी विलंब नहीं कर सकती।' कहती हुई मलयासुंदरी कक्ष से बाहर आ गई।

महाराजा ने सुभट से कहा—'कक्ष को बंद कर ताला लगा दो···सभी दासियों को मेरे अन्तःपुर में भेज दो और इस खण्ड को बंद कर दो।'

मलया बाहर ही खड़ी थी। वह कुछ भी नहीं समझ सकी। उसके हृदय में विचारों की उथल-पुथल हो रही थी।

विचारों का संघर्ष अति भयंकर होता है।

सुभट ने उस खंड के सारे द्वार बंद कर, बाहर से ताला लगा दिया।

मलया को भी स्मृत नहीं रहा कि उस लघु खंड में अपरमाता कनकावती है।

सभी नीचे आए।

रथ तैयार खड़ा था।

महाराजा ने रथचालक को एक ओर बुलाकर कहा—'मलयासुंदरी को घोर वन में ले जाना है और वहां उसका वध करना है। यदि वह कुछ पूछे तो मार्ग में कुछ भी नहीं बताना है। यह मेरी आज्ञा है।'

दो सुभट रथ के आगे के भाग में बैठ गए। इन दोनों में एक को रथचालक का काम भी करना था, इसलिए मूल रथचालक नीचे उतर गया।

वहां खड़े अन्य व्यक्ति अवाक् रह गए।

मलया रथ में बैठी और रथ गतिमान् हो गया।

मलया का आठवां मास पूर्ण हो गया था, नौवां मास चल रहा था···और उसे इस प्रकार राजभवन से निकलना पड़ा। उसे कुछ भी ज्ञात नहीं हो रहा था।

रथ नगरी के बाहर निकल गया, अंधकार व्याप्त था। रात्रि अभी अवशिष्ट थी। तीसरा प्रहर बीतने वाला था। कुछ प्रभावी हवा के झोंके आ रहे थे। आकाश में तारे टिमटिमा रहे थे। उनका अस्तित्व अब विलीन होने ही वाला था।

मलया अकेली थी रथ में। उसका मन विचारों से भर गया। वह अपने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विचारों में उलझ गई। एक विचार का वह समाधान पाती तो दूसरा विचार उभरता और नयी समस्या सामने आ जाती। मुझे कहां भेजा जा रहा है? केवल महाराजा ने ही मुझे जाने के लिए कहा था। महादेवी कहां थी?

अनेक विचारों के आवर्त्त में फंसी हुई मलया आकुल-व्याकुल हो रही थी।

जब मनुष्य प्रश्न और विचार की तरंगों में खो जाता है तब उसकी मनोव्यथा अकथ्य होती है।

तेजस्वी अश्वों वाला वह रथ वायुवेग से चल रहा था। वह कहीं नहीं रुका। चारों ओर घोर वन।

पूर्वाकाश में लालिमा छा गई।

सूर्योदय भी हो गया।

दोनों सुभट मौन थे। वे रथ को संभाले हुए थे। वे निर्जीव प्रतिमा-से लग रहे थे। अंत में मलया ने पूछा—'मुझे कहां ले जा रहे हो?'

सुभट मौन रहे। उत्तर नहीं दिया।

मलया ने सोचा—क्या मैंने जो कहा वह इन्हें सुनाई नहीं दिया? मलया ने उच्च स्वर में कहा—'भाई! रथ किस ओर जा रहा है? जाने का मूल प्रयोजन क्या है?'

मलया के हृदय में एक नयी शंका उत्पन्न हो गई। मुझे कहां ले जा रहे हैं? इस स्थिति में प्रवास सर्वथा निषिद्ध होता है, फिर भी महाराज ने मुझे क्यों भेजा? यदि वे मुझे मेरे पीहर की ओर भेजते तो चंद्रावती नगरी तो दूसरी दिशा में है···

मलया कुछ भी निश्चय नहीं कर सकी।

धीरे-धीरे दिन का दूसरा प्रहर भी पूरा हो गया। रथ की गति कुछ मंद हुई। मलया ने रथ का परदा कुछ ऊंचा कर देखा कि चारों ओर घोर वन है।

फिर मलया ने सोचा—इस घनघोर वन में मुझे कहां ले जा रहे हैं? क्या पल्लीपति से युद्ध करने के लिए गए हुए मेरे पतिदेव महाबल की आज्ञा से ऐसा किया जा रहा है?

नहीं-नहीं, महाबल ऐसी आज्ञा नहीं दे सकते।

तो फिर?

मलया इस प्रकार अनन्त चिन्ताओं का भार ढोती हुई भयंकर प्रवास कर रही थी और उधर महाबलकुमार दुर्दान्त पल्लीपति पर विजय प्राप्त कर, सबको शरणागत कर प्रसन्न हो रहे थे। पल्लीपति के सारे साथी महाबल के चरणों में आ गिरे और पल्लीपति पलायन कर गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार विजय प्राप्त कर महाबल ने कल प्रातःकाल वहां से पृथ्वीस्थानपुर की ओर प्रस्थान करने का निश्चय किया। उसका हृदय प्रियतमा से मिलने के लिए छटपटाने लगा।

महाबल के हृदय में उल्लास था...

और मलया का हृदय चिन्ताओं की चिता में जल रहा था।

मध्याह्न हुआ। रथ को रोका।

मलया ने सोचा—अश्व थक गए होंगे। कोई जलाशय आ गया होगा, इसलिए रथ को रोका गया है।

रथ से दोनों सुभट नीचे उतरे।

मलया भी बैठे-बैठे अकड़ गई थी। उसने पर्दा उठाकर देखा, चारों ओर वन-ही-वन था।

वह नीचे उतरने के लिए उठी, उससे पूर्व ही एक सुभट बोला—'देवी! आप नीचे उतरें। जहां जाना है, वह स्थान आ गया है।'

मलया के हृदय को ये शब्द अग्नि में तप्त शलाका जैसे चुभने लगे।

इस घोर वन में क्यों? वह नीचे उतरी। उसने देखा, दोनों सुभट अत्यन्त उदास खड़े हैं। लगता है वे भयंकर वेदना भोग रहे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२. तृणशैया

भयंकर अटवी को देखकर मलयासुन्दरी कांप उठी। उसने सुभटों से कहा—'भाई! मुझे यहां क्यों ले आए हो?'

'देवी! महाराजा सुरपाल की आज्ञा से हम आपको यहां ले आए हैं। महाराजा की आज्ञा है कि भयंकर अटवी में आपका वध कर दिया जाए।' एक सुभट ने कहा।

'वध?'

'हां, देवी···आपको कुछ कहना हो तो कहें और अपने इष्ट का स्मरण कर मरने के लिए तैयार हो जाएं।' सुभट ने कहा।

मलयासुन्दरी यह आदेश सुनते ही रो पड़ी। अरे, कर्म की कैसी विचित्र गति है! मेरे स्वामी मेरे अपने हित के लिए मुझे राजभवन में अकेली छोड़कर गए···और कर्म का अट्टहास उभरने लगा···किन्तु मैंने किसी का अकल्याण नहीं किया है···अरे! महाराजा के मन में मेरे प्रति यह भावना कैसे पैदा हुई?

विचारों से संग्राम करती हुई मलया ने अपने आंसू पोंछे। उसने अतिकरुण स्वर में कहा—'आप महाराजा की आज्ञा का पालन करें। यदि आप कुछ जानते हों तो मुझे बताएं कि महाराजा ने मेरे किस अपराध का यह दंड दिया है?'

मलयासुन्दरी के करुण स्वर सुनकर सुभटों का दिल दहल उठा। उन्होंने सोचा—यह तो तेजस्विनी, पवित्र और अति-संस्कारित नारी है···और सगर्भा है···देवी निर्दोष है।

सुभटों को मौन देखकर मलयासुन्दरी बोली—'आप यदि नहीं जानते अथवा जानते हुए भी नहीं कहना चाहते तो कोई बात नहीं। आप अपना कार्य पूरा करें। वहां पहुंचकर आप मेरे पूज्य श्वसुर और सास को बताएं कि आपकी पुत्रवधू ने क्षमायाचना की है। उसे दोष की जानकारी नहीं है, फिर भी आपने जो दंड दिया है वह मेरे लिए हितकारी ही होगा। और सुभटो! जब मेरे स्वामी आएं तो उन्हें कहना कि वे मुझे सदा के लिए भूल जाएं और दूसरी कोई राजकन्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के साथ विवाह कर लें। मेरे स्वामी धैर्य न खोएं और मेरी इस अवस्था के लिए किसी पर दोषारोपण न करें। यह मेरे अपने ही कर्मों का फल है। अब मैं उस सामने वाले वृक्ष के नीचे बैठकर अपने इष्ट का स्मरण करती हूं और आप बिना किसी संकोच के मेरे पूज्य श्वसुर की आज्ञा का पालन करें।'

यह कहती हुई मलया मंथरगति से उस वृक्ष के नीचे गई, सबसे क्षमायाचना कर किसी को दोष न देती हुई, अपने ही कर्मों का परिणाम मानती हुई नवकार महामंत्र का स्मरण करने लगी।

दोनों सुभट दुविधा में फंस गए। एक बोला—'भाई ! लगता है कि महाराजा ने भयंकर भूल की है। युवराज्ञी बालक की भांति निर्दोष है और निष्कलंक है। इसका वध कर हम दो प्राणियों के वध का पाप क्यों लें !'

'हम जवाब दे देंगे कि आपकी आज्ञा का पालन कर दिया गया है। एक छोटी और तुच्छ नौकरी के लिए हम इतना बड़ा पाप क्यों करें ?'

'तो अब हम युवराज्ञी को कहीं सुरक्षित स्थान पर पहुंचा दें, अन्यथा रात होते ही हिंसक पशुओं का उपद्रव बढ़ जाएगा। हम दोनों यहां नये हैं। हमें सुरक्षित स्थान की जानकारी भी नहीं है। अत: हमारे लिए यही श्रेयस्कर है कि हम युवराज्ञी को उनके भाग्य के भरोसे छोड़ दें।'

दोनों सुभटों ने यह निश्चय कर ध्यानमग्न बैठी युवराज्ञी की ओर देखा।

एक सुभट बोला—'जाने से पहले हमें युवराज्ञी को यह बता देना है कि वे कहीं सुरक्षित स्थान की ओर चली जाएं।'

दूसरा सुभट इस बात के लिए सहमत हो गया। दोनों युवराज्ञी के पास गए और बोले—'देवी···'

नवकार मंत्र का जाप पूरा कर मलया ने दोनों की ओर देखा और कहा—'भाई ! मैं तैयार हूं···मेरे इष्ट-स्मरण में बाधा क्यों डाल रहे हो ?'

'देवी ! हमें ऐसा लग रहा है कि आपके वध की आज्ञा देकर महाराजा ने भयंकर अपराध किया है···इसलिए हम आपका वध किए बिना ही लौट रहे हैं। आपको केवल इतनी ही सूचना देनी है कि आप सूर्यास्त से पहले कहीं सुरक्षित स्थान में पहुंच जाएं।'

मलया अवाक् बनकर दोनों सुभटों को देखने लगी। वह कुछ नहीं बोली। उसने मन ही मन सोचा—ओह ! अभी पूर्वार्जित पुण्यकर्म का भोग शेष है, अन्यथा ये मुझे जीवित क्यों छोड़ते ?

दोनों सुभट मलया को नमस्कार कर रथ में बैठ अपने गंतव्य की ओर चले गए।

मलया वृक्ष के नीचे बैठी थी। वह भी खड़ी हुई। उसे ज्ञान ही नहीं था कि इस भयंकर वन-प्रदेश में कहीं सुरक्षित स्थान हो सकता है। वह जलाशय या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नदी की टोह में चली। मंत्रजाप चलता रहा।

मन में विषाद था, पर हर्ष भी उछल रहा था। मातृत्व की कल्पना उसमें आनन्द भर रही थी। उसने अनेक कल्पनाएं पहले भी की थीं। कुमार ही उत्पन्न होगा, यह भविष्यवाणी अनेक बार हो चुकी। मलया सोने का पालना, रेशम के गद्दे आदि-आदि साधनों से संपन्न कक्ष में पुत्रोत्सव की कल्पना संजोए हुए थी। पुत्रोत्पत्ति के अवसर पर राज्य में क्या होगा, महाबल कितने आनन्दित होंगे, इस विषय में सोचकर मलया आनन्दविभोर हुई थी।

परन्तु आज उसकी सारी आशाओं पर तुषारापात हो गया। भयंकर वन, अनेक हिंस्र पशुओं का आवागमन···मलया अजस्र चल रही थी। न मार्ग था, न पगडंडी थी। वह धीरे-धीरे, संभल-संभलकर पैर रखती हुई आगे बढ़ रही थी। उसे ही क्या, किसी को ज्ञात नहीं था कि वह किस दिशा की ओर जा रही है।

रथ में लम्बे समय तक बैठे रहने के कारण उसका शरीर अकड़ गया था। गर्भ का नौवां मास चल रहा था। तेजी से चलना असंभव था। वह धीरे-धीरे आगे बढ़ रही थी। उसे पता नहीं था कि वह वन के गहन प्रदेश की ओर आगे बढ़ रही है। वह केवल महामंत्र का जाप निरंतर कर रही थी। जहां कहीं थकावट का अनुभव होता, वह क्षण भर खड़ी रह कर पुनः यात्रा प्रारम्भ कर देती।

चलते-चलते सूर्यास्त की बेला होने लगी। एक ओर गाढ़ वन-प्रदेश, दूसरी ओर सूर्यास्त का होना, भयंकर अंधकार छाने लगा।

मलया थककर चूर हो गई थी। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि या तो वह गिर पड़ेगी या मूर्च्छित हो जाएगी।

वह आगे चली। कहीं सुरक्षित स्थान जैसा नहीं दीखा। वह चलती रही। कुछ दूर जाने पर उसे कल-कल ध्वनि सुनाई दी। वह कुछ आश्वस्त हुई। निराशा में आशा की एक किरण उछल पड़ी।

कुछ ही दूर चलने के पश्चात् उसने देखा कि सामने एक नदी बह रही है। छोटा किन्तु सुन्दर मैदान है···सूर्यास्त अभी तक हुआ नहीं था···वह त्वरित गति से आगे बढ़ी और सूर्यास्त होने से पूर्व नदी पर पहुंच गई···स्वच्छ और निर्मल जल बह रहा था। पास में कोई पात्र था नहीं। उसने अंजली से पानी पीकर तृषा शांत की। उसका नियम था कि सूर्यास्त के पश्चात् कुछ भी न खाना और कुछ भी न पीना।

सूर्यास्त हो गया था।

मलया वहीं बैठ गई। उसने हाथ-मुंह धो स्वस्थता का अनुभव किया। उसने निरापद स्थान की खोज में चारों ओर देखा।

वह वहां से उठी और वृक्ष के नीचे रात बिताने के लिए बड़े वृक्ष को देखने लगी। एक वृक्ष दीख रहा था। वह उस ओर चली। आगे बढ़ते ही उसके कानों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में पदचाप सुनाई दिए। उसने चौंककर सामने देखा—एक वयोवृद्ध तापसमुनि आ रहे थे।

मलया खड़ी रह गई···पर उसमें खड़े रहने की शक्ति नहीं थी···वह नीचे बैठ गई।

तापसमुनि निकट आकर बोले—'ओह, मां! तू इस घनघोर अटवी में कहां से आ गई? क्या तेरे साथी बिछुड़ गए हैं?'

मलया ने तापसमुनि को प्रणाम किया। वह बोली—'महात्मन्! कर्मविपाक के कारण विपत्ति में फंसी हुई मैं एक अबला हूं। निरापद स्थान की खोज में चलते-चलते थक गई हूं।'

'अरे पुत्री! अब तू आश्वस्त रह। अब घबराने की कोई बात नहीं है। सामने मेरा आश्रम है। अपने आश्रम में मैं अकेला ही हूं···परन्तु तुझे किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं होगा···स्वच्छ भूमि···निरापद स्थान और कुछ ही दूरी पर राजमार्ग है। तू उठ और मेरे पीछे-पीछे चली आ।'

मलया ने सोचा—'पूर्वजन्म में घोर पाप करते समय कहीं कुछ शुभ कार्य भी हुआ है, अन्यथा जहां पग-पग पर मौत का आभास होता है वहां ऐसा निरापद स्थान कहां से प्राप्त होता!'

वह उठी।

तापस ने उसकी ओर देखकर कहा—'पुत्री! तू तो गर्भवती है?'

'हां, महात्मन्!'

'ओह! तेरे साथी अवश्य ही भाग्यहीन होंगे—तुझे अकेली इस भयंकर वन में छोड़कर चले गए।' कहते हुए तापस मुनि आगे चले।

मलया भी तापस मुनि के पीछे-पीछे चल पड़ी।

आकाश में अंधकार व्याप्त हो चुका था। रात्रि का प्रथम प्रहर प्रारंभ हो गया था। कुछ ही समय पश्चात् मलया एक छोटे, किन्तु सुन्दर उपवन में आ पहुंची। उसने देखा, उपवन के एक ओर दो कुटीर हैं।

तापसमुनि कुटीर की ओर आगे बढ़ते हुए बोले—'पुत्री! तेरा नाम?'

'मलयासुन्दरी।'

'जैसा तेरा नाम है वैसी ही तू सौम्य और पवित्र है···इस कुटीर में तू आनंदपूर्वक रह। अरे, तूने कुछ खाया-पीया भी नहीं होगा?'

'नहीं, महात्मन्! मुझे भूख का भान भी नहीं रहा।'

'तू उस कुटीर में जाकर बैठ। मैं तेरे लिए फल ले आता हूं।'

'महात्मन्! कष्ट न करें। मुझे रात्रिभोजन का प्रत्याख्यान है।' मलया ने संकोच करते हुए कहा।

'अच्छा···तब तो तू जिनेश्वर देव के मार्ग की आराधिका है?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलया ने मस्तक नत कर स्वीकृति दी।

तापसमुनि अत्यन्त प्रसन्न हुए।

मलया कुटीर में गई। अंदर अंधकार था। तापस मुनि ने कहा—'बेटी ! मैं अभी प्रकाश का साधन ले आता हूं।' तापस मुनि अपने कुटीर में गए और एक जलती हुई पतली लकड़ी लेकर आए। उन्होंने कहा—'बेटी ! यहां दीया तो है नहीं। यह 'अग्निव्हा' नामक दिव्य वनस्पति की लकड़ी है। यह पूरी रात जलती रहेगी और मंद-मंद प्रकाश देती रहेगी'—यह कहते हुए मुनि ने उस जलती लकड़ी को मिट्टी के एक बर्तन में रख दिया। 'बेटी ! अंधकार कुछ कम तो हुआ है न ?'

'हां, महात्मन् !'

'यहां मेरे पास न बिछौना है और न चादर···फिर भी मैं तेरे लिए घास की शय्या तैयार कर देता हूं···तुझे किसी भी प्रकार की दिक्कत नहीं होगी। दो वल्कल दूंगा। एक को ओढ़ लेना और एक को घास पर बिछा लेना।'

'कृपावंत ! मेरे जैसी अभागिन के लिए आप इतना कष्ट क्यों कर रहे हैं ? यह कुटीर अत्यन्त स्वच्छ है···मैं एक ओर सो जाऊंगी।'

'नहीं, बेटी ! तुझे जननी बनना है···त्यागियों के मन में दुःखी प्राणियों के प्रति सहज सहानुभूति होती है।' कहते हुए तापसमुनि कुटीर के बाहर आ गए।

लगभग एक घटिका के पश्चात् वे घास लेकर आए। उसकी शय्या तैयार कर, वहां दो वल्कल रख दिए। जाते-जाते वे बोले—'मलया ! अब तू आराम कर···कुटीर का द्वार अन्दर से बंद कर देना। नवकार मंत्र का स्मरण कर सो जाना।'

इस प्रकार वात्सल्य, धैर्य और आश्रय देकर मुनि चले गए।

मलया ने कुटीर का द्वार बंद किया। वह उस तृणशय्या पर सो गई।

जहां रत्नजटित पर्यंक और रेशमी गद्दों की भरमार रहती थी, वहां आज मात्र एक तृणशय्या।

फिर भी आज यह तृणशय्या उन पर्यंकों से उत्तम थी।

मलया ने संकल्प-विकल्पों से मुक्त होकर नवकार महामंत्र का जाप किया और वह कुछ ही क्षणों में निद्राधीन हो गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३. पाप का घड़ा फूटा

युवराज का महल तीन दिनों से बंद पड़ा था। आज चौथे दिन का प्रभात हुआ। रानी कनकावती युवराज के बृहद् कक्ष के अन्तर्गत बने हुए लघु कक्ष में बंद थी। भूख-प्यास से वह छटपटा रही थी। उसने सोचा—दो-चार दिन यदि यही अवस्था रही तो मुझे प्राणों से हाथ धोना पड़ेगा। इस कक्ष में एक भी वातायन नहीं था। ऊपर एक छोटी-सी जाली थी।

यहां छिपने का एकमात्र उद्देश्य था कि वह महाराजा की आंखों से बच जाएगी···किन्तु दूसरों का अहित करने की धुन में उसने अपना ही अहित कर डाला।

अब क्या किया जाए ?

उसने राक्षसी की वेशभूषा तो उसी समय निकाल दी थी। उसने अपने मूल वस्त्र पहन लिये थे और वहां पड़े थोड़े से पानी में हाथ-मुंह धोकर सारा रंग दूर कर डाला था। उसे आशा थी कि जब दास-दासी आएंगे तब वह बाहर निकल जाएगी। उसे यह आशंका नहीं थी कि ये द्वार ऐसे ही बंद पड़े रहेंगे।

युवराज महाबल पल्लीपति पर विजय प्राप्त कर आ रहा था। उसका मन विजय के उल्लास से उछल रहा था। उनके अन्तःकरण में सगर्भा प्रियतमा से मिलने की प्रबल उत्कंठा थी। उसने सोचा—अब कुछ ही दिनों में मलयासुन्दरी बालक का प्रसव करेगी। वह मां बनेगी, मैं पिता बनूंगा···और तब पत्नी का मातृत्व रूप देखने को मिलेगा। किन्तु उसे यह कल्पना भी नहीं थी कि उसकी प्रियतमा को वध के लिए वन-प्रदेश में ले जाया जा चुका है। वह तो यही जानता था कि मलयासुन्दरी उसकी प्रतीक्षा में पलकें बिछाए बैठी होगी और वह मुझे देखते ही मुसकराकर मेरी विजय को वर्धापित करेगी और···

मलया के वध के लिए भेजे गए वे दोनों सुभट आ गए और महाराजा से बोले—'कृपावतार ! हमने आपकी आज्ञा का पालन कर दिया है।' यह सुनकर महाराजा सुरपाल आश्वस्त हुए।

और उसी दिन से महामारी का प्रकोप घटने लगा। इसका मूल कारण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

था वैद्यों का पुरुषार्थ। किन्तु महाराजा ने सोचा कि राक्षसी मलयासुन्दरी को यहां से विदाई देने के कारण यह प्रकोप घट रहा है।

महाबलकुमार विजय प्राप्त कर नगर में आ गए। सारा नगर उस उपलक्ष्य में सजाया गया था। महाराजा तथा मंत्रीमंडल के सदस्य गांव के बाहर तक महाबल की अगवानी करने गए। महाबल ने गाजे-बाजे के साथ नगर में प्रवेश किया। उसने अपने महलों की ओर देखा। वातायन सूना पड़ा था। महल के द्वार भी बंद थे—केवल दो पहरेदार वहां खड़े थे। युवराज ने सोचा—प्रसव हो गया है या होने का समय होगा इसलिए मलया माता के भवन में होगी। ऐसा सोचकर वह माता से मिलने चला। माता ने पुत्र को छाती से लगा लिया।

महाबल ने पूछा—'मां ! आपकी पुत्रवधू तो सकुशल है न?'

महादेवी को घटना ज्ञात हो चुकी थी। उसने इस समय प्रश्न को टालने के लिए परिचारिकाओं के सामने देखकर कहा—'अरे, वहां क्यों खड़ी हो? युवराज के स्नान आदि का प्रबन्ध करो।'

महाबल ने सोचा—मलया प्रसूतिगृह में होगी। संभव है उसने पुत्री को जन्म दिया हो, इसलिए माता बाद में बात करना चाहती हैं।

स्नान-भोजन आदि से निवृत्त होकर महाबल ने पुनः मलया के विषय में पूछा।

महाराजा ने कहा—'पुत्र ! अब तू मलया को भूल जा। जिसे हम देवी मान रहे थे, वह भयंकर राक्षसी निकली।'

युवराज का मन चंचल हो उठा।

महाराजा ने पूरी घटना कह सुनायी। यह सुनकर महाबल बोला—'पिताश्री! आपने एक निर्दोष अबला पर भयंकर अन्याय किया है। महाराजा वीरधवल की कन्या मलयासुन्दरी सर्वगुण-सम्पन्न नारी थी। आपको यह बात कहने वाली कनकावती दुष्टा है⋯कहां है कनकावती?'

'महाबल ! कनकावती ने सच कहा था⋯मलया के वध के लिए भेजते ही उसी दिन महामारी का प्रकोप घट गया और आज किसी की मृत्यु का संवाद नहीं मिला है।'

'पिताश्री ! मैं यह बात किसी भी स्थिति में नहीं मान सकता। आप कनकावती को बुलाएं। मैं उससे कुछ प्रश्न कर तसल्ली कर लूंगा।'

महाराजा बोले—'महाबल ! कनकावती का भी अता-पता नहीं है। मैं उसे पुरष्कृत करना चाहता था। उसकी खोज की, पर वह नहीं मिली। वह कहां गई होगी, यह ज्ञात नहीं है।'

तत्काल महाबल खड़ा हो गया। उसने कहा—'पिताजी ! आपने भयंकर अन्याय किया है। आपने मलया का ही वध नहीं करवाया है, मेरे जीवन को भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नष्ट-भ्रष्ट कर डाला है। मैं कनकावती को ढूंढ़ने के लिए सैनिकों को भेजता हूं।'

इतना कहकर महाबल कक्ष से बाहर आ गया। उसका मन विषाद से खिन्न हो रहा था। मलया के वध की बात सुनते ही उसका हृदय विदीर्ण हो चुका था। मां बनने वाली नारी की हत्या!

पूरे महल को छान डाला, कनकावती का कहीं पता नहीं चला।

महाबल ने सोचा—'अरे! जाते-जाते मलया ने कोई संदेश लिखकर तो नहीं छोड़ा है। वह तत्काल शयनकक्ष की ओर गया। भीतर जाते ही उसकी सारी स्मृतियां तरोताजा हो गईं। एक दिन था कि वह कक्ष सजीव-सा दीख रहा था और आज वह निर्जीव-सा पड़ा है।

महाबल ने मात्र बृहद्खंड देखा, लघुखंड को नहीं देखा। यदि वह उसे खोलता तो तृषा और भूख से व्यथित सच्ची राक्षसी कनकावती उसे मिल जाती।

पूरे कक्ष की छानबीन कर युवराज मुड़ा और उसके पैरों से टकराकर एक त्रिपदी जमीन पर लुढ़क गई।

उस त्रिपदी की आवाज सुनकर कनकावती चौंकी और उसने कपाट पर दस्तक दी।

कपाट पर दस्तक की आवाज को सुनकर युवराज चौंका। उसने तत्काल उस लघुकक्ष का द्वार खोल दिया। लड़खड़ाती हुई कनकावती बाहर निकली और धड़ाम से जमीन पर गिर पड़ी।

युवराज ने तत्काल उसे उठाया। कनकावती ने संकेत से पानी मांगा। उसे पानी पिलाया। वह स्वस्थ हुई।

युवराज उस लघुखंड में गए। वहां हरताल का लेप, घोड़े के बाल की लघु घघरी, अन्यान्य वस्तुएं देखीं। इन चीजों को देखकर महाबल ने समझ लिया कि महाराजा ने जिस राक्षसी का रूप देखा था, वह मलया नहीं, स्वयं कनकावती थी।

युवराज ने कनकावती से कहा—'मैंने तेरा क्या अकल्याण किया था कि तूने मेरे जीवन—साथी को मरवा डाला। मेरी एक पांख तोड़ दी। सच-सच बता, अन्यथा तुझे अभी मौत के घाट उतार दूंगा। मैं तेरी चमड़ी उधड़वा दूंगा। बोल, सही-सही बता। तूने ही राक्षसी का रूप बनाया था। तेरे सारे चिह्न मुझे प्राप्त हो गए हैं। तूने मेरे पिता को धोखा देकर एक निर्दोष नारी पर झूठा आरोप लगाया। सच-सच बता।'

'पिताश्री! आपको दोषी क्यों मानूं! मेरे ही कर्मों का विपाक है।' उसने कनकावती की ओर देखकर कहा—'दुष्टे! मैं एक स्त्री पर हाथ उठाना नहीं चाहता। तुझे मार देने पर भी अब मुझे मेरी मलया प्राप्त नहीं हो सकेगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसलिए मैं तेरा वध न करवाकर, आज्ञा देता हूं कि तू तत्काल यहां से निकल जा।

कनकावती तत्काल खंड से बाहर चली गई।

युवराज दोनों हाथों से मुंह ढककर एक ओर बैठ गया।

महाराजा ने कहा—'बेटा! जो होना था वह हो गया। अब तू धैर्य रख। मैं कोई योग्य राजकन्या के साथ…'

बीच में ही महाबल बोला—'पिताश्री! मेरा विवाह एक बार हो चुका है। मैं फिर विवाह नहीं करूंगा। जो सुभट मलया के वध के लिए गए थे, उन्हें बुलाएं। जहां उन्होंने मलया का वध किया है, मैं उस स्थान को वंदना करने जाऊंगा।'

दोनों सुभट आ गए।

युवराज ने कहा—'तुमने जिस स्थल पर मलया का वध किया है, वह स्थान मुझे दिखाओ।'

दोनों सुभट पल भर के लिए कांप उठे।

महाराजा ने कहा—'तुम्हारा कोई दोष नहीं है। तुमने तो मात्र राजाज्ञा का पालन किया है। संकोच किए बिना स्थल बता दो।'

दोनों सुभट बोले—'कृपावतार! क्षमा करें। हमने आपकी आज्ञा का पूरा पालन नहीं किया है।'

युवराज चौंका। तत्काल खड़ा होकर बोला—'तो क्या किया?'

'युवराजश्री! देवी को देखकर हमें प्रतीत हुआ कि देवी निर्दोष हैं, पवित्र हैं। महाराजा को ही दृष्टि-दोष हुआ है, इसलिए हमने देवी का वध नहीं किया। उन्हें 'छिन्न' नाम के वन प्रदेश में छोड़कर आ गए।' सुभटों ने कहा।

युवराज ने तत्काल प्रसन्न स्वरों में कहा—'ओह! तुमने मुझ पर बड़े से बड़ा उपकार किया है।'

कनकावती ने धीमे से कहा—'युवराज! मेरे से बोला नहीं जाता। मेरे कंठ अवरुद्ध हो गए हैं। मैं भूख की असह्य पीड़ा को सहन नहीं कर सकती।'

तत्काल युवराज ने दासी से दूध और कुछ खाद्य लाने के लिए कहा।

फिर महाप्रतिहार की ओर देखकर युवराज बोला—'महाराजा और महादेवी को यहां तत्काल बुला लाओ।'

महाप्रतिहार चला गया।

थोड़े समय में ही दासी दूध और खाद्य सामग्री ले आयी।

कनकावती ने भूख शांत की।

इसी समय महाराजा और महादेवी वहां आ पहुंचे। युवराज महाबल ने कहा—'पिताश्री! आपके अन्याय का तथा मलयासुन्दरी की निर्दोषता का यदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रमाण चाहें तो आप लघु खंड में जाकर देख लें। इस दुष्ट स्त्री ने ही राक्षसी का रूप धारण कर आपको भ्रम में डाला था।'

महाराजा ने कनकावती की ओर वेधक दृष्टि से देखकर कहा—'सत्य बात बता दे···।'

कनकावती ने गिड़गिड़ाते हुए कहा—'महाराजश्री! मेरा अपराध क्षमा करें···कृपावतार! पुराने वैरभाव के कारण ही मैंने ऐसा कर डाला···आप अपनी पुत्रवधू को बुलाएं···मैं उससे क्षमा-याचना कर लूंगी। मैंने ही राक्षसी का रूप धारण किया था। उस समय युवराज्ञी सो गई थी···आप जब अपने सुभटों को साथ लेकर यहां आए तब मैं छिप जाने के लिए इस लघु खंड में आ गई थी और मैंने ही युवराज्ञी को द्वार बंद करने के लिए कहा था···आप मुझे क्षमा करें।'

महाराजा सुरपाल अपने कपाल पर हाथ पटकते हुए वहीं बैठ गए—अरे! मैंने अपने जीवन में कभी ऐसा भयंकर अन्याय नहीं किया था। इतनी उतावली भी नहीं की थी। फिर यह सब कैसे घटित हो गया? उन्होंने महाबल की ओर खकर कहा—'महाबल! मुझसे गंभीर अन्याय हो गया है। तू मुझे क्षमा कर।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४. पीड़ा का दावानल

महाराजा ने कनकावती को सीमा पार करने का आदेश दे दिया था। उन्हें अपनी भूल पर पश्चात्ताप हो रहा था। किन्तु इन सबसे पुत्र महाबल की चिंता कुछ भी हल्की नहीं हुई।

दूसरे दिन दोनों सुभट को साथ लेकर दो सौ सैनिक उस वन प्रदेश की खाक छानने निकल पड़े जहां मलयासुन्दरी को छोड़ा गया था।

छह दिन बीत गए। सभी सैनिक वनप्रदेश में छानबीन कर खाली हाथ लौट आए। कहीं उन्हें मलयासुन्दरी के अस्तित्व का पता नहीं चल सका।

मलयासुन्दरी तापसमुनि के कुटीर में थी। किन्तु वह स्थल ऐसा था, जहां सहसा कोई पहुंच नहीं पाता था।

दोनों सुभटों ने महाराजा से कहा—'राजेश्वर ! हमने सारा वनप्रदेश छान डाला, युवराज्ञी का कहीं पता नहीं चला।'

महाबल ने निराशा के स्वरों में कहा—'मलया किसी हिंसक प्राणी का भोग बनी हो, ऐसा कोई चिह्न जान पड़ा ?'

'नहीं, युवराजश्री ! ऐसा कोई चिह्न दिखाई नहीं पड़ा। संभव है युवराज्ञी कहीं अन्यत्र चली गई हों।'

महाराजा ने पूछा—'उस वन में कोई पल्ली है ?'

'हां, महाराजा ! वहां तीन पल्लियां हैं और हमने तीनों में युवराज्ञी को ढूंढ़ा है। पर वहां भी कोई खोज-खबर नहीं मिली।'

महाबलकुमार के मन में जो आशा अंकुरित हुई थी, वह असमय ही नष्ट हो गई।

एक पवित्र नारी पर हुए अन्याय से उसका चित्त अत्यन्त पीड़ित और व्यथित हो रहा था। साथ-ही-साथ श्रेष्ठतम प्रियतमा का वियोग भी उन्हें पीड़ित कर रहा था। गर्भ के अन्तिम दिन थे···ऐसे संकट की कल्पना कभी नहीं की जा सकती थी···ऐसे निर्जन और भयंकर वन में वह किसी भी प्रकार जीवित नहीं रह सकती···कोई सिंह, बाघ या अन्य हिंस्र पशु ने उसे खा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डाला होगा।

ऐसे विचारों से व्यथित महाबलकुमार अत्यन्त तीव्र वेदना का अनुभव कर रहा था। उसे सहजीवन के अनेक संस्मरण याद आने लगे। प्रिया की एक-एक स्मृति से वह तिलमिला उठता।

महाबल ने निश्चय कर लिया, साथी के छूट जाने पर जीना व्यर्थ है। पुत्र की अनन्त व्यथा से महाराजा और महारानी भी व्यथित थे। पर वे हताश थे। उनके पास पुत्र को आश्वस्त करने का कोई उपाय नहीं था। वे बार-बार पुत्र को सांत्वना देते और अपने अविचारित कार्य की निन्दा करते।

एक बार महाराजा और महारानी—दोनों महाबलकुमार के कक्ष में गए। वहां युवराज योगी की भांति विचारों में खोया हुआ उदासीन बैठा था। माता-पिता ने उसे समझाने का प्रयत्न किया, पर व्यर्थ।

युवराज मौन थे। उनकी आंखें सजल बन रही थीं।

उस समय महामंत्री मुनिदत्त ने कक्ष में प्रवेश किया। उनके पीछे एक वृद्ध पुरुष था। महामंत्री ने महाराजा की ओर दृष्टिपात करते हुए कहा—'महाराजश्री! दक्षिण भारत के प्रख्यात निमित्तज्ञ आचार्य नेमीचरण आए हैं।'

महाराज सुरपाल खड़े हो गए। वहां उपस्थित सभी व्यक्ति खड़े हो गए। महाराजा ने आचार्य को ससम्मान आसन पर बैठने का निवेदन किया।

महाराजा ने आचार्य के समक्ष हाथ जोड़कर पूछा—'महात्मन्! आप इस नगरी में कब पधारे?'

'कल ही मैंने नगर में प्रवेश किया है। एक श्रेष्ठी के प्रयोजनवश मुझे यहां आना पड़ा है।'

महादेवी ने आचार्य से कहा—'महात्मन्! हम अतुल वेदना भोग रहे हैं। लगता है, आप हमारे पुण्य से खिंचे हुए यहां पधारे हैं।'

आचार्य ने महादेवी को आशीर्वाद दिया।

दो दिन से महाबल ने कुछ भी नहीं खाया-पीया था, इसलिए उसका शरीर मुरझा गया था। उसने आचार्य को नमस्कार कर कहा—'आचार्यदेव! मैंने आपकी यशोगाथा सुनी है, किन्तु प्रत्यक्ष दर्शन का यह प्रथम अवसर है। आप कृपा कर मेरे एक प्रश्न का उत्तर दें।'

आचार्य नेमीचरण बोले—'कुमारश्री! आप अपने प्रश्न को मन में रखें, किन्तु मेरी परीक्षा करने के लिए आप अपने मन में दूसरा प्रश्न न उभारें।'

वृद्ध निमित्तज्ञ की ओर महाबल देखने लगा।

वृद्ध निमित्तज्ञ ने अपने थैले में से एक पाटी निकाली। उस पर अंक लिखे और गणित करते हुए बोले—'कुमारश्री! आपने जो अंतिम प्रश्न सोचा है वह यह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है कि आपके गले में जो मोतियों का हार है उसमें कितने मोती हैं ? आपके इस हार में एक सौ इकहत्तर मोती हैं।'

ऐसी गिनती पहले किसी ने नहीं की थी। महाबल ने हार में पिरोये हुए मोती गिने और कहा—'महात्मन् ! आपने ठीक बताया।'

'अब आपके हृदय को व्यथित करने की पीड़ा के विषय में कुछ कहता हूं। आप ध्यान से सुनें।' आचार्य ने पुनः गणित किया। फिर बोले—'कुमारश्री ! आपका प्रश्न है कि पत्नी जीवित है या नहीं ?'

'ठीक है, आचार्यदेव ! मुझे आप इस प्रश्न का उत्तर दें ···अन्न-जल का प्रत्याख्यान किए तीन दिन बीत रहे हैं।'

निमित्तज्ञ ने कहा—'आपकी पत्नी जीवित है।'

महाराजा ने तत्काल प्रसन्न स्वरों में कहा—'जीवित है ?'

'हां, महाराज ! जीवित है और···' निमित्तज्ञ ने पुनः गणित किया और कहा—'उनका नाम सिंह राशि पर है।'

'हां, मेरी पुत्रवधू का नाम मलयासुन्दरी है।' महादेवी ने कहा।

महाबल बोला—'आचार्यदेव ! आपने मेरे मन में शक्ति का संचार किया है। अब आप बताएं, वह कहां है ?'

निमित्तज्ञ बोला—'कुमारश्री ! मैं यह नहीं बता सकता कि वे कहां हैं। किसके आश्रम में हैं ? किन्तु इतना निश्चयपूर्वक कह सकता हूं कि वे जीवित हैं। प्रसवकाल निकट है और वे एक पुत्ररत्न को जन्म देंगी।'

यह सुनकर सबके मन प्रसन्न हो गए। निराशा के सघन अंधकार में आशा की एक किरण फूट पड़ी। महाबल बोला—'महात्मन् ! मेरी प्रियतमा मुझे मिलेगी या नहीं ?'

'अवश्य मिलेगी, पर कब, यह मैं नहीं बता सकता।'

महामंत्री तथा महादेवी ने अनेक प्रश्न किए। परन्तु वृद्ध निमित्तज्ञ ने इससे आगे कुछ भी नहीं बताया।

महाराजा ने निमित्तज्ञ को पुष्कल पुरस्कार दिया और आचार्य नेमीचरण सबको आशीर्वाद देकर चले गये।

माता-पिता ने महाबल को भोजन कराया और फिर दोनों ने भोजन किया।

महाबल के हृदय में सन्तोष की लहर उठी और उसने सोचा—'मलया जीवित है और अब शीघ्र ही मां बनने वाली है, पर वह है कहां ? कहां ढूंढूं ? मुझे स्वयं को उसकी खोज में चल पड़ना चाहिए। मुझे अपने कर्तव्य को निभाने के लिए तैयार रहना है।'···इस प्रकार अनेक संकल्प-विकल्प उसके मन को कुरेदने लगे। उसने मन-ही-मन एक निश्चय किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह अपने शयनकक्ष में गया, द्वार बन्द कर अपनी शय्या पर बैठ गया। उसने माता-पिता को संबोधित कर एक लम्बा पत्र लिखा और यह स्पष्ट कर दिया कि वह मलया की खोज के लिए अकेला ही जा रहा है। उसकी कोई चिन्ता न करें और वह मलया को लेकर अवश्य ही आ जाएगा।

पत्र को खंड में रखकर वह रात्रि के चौथे प्रहर में उठा। अपनी तलवार धारण कर उसने कुछ मुख्य आभूषण पहने, कुछ दिव्य गुटिकाएं, अंजन, तिलक आदि साथ ले वह महल से अकेला ही निकल पड़ा। वह सीधा अश्वशाला में गया। अश्वशाला के रक्षक ने युवराजश्री को आते देखा। प्रणाम कर वह एक ओर खड़ा हो गया। महाबल ने अस्तबल से अपनी पसन्द का अश्व निकाला और उस पर चढ़कर कुछ ही क्षणों में नगर से बाहर आ पहुंचा।

सूर्योदय हुआ। एक प्रहर दिन बीत गया। युवराजश्री शयनकक्ष से बाहर नहीं आए; यह जानकर चारों ओर कोलाहल होने लगा। महाराजा और महादेवी तक बात पहुंची। इतने में ही परिचारक ने आकर कहा—'राजेश्वर! युवराजश्री की शय्या पर एक ताड़पत्र पड़ा है।'

'जल्दी ले आओ उसे।' महाराजा ने कहा।

वह दौड़ा-दौड़ा गया और ताड़पत्र लाकर महाराजा के हाथ पर रख दिया। महाराजा ने आद्योपान्त उसे पढ़ा। महादेवी को सुनाया।

माता सुबक-सुबककर रोने लगी।

महाराजा के नयन भी सजल हो गए।

एकाकी पुत्र इस प्रकार चला जाए, यह घटना माता-पिता के लिए असह्य होती है।

पुत्रवधू के प्रति किए गए अन्याय का दर्द हृदय को विदीर्ण कर ही रहा था, पुत्र-वियोग का दर्द भी उसके साथ और जुड़ गया।

कल आशा का दीप जला था, आज वह बुझ गया।

यह समाचार सारे नगर में फैल गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५. पुत्रजन्म

विराट् वन-प्रदेश में, तापसमुनि के आश्रम में रहते हुए मलयासुन्दरी को ग्यारह दिन हो चुके थे।

वृद्ध तापसमुनि के उपदेश से तथा नवकार मंत्र के स्मरण से मलया स्वस्थ हो गई थी। उसके मन में अपने प्रति अन्याय करने वाले के लिए कोई रोष नहीं था, क्योंकि वह कर्मवाद को मानने वाली थी। उसने यह सब अपने ही कर्मों का विपाक माना था। वह प्रियतम को क्षण-भर के लिए भी विस्मृत नहीं कर पा रही थी। उसने सोचा—प्रियतम विजय प्राप्त कर आ गए होंगे। भवन को सूना देख उनका मन कितना व्यथित हो रहा होगा। यह सोचते ही मलया के नयन आंसू बहाने लग जाते।

आज आश्रम-निवास का बारहवां दिन था। दिन के प्रथम प्रहर के पश्चात् कार्यवश वृद्ध तापसमुनि आश्रम के बाहर चले गए थे और मध्याह्नोपरान्त आने को कह गए थे।

मलया को लगा कि अब प्रसवकाल निकट है। इस आश्रम में कोई भी स्त्री नहीं है···प्रसवकाल में सूतिकर्म कौन करेगा? प्रसव के समय यदि मेरी मृत्यु हो जाएगी तो बालक का और पति का क्या होगा? क्या पति का मिलाप नहीं होगा? अथवा वे कभी बालक को नहीं देख पाएंगे?

इन विचारों में उन्मज्जन-निमज्जन करती हुई मलयासुन्दरी कुटीर के एक पार्श्व में बैठ गयी। उसके नयन सजल हो गए थे।

मध्याह्न बीत चुका था। तापसमुनि अभी पहुंचे नहीं थे। मलयासुन्दरी उनकी प्रतीक्षा कर रही थी। वह उठी। उपवन में गई। इधर-उधर देखा। उसकी दृष्टि एक आकृति पर पड़ी। उसने देखा, वृद्ध तापस आ रहे हैं और उनके पीछे-पीछे अधेड़ उम्र की एक ग्रामीण औरत आ रही है।

इतने दिनों के बाद मलया ने तीसरे मनुष्य का चेहरा देखा था। कुटीर में वे दो ही थे—एक तापस और दूसरी स्वयं। निकट आते ही तापस ने कहा—पुत्री! कैसी हो? मुझे आज प्रातःकाल से ही ऐसा प्रतीत हो रहा था कि तेरा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रसवकाल निकट है। इसलिए यहां से पांच कोस की दूरी पर स्थित पल्ली से इस जानकार औरत को ले आया हूं।'

मलया ने उस अधेड़ नारी की ओर देखकर पूछा—'मांजी! आपका नाम?'

वृद्धा ने कहा—'मेरा नाम है गोदा।'

'गोदा मां! सामने की झोंपड़ी में चलो।' मलया ने कहा।

दोनों कुटीर में आ गईं।

रात का समय।

मलया घास के बिछौने पर सो गयी। गोदा ने उसके पेट आदि को देखा। वह तत्काल वृद्ध तापस के पास जाकर बोली—'महात्मन्! प्रसवकाल निकट है। संभव है रात्रि के अंतिम प्रहर में अथवा सूर्योदय के समय प्रसव हो जाएगा। सारा सामान तैयार है। मैं पूर्ण सजग हूं। आप चिन्ता न करें।'

मुनि ने गोदा को एक जड़ी देते हुए कहा—'गोदा! जब तुझे लगे कि बिटिया को असह्य पीड़ा हो रही है, तब तू इस जड़ी को उसकी कमर के बांध देना। अन्यथा अपने पास ही रखना। इस जड़ी के प्रभाव से उसकी प्रसवपीड़ा शान्त हो जाएगी।'

सूर्योदय हुआ। मलया की पीड़ा बढ़ने लगी। गोदा ने तत्काल वह जड़ी मलया की कमर में बांध दी। उस औषधि के प्रभाव से मलया ने तत्काल सुखपूर्वक प्रसव कर दिया। सूर्य-जैसे तेजस्वी पुत्ररत्न का जन्म हुआ था।

बालक का पहला रुदन उपवन में फैल गया।

तापस कुटीर के बाहर खड़े थे।

गोदा ने विधिपूर्वक सूतिकर्म संपन्न किया। वह बाहर आयी और मुनि बाबा से बोली—'बाबा! बहन ने मणि-जैसे तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया है।'

बाबा ने आकाश की ओर देखा। नमस्कार महामंत्र का स्मरण किया और गोदा से कहा—'गोदा! अब आगे का सारा कार्य तुझे ही करना है।'

गोदा नमस्कार कर चली गयी।

देखते-देखते बीस दिन बीत गए।

तापस मुनि के द्वारा उपहृत औषधियों के प्रभाव से मां और पुत्र दोनों स्वस्थ रहे और मलया की प्रसूतावस्था सुखपूर्वक बीत गयी।

बीसवें दिन मलया कुटीर से बाहर आयी। सुन्दर और तेजस्वी पुत्र को देख उसने अपने दुःख को भुला दिया। उसने सोचा—काश! यह पुत्र राजभवन में पैदा होता। परन्तु कर्म की गति विचित्र होती है। उसके आगे सबको झुकना पड़ता है। विपत्तियों का पहाड़ उस पर टूट पड़ा था, पर आज वह पुत्ररत्न पाकर आनंदित हो रही थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसके मन में यह विचार आया कि चालीस दिन के बाद वह स्वयं पृथ्वीस्थानपुर चली जाए और राज-परिवार से मिले, प्रियतम से मिले। दूसरे ही क्षण उसने सोचा—जिस श्वसुर ने मुझ निर्दोष अबला के वध का आदेश दिया है, उसके घर कैसे जाऊं? नहीं-नहीं, मुझे नहीं जाना चाहिए। उससे अच्छा तो यह वन-प्रदेश है, जहां उतने भयंकर अन्याय की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

नारी के हृदय में जैसे प्रेम और वात्सल्य का अथाह भंडार भरा होता है, वैसे ही अभिमान का भाव भी भरा होता है। यह स्वभावगत अभिमान उसे पृथ्वीस्थानपुर की ओर कदम बढ़ाने की अनुमति कैसे दे सकता है?

मलया ने फिर सोचा—प्रसूति अवस्था के पूर्ण होते ही मुनि बाबा की आज्ञा लेकर मैं अपने पीहर चली जाऊंगी। यही उत्तम है।

तीव्र मनोमंथन के पश्चात् यह विचार दृढ़ बन गया। किन्तु मलया को यह ज्ञात नहीं था कि उसका स्वामी महाबल राज्यसुख का त्याग कर पत्नी की खोज में निकल पड़ा है।

महाबल नगर से बाहर निकलकर सीधा इसी वन-प्रदेश में आया था। आठ दिन तक वह वन के चारों ओर खोजता रहा, किन्तु मलया का कोई अस्तित्व-चिह्न उसे प्राप्त नहीं हुआ। फिर भी निमित्तज्ञ के कथन पर विश्वास कर प्रिया के मिलन की आशा से वह भूखा-प्यासा वन-प्रदेश में चक्कर लगा रहा था।

आठ दिन के बाद महाबल निराश होकर वन-प्रदेश के बाहर निकल गया और दूसरी दिशा में खोज करने चल पड़ा। दुर्भाग्य से एक दिन उसका अश्व चलते-चलते गिर पड़ा और गिरते ही तत्काल मर गया।

अश्व की मृत्यु से महाबल को अत्यन्त दुःख हुआ। किन्तु मलया से बिना मिले या उसके समाचार प्राप्त किए बिना नगर में लौटने का उसने दृढ़ संकल्प कर रखा था।

अश्व का सहारा छूट गया था। वह पैदल ही प्रवास करने लगा।

मलया को पता ही नहीं था कि उसका प्रियतम उसको ढूंढ़ने के लिए दर-दर का भिखारी बन रहा है।

मलया को बार-बार एक प्रतिज्ञा की स्मृति हो रही थी।

एक बार मलया महाबल के साथ शय्या पर बैठी थी। महाबल ने हंसते हुए कहा था—'प्रिय! आज मैंने एक प्रतिज्ञा की है।'

'कैसी प्रतिज्ञा?'

'तेरे सिवाय किसी नारी को पत्नी न बनाने की प्रतिज्ञा मुनि महाराज के समक्ष की है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह सुनकर मलया चौंकी थी और कहा था—'प्रियतम ! इतनी उतावली क्यों की ? यदि मैं मर जाऊं तो ?'

'मलया ! तू मेरी पांख है। जब पांख टूट जाती है तब क्या पक्षी जीवित रह सकता है ? नयी पांख उसे नहीं गोदी जा सकती। ऐसा अमंगल कभी नहीं होगा और···'

बीच में ही मलया ने हंसते हुए कहा था—'यदि हो जाए तो···?'

'तो तेरी स्मृति ही मेरे जीवन का सहारा बने।' महाबल ने अपने हृदयगत भाव इन शब्दों में व्यक्त किए थे···और मलया तब उनसे लिपट गयी थी।

यह बात मलया भूली नहीं थी···आज बीस दिन का सिंहशावक गोद में पड़ा था, फिर भी मलया के हृदय में प्रियतम की यह बात वैसे ही क्रीड़ारत थी, इसलिए उसने चंद्रावती नगरी की ओर जाने का निर्णय लिया था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६. एक और विपत्ति

प्रसूतिकाल के चालीस दिन आंख के एक निमिष मात्र में बीत गए।

गोदा वहां से विदा लेने मलया के पास पहुंची। उसके नयन सजल थे। मलया ने गोदा के चरणों में मस्तक झुकाकर कहा—'मां! तुमने मेरा और मेरे शिशु का संरक्षण किया है...मैं तुम्हारे उपकार का प्रत्युपकार किसी भी प्रकार नहीं कर सकती। उसे मैं जीवन भर भुला नहीं सकती। निःस्वार्थ भाव से की जाने वाली सेवा का मूल्य नहीं चुकाया जा सकता। किन्तु मां, तुमको मेरी एक बात माननी होगी।'

गोदा ने मलया की ओर सजल नयनों से देखा।

मलया के पास केवल एक मुद्रिका थी। वह रत्नजटित थी...वह महाबल की स्मृतिचिह्न थी। मलया ने मुद्रिका देते हुए गोदा से कहा—'मां! मेरी यह तुच्छ भेंट स्वीकार करो।'

मलया की भावना को आदर देती हुई गोदा ने बिना आनाकानी किए उस भेंट को स्वीकार कर लिया और उस मुद्रिका को अपनी अंगुली में पहन लिया।

तापसमुनि मलया की ओर देखकर बोले—'मलया! मुझे भी वृद्धा मां के साथ जाना पड़ेगा...संध्या से पूर्व मैं आ जाऊंगा...तू निर्भय रहना।'

मलया ने मस्तक झुकाकर स्वीकृति दी।

तापसमुनि और गोदा वहां से प्रस्थित हुए।

अभी दिन का प्रथम प्रहर चल रहा था। वातावरण अत्यन्त रम्य और मनोहर था। मलया का पुत्र पास में लेटा हुआ था और हाथ-पैरों को ऊपर उछाल रहा था।

तापस मुनि और गोदा जब दृष्टि से ओझल हो गए तब मलया भीतर आयी और बच्चे को लेकर इधर-उधर घूमने लगी।

वह महाबल की स्मृतियों में खोयी हुई अनेक प्रकार के चिन्तन करने लगी।

उसने सोचा—स्वामी कब मिलेंगे, कोई पता नहीं है। किन्तु स्वामी की यह स्मृति मेरे जीवन का निश्चित आधार बनेगी। इस बालक का भरण-पोषण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करना, इसे संस्कारी और शक्ति-संपन्न करना ही मेरा एकमात्र कर्तव्य है। इस कर्तव्य की पूर्ति में मेरा समय सुखपूर्वक बीत जाएगा।

नहीं, नहीं—प्रियतम जरूर मिलेंगे और मुझे स्वयं इस दिशा में प्रयत्न करना चाहिए। तापसमुनि की आज्ञा लेकर मुझे अपने पीहर पहुंच जाना चाहिए। वहां जाने पर पूरी व्यवस्था या खोज की जा सकेगी।

इस प्रकार चिन्तन में, नयी आशा की कल्पना में और पुत्र को खिलाने में मलया का पूरा दिन बीत गया।

सूर्य के अस्त होने से पूर्व ही तापसमुनि आश्रम में आ गए।

कुछ समय पूर्व ही बच्चा सो गया था। मलया ने बच्चे की ओर प्रसन्न दृष्टि से देखा और तापसमुनि की दिशा में चली गई।

मलया को देखकर तापसमुनि ने पूछा—'पुत्री! दोनों सकुशल तो हो?'

'हां, महात्मन्! आपकी कृपा से कुशलक्षेम है। अभी सूर्यास्त हो जाएगा, आप कुछ पल…'

'बेटी! अभी-अभी मैं गोदा के घर भोजन कर आया हूं। आज मार्ग में आते समय मुझे एक दिव्य वनस्पति मिली है…'कहते हुए तापसमुनि ने अपनी थैली में से बेर जितनी बड़ी चार-पांच गांठें निकालीं।

मलया ने आश्चर्य के साथ कहा—'दिव्य वनस्पति!'

'हां, यह वनस्पति अत्यन्त प्रभावशाली है। इसको कच्चे आम के रस में घिसकर ललाट पर तिलक करने से स्त्री पुरुष बन जाता है और पुरुष स्त्री बन जाती है। किन्तु इसमें एक कठिनाई है…।'

'कौन-सी कठिनाई, महात्मन्?'

'यह वनस्पति मेरे लिए किसी काम की नहीं है…जो स्त्री इसका तिलक करती है, वह पुरुष बन जाती है किन्तु जब तक उसके स्वामी अथवा प्रियतम के थूक से वह तिलक पोंछा नहीं जाता तब तक वह स्त्री अपने मूल रूप में नहीं आ सकती। इसी प्रकार इसका तिलक करने से पुरुष स्त्री हो जाता है…किन्तु जब तक वह तिलक उसकी प्रियतमा के थूक से मिटाया नहीं जाता, तब तक वह पुनः पुरुष-रूप में नहीं आ सकता।'

तापसमुनि की बात सुनकर मलया को अपने स्वामी के पास उपलब्ध गुटिका की स्मृति हो आयी। उसे यह भी याद आया कि वह अलंबाद्रि पर्वत की तलहटी के उस वन-प्रदेश में उसी गुटिका के प्रभाव से पुरुष रूप में परिवर्तित हुई थी और फिर सर्परूप प्रियतम के थूक से तिलक पोंछे जाने पर वह मूल स्त्री-रूप में आयी थी।

तापसमुनि ने विचारमग्न बनी हुई मलया की ओर देखकर पूछा—'पुत्री! विचारमग्न क्यों हो गयी?…'यह वास्तव में ही एक दिव्य वनस्पति है…ले, एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गांठ अपने पास रख।···किसी समय इसका उपयोग हो सकता है। कल प्रातःकाल ही मैं एक पर्वत की ओर जाऊंगा और संध्या होते-होते लौट आऊंगा।'

मलया ने उस वनस्पति की गांठ को अपने उत्तरीय के छोर से बांधते हुए कहा—'पर्वत पर!'

'हां, उस पर्वत पर एक आकाशगामिनी वनस्पति है···इसी ऋतु में वह प्राप्त हो सकती है।' कहता हुआ तापसमुनि कुटीर की ओर चला गया।

मलया भी पीछे-पीछे गई।

कुटीर के पास पहुंचकर तापस मुनि ने कहा—'पुत्री! पन्द्रह-बीस वर्षों से मैं इस आकाशगामिनी वनस्पति को प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा हूं···किन्तु मुझे सफलता नहीं मिली। इस बार दृढ़ विश्वास है कि तेरी जैसी सौभाग्यशालिनी के योग से मेरा श्रम सार्थक होगा।'

'महात्मन्! मैं तो आपके चरणों की रज हूं। क्या यह दिव्य औषधि कल ही प्राप्त हो जाने वाली है?'

'हां, पुत्री! कल मध्याह्न के समय नक्षत्रों का उचित योग हो रहा है। पुनः वैसा योग आगे नहीं है और यह ऋतु भी पूरी होने वाली है। अकेले रहने से तुझे कोई भय तो नहीं है?'

'नहीं, किन्तु मुझे आपसे कुछ परामर्श करना है।'

'परसों मैं कहीं नहीं जाऊंगा, यहीं रहूंगा। उस समय तुझे जो पूछना हो पूछ लेना, जो जानना हो जान लेना। आकाशगामिनी वनस्पति के विषय में कुछ पूछना है?'

मलया मौन रही। वह तापस की ओर देखती रही।

तापस बोला—'मलया! कल वह दिव्य वनस्पति मुझे प्राप्त हो जाएगी, फिर तू अपने बालक के साथ आकाशगमन का आनंद लेना। कुछ ही क्षणों में वह दिव्य वनस्पति तू जहां जाना चाहेगी, पहुंचा देगी। उस दिव्य वनस्पति को चावल के मांड में पीसकर पैरों के तलवे में लगाने से व्यक्ति फूल जैसा हल्का बन जाता है और वह पृथ्वी से एक कोस ऊंचा आकाश में उठ जाता है। फिर वह जिस दिशा में गति करना चाहे, कर सकता है।'

'अद्‌भुत वनस्पति! मैं श्री जिनेश्वरदेव से प्रार्थना करती हूं कि आपका प्रयत्न सफल हो।'

मुनि ने प्रसन्नवदन से मलया को आशीर्वाद दिया और कुटीर के भीतर प्रवेश किया।

मलया भी अपने कुटीर में आ गयी। बच्चा अभी सो रहा था।

मलया ने बालक को गोद में ले लिया, उसे स्तनपान कराते हुए सोचा—यदि वह आकाशगामिनी वनस्पति कल प्राप्त हो जाएगी तो वह अपने बालक को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साथ ले चंद्रावती नगरी की ओर प्रस्थान कर देगी।

जैसे दीपक का आलोक होता है, वैसे ही आशा का आलोक होता है। आशा का प्रकाश भीतर में पलता है। इसी आशा के आलोक में मनुष्य अपनी अनन्त वेदनाओं को भुला देता है। मनुष्य को यह ज्ञात नहीं है कि आशा स्वयं एक ठगिनी है। मनुष्य को फंसाने वाली यदि कोई वस्तु संसार में है तो वह आशा ही है। जो स्वयं ठगने वाली हो, उसका प्रकाश कैसे होगा ?

रात्रि का प्रथम प्रहर बीत गया। मलया अपने स्वामी के स्मृति-चिह्न बालक को पास में ले सो गयी। सोने से पूर्व उसने ध्यानस्थ होकर नमस्कार महामंत्र का जाप किया। तापसमुनि ब्रह्ममुहूर्त्त में उठ ध्यान की उपासना करने लगे।

उषा का प्रकाश पृथ्वी पर फैले, उससे पूर्व ही मलया शय्या से उठ गयी··· शिशु अभी भी घोर निद्रा में सो रहा था।

मलया ने पुत्र को एक वस्त्र ओढ़ाया। वह बाहर आयी तब तक तापसमुनि उस पर्वत की ओर प्रस्थान कर गए थे।

मलया ने प्रातःकर्म संपन्न किए। कुटीर की सफाई की।

इसी समय आश्रम के पीछे के मार्ग से बलसार नामक सार्थवाह का सार्थ उस मार्ग से निकला। रात्रि में वह सार्थ इसी वनप्रदेश में विश्राम करने ठहरा था। प्रातःकाल होते ही पूरा सथवाडा अग्रिम गंतव्य की ओर चल पड़ा। सभी लोग 'सागरतिलक' नगर की ओर जा रहे थे। बलसार श्रेष्ठी उसी नगर का बड़ा व्यापारी था।

मलया को यह ज्ञात था कि आश्रम के पीछे, कुछ ही दूरी पर एक राजमार्ग है···किन्तु यह राजमार्ग आबाद नहीं था। वर्ष भर में एक-दो बार कोई पथिक या सार्थ इस मार्ग पर आता था। मुनि ने मलया को यह जानकारी दी थी। मलया ने कभी इस मार्ग को देखा नहीं था।

और आज जब पूरा सार्थ उस मार्ग से गुजर रहा था, तब मलया नदी पर गई हुई थी। यदि वह आश्रम में होती तो सार्थ का कोलाहल अवश्य ही सुनती।

और सोया बालक जाग उठा···बालक का सबसे बड़ा शस्त्र होता है रुदन··· पास में मां को न देखकर बालक रोने लगा।

सारा सार्थ मार्ग पर आगे बढ़ चुका था। केवल बलसार का रथ पीछे आ रहा था। उसने इस अरण्य में बालक का रुदन सुना। तत्काल उसने सारथी को रथ रोकने का आदेश दिया। वह अपने साथी के साथ रथ से नीचे उतरा। जिस ओर से बालक के रोने की आवाज आ रही थी, वह उसी ओर चल पड़ा। आगे आते ही उसे दो कुटीर दीखे। उसने कांटों की बाड़ को लांघकर आश्रम में प्रवेश किया। कुटीर में आकर देखा कि कोई मनुष्य नहीं है, केवल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक दिव्य आकृति वाला शिशु रो रहा है।

बलसार तथा उसके साथियों ने आसपास देखा। कोई नहीं दीखा। बालक को देखकर बलसार आनंदित हो उठा। वह उसके मन को भा गया। उसने बालक को गोद में उठाया और अपने साथी की ओर मुड़कर कहा—'चल, विलम्ब मत कर। बालक भूख से रो रहा है।'

'हां, श्रीमन्! परन्तु लगता है कि इस कुटीर में कोई-न-कोई रह रहा है।'

'ठीक है···किन्तु क्या तू नहीं देखता कि बालक एकाध महीने का ही है। इसकी मां अपने प्रेमी के साथ यहां आयी होगी, बालक को जन्म दे, कुछ दिन रह, इसे यहां छोड़ चली गई होगी।'

'हां, ऐसा ही प्रतीत हो रहा है, अन्यथा ऐसे सुन्दर बालक को इस निर्जन प्रदेश में छोड़कर मां जा नहीं सकती।'

बालक अभी भी रो रहा था।

बलसार मध्यम वय वाला पुरुष था। परन्तु शक्ति-संपन्न था। उसके शरीर पर अलंकार शोभित हो रहे थे। लगता था कि वह धनकुबेर है। वह बालक को चुप करने का प्रयत्न करता हुआ, उसे लेकर चल पड़ा।

उसी समय मलया ने आश्रम में प्रवेश किया। उसने बालक के रुदन को सुना। वह कुटीर की तरफ चली। उसने देखा दो पुरुष चले जा रहे हैं। एक के हाथ में उसका प्रिय पुत्र है और वह जोर-जोर से चिल्ला रहा है।

यह दृश्य देखते ही मलया के कटिभाग पर स्थित जलकुंभ नीचे गिर पड़ा और फूट गया। घड़े के फूटने की आवाज को सुनकर बलसार ने पीछे मुड़कर देखा। पर शीघ्रता के कारण वह कुछ भी नहीं देख सका। वह तत्काल आगे बढ़ गया।

मलया किंकर्तव्यमूढ़ हो गई। उसने सोचा—इस अरण्य में कौन आया होगा? मेरे बालक को क्यों ले जाएगा? ले जाने वाला कौन है? उसने मन को मजबूत कर उस व्यक्ति के पीछे दौड़ना प्रारंभ किया और वह जोर-जोर से चिल्लायी।

सार्थवाह बलसार खड़ा हो गया। उसका साथी भी रुक गया। बलसार ने मलया की ओर देखा। उसको देखते ही वह चौंक पड़ा। ऐसा सौन्दर्य इस धरती पर? ऐसे भयंकर अरण्य में? निश्चित ही यह स्त्री इस बालक की माता है।

मलया निकट आकर बोली—'मेरे बालक को क्यों ले जा रहे हो?'

मलया के प्रश्न का उत्तर न देते हुए बलसार ने पूछा—'सुन्दरी! तू कौन है? इस भयंकर अरण्य में अकेली क्यों रहती है? तेरे रूप और लावण्य से प्रतीत होता है कि तू किसी बड़े कुल की है···ऐसे भयंकर वन में तुझे क्यों आना पड़ा?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्या कोई विपत्ति के वश में होकर आयी है ? क्या तेरे पति ने तेरा त्याग कर दिया है ? अथवा किसी ने तेरा अपहरण किया है ?'

'मैं कौन हूं और यहां क्यों रह रही हूं, यह जानना आपके लिए जरूरी नहीं है। आप मुझे मेरा पुत्र दें। रोते-रोते वह बेहाल हो रहा है।'

'देवी ! तू चिन्ता मत कर···मैं सागरतिलक नगर का निवासी हूं···मेरा नाम बलसार है···मेरे भवन में स्वर्ग-जैसा सुख है। मेरा सार्थ आगे निकल गया है। तू मेरे रथ में बैठ जा। मैं तुझे सुखी कर दूंगा।' बलसार ने कहा।

मलया समझ गई कि यह धनाढ्य है। इसकी आंखों में कामपिपासा नाच रही है। इसके आश्रय में जाना मेरे लिए हितकर नहीं है। उसने कहा—'श्रीमान् ! मैं एक ओछे कुल की नारी हूं। पति के साथ झगड़ा हो गया था, इसलिए घर छोड़कर यहां आ गई। मैं आपके साथ चल नहीं सकती···मैं अपने माता-पिता के साथ जाने वाली हूं। आप मुझे मेरा पुत्र जल्दी सौंप दें।'

'सुन्दरी ! तेरा रूप बोल रहा है कि तू ओछे कुल की नहीं है। फिर यदि तू कह रही है कि तू ओछे कुल की है तो मैं इस बात को छिपाकर रखूंगा। तू निर्भय होकर मेरे साथ चल। अपने भवन में मैं तुझे राजरानी से भी अधिक सुखी रखूंगा···तू जैसा कहेगी वैसा होगा···मैं भी तेरी आज्ञा में ही रहूंगा।' इतना कहकर बलसार मलया को लोलुपता की दृष्टि से देखने लगा।

'श्रीमन् ! आप कृपा कर मेरा पुत्र मुझे दे दें। मैं अपना स्थान छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगी। मुझे यहां रहने में तनिक भी दुःख नहीं है···दूसरे के सुख की आशा से स्वयं का दुःख बहुत उत्तम होता है।' मलया ने कहा।

बलसार ने अपने साथी से कहा—'तू बाड़ फांद दे। मैं फिर तुझे यह बालक दे दूंगा। हमें शीघ्र चलना है।'

'श्रीमन् !' मलया ने गद्‌गद स्वरों में कहा।

'सुन्दरी ! यदि तू अपने बालक को चाहती है तो मेरे साथ चल।' यह कहकर बलसार चलता बना।

मलया एक नयी विपत्ति में फंस गई। उसने सोचा—बलसार के साथ जाने से शील की रक्षा असंभव है···यदि न जाऊं तो जीवन की आशा से हाथ धोना पड़ेगा। अपने शील की रक्षा करना मेरे मनोबल पर निर्भर है। मैं किसी भी विपरीत संयोग में शील की रक्षा कर सकती हूं। यदि मैं इसके साथ नहीं जाती हूं तो चालीस दिनों का छोटा बालक रो-रोकर प्राण दे देगा।

बलसार का साथी बाड़ को लांघकर बाहर खड़ा था। बलसार ने रोते बालक को उसके हाथों में थमाया और वह बाड़ को लांघने की तैयारी करने लगा। इतने में मलया ने कहा—'आप जैसे श्रीमान् को ऐसा व्यवहार शोभा नहीं देता।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'सुन्दरी ! यह व्यवहार का प्रश्न नहीं है। तुझे देखकर देवता भी विचलित हो जाता है···मैं तो एक सामान्य मनुष्य हूं···तुझे और तेरे पुत्र को सुखी रहना है तो तू बाड़ लांघकर मेरे साथ रथ में बैठ जा।'

मलया के नयन सजल हो गए थे। बाड़ के बाहर उसका पुत्र रो रहा था। भूख के संताप से उसका चेहरा कुम्हला गया था।

क्या करूं ! तापसमुनि भी नहीं हैं। वे संध्या के समय यहां पहुंचेंगे। उसने कांपते स्वरों में कहा—'मैं साथ चलती हूं। परन्तु अपने प्रसूतिकाल पूरा होने से पूर्व मैं तेरी किसी भी कामना की पूर्ति नहीं कर सकूंगी।'

'सुन्दरी ! मैं तेरी इच्छा पूरी करूंगा।' कहते हुए बलसार ने अपनी कमर पर बंधी तलवार को मूठ से बाहर निकाला और उससे थूहर की बाड़ को इधर-उधर कर मलया के लिए रास्ता कर डाला।···मलया को आगे कर, वह रथ के पास गया। रथ के पास जाकर बलसार बोला—'सुन्दरी ! रथ में बैठ जा।'

'नहीं, मैं पैदल ही रथ के पीछे-पीछे चलूंगी।'

'देवी ! तू बैठ जा। हम तेरी अस्पृश्य अवस्था को देखते हुए दोनों पैदल चलेंगे।'

मलया रथ में बैठ गई।

बलसार के कहने से साथी ने बालक को मलया को सौंप दिया।

रथ गतिमान हुआ।

आज कोई दिव्य संपत्ति प्राप्त हुई हो, इसी उमंग में बलसार और उसका साथी—दोनों रथ के पीछे-पीछे चलने लगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४७. सागरतिलक नगर में

दो घटिका के पश्चात् बलसार मलया को लेकर अपने सथवाड़े से जा मिला। यात्रा चालू थी।

बलसार ने अपने लिए नया रथ तैयार करवाया और ऊर्मिला नामक अपनी विश्वस्त दासी को मलया के रथ में बिठाते हुए कहा—'ऊर्मिला ! इस सुन्दरी की प्रत्येक आज्ञा का पालन करना है। यात्रा में देवी को कष्ट न हो तथा इसे जो भी वस्तु चाहिए उसकी प्राप्ति तुझे करानी है। इतना ही नहीं, रात-दिन तुझे ही इसकी सेवा में रहना है।'

बलसार मलया को अपनी प्रियतमा बनाना चाहता था। वह स्वयं निःसंतान था, इसलिए मलया के पुत्र को अपने पुत्र के रूप में स्वीकार करना चाहता था।

वह व्यापारी था···वह अनेक देशों का पानी पी चुका था···उसने जान लिया था कि यह सुन्दरी सामान्य कुल की नहीं, किसी बड़े घराने की है। विपत्ति में फंसकर अटवी में आ पड़ी है। यह धमकाने या भय दिखाने से वश में नहीं होगी···ममता के साथ तथा प्यार भरे व्यवहार से ही यह हाथ में आ सकती है···इसलिए मुझे सबसे पहले इसका विश्वास प्राप्त करना होगा···किसी प्रकार की जल्दबाजी लाभप्रद नहीं होगी।

किन्तु बलसार के समक्ष अपनी पत्नी प्रियसुन्दरी का प्रश्न पर्वत जैसा बड़ा था। बलसार अपनी पत्नी के समक्ष लाचार बना रहता था। वह पत्नी को कष्ट देने की स्थिति में नहीं था। पत्नी को स्थिति ज्ञात होने पर वह कैसा रूप धारण करेगी, इसकी कल्पना बलसार को थी। इसलिए उसने निश्चय किया कि पत्नी प्रियसुन्दरी को इसकी भनक भी न मिले, अतः मलया को किसी अन्य भवन में ही रखना उचित होगा।'

मध्याह्न के बाद सार्थ ने एक सुन्दर जलाशय पर पड़ाव डाला।

मलया की एक तंबू में व्यवस्था करते हुए बलसार बोला—'सुन्दरी ! निश्चिन्त रहना। जैसा चाहोगी, वैसा होगा।'

'श्रीमन् ! मुझे और कुछ आकांक्षा नहीं है। आश्रय प्राप्त हो जाए, बस यही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तमन्ना है ।'

बलसार बोला—'आश्रय तो मिलेगा ही···किन्तु तेरी जहां इच्छा होगी, वहां मैं तुझे पहुंचा दूंगा। तूने अभी तक मुझे अपना नाम नहीं बताया?'

'मेरा नाम मलयासुंदरी है।'

'बहुत सुन्दर नाम है। हमें अभी सात-आठ दिन प्रवास में रहना होगा। फिर हम सागरतिलक नगर में पहुंच जाएंगे।'

इधर संध्या होते-होते आश्रम में वृद्ध तापसमुनि आ गए। उनका प्रयत्न सफल नहीं हो पाया था···आकाशगामिनी वनस्पति उन्हें प्राप्त नहीं हुई थी।

आश्रम में आते ही चौंके। मलया और बच्चा—दोनों वहां नहीं थे। सोचा, कहां चले गए?

मुनि ने बिना विश्राम किए सारा आश्रम और आसपास का उपवन छान डाला। मलया के कहीं चिह्न नहीं मिले।

तापसमुनि ने सोचा—अवश्य ही मलया के स्वजन आ गए हैं और उसे अपने साथ ले गए हैं···इसके बिना यहां कोई और विपत्ति आ नहीं सकती।

'जैसी शासनदेवी की इच्छा'—कहते हुए मुनि अपने आप में समाधान कर कुटीर में चले गए।

सात दिवस के बदले वह सार्थ बारहवें दिन सागरतिलक नगर में पहुंचा। मलया को एक सुन्दर और स्वच्छ भवन में रखा और अपनी विश्वस्त दासी ऊर्मिला को उसकी सेवा-चर्या में नियुक्त कर दिया।

बलसार मलया को पाने का उपक्रम कर रहा था। बार-बार उसने ऊर्मिला से कहा—'तू मलया को समझा-बुझाकर राजी कर। मैं तुझे अटूट संपत्ति दूंगा।'

'सेठजी! मैं प्रयत्न कर रही हूं, पर मुझे लगता है, वह अनोखी नारी है और इसको जबरदस्ती वश में नहीं किया जा सकता। आप धैर्य रखें। मेरा प्रयत्न चल रहा है। यदि आप मेरी बात मानें तो इसे वहां पहुंचा दें जहां वह जाना चाहती है।'

'ऊर्मिला! तू मेरे स्वभाव से परिचित नहीं है? मैं जिस बात को पकड़ लेता हूं, वह बात पूरी करके ही शान्त होता हूं। मलया को देखने के पश्चात् मेरा दिल तड़प रहा है। एक-एक क्षण भारी हो रहा है। दो दिन तेरे कहने से और प्रतीक्षा कर लेता हूं। फिर मैं नहीं रुकूंगा। मुझे जो करना, है वह करूंगा।'

सेठजी घर चले गए।

दो दिन बीत गए।

तीसरे दिन बलसार उस भवन के पास आया। ऊर्मिला से पूछा—'कहां है सुन्दरी?'

'ऊपर अपने खंड में बालक को जगा रही है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'मैं अभी उससे मिलना चाहता हूं।'

'हां, श्रीमन् ! मैं व्यवस्था करती हूं।' ऊर्मिला ऊपर के खंड में गई और बोली—'सेठजी पधारे हैं।'

मलया ने अपने वस्त्र ठीक किए और फर्श पर बैठ गई। सेठजी ने खंड में प्रवेश किया। मलया ने नमस्कार किया। कुशलक्षेम पूछने के पश्चात् बलसार बोला—'प्रिये ! जब से मैंने तुझे देखा है मैंने यह दृढ़ संकल्प कर लिया है कि मैं तुझे अपनी प्रियतमा बनाऊंगा। इतने दिनों तक मैंने धैर्य रखा है। अब मेरे धैर्य का बांध टूट गया है। देवी ! मेरी बात मानकर मेरे अटूट ऐश्वर्य की स्वामिनी बनने के लिए तैयार हो जा। मैं तुझे सोने से तोलूंगा। अलंकारों से लाद दूंगा और स्वर्गीय सुखों को पृथ्वी पर उत्पन्न कर दूंगा। आज तू निःसंकोच भाव से समर्पण कर और अपनी शालीनता का परिचय दे।'

'सेठजी ! परनारी को कुदृष्टि से देखना महान् पाप है। किसी पतिव्रता नारी का शील भंग करना महान् पातक है। आप यहां से चले जाएं, मैं अपना मार्ग स्वयं खोज लूंगी।'

'मलया ! मैंने तेरा मार्ग स्वयं खोज लिया है। मैं तुझे अपनी अंकशायिनी बनाए बिना अब नहीं रह सकता।' बलसार मलया की ओर बढ़ा।

मलया ने तेज आवाज में कहा—सार्थवाह ! वहीं खड़े रह जाओ। आगे मत बढ़ो। तुम्हें सती के सतीत्व का भान नहीं है। मैं अपने शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दूंगी पर अपने शील को सुरक्षित रखूंगी। समझे ?'

'क्या यह तेरा अंतिम उत्तर है ?'

'हां…'

'इसका अर्थ यह है कि मुझे तेरे पर बलात्कार करना होगा। मलया, तुझे तेरे शील का गर्व है तो मुझे मेरी संपत्ति का गर्व है। मेरे ऐश्वर्य की चमक-दमक के आगे तेरे जैसी हजारों रूपसियां न्यौछावर हो जाती हैं।'

बीच में ही मलया बोल पड़ी—'वे कुलीन नारियां नहीं, बाजारू स्त्रियां होती हैं। कोई भी आर्य नारी संपत्ति की चकाचौंध में नहीं फंसती।'

'मलया ! इसी क्षण मैं अपनी पिपासा पूरी करूंगा।' बलसार आगे बढ़ा और मलया का हाथ पकड़ लिया।

मलया ने झटके से अपना हाथ छुड़ाते हुए कहा—'नराधम ! लज्जा नहीं आती तुझे ! दुष्ट ! पापी ! ले, मैं तुझे स्वाद चखाती हूं।' यह कहती हुई मलया ने उसके गाल पर तमाचा मारा और उसकी असह्य वेदना से बलसार नीचे लुढ़क गया।

'मलया ! मैं स्त्री पर हाथ उठाना नहीं चाहता। तूने मुझे तमाचा नहीं मारा है, अपने भाग्य पर तमाचा मारा है। इसका भयंकर परिणाम तुझे भुगतना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पड़ेगा।'

'मौत के सिवाय कोई दूसरा भयंकर परिणाम नहीं है और मुझे मौत का भय नहीं है।'

बलसार का क्रोध सीमा पार कर गया था। किन्तु एक ही तमाचे ने उसे दिन में तारे दिखा दिए थे···दूसरी बार बलात्कार का प्रयत्न करने के लिए उसने सोचा, पर विचार बदल गया।

वह तत्काल पलंग की ओर बढ़ा और उस पर सो रहे बच्चे को लेकर खंड से बाहर आ गया। उसने कक्ष का द्वार बंद कर बाहर से ताला लगा दिया।

मलया ने बंद द्वार के पास आकर गिड़गिड़ाते हुए कहा—'सेठजी! मेरा पुत्र मुझे लौटा दें।'

'जिस दिन तू अपनी इच्छा से मेरी बनेगी, उसी दिन तेरा पुत्र मिलेगा।'

जाते-जाते बलसार ने ऊर्मिला से कहा—'मलया कहीं भाग न जाए, यह जवाबदेही तेरी है।'

ऊर्मिला मौन रही।

बालक रो पड़ा।

बलसार रोते हुए बालक को लेकर रथ में बैठ अपने भवन की ओर चला गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४८. समुद्र-यात्रा की पृष्ठभूमि

पति बलसार की प्रतीक्षा करती-करती प्रियसुन्दरी मध्यरात्रि में निद्राधीन हुई। आज उसके मन में अनेक विचार उमड़ रहे थे। उसने यह निश्चय कर लिया था कि अब वह कभी पतिदेव को रात्रि के समय घर से बाहर नहीं जाने देगी।

जिस स्त्री को अपने पति के चरित्र के प्रति संदेह होता है उसकी मनोवेदना अत्यन्त तीव्र होती है। और मन में जो संशय प्रवेश कर जाता है वह शल्य की भांति निरंतर चुभता रहता है।

अपने पति का चरित्र पवित्र नहीं है, यह बात प्रियसुन्दरी जानती थी।··· पर भला वह कर ही क्या सकती थी! अनेक बार उसे कड़वी घूंट पीनी पड़तीं ···अब उसे पति का यह बरताव असह्य लगने लगा था।

रात्रि के तीसरे प्रहर के अन्त में बलसार आ पहुंचा। उसके दोनों हाथों में मलया का बालक था और वह रो रहा था।

अपने खंड में बालक का रुदन सुनकर प्रियसुन्दरी जागृत हो गई और वह बिछौने पर बैठ गई। दीपक के मंद प्रकाश में उसने देखा कि बलसार एक बालक को लिये खड़े हैं और वह बालक रो रहा है।

प्रियसुन्दरी दो क्षण पर्यन्त अवाक् खड़ी रही। वह कुछ प्रश्न करे, उससे पूर्व ही बालक को पत्नी के हाथों में थमाते हुए बलसार बोला—'प्रिये! आज भगवान् ने अपनी इच्छा पूरी की है।'

'किन्तु यह बालक है किसका?'

'तू इसके गौर वदन और तेजस्वी नयनों की ओर तो देख, ऐसा बालक देवदुर्लभ होता है।' कहते हुए बलसार ने पत्नी के कंधे पर हाथ रखा।

प्रियसुन्दरी ने बालक के गौर वदन की ओर निहारकर कहा—'पहले मेरे प्रश्न का उत्तर दें। आप यह बालक कहां से उठा लाये हैं? क्या यह आपकी किसी रखैल का तो नहीं है?'

'प्रिये! क्या कह रही है? पहली बात तो यह है कि तेरे रहते मैं किसी रखैल के पास आता-जाता रहूं, यह असंभव कल्पना है। यह बालक भाग्य से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राप्त हुआ है।'

'कैसे मिला ?'

'तू जानती है, कल मैं महाराजा से मिलने गया था। वहां से लौटते समय अशोक वनिका के पास मेरा रथ पहुंचा। वहां मेरे कानों में बालक के रुदन की आवाज आयी। मैंने रथ को रोका। मैं रोते हुए बालक के पास पहुंचा। वह एक वृक्ष के नीचे सो रहा था। आसपास कोई नहीं था···फिर भी मैं अर्धघटिका पर्यन्त चारों ओर देखता रहा, कोई नहीं आया। मैंने सोचा—कोई विधवा अथवा कुमारी व्यभिचारिणी अपना पाप छिपाने के लिए बालक को एकान्त में छोड़ चली गई है···अतः भाग्य का वरदान मानकर मैंने इस बालक को उठा लिया। अब इस बालक की तू ही माता है···अब तुझे ही इसे संस्कारी बनाना है। मैं एक-दो दिन में किसी धायमाता की व्यवस्था कर दूंगा।'

प्रियसुन्दरी सब कुछ भूल गई और वह बालक के मनमोहक चेहरे को देखने लगी। वह बोली—'निश्चित ही हमारा भाग्य फला है। इस बालक का नाम क्या रखें ?'

'मेरे नाम के आदि के दो अक्षर और तेरे नाम के अन्त के तीन अक्षर···'

'क्या ऐसा नाम हो सकता है ? क्या यह बालिका है ?'

'बलसुन्दरी नहीं, बलसुन्दर।'

'बहुत सुन्दर नाम।' कहती हुई प्रियसुन्दरी ने बालक को हृदय से चिपका लिया।

रोता-रोता बालक निद्राधीन हो गया।

मध्याह्न के पश्चात् बलसार घर से निकला और सीधा अपने गुप्तगृह में आया और अपने खंड की चाबी ऊर्मिला को सौंपते हुए बोला—'ऊर्मिला! तू मलया के विषय में सावचेत रहना। जब वह मेरी बनेगी तब ही अपने पुत्र को देख पाएगी, यह बात तू उसे समझाते रहना···एक सप्ताह के बाद मैं सामुद्रिक यात्रा के लिए प्रयाण करूंगा। मैं तुझे और मलया को भी साथ ले जाना चाहता हूं। यदि इन सात दिनों के भीतर मलया मुझे स्वीकार कर लेती है तो मैं अपनी यात्रा स्थगित कर दूंगा।'

ऊर्मिला बोली—'सेठजी! किसी को बलपूर्वक अपना नहीं बनाया जा सकता। आप इस तथ्य को क्यों भूल रहे हैं ?'

'ऊर्मिला! मैं तेरी बात बराबर समझ रहा हूं; परन्तु मैं तुझे किन शब्दों में बताऊं कि मैं मलया के बिना जी नहीं सकता। आज मैं जा रहा हूं। दो दिन बाद पुनः आऊंगा। मुझे लगता है, दो-तीन दिन में इसका आग्रह कम हो जाएगा।'

'इसका पुत्र···'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'उसका नाम बलसुन्दर रखा है और वह मेरी संपत्ति का स्वामी होगा। वह मेरे भवन में ही है। तेरी सेठानी की गोद इस प्रकार भर चुकी है और वह अत्यन्त प्रसन्न है।'

बलसार ऊर्मिला को और अनेक सूचनाएं देकर चला गया।

ऊर्मिला मलया के कक्ष में गई। मलया चिन्तामग्न बैठी थी। ऊर्मिला को देखते ही वह खड़ी हो गई और बोली—'क्या है ?'

'आपके लिए भोजन सामग्री लायी हूं।'

'नहीं, मुझे इस दुष्ट व्यक्ति के घर का अन्न-जल नहीं लेना है। इतने दिन तू मेरी सखी के रूप में साथ रही, पर तूने मुझे पहले से सचेत नहीं किया ?'

'देवी ! आप त्वरा न करें। सब कुछ ठीक हो जायेगा। सेठजी तो आपको ताले में बंद कर चले गए थे। अभी-अभी जब वे आए तब मैंने बड़ी मुश्किल से चाबी ली है।'

'ऊर्मिला ! मुझे कुछ भी खाना-पीना नहीं है। यदि मेरे प्रति तेरी तनिक भी सहानुभूति है तो मुझे यहां से मुक्त कर दे। शासनदेव तेरा भला करेगा। मैं तुझे जीवनभर नहीं भूलूंगी।'

'देवी ! आप जल्दबाजी न करें···कल द्वार बंद थे। फिर भी आपने अपने सतीत्व की रक्षा के लिए सेठजी को जो तमाचा मारा था, वह मुझे बाहर सुनाई दिया था। आप जैसी तेजस्वी नारी का कौन बाल बांका कर सकता है ! आप यहां से चली जाएंगी तो पुत्र का क्या होगा ? आप धैर्य रखें···सेठजी मुझे अभी-अभी कह गए हैं कि जब मलया अपने विचारों में परिवर्तन लायेगी तब ही उसे उसका पुत्र मिल सकेगा, अन्यथा नहीं। आपको समझाने का उत्तरदायित्व उन्होंने मुझे दिया है। आप धैर्य रखें। आप अपने विचारों पर दृढ़ रहें।'

मलया का हृदय पुत्र-प्राप्ति के लिए छटपटाने लगा।

उधर बलसार के भवन में कल्लोल नाच रहा था। बलसुन्दर को योग्य धायमाता मिल चुकी थी। इसलिए उसका रुदन बंद हो गया था···और प्रियसुन्दरी उस बालक को क्षणभर के लिए भी आंखों से ओझल नहीं होने देती थी। उसने उस बालक को आत्मज ही मान लिया था।

दो दिन बीत गए। बलसार अपने गुप्त भवन में आ पहुंचा।

ऊर्मिला ऊपर के खंड में मलया के साथ बातें कर रही थी।

एक दासी ने सेठजी के आने का संदेश ऊर्मिला को सुनाया। वह तत्काल खड़ी हुई वह बाहर आए, उससे पूर्व ही बलसार ऊपर आ गया।

ऊर्मिला मुड़ी। बलसार मलया के खंड में गया और बोला—'मलया ! ऊर्मिला ने तुझे सब कुछ बताया ही होगा।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलया बोली नहीं। उसने बलसार की ओर देखा तक नहीं। बलसार ने खड़े-खड़े कहा—'मलया, मैं तुझे पांच दिन की और अवधि देता हूं। तू सोच ले। तू भूल मत जाना कि तेरा पुत्र मेरे हाथ में है। यदि तू अपने पुत्र का मुख देखना चाहती है तो प्रेम और उल्लास से मेरी बन जा।'

मलया मौन रही।

बलसार ऊर्मिला को नीचे आने के लिए कहकर चला गया।

बलसार के जाने के पश्चात् ऊर्मिला ने मलया से कहा—'देवी! धैर्य न खोएं···आपको प्राप्त करने के लिए सेठजी के पास आपका पुत्र ही चाबीरूप है। उसे कैसे प्राप्त किया जाए, यह मैं निरन्तर सोच रही हूं।'

मलया ने ऊर्मिला की ओर विश्वासभरी नजरों से देखा।

ऊर्मिला नीचे चली गई।

बलसार ऊर्मिला की प्रतीक्षा कर रहा था। ऊर्मिला ने खंड में प्रवेश किया। बलसार ने तत्काल पूछा—'ऊर्मिला! क्या मलया का चिन्तन कुछ बदला है?'

'सेठजी! मैंने उसको समझाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। किन्तु यह नारी बेजोड़ है।···यह किसी भी शर्त पर अपना सतीत्व बेचने के लिए तैयार नहीं है···एकमात्र पुत्रमोह के लिए शायद···।'

बीच में ही बलसार बोला—'ऊर्मिला! यदि यह कार्य तू सफलतापूर्वक कर देगी तो मैं तुझे दस लाख स्वर्णमुद्राएं दूंगा···इतना ही नहीं, अपना यह भवन मैं तुझे दूंगा और तुझे दासत्व के बंधन से भी मुक्त कर दूंगा।'

इस प्रलोभन से ऊर्मिला के नयन चमक उठे। प्रलोभन की उपेक्षा करना एक महान् व्यक्ति का काम हो सकता है, परन्तु ऊर्मिला तो एक दासी थी।

बलसार ने ऊर्मिला के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा—'यदि मलया यहां नहीं समझेगी तो तू उसे समुद्र-प्रवास के समय समझा सकेगी। इसलिए मैं सामुद्रिक यात्रा में तुझे साथ ले चलूंगा। तू सावचेत रहना। तुझे विश्वास में ले वह कहीं भाग न जाए!'

'आप निश्चिन्त रहें, मैं प्रयत्न करूंगी। उसमें कोई कमी नहीं रखूंगी। किन्तु आपने जो वचन दिया है···'

'तू कुछ भी सन्देह मत कर। मैं अपने वचन का अक्षरशः पालन करूंगा।' कहते हुए बलसार ने ऊर्मिला को प्रेमभरी नजरों से देखा और वहां से चला गया।

भवन पर आकर उसने देखा कि प्रियसुन्दरी उद्यान में बैठी-बैठी बलसुन्दर को क्रीड़ा करा रही है।

स्वामी को देखते ही वह बोली—'इधर आएं तो सही।'

बलसार पत्नी के पास गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फिर दोनों कक्ष में आ गए। बलसार ने कहा—'प्रिये ! चार-पांच दिनों के पश्चात् मुझे समुद्र-प्रवास के लिए जाना होगा।'

'क्यों ?'

'महाराजा के लिए कुछ माल खरीदना है और वे मेरे सिवाय दूसरों पर इतना विश्वास नहीं करते। यदि मैं जाने से इनकार करता हूं तो संभव है वे कुपित होकर हमारी संपत्ति छीन लें।'

'सागर-प्रवास में तो एक वर्ष बीत जाएगा ?'

'नहीं, प्रिये ! बहुत दूर नहीं जाना है। आने-जाने में एकाध महीना लग सकता है और वहां रहने में एकाध महीना और लग सकता है।'

'जैसी आपकी इच्छा।' प्रियसुन्दरी ने कहा।

रात बीत गई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६. ऊर्मिला का छल-प्रपंच

ऐसा सुन्दर भवन प्राप्त हो, दस हजार स्वर्णमुद्राएं मिलें और दासत्व की बेड़ियां टूट जाएं...

मात्र मलयासुन्दरी समझे तो।

बलसार के जाने के पश्चात् इन विचारों के झूले में झूलती हुई ऊर्मिला ऊपर के खंड में मलया के पास गई। मलयासुन्दरी गंभीर विचार-मुद्रा में बैठी थी। मलया के मुरझाए चेहरे को देखते ही ऊर्मिला का स्वप्न टूट गया।...निर्मल पवित्र और सत्वशील नारी को कौन समझा सकता है...वह बोली—'देवी! कौन से विचार आपके हृदय को विदीर्ण कर रहे हैं?'

'ऊर्मिला! जिन्दगी का अपर नाम है वेदना...संसार के सुख-दुःख में फंसा हुआ कौन जीव वेदना-मुक्त होता है? क्या वह दुष्ट चला गया?'

'हां, देवी!...किन्तु आप कुछ गंभीर विचार कर रही हैं। ऐसा मुझे लग रहा है।'

'ऊर्मिला! तू दासी नहीं, मेरी बहन है...मेरे मन में वे ही विचार आते रहते हैं...मेरा पुत्र मुझे कब मिलेगा? मैं इस पापी के पंजों से कब छूटूंगी?'

ऊर्मिला ने मधुर स्वरों में कहा—'देवी! मुझे एक सुन्दर उपाय सूझ रहा है।'

'बोल...'

'आपको कुछ अभिनय करना होगा।'

'अभिनय?'

'हां, एक बार आप सेठजी को विश्वास में ले लें। उनकी इच्छापूर्ति के लिए अभिनयपूर्वक स्वीकृति दे दें...फिर जब पुत्र मिल जाए तब चुपके से पलायन कर दें।'

मलया ने गंभीर होकर कहा—'बहन, ऐसा अभिनय करना भी शीलवती के लिए दूषणरूप है। मुंह से उसकी पापेच्छा को स्वीकृति देना और मन में कुछ और रखना, यह भी सतीत्व की एक विडंबना है...कोई भी सत्य असत्य के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वस्त्रों में सुशोभित नहीं हो सकता···सत्य की मर्यादा अनूठी होती है।'

ऊर्मिला ने मन-ही-मन सोचा—यह नारी किसी के महा साम्राज्य के समक्ष भी झुकने वाली नहीं है। कोई भी प्रलोभन इस सत्वशील नारी में लालच पैदा नहीं कर सकता। वह बोली—'देवी! कभी-कभी आपद्धर्म का सहारा भी लेना पड़ता है।'

'ऊर्मिला, ऐसा करना मेरे लिए असंभव है। मैं प्राणों का विसर्जन कर सकती हूं, पर झूठा अभिनय नहीं कर सकती। अभिनय रंगमंच पर शोभा दे सकता है, पर वास्तविक जीवन का संघर्ष अभिनय से विकृत हो जाता है।'

ऊर्मिला ने सोचा—मलया किसी भी उपाय से परपुरुष को स्वीकार नहीं करेगी···बस, एक बार वह नौका में बैठकर सेठजी के साथ समुद्र-यात्रा के लिए चल पड़े तो संभव है कि लम्बे समय तक इसके मन को समझाने का प्रयत्न सफल हो जाए···किन्तु इस तेजस्विनी नारी के मन को पिघलाना अत्यन्त दुष्कर कार्य है।

अपनी रक्षा का एक उपाय मलया के पास था···किन्तु अभी उस उपाय को काम में लेना संभव नहीं था। तापसमुनि ने मलया को यौन-परिवर्तन घटित करने वाली एक वनस्पति दी थी···किन्तु आम्ररस में घिसकर ही उसका तिलक करना पड़ता था···और इस ऋतु में पका आम मिलना दुष्कर था। तापसमुनि द्वारा प्रदत्त उस दिव्य वनस्पति को मलया ने पूर्ण सावधानी से संभालकर रखा था।

चार दिन और बीत गए। इन चार दिनों के बीच बलसार दो बार आया था और ऊर्मिला से मिलकर चला गया था। आज रात्रि में यानपात्र में बैठ जाना था क्योंकि वह यानपात्र प्रातःकाल ही सामुद्रिक यात्रा के लिए प्रस्थान करने वाला था।

बलसार पत्नी प्रियसुन्दरी से विदा लेकर रात्रि के प्रथम प्रहर में ही सामुद्रिक तट पर पहुंच गया। पत्नी के मन पर एक प्रकार का असन्तोष तो रह ही गया था, किन्तु बलसुन्दर की प्राप्ति से उसका चित्त परम प्रसन्न था।

रात्रि का प्रथम प्रहर पूरा होते ही बलसार के गुप्त भवन के द्वार पर एक रथ आ गया। ऊर्मिला ने मलयासुन्दरी से कहा—'देवी! चलो, हमें अभी जाना है।'

'कहां?'

'आपके पुत्र को लेने के लिए। जल्दी तैयार हो जाएं। समय बहुत कम है··· बाद में आगे की चर्चा करेंगे।'

मलया अवाक् रह गई···किन्तु उसका ऊर्मिला के प्रति विश्वास था, इसलिए वह तत्काल तैयार हो गई। तापसमुनि द्वारा प्रदत्त वह दिव्य औषधि उसके पास ही थी।

बलसार द्वारा बताई गयी योजना के अनुसार यहां से मात्र पहने हुए कपड़े

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेकर ही प्रस्थान करना था, क्योंकि ऊर्मिला और मलया के लिए बलसार ने उत्तम वस्त्रालंकारों की सुन्दर व्यवस्था यानपात्र में पहले से ही कर रखी थी।

एक-दो घटिका के बाद मलया और ऊर्मिला दोनों रथ में आकर बैठ गईं। रथ पवनवेग से चला। रात्रि का अंधकार व्याप्त हो चुका था। मलया के हृदय में रात्रि के अंधकार जैसा ही एक प्रश्न चक्कर लगा रहा था। ऊर्मिला के साथ कहां जाना है?

उसने रथ के बाहर झांका। उसे प्रतीत हुआ कि रथ निर्जन प्रदेश में जा रहा है।···वह नगरी की सीमा से बाहर निकल गया है, ऐसा लग रहा था।

मलया ने प्रश्न किया—'बहन! हम किस ओर जा रहे हैं?'

'बंदरगाह की ओर···'

'बंदरगाह की ओर···वहां क्यों?'

'देवी! आपके पुत्र को प्राप्त करने का यह अंतिम उपाय है···यदि यह उपाय नहीं किया गया तो पुत्र-प्राप्ति की आशा को सदा के लिए त्याग देना होगा।'

'किन्तु बन्दरगाह पर क्यों?'

'आज प्रातःकाल सेठजी आपके पुत्र को यानपात्र में कहीं भेजने वाले हैं। पहले हम उस हृदयहार को प्राप्त कर लें, फिर हम यहां से भाग जाएंगे। मैं आपके साथ ही रहूंगी।'

'ओह!' कहते हुए मलया ने अपने दोनों हाथों से सिर को दबाया और रथ समुद्रतट पर पहुंच गया।

वहां एक नौका पहले से ही तैयार खड़ी थी। ऊर्मिला मलया को साथ लेकर उस नौका में बैठी। और वह नौका यानपात्र की ओर गतिमान हुई।

मलया के मन में यह आशंका पैदा हुई कि कहीं यह बलसार का षड्यन्त्र तो नहीं है। उसने ऊर्मिला से पूछा—'बहन! मेरा मन कह रहा है कि यह बलसार की चाल है। तू मेरे साथ विश्वासघात तो नहीं कर रही है?'

'देवी! सच-सच कह दूं? सेठ बलसार आज आपका बलात् अपहरण कर ले जाने वाले थे···आपको पीड़ा होती···वह मेरे लिए असह्य थी, इसलिए मैंने उन्हें वचन दिया था कि मैं स्वयं देवी को लेकर आऊंगी।'

'मुझे कहां ले जाना चाहता था?'

'देवी! मैं यह सब नहीं जानती। आप विश्वास करें कि मैं आपके साथ छाया की भांति रहूंगी।'

'तब मेरा पुत्र···'

'बलसार के पास है···अब हमें वही प्रयत्न करना है।' ऊर्मिला ने कहा।

मलया तत्काल नौका में खड़ी होकर बोली—'ऊर्मिला! मेरे बालक का जो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होना है, वह होगा···मैं अपना मार्ग पकड़ लेती हूं।'

ऊर्मिला भी खड़ी हो गई और उसने सागर में कूदने के लिए तत्पर मलया को बांहों में जकड़कर कहा—'देवी ! आपने इतना धैर्य रखा, अब जल्दबाजी न करें। तेल देखें, तेल की धार देखें···प्राण-त्याग का अंतिम मार्ग तो हाथ में है ही···'

मलया इसे अपने पूर्वभव का कर्म-विपाक मानकर बैठ गई। आपत्तिकाल में पंच परमेष्ठी का जाप ही श्रेयस्कर होता है, यह उसके हृदय की आवाज थी। वह मंत्र-जाप करने लगी।

दो-एक घटिका के पश्चात् नौका यानपात्र तक पहुंच गयी। ऊर्मिला मलया को साथ लेकर वाहन पर चढ़ गयी।

बलसार एक ओर छिपकर खड़ा था। वह मलया की ओर देख रहा था।

ऊर्मिला मलया को साथ लेकर एक खंड में गयी। मलया ने देखा यानपात्र के उस खंड में एक दीपक जल रहा है। एक ओर छोटा पलंग बिछा हुआ है। एक ओर त्रिपदी पर जलपात्र पड़ा है और एक ओर नीचे गद्दी बिछी हुई है।

मलया फर्श पर बिछी गद्दी पर जाकर बैठ गयी।

मलया ने कहा—'ऊर्मिला ! मेरे साथ तूने छल न किया हो, पर मूर्खता अवश्य की है। किन्तु तेरा कोई दोष नहीं है। मेरे ही पाप-कर्मों का यह विपाक है।'

ऊर्मिला ने मन-ही-मन सोचा—स्वार्थ के लिए मैंने एक भयंकर अपराध कर डाला है, पर अब लाचार हूं।

यानपात्र गतिमान हुआ।

मलया एक छोटे गवाक्ष के पास गई। ऊर्मिला अभी सो रही थी। प्रभात के सुखद समीर का स्पर्श हो रहा था।

प्रभात हुआ।

ऊर्मिला जाग गई। उसने मलया से कहा—'देवी ! सेठजी साथ ही हैं। आप उनके मन में करुणा उत्पन्न करने का प्रयत्न करें।'

'बलसार साथ में है ?'

'हां।'

'मेरा पुत्र कहां है ?'

'संभव है वह साथ में ही हो। बलसार ने उसका नाम बलसुंदर रखा है। अब आप बलसार के हृदय को बदलने का प्रयास करें।'

मलया मौन रही।

इतने में ही किसी ने खंड का द्वार खटखटाया।

ऊर्मिला ने द्वार खोला। बलसार भीतर आया। उसने मलया की ओर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देखकर कहा—'सुन्दरी ! केवल तेरे लिए ही मैंने इस प्रवास की व्यवस्था की है···तू मेरी बात मान जा और मेरे हृदय की रानी बन जा···'

'श्रीमन् ! आपके लिए ये शब्द शोभा नहीं देते । मेरा निश्चय अटल है। ऊर्मिला ने यदि मूर्खता नहीं की होती तो मैं सागर-प्रवास के लिए नहीं आती··· केवल पुत्र की प्राप्ति की आशा लेकर आयी हूं···आप मेरा पुत्र मुझे सौंप दें। मैं कहीं चली जाऊंगी।'

हंसते हुए बलसार बोला—'सुन्दरी ! जिस क्षण तू मेरी बनेगी, उसी क्षण तेरा पुत्र तुझे मिल जाएगा। वह मेरी संपत्ति का स्वामी भी होगा। तू आग्रह मत कर।'

'मेरा पुत्र इस समय कहां है ? मुझे एक बार उसका मुंह देख लेने दें।'

'प्रिये ! तेरा पुत्र मेरे भवन में है और वह पूरे लालन-पालन के साथ वृद्धिगत हो रहा है। तू मेरी बात मान लेती है तो मैं अभी यानपात्र को सागरतिलक नगर की ओर मोड़ दूंगा।'

मलया के नेत्र लाल हो गए थे। उसने संयमित स्वरों में कहा—'सेठजी ! यदि आप मेरे पुत्र को रखना चाहें तो रखें। आप मेरे पर यह उपकार करें कि आप मुझे यहां से अपने भाग्य भरोसे जाने दें। मुझे यहां से मुक्त कर दें। यह उपकार भी मैं बहुत मानूंगी। मैं आपको अपने माता-पिता के समान मानती हूं। आप बेटी का आशीर्वाद प्राप्त करें···आप अपनी पुत्री को और कुछ न दे सकें तो कम-से-कम मुक्ति तो दें। मैं येन-केन-प्रकारेण अपने स्वामी को ढूंढ़ लूंगी।'

पत्थर पर कितना ही पानी डाला जाए, पर वह कभी गीला नहीं होता।

बलसार ने ऊर्मिला की ओर देखकर कहा—'ऊर्मिला ! मलया मेरी अन्तर्वेदना नहीं समझ रही है। लगता है मुझे और प्रतीक्षा करनी पड़ेगी···तू इसके पास ही रहना। और जब इसके विचारों में परिवर्तन हो, तब मुझे बधाई देने के लिए चली आना।'

इतना कहकर बलसार चला गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५०. शील की रक्षा

समुद्र शांत और गंभीर था। यानपात्र में यात्रा करते-करते छह दिन बीत चुके थे। सातवें दिन बलसार ने ऊर्मिला को बुलाकर कहा—'प्रिय ऊर्मिला ! मैं मलया के बिना एक पल भी नहीं रह सकता। तू मेरी वेदना को नहीं जानती।'

'सेठजी ! मैं आपकी काम-वेदना की कल्पना कर सकती हूं।...किन्तु यह नारी भय से, कला से या बल से—किसी भी प्रकार वश में होने वाली नहीं है।'

'ऊर्मिला ! तेरे कथनानुसार मैं छह दिन तक नहीं आया। अब मेरे लिए रह पाना असंभव है।'

'सेठजी ! धैर्य रखें। मेरा प्रयत्न चालू है।'

काम की पीड़ा असह्य, अंधी और विवेक को नष्ट करने वाली होती है। फिर भी बलसार ने ऊर्मिला की बात मान ली।

छह दिन और बीत गए।

एक दिन बलसार ने ऊर्मिला से कहा—'ऊर्मिला ! आज का पूरा दिन और कल सायं तक मैं तुझे मलया को समझाने का समय देता हूं। यदि इस समय-मर्यादा में वह समझ जाती है तो उत्तम है, अन्यथा कल रात मुझे उसके साथ जो करना है, करूंगा। विधाता भी मुझे रोक नहीं सकेगा।'

ऊर्मिला बोली नहीं, मौन हो चली गई।

इतने दिनों के सहवास से वह समझ चुकी थी कि सेठ के प्रलोभन के वश में होने के बदले इस तेजस्विनी नारी के सतीत्व को नमन करना श्रेयस्कर है। वह मलया के पास आकर बोली—'देवी ! विपत्ति के बादल दूर हों, ऐसा नहीं लगता। आज की रात और कल का दिन मेरे हाथ में है। कल की रात वह कामी जो करेगा, वह करेगा।'

मलया ने हंसते हुए कहा—'अब तू तनिक भी चिंता न कर। अशक्य को कोई शक्य नहीं बना सकता। नींव का पानी कभी छत पर नहीं चढ़ता। कल रात बलसार आएगा तो समझ लूंगी। ऊर्मिला ! यदि तू मुझे एक कटारी ला दे तो मैं उस नराधम से अपने सतीत्व का रक्षण कर लूंगी।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऊर्मिला ने एक तेज कटारी ला दी।

मलया ने उसे अपनी कमर में छिपाकर बांध ली।

दूसरा दिन पूरा हुआ। रात आयी और साथ ही साथ बलसार ने मलया के खंड में प्रवेश किया। उसने आते ही ऊर्मिला से कहा—'तू बाहर जा।'

ऊर्मिला धड़कते हृदय से बाहर निकल गई। बलसार ने खंड का द्वार बंद कर सांकल लगा दी।

उसने मलया से कहा—'प्रिये! प्रेम से मेरे वश में होना ही श्रेयस्कर है। तू आग्रह छोड़ दे।'

मलया ने अपना दृढ़ निश्चय दोहराया।

बलसार आज निश्चय करके ही आया था। उसने मलया को समझाया पर वह अपने निश्चय पर अटल रही।

बलसार बोला—'क्या तुझे तेरा पुत्र प्रिय नहीं है?'

'प्रिय है और वह प्राणों से भी अधिक प्रिय है; किन्तु मेरे शील से वह अधिक प्रिय नहीं है।'

'मलया! आज मैं किसी भी प्रकार से तुझे प्राप्त करके ही रहूंगा। मैं तेरे चरित्र को भ्रष्ट कर तेरे शील के गर्व को चकनाचूर करना चाहता हूं। तू मान जा और सहर्ष समर्पण कर दे।'

'सेठ! जब तक मेरे शरीर में प्राण हैं, कोई मुझे शीलभ्रष्ट नहीं कर सकता। यह भारतीय नारी का रूप है।' यह सुनते ही बलसार उठा और मलया की ओर लपका। मलया पीछे हट गयी और बलसार धड़ाम से नीचे बिछी शय्या पर जा पड़ा।

दूसरी बार कामांध बलसार ने दोनों हाथ फैलाकर मलया को बांहों में जकड़ना चाहा, पर मलया छिटक गई और बलसार भीत से जा टकराया।

वह पुनः खड़ा हुआ और बोला—'इतना अहंकार? आज मैं तेरे अहं को पैरों तले रौंद दूंगा और अपनी वासना पूर्ण करूंगा।' कहता हुआ बलसार आगे बढ़ा और तपाक से मलया का हाथ पकड़ लिया।

मलयासुंदरी ने एक झटके में अपना हाथ छुड़ा लिया और बलसार के जबड़ों पर जोर से चपेटा मारते हुए कहा—'दुष्ट! नराधम! पापी! अपना काला मुंह लेकर शीघ्र भाग जा।'

इस तीव्र चपेटा-प्रहार से बलसार तिलमिला उठा। उसका एक दांत टूटकर बाहर आ पड़ा। मुंह से रक्त बहने लगा। वह क्रोधावेश में बोला—'आज तूने अपने भाग्य का तिरस्कार किया है।' यह कहता हुआ वह पुनः मलया का हाथ पकड़ने के लिए आगे बढ़ा। मलया के हाथ में खुली कटार देखकर वह स्तब्ध रह गया। उसके पैर रुक गए। मलया बोली—'शैतान, यदि मैं चाहूं तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस तेज कटार को तेरे हृदय के आर-पार पहुंचा दूं···यदि तू एक डग भी आगे आएगा तो इसी स्थान पर मेरा मृत देह मिलेगा।'

उत्तरीय के छोर से रक्त पोंछते हुए बलसार ने कहा—'दुष्टे ! मेरे प्रेम का यह जवाब दिया है तूने ? याद रखना, तेरा पुत्र अब तुझे कभी नहीं मिलेगा।'

'शील के एवज में मैं अपने पुत्र की इच्छा नहीं करती।'

'और मैं तेरे पर विपत्तियों के पहाड़ गिरा दूंगा।'

'तेरे से जो हो सके वह सब कर लेना···विपत्ति के पर्वतों से टकराना मैं जानती हूं।'

'ठीक है, तू भी याद रखना !' कहता हुआ बलसार उस खंड से बाहर निकला। असह्य पीड़ा हो रही थी। ऊर्मिला बाहर खड़ी थी। बलसार ने कहा—'ऊर्मिला, मेरे खंड में चली आ।'

बलसार अपने खंड की ओर चला।

इच्छा न होते हुए भी ऊर्मिला उसके पीछे-पीछे चली।

दूसरे दिन यानपात्र गन्तव्य पर पहुंच गया।

बलसार ऊर्मिला और एक दास को साथ लेकर नगर में गया। रास्ते में एक सरदार मिला। बलसार ने उसे पहचान लिया। बलसार बोला—'सरदार ! इस बार मैं अच्छे-अच्छे जवाहरात लेकर आया हूं।'

सरदार ने ऊर्मिला की ओर इशारा करते हुए पूछा—'ऐसे रत्न या इससे अच्छे ?'

मलया के प्रति बलसार के हृदय में क्रोध की आग धधक रही थी। वह तत्काल बोला—'सरदार ! एक सर्वश्रेष्ठ रत्न लाया हूं।'

'कहां है ?'

'रत्न को बाहर नहीं रखा जाता। वह मेरे वाहन में है।'

'उसका मूल्य ?'

'एक बार देख लो, फिर मूल्य की बात करेंगे।'

'किन्तु मुझे कल ही अपने साथियों के साथ यहां से चले जाना है।' सरदार ने कहा।

'तो आज रात में आना···मैं रत्न दिखाऊंगा···तू जितना धन देना चाहेगा, वह साथ ले आना···'

'मेरे सिवाय उस रत्न को औरों के हाथ मत बेच देना।' सरदार ने कहा।

बलसार ने मस्तक हिलाकर स्वीकृति दी। उसको अनायास ही मलया के चपेटा-प्रहार का बदला लेने का अवसर मिल गया।

बलसार को हीरे-माणक के टुकड़े देकर कारु सरदार मूच्छित मलयासुंदरी को नौका में डालकर चलता बना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंदरगाह पर न उतरकर वह टापू की एक खाड़ी की तरफ गया। लगभग रात्रि के उत्तरार्द्ध में वह मलया को लेकर टापू के एक निर्जन और पर्वतीय क्षेत्र के किनारे उतरा।

कारु सरदार आज अत्यन्त प्रसन्न था। भारत की ऐसी सुन्दरी को पाना प्रतिष्ठा का प्रतीक था और ऐसी सुन्दर स्त्री को प्राप्त करने वाले को उस जाति के कुलदेवता के पुजारी का आशीर्वाद प्राप्त होता था।

कारु सरदार उस जाति का मुखिया था···ऐसी सुन्दर स्त्री को प्राप्त करने के लिए वह वर्षों से प्रयत्न कर रहा था। आज वह स्वप्न फलित हुआ और उसका आनंद हिलोरें लेने लगा।

मलया मूर्च्छित अवस्था में पड़ी थी।

कारु सरदार मूर्च्छित मलयासुन्दरी को नौका से उतारकर एक झोली की डोली में उसे डालकर ले चला।

मलया वनौषधि के प्रभाव से अचानक मूर्च्छित हो गई थी। उसे यह ज्ञात ही नहीं था कि एक कोट्याधीश सेठ इस प्रकार सौदा करेगा, इसे बेचेगा।

दिन का प्रथम प्रहर पूरा हो रहा था। कारु सरदार अपने साथियों के साथ तथा मूर्च्छित मलयासुन्दरी को लेकर पर्वतीय गांव में पहुंच गया।

कारु सरदार गांव के मध्य पहुंचकर अपने साथियों से बोला—'तुम सब देवता की पहाड़ी पर जाओ···मैं पुजारी महाराज को बुलाकर लाता हूं।'

इस कारु जाति में पुजारी का स्थान देवता के समान माना जाता था। पुजारी का निर्णय अंतिम निर्णय होता था। पुजारी के बाद आता था सरदार का स्थान।

पुजारी की उम्र अस्सी वर्ष की थी। वह सशक्त और बलिष्ठ था। जब देवता के भोग चढ़ता था तब वह एक ही प्रहार से भैंसे का सिर धड़ से अलग कर देता था। उसके सोलह स्त्रियां थीं। संतानों की गिनती करना कठिन था।

सरदार पुजारी की झोंपड़ी पर पहुंचकर बोला—'पुजारीजी! देवी के मंदिर में चलें। एक भारतीय नारी को लाया हूं···आप देवी की पूजा करें, उसकी मूर्च्छा दूर करें और फिर उसका रक्त देवी को चढ़ाएं···आज रात मैं उसके साथ विवाह करूंगा।'

पुजारी ने उसे आशीर्वाद दिया और उसके साथ देवी के मंदिर की ओर चल पड़ा।

सब उस देवी की पहाड़ी पर पहुंच गए।

पुजारी ने देवी को धूप दिया। फिर वह अपने बैठने के स्थान पर आकर बैठ गया। अन्यान्य लोग नाचने-कूदने लगे और विचित्र भाषा में कलरव करने लगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुजारी ने मूच्छित मलया की नाक में उस धूप का धुआं दिया। थोड़े क्षणों पश्चात् मलया ने आंखें खोलीं···उसकी मूर्च्छा टूट गई। वह चारों ओर के दृश्य को देखकर चौंकी। उसने सोचा—वह स्वप्न तो नहीं देख रही है।

पुजारी के संकेत से सारे लोग शान्त हो गए। पुजारी ने मलया से कहा—'बहन! देवी के चरणों में माथा टिका। देवी तेरे पर प्रसन्न है देवी तेरे रक्त की अंजलि लेकर तुझे विवाह करने की अनुमति देगी।'

मलया कुछ भी नहीं समझ सकी।

सरदार ने पुजारी से कहा—'महाराज! यह भारत की सुन्दरी है। यह अपनी बोली नहीं समझ सकती।'

तत्काल पुजारी ने मलया का हाथ पकड़ा और देवी के पास ले गया।

मलयासुन्दरी असमंजस में पड़ गई। वह महामंत्र का जाप करने लगी।

पुजारी ने मलया का सिर देवी के चरणों में झुकाया और फिर वहां से खुले मैदान में आकर मलया को एक चौकी पर सो जाने के लिए संकेत किया।

मलया उस चौकी पर लेट गई।

तत्काल पुजारी देवी की मूर्ति के पास गया और वहां पड़े एक तीखे सार वाला डंडा ले आया।

फिर पुजारी ने कहा—'अपनी जाति का सरदार इस भारतीय सुन्दरी को ले आया है। आज उसके रक्त से देवी की प्रसन्नता प्राप्त कर यह सुन्दरी सरदार की रानी बनेगी।'

वहां एकत्रित सभी स्त्री-पुरुष शिला पर लेटी सुन्दरी की ओर देखने लगे।

पुजारी ने एक हाथ में कटोरा और दूसरे हाथ में डंडे को लेकर मलया की प्रदक्षिणा की। पांच बार चक्कर लगाने के पश्चात् उसने मलया के दाएं हाथ में उस डंडे में लगी सुई घुमाई और तत्काल सुई निकाल दी।

मलया चीख पड़ी।

पुजारी ने हाथ से निकलते रक्त को कटोरे में लिया···फिर दूसरे पांच चक्कर लगाकर दूसरे हाथ पर डंडे का प्रहार किया और रक्त को कटोरे में झेलता रहा।

पुजारी ने मलया की सुन्दर देह पर सात बार प्रहार कर रक्त एकत्रित किया। वह प्याला मलया के रक्त से लबालब भर गया था···असह्य वेदना के कारण मलया मूच्छित होकर वहीं गिर पड़ी।

पुजारी आठवीं बार मलया के पैर पर सुई लगाने जाए, उससे पूर्व ही आकाश मार्ग से एक विशालकाय पक्षी गुजरा और उनकी आवाज से सारे लोग कांप उठे। वे चिल्लाते हुए वहां से दौड़ने लगे।

पुजारी के हाथ से वह रक्त का कटोरा गिर पड़ा। और वह भी भयभीत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होकर भाग गया।

मूर्च्छित मलया अकेली शिला पर रह गई।

भीमकाय भारण्ड पक्षी की दृष्टि मलया पर पड़ी और वह विमान की भांति तीव्र गति से नीचे आया और अपने विशाल पंजों से मलया के शरीर को उठाकर उड़ गया।

कारु सरदार भारण्ड पक्षी के पंजों में फंसी मलया को देखता रहा।

किन्तु अब वह क्या कर सकता था?

भारण्ड पक्षी कुछ ही क्षणों में अदृश्य हो गया।

मध्याह्न का समय आ गया।

मलया की मूर्च्छा टूटी। अपने को पक्षी के पंजे में जानकर वह चौंकी।

न वहां पहाड़ी थी, न पुजारी था और न सरदार था। ऊपर आकाश और नीचे अथाह जल से भरा समुद्र था। उसने देखा एक विशालकाय पक्षी उसको पंजे में लेकर उड़ रहा है···ओह! यह क्या हो गया? यह विपत्ति कहां से आ टपकी? मलया ने सोचा—या तो यह पक्षी मुझे खा डालेगा अथवा सागर में मेरी जल-समाधि होगी।

कहां है बलसार का यानपात्र? कहां है ऊर्मिला और कहां है छोटा शिशु···सुकुमार पुत्र?

कर्म की गति विचित्र होती है।

मलया नमस्कार महामंत्र के जाप में लीन हो गई। एक भयंकर चीख सुनकर उसकी लीनता टूटी। उसने सोचा—अरे! इस अनंत आकाश में इतनी भयंकर चीख कहां से आयी? उसने इधर-उधर देखा···एक दूसरा भारण्ड पक्षी इसी ओर वायुवेग से आ रहा था।

अर्धघटिका पर्यन्त यह दौड़ चलती रही।

सूर्य अस्ताचल की ओर प्रयाण कर रहा था।

और दोनों भारंड पक्षी निकट हो गए। मलया को पंजों में पकड़े हुए भारंड पक्षी ने नीचे उड़ान भरी और वह सागर की लहरों का स्पर्श करने लगा। इतने में ही दूसरा भारंड पक्षी उस पर झपटा और पुनः ऊपर उठ गया। एक घटिका पर्यन्त यह विचित्र युद्ध चलता रहा। मलया ने जान लिया कि अब मौत के सिवाय कुछ चारा नहीं है।

जब मौत की घड़ी निकट हो तब मनुष्य को और अधिक सावचेत हो जाना चाहिए।

मलया ने नेत्र बंद किए और भावना को केन्द्रित कर वह महामंत्र के जाप में लीन हो गई।

दोनों पक्षियों का युद्ध चल रहा था। कभी वह नीचे आता और कभी ऊपर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाता। इस ऊपर-नीचे की उड़ान में एक क्षण ऐसा आया कि भारंड पक्षी के पंजे की पकड़ कुछ ढीली हुई और मलया उसके पंजे से छिटक गई।

केवल आठ दस हाथ की दूरी पर ही अथाह समुद्र था।

मलया की काया मानो जल-समाधि लेने के लिए सागर की उत्ताल तरंगों का स्पर्श करने ही वाली थी···

मलया आठ-दस हाथ की ऊंचाई से सागर में गिरी। किन्तु उसी क्षण एक विशालकाय मत्स्य सागर की लहरों पर तैरता हुआ चला जा रहा था। मलया ठीक उसकी पीठ पर पड़ी।

यदि मत्स्य सागर में प्रवेश कर जाता तो मलया की वह इच्छा पूरी हो जाती कि सतीत्व की रक्षा के लिए उसने मौत का आलिंगन कर डाला है।

किन्तु मत्स्य समुद्र की ऊपरी सतह पर ही तैरने लगा। मलया उसकी पीठ पर बैठी रही। और मत्स्य मलया को लेकर पवनवेग से एक दिशा में गतिमान हो गया।

मलया ने सोचा—क्या सागर की गोद में भी मुझे स्थान नहीं है? उसने देखा मत्स्य तीव्र गति से चला जा रहा है।

सूर्य अस्तंगत हो रहा था। मलया ने मन-ही-मन सोचा—यह मत्स्य मेरे लिए नौका बना हुआ है, परन्तु यह कब तक मुझे लेकर चलता रहेगा? मलया ने अस्तंगत होते सूर्य की ओर देखकर कहा—'ओ कर्मदेव! मुझे क्यों बचाया? सागर ने मुझे स्थान क्यों नहीं दिया? क्या महाबल मुझे प्राप्त होगा?'

मलया के ये शब्द जातिस्मृति ज्ञान से संपन्न मत्स्य के कानों से टकराए और उसने अपनी गति धीमी कर मलया की ओर देखा।

मलया ने मत्स्य की ओर दृष्टि कर कहा—'मत्स्यराज! एक दुःखी और असहाय नारी के प्रति आपकी आंखों में करुणा कैसे प्रकट हो गई! मैं कल्याण की कामना से नमस्कार महामंत्र का अंतिम जाप कर रही थी···मौत निश्चित थी···आप बीच में क्यों आ गए?'

मत्स्य सब कुछ सुन रहा था। किन्तु उसके पास वाणी नहीं थी। वह क्या उत्तर दे? परन्तु वह पूर्ण सावचेत था। मलया को तनिक भी कष्ट न हो, इस प्रकार वह किनारे की ओर अग्रसर हो रहा था···परन्तु इस असीम की सीमा कहां है?

मलया ने सोचा—'यह मत्स्य क्रीड़ा कर रहा है···संभव है यह अपने परिवार के सदस्यों के भोजन के लिए मुझे अपने स्थान पर ले जा रहा है। अथवा यह मुझे सागर में डुबोने के लिए क्रीड़ा कर रहा है···कुछ भी हो···मौत अभी आ जाए या कुछ क्षणों के पश्चात्, मुझे इष्टदेव का स्मरण निरंतर करना चाहिए···

संध्या का अंतिम प्रकाश विदा हो गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलया ने तीन बार नवकार की स्मृति की। और सागारिक अनशन करते हुए कहा—'मुझे आशा, वांछा और पदार्थ-प्रयोग का तब तक प्रत्याख्यान है जब तक मैं मौत के मुंह से न बच जाऊं।'

मलया का संकल्प सुनकर मत्स्य कांप उठा।

सागर के विराट् पटल पर रात्रि का अंधकार छा गया।

रात्रि का अंधकार अपनी गति से फैल रहा था और मत्स्य अपनी पवनवेग गति से चल रहा था। अथाह जलराशि ! कहां है तट ! असीम की सीमा कहां !

रात्रि का पहला प्रहर बीत गया।

अभी भी किनारे का अता-पता नहीं था।

तीसरा प्रहर बीतने के पूर्व ही मलया मूच्छित होकर मत्स्य पर गिर पड़ी।

मत्स्य वायुवेग से सागर में तैरता हुआ चला जा रहा था। मलया को तनिक भी कष्ट न हो, यह उसकी कोशिश थी।

रात्रि का तीसरा प्रहर पूरा हो गया।

ऊषा का प्रकाश सागर के जल पर छाने लगा।

मत्स्य विशालकाय था। परन्तु अत्यन्त श्रम के कारण वह थककर चूर हो गया था। उसने सामने देखा, एक बंदरगाह दिखाई दिया।

उसकी आंखों में श्रम की सार्थकता नाचने लगी। वह कुछ ही समय में उस बंदरगाह के किनारे पहुंच गया और किनारे पर जाकर एक गोता लगाया। मलया उसकी पीठ से नीचे गिर गई और लहरों के थपेड़ों से वह किनारे लग गई।

मत्स्य स्थिरदृष्टि से देखता रहा। उसने संतोष की सांस ली और सागर में कहीं अदृश्य हो गया।

सूर्योदय हुआ।

उस नगरी का राजा अपने पांच-सात आदमियों को साथ ले भ्रमण करने निकला था। उसकी दृष्टि किनारे पर स्थित मानवदेह पर पड़ी। उसने अपने साथवालों से कहा—'देखो ! वहां क्या पड़ा है ?'

एक व्यक्ति दौड़ा-दौड़ा वहां गया और मलयासुन्दरी को देखते ही चौंक पड़ा। उसने मलया की नाड़ी देखी···नाक के पास हाथ रखा···उसको निश्चय हो गया कि यह नारी अभी जीवित है। वह तत्काल राजा के पास आकर बोला—'कृपावतार ! कोई देवकन्या जैसी सुन्दर नारी सागर के थपेड़े खाती-खाती किनारे आ लगी है, ऐसा प्रतीत होता है। उसका प्राण-दीपक अभी बुझा नहीं है।'

'क्या कहा ? कोई तरुणी है ? सुन्दरी है ?'

'हां, महाराज !···'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'अभी जीवित है ?'

'हां, कृपावतार !'

'तब चलो।' कहकर राजा मलया की ओर चला।

निकट आकर उसने मलया की आकृति देखी और विस्मित हो गया। उसने तत्काल पालकी लाने का आदेश दिया। दो व्यक्ति दौड़े-दौड़े पालकी लाने गए।

और उस समय मलया ने नेत्र खोले···कहां है सागर?···कहां है मत्स्यराज की सवारी?···कहां ये सब मनुष्य? कहां से आया किनारा? यह सब कैसे हुआ? क्या यह मात्र स्वप्न है अथवा सत्य है?

राजा ने कहा—'तू तनिक भी चिन्ता मत कर···यह सागर तिलक नगर का बंदरगाह है। मैं इस नगरी का राजा कंदर्पदेव हूं···' ऐसा कहकर उसने एक साथी के सहयोग से मलया को उठाने का प्रयत्न किया। किन्तु मलया ने स्वयं उठने का प्रयास किया और पुनः मूर्च्छित होकर गिर पड़ी।

राजा उसे पालकी में बिठा राजमहल में ले गया।

राजा कंदर्पदेव सागरतिलक नगर का स्वामी था। उसके अन्तःपुर में आठ रानियां थीं। फिर भी उसका चित्त नवयौवनाओं को भोगने के लिए लालायित रहता था। यदा-कदा वह ऐसी स्त्रियों को लाकर इस विशेष भवन में रखता था और उनके साथ रंगरेलियां करता था।

मलया को देखकर उसे प्रतीत हुआ कि ऐसी रूपवती सुन्दर, और स्वस्थ नारी पूर्वार्जित पुण्य के बल पर ही प्राप्त हो सकती है। इसकी आकस्मिक प्राप्ति के कारण राजा के चित्त में निवास करने वाला विलासी राक्षस आनंद से उछल रहा था।

राजवैद्य ने मलया का औषधोपचार किया। उसने सर्वप्रथम प्रचेतना नामक औषधि की एक बूंद मलया के मुंह में डाली और तत्काल मलया की मूर्च्छा टूट गई।

चेतना आते ही मलया बोली—'मैं कहां हूं?'

'बेटी! तू सागरतिलक नगर के महाप्रतापी राजा कंदर्पदेव के राजमहल में है। महाराजा तुझे समुद्र के किनारे से यहां लाये हैं। तू निश्चिन्त रह। तू आठ दिन तक औषधि का सेवन कर। पहले से अधिक स्वस्थ हो जाएगी।'

मलया सागरतिलक नगर का नाम सुनते ही चौंकी···निश्चित ही पुण्यबल से मैं यहां आ पहुंची हूं। यह तो बलसार का नगर है। मेरा पुत्र मुझे यहां मिल जाएगा और मैं पुत्र को लेकर पीहर चली जाऊंगी। राजा कंदर्पदेव मेरे पिता और श्वसुर का भयंकर शत्रु है। यदि इसे ज्ञात हो जाए कि मैं वीरधवल राजा की पुत्री और सुरपाल महाराजा की पुत्रवधू हूं तो यह मुझे कारावास में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डालकर मार डालेगा अथवा मुझे सतीत्व से भ्रष्ट करेगा।

मलया इस प्रकार सोच रही थी। इतने में राजा कंदर्पदेव आ पहुंचा। उसने राजवैद्य से कहा—'क्या यह सुन्दरी स्वस्थ हो जाएगी ?'

'हां, महाराज ! आठ दिन के औषधोपचार से यह पूर्ववत् स्वस्थ हो जाएगी।'

राजा ने मलया से पूछा—'देवी ! तेरे माता-पिता कौन हैं ? तू सागर में से किनारे कैसे आयी ? क्या तेरा वाहन सागर में टूट गया या किसी ने तुझे सागर में फेंक दिया ?'

'राजन् ! अपने किन्हीं कर्मों के प्रभाव से मैं अकथनीय वेदना और विपत्ति में फंसी हुई हूं। मेरा परिचय प्राप्त कर आप भी दुःखी बन जाएंगे।'

मलया ने अपना कोई भी परिचय नहीं दिया।

'तेरा नाम क्या है ?'

'मलयासुन्दरी।'

'सरस नाम है···तू यहां आराम से रह···अब तेरे सभी दुःखों का अन्त आ गया है।' ऐसा आश्वासन देकर राजा ने राजवैद्य से कहा—'मलयासुन्दरी के हाथों पर किसी ने शस्त्र से प्रहार किया है।'

'हां, महाराज ! मैंने इसकी 'सद्यरोपण चिकित्सा' की है। आठ प्रहर के पश्चात् इसके शरीर पर कोई घाव नहीं रहेगा।'

आठ दिन बीत गए।

मलयासुन्दरी ने सारी व्यवस्था को देखकर जान लिया था कि राजा कंदर्पदेव की आंखें राजा की आंखें नहीं हैं, किन्तु एक रूप के शिकारी की आंखें हैं, एक भोगी की आंखें हैं।

दिन बीतने लगे। राजा को लगा कि मलयासुन्दरी स्वर्ग की अप्सरा है। इसका उपभोग करना महान् भाग्य की बात है।

मलयासुन्दरी को अपनी रानी बनाने का स्वप्न संजोए राजा ने राधिका को बुलाकर कहा—'राधिका ! इस स्त्री में जितना रूप है, उतना ही तेज है। यह अपना परिचय नहीं बता रही है। यह निश्चित ही किसी बड़े कुल की है। अपने कुल पर कलंक न लगे, इसीलिए परिचय छिपा रही है। मुझे परिचय से कोई मतलब नहीं है। मैं तो इसे अपनी अंकलक्ष्मी बनाना चाहता हूं। तुझे यह कार्य करना है। किसी भी उपाय से मलया को समझा-बुझाकर मेरे प्रति आसक्त करना है।'

'महाराज ! आपका यह कार्य सरलता से पार लगा दूंगी। मलयासुन्दरी दुःखी नारी है। इस संसार में उसका कोई सहारा नहीं है। आप-जैसे समर्थ राजा का आश्रय पाकर यह निहाल हो जाएगी।' राधिका ने कहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'राधिका ! मैं तुझे तीन दिन का समय देता हूं। तू उसे समझाकर मेरे काम को पूर्ण करा देना अन्यथा चौथे दिन मैं स्वयं प्रयत्न करूंगा।'

'कृपावतार ! आप निश्चिन्त रहें...कल की रात्रि आपके जीवन की मधुयामिनी बनेगी...मैं मलया को समझा लूंगी...स्त्रियों को वैभव अत्यन्त प्रिय होता है और इसी में फंस जाती हैं।'

राजा ने राधिका की ओर प्रसन्नदृष्टि से देखते हुए कहा—'तेरी चतुराई के प्रति मेरा विश्वास है।'

राजा कंदर्प अपने स्थान पर चला गया।

परन्तु राधिका को यह ज्ञात नहीं था कि मलया कच्ची माटी से बनी हुई नहीं है...इसको प्राणों से भी अधिक प्रिय है शील, सतीत्व...जो नारी अपने सतीत्व की रक्षा के लिए अपने एकाकी पुत्र का भी परित्याग कर सकती है, वह नारी कभी वैभव के प्रलोभन में झुक नहीं सकती।

परन्तु राधिका को यह कल्पना नहीं थी। उसने राजा की काम-पिपासा को पूर्ण करने के लिए अनेक स्त्रियों को प्रस्तुत किया था, इसलिए वह मानती थी कि दुःख से पीड़ित मलया भी सुख के चरणों में लुट जाएगी।

राधिका ने मलया को समझाने का निश्चय किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५१. आम्रफल

सामने वाले के मन को समझने की प्राकृतिक शक्ति नारी की अपनी संपत्ति है। नारी के नयन जितने मोहक हैं, उतने ही वे मर्मवेधक और हृदय के आर-पार जाने वाले हैं।

मलयासुन्दरी महाराजा कंदर्पदेव के हृदय को पहली नजर में ही जान गई थी। किन्तु राजा जब तक उसके साथ कोई प्रस्ताव न करे तब तक मौन रहना ही श्रेयस्कर है, यह मानकर मलया चुप थी। वह उस महल में पूर्ण परतंत्र थी। वह स्वतंत्र रूप से कहीं भी आ-जा नहीं सकती थी।

राजा की ओर से प्रतिदिन नये-नये उपहार आते रहते थे। मलया के मन की शंका आकार ले रही थी।

मलया पूर्ण स्वस्थ हो चुकी थी। उत्तम औषधि, उत्तम भोजन और उत्तम परिचर्या के कारण उसमें नयी चेतना जागी थी। उसका यौवन पहले से अधिक निखर रहा था। उसके मन में पुत्र-प्राप्ति की इच्छा प्रबल हो गई थी।

भवन की मुख्य परिचारिका राधिका मलयासुन्दरी को समझाने का अवसर देख रही थी। एक दिन मलया नवकार मंत्र का जाप संपन्न कर विचारमग्न होकर बैठी थी। इतने में ही राधिका ने खंड में प्रवेश किया। मलया अपने पति और पुत्र के विचारों में खोयी हुई थी। उसे राधिका के आगमन का पता ही नहीं चला।

राधिका ने मधुर स्वरों में कहा—'देवी! आप कुछ चिन्तातुर लग रही हैं। आप मुझे अपनी वेदना बताएं, मैं उसके निवारण में सहायक बनूंगी। आप निःसंकोच मुझे बताएं।'

मलया ने मुसकराकर कहा—'राधिका! प्रत्येक मनुष्य के मन में छोटी-बड़ी चिन्ता रहती है। जहां तक कर्म की पीड़ा का उपभोग करना होता है, उसको भोगना ही पड़ता है। कर्मों को भोगे बिना छुटकारा ही नहीं है।'

'देवी! कुछ वेदनाएं ऐसी होती हैं जिनका अंत लाया जा सकता है। आपकी वेदना को जाने बिना मैं कैसे सहायक बन सकती हूं?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'राधिका ! कर्म का परिणाम बांटा नहीं जा सकता। जो कर्म करता है, उसे ही उसका परिणाम भुगतना पड़ता है। मेरे दुःख का हिस्सा तू नहीं बंटा सकती। राधिका ! जो नारी माता-पिता, पति से बिछुड़ गई हो, जिसका कोई आश्रय न हो और जिसके रूप पर मोहित होकर आश्रयदाता भी मोहविह्वल हो जाते हैं, उस नारी की वेदना को क्या कोई हल्की कर सकता है ?'

'देवी ! आप मेरे प्रस्ताव को स्वीकार करने का विचार करें तो आपके सारे दुःख एक क्षण में नष्ट हो सकते हैं।'

मलया ने राधिका के हृदय की बात भांप ली। वह बोली—'राधिका ! जो अशक्य है, वह कभी शक्य नहीं हो सकता। तू जो उपाय मुझे बताना चाहती है, वह मैं समझ चुकी हूं। जिस नारी के अन्तर में देहसुख ही सब कुछ है, वह दूसरा क्या मार्ग बता पाएगी ?'

'देवी ! आपकी दृष्टि अत्यन्त तीव्र है। किन्तु रूप, यौवन और मन की ऊर्मियों को कुचल डालने के बदले भविष्य को उज्ज्वल बनाना श्रेयस्कर है। आपका रूप और तेज देखकर लगता है आप बड़े घराने की स्त्री हैं। आपको चिन्तायुक्त देखकर प्रतीत होता है आप अपने स्वजनों के द्वारा तिरस्कृत हुई हैं। उन्होंने आपको सागर में फेंक दिया है।'

मलया मौन रही।

राधिका ने आगे कहा—'देवी ! आपके पास वह यौवन और रूप है जो किसी भी नारी के पास नहीं है। यदि आप चाहें तो अपने दुर्भाग्य को सौभाग्य में बदल सकती हैं।'

मलया ने कहा—'राधिका ! मैं तेरे मनोभाव पहले ही जान चुकी थी। जो स्त्री अपने सतीत्व को बाजारू बना देती है, वह कभी शोभारूप नहीं होती। मैं एक संभ्रान्त परिवार की पुत्रवधू हूं और एक पुत्र की माता भी हूं। मैं रूप और यौवन को अपनी संपत्ति नहीं मानती।...राधिका ! जो नष्ट होती है वह संपत्ति नहीं है। मेरी संपत्ति अपना शील है, पतिव्रतधर्म है। यह कभी नष्ट नहीं होता। यही धन यथार्थ है। शेष सब अधन है।'

मलया और राधिका की बातचीत बहुत देर तक चलती रही। मलया के अपने तर्क थे और राधिका के अपने तर्क। राधिका देहसुख को ही सब कुछ मानकर मलया को देहसुख की ओर आकृष्ट करने का व्यर्थ प्रयत्न कर रही थी और मलया परमसुख मान रही थी शील का संरक्षण। उसके लिए शील ही सब कुछ था।

अंत में मलया ने राधिका से कहा—'राधिका, व्यर्थ का प्रयत्न मत कर। तू मुझे प्रलोभन देकर मार्गच्युत करना चाहती है। देख, तेरे महाराजा के पास है ही क्या ? ये एक छोटे प्रदेश के राजा हैं किन्तु मुझे यदि तीन लोक की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वामिनी भी बना दें तो भी मैं अपना शील नहीं बेचूंगी। राधिका! इस तुच्छ और क्षणिक सुख के लिए अपने आपको समर्पित करने के बदले मौत को समर्पित होना मैं अधिक श्रेयस्कर मानती हूं।'

राधिका बोली—'देवी! आपके प्रति मेरे मन में अपार सहानुभूति है।'

'क्या तू मेरा एक कार्य कर सकेगी?'

'हां, देवी! एक नहीं, एक सौ कार्य।'

'तू नहीं कर सकेगी। दासी आखिर दासी ही होती है। वह 'बेचारी' होती है।'

'आप मुझे एक बार अपना कार्य बताएं···'

मलया ने गंभीर होकर कहा—'यदि तेरे मन में मेरे प्रति वास्तविक सहानुभूति है तो तू मुझे यहां से मुक्त करने में सहायक बन।'

राधिका अवाक् रह गई। वह मलया को देखने लगी। उसने मन-ही-मन सोचा—कैसी वज्रमय है यह नारी! इतनी विपत्तियों के बीच रहने पर भी कितना स्वाभिमान है इस नारी में! यह बेचारी नहीं जानती कि कंदर्पदेव के पिंजरे में बंद पक्षी बाहर नहीं जा सकता। पिंजरे में भले ही छटपटाकर प्राण दे दे।

'देवी! आप मेरी बात स्वीकार कर लेतीं तो बहुत सुन्दर परिणाम आता।'

'राधिका! तू नहीं जानती, मैं प्रतिपल मौत को सिरहाने रखकर सोती हूं। मौत से भयंकर और कोई नहीं होता और मैं मृत्यु का वरण करने के लिए सदा तैयार रहती हूं।'

राधिका नमस्कार कर चली गई।

मलया ने सोचा—यदि यहां से भागने का अवसर मिल जाए तो पीड़ाओं का अंत आ सकता है। यदि पुरुष की वेशभूषा प्राप्त हो जाए तो ही यहां से निकला जा सकता है। इसके लिए राधिका का सहयोग लेना पड़ेगा। मुझे राजी रखने के लिए वह मेरा यह काम कर देगी।

दूसरे दिन मलया राधिका को प्रसन्न करने में सफल हो गई और राधिका ने मलया को एक धोती, उत्तरीय और पगड़ी ला दी।

मलया ने यह पुरुष वेश अपने खंड में रख दिया और वह पुरुषवेश में यहां से बच निकलने की प्रतीक्षा करने लगी।

राधिका मलया की योजना से अनजान थी। उसने सोचा, संभव है मलया का मन बदल जाए और महाराज की बात स्वीकार कर ले। इसलिए उसकी मनोकामना पूर्ण करने में ही हित है।

उसी रात को राधिका ने पुनः महाराजा के प्रश्न को छेड़ने की दृष्टि से मलया से कहा—'देवी! आपने पुरुष की पोशाक मंगाई, परन्तु आपने उसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धारण नहीं की ?'

'राधिका ! मन बहुत चंचल होता है'''कभी वह किसी कल्पना में बह जाता है और कभी उस कल्पना को तोड़कर दूसरी कल्पना में उलझ जाता है। पहले मैंने सोचा था, पुरुष वेश धारण कर दर्पण में देखूं तो सही मैं कैसी लगती हूं'''फिर दूसरे ही क्षण सोचा—पुरुष की पोशाक स्त्री के शरीर पर शोभित नहीं हो सकती।'

'देवी ! कल महाराजा पधारेंगे'''दो दिन से वे आसपास के गांवों में गए हुए हैं। यदि आप इस पुरुषवेश में महाराजा को आश्चर्यचकित करें तो कैसा रहे !'

मलया बोली—'राधिका ! तू फिर वही बात दोहरा रही है। मेरा निश्चय अटल होता है। देवता भी मुझे अपने निश्चय से नहीं डिगा सकते।'

राधिका ने सोचा—यह नारी अजेय है। यह भय या प्रलोभन से वशवर्ती नहीं बन सकती। ऐसी स्त्रियां प्रेम या सहानुभूति से ही वश में आती हैं।

दूसरे दिन महाराजा कंदर्पदेव दौरे से आए। बलप्रयोग की इच्छा उनमें प्रबल हो रही थी। वे राधिका से मिले। राधिका ने मलया के दृढ़ निश्चय की बात कही। महाराजा कंदर्पदेव अवाक् रह गए। उन्होंने राधिका से कहा—'तू मुझे धैर्य रखने की बात कह रही है। मैं तेरी बात मानकर एक सप्ताह का समय और देता हूं। तू भी प्रयत्न कर और मैं भी उपाय सोचूंगा।'

तीन दिन बीत गए।

एक दिन महाराजा कंदर्पदेव अपने महल के वातायन में बैठे थे। संध्या का समय हो रहा था। पास में मैरेय का पात्र पड़ा था। राजा अकेला था। दास-दासी दूसरे खंड में थे।

राजा आकाश की ओर देख रहा था। उसका मन उपाय की खोज में लगा हुआ था। अचानक उसकी दृष्टि आकाश में उड़ते एक तोते पर पड़ी। उसकी चोंच में पका आम्रफल था। इसलिए राजा उसको आश्चर्य की दृष्टि से देख रहा था।

उसने सोचा—वह तोता आम कहां से ले आया ? यह इसको अपनी चोंच में पकड़े हुए कैसे उड़ रहा है !

तोता वातायन के ऊपर से गुजरा और चोंच से आम्रफल नीचे गिर पड़ा। वह आम्रफल सीधा राजा की गोद में आ गिरा। अपने श्रम को निरर्थक हुआ जानकर तोता एक बार आम्रफल की ओर दृष्टि कर गन्तव्य की ओर उड़ गया।

आम्रफल को देखते ही राजा का मन अत्यन्त आनंदित हो गया। उसने सोचा—नगर के उत्तर में 'छिन्नटंक' नाम का अतिविषम और सघन वन वाला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक पर्वत है। उसके दुर्गम शिखर पर बारहों महीने आम्रफल देने वाला एक आम्रवृक्ष है। वहां कोई मनुष्य जा ही नहीं सकता। संभव है यह तोता उसी वृक्ष से यह फल तोड़कर लाया है। यह उसकी चोंच से छूटा और मेरी गोद में आ गिरा।

इस ऋतु में आम दुर्लभ है। राजा का मन उस आम को खाने के लिए ललचा उठा। पर···

दूसरे ही क्षण राजा ने सोचा—मैं यह आम्रफल मलया को दे दूंगा। इस सुन्दर फल को देखकर मलया मेरे प्रति प्रेमातुर हो जाएगी।

यह सोचकर राजा ने उस आम्रफल को सुरक्षित रख दिया और यह निश्चय किया कि वह स्वयं ही मलया को आम्रफल देगा।

दूसरे दिन राजा ने एक स्वर्णथाल में आम्र रखा, एक सेवक को साथ ले मलया के कक्ष की ओर चला।

मलयासुन्दरी नवकार मंत्र का जाप संपन्न कर स्नानगृह में गई हुई थी।

राजा कंदर्पदेव जब मलया के भवन में आया तब मलया स्नानगृह में थी। राधिका भी स्नानगृह में ही थी और वह प्रसन्नतापूर्वक मलया को नहला रही थी।

राजा आम्रफल का थाल लिये मलया की प्रतीक्षा में एक आसन पर बैठ गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५२. कोड़े की मार

स्नान से निवृत्त होकर, सादे वस्त्र पहनकर मलयासुन्दरी अपने कक्ष में आयी। महाराजा को अपने कक्ष में उपस्थित देख, वह स्तंभित होकर खड़ी रह गई। मलया के यौवनश्री से छलकते शरीर को देखते हुए महाराजा ने कहा—'मलया ! तेरा चित्त तो प्रसन्न है न ?'

'पिता की छत्रछाया में पुत्री को किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं होता। आप कुशल हैं न ?'

मलया के शब्द से महाराजा का हृदय झनझना उठा। वे बोले—'तुझे ऐसा कहना शोभा नहीं देता। तेरे लिए मैं एक अलभ्य वस्तु लाया हूं' कहते हुए कंदर्पदेव ने आम्रफल बाहर निकाला और कहा—'इस ऋतु में दुर्लभ माना जाने वाला यह आम्रफल तेरे चित्त की प्रसन्नता के लिए लाया हूं।'

आम्रफल देखते ही मलया चौंकी। उसे तापसमुनि द्वारा प्रदत्त औषधि की स्मृति हो आयी। उसने सोचा—अनन्त पापों के बीच में कोई पुण्य हुआ हो, ऐसा लगता है। शील के रक्षण का उपाय पास में होते हुए भी आम्ररस के अभाव में उसका उपयोग नहीं हो सका। पुण्य के प्रभाव से ही आम प्राप्त हुआ है। मलया ने प्रसन्न स्वरों में कहा—'महाराज ! मैं धन्य हो गई।'

महाराजा ने मलया के हाथों में आम देते हुए कहा—'मलया ! इस अलभ्य वस्तु का तुम उपयोग करना और यह समझने का प्रयत्न करना कि मेरा तेरे प्रति कितना प्रेमभाव है ! मैं तुझे एक वचन देता हूं कि यदि तू मेरी जीवन-संगिनी बनेगी तो मैं तुझे पटरानी बनाऊंगा और तेरी आज्ञा को जीवनभर मस्तक पर चढ़ाता रहूंगा।'

मलया बोली—'महाराज ! आप अपनी उदारता, प्रतिष्ठा और कर्तव्य-बुद्धि को इन मलिन विचारों से दूषित न करें।'

'मलया ! बलात्कार से मैं तुझे अपनी बनाऊं, उसमें सच्चा आनंद नहीं है इसलिए मैंने धैर्य धारण कर रखा है। किन्तु तू मेरे हृदयगत सद्भाव को नहीं जान पा रही है।...धैर्य की भी मर्यादा होती है। प्रिये ! मैं कल संध्या समय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आऊंगा···इतने समय के भीतर तुम अपने भविष्य का निर्णय कर लेना।'

मलया मौन रही।

महाराजा चले गए। थोड़े समय पश्चात् राधिका आयी और बोली—'देवी! महाराजा की उदारता और प्रसन्नता की आप अवमानना न करें।'

'राधिका! यह प्रश्न मेरे जीवन का है। दासी के लिए जीवन के प्रश्न पर विचार करना शोभा नहीं देता। आज से तुम कभी मुझे ऐसी बात मत कहना।'

राधिका बोली—'देवी! आप मुझे क्षमा करें। मैं केवल आपके प्रति उत्पन्न अपनी ममता के कारण ही ऐसा कह रही हूं। इसमें मेरा अपना कोई स्वार्थ नहीं है।'

'दास-दासी अपने स्वामी की प्रसन्नता के लिए अपनी बुद्धि को नीलाम कर देते हैं।' मलया ने कहा।

राधिका ने सोचा—'इस नारी को अपने रूप और यौवन पर गर्व है। कल यह गर्व चकनाचूर हो जाएगा। कंदर्पदेव की इच्छा का अवरोध आज तक कोई नहीं कर सका है।' राधिका नमस्कार कर चली गई।

मलया ने सोचा—तापसमुनि द्वारा प्रदत्त उस दिव्य औषधि का प्रयोग मुझे कल मध्याह्न में करना है। उसने आम्रफल संभालकर रख दिया।

परन्तु एकाध प्रहर बीता होगा कि महाराज कंदर्पदेव का एक बंद रथ आया। उसके साथ चार सशस्त्र स्त्रियां भी थीं। उन्होंने राधिका को राजाज्ञा सुनाते हुए कहा—'महाराजा की आज्ञा है कि देवी मलयासुन्दरी को लेकर आप सत्वर महाराजा के अन्तःपुर में आएं···महाराजा मलयासुन्दरी को अपने पास ही रखना चाहते हैं।'

राधिका ने ये समाचार मलया को सुनाते हुए कहा—'देवी! आप मेरी बात मान लेतीं तो आज यह नौबत नहीं आती।'

'राधिका! कंचन को अग्नि में तपना होता है। यही उसकी शुद्धि है। तू तैयारी कर···मेरा निश्चय अटल है।'

राधिका मलया की हिम्मत देख अवाक् रह गई और वह अपने वस्त्र लेने चली गई।

मलया ने छिपाए हुए पुरुषवेश तथा अन्य कपड़ों की एक पोटली बांध ली। आम्रफल भी अपने पास रख लिया और कुछ ही समय पश्चात् वह रथ में बैठ राजभवन की ओर चली गई।

राजभवन में एक सज्जित खंड में मलया की व्यवस्था की गई थी। मलया को लेकर राधिका उस खंड में गई। एक दासी भोजन का थाल ले आयी। राधिका ने कहा—'देवी, आज भोजन आम्रफल के साथ कर लें।'

'नहीं, राधिका! मध्याह्न के बाद ही आम चूसूंगी।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलया ने भोजन किया। राधिका चली गई।

मध्याह्न के समय खंड का द्वार भीतर से बंद कर मलया ने अपने केशकलाप में छिपाई हुई उस दिव्य जड़ी को निकाला। उसे आम्ररस में घिसा और नवकार मंत्र का स्मरण कर ललाट पर उसका तिलक किया।

वनस्पति अजेय शक्ति-संपन्न थी। तिलक का असर मर्मस्थान से आरंभ हुआ और वह समूचे शरीर में फैल गया।

लगभग अर्धघटिका के भीतर मलयासुंदरी का लिंग-परिवर्तन हो गया और वह एक रूपवान् नारी से सौम्य, सुंदर और तेजस्वी पुरुष बन गई। उसके उन्नत उरोज प्रचण्ड छाती में समा गये। उसका सौंदर्य खिल उठा और साथ ही साथ उत्तम पुरुष के लक्षण दृग्गोचर होने लगे।

मलया ने दर्पण में देखा। अपनी पुरुषाकृति को देखकर बोली—'अब तू निर्भय हो गई है। अब चाहे महाराजा कंदर्पदेव आये या स्वयं कंदर्प (कामदेव) रूप धारण कर आ जाये तो भी वे कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते।'

मलया ने पुरुषवेश धारण कर लिया और अपने स्त्रीवेश को उस पोटली में बांध दिया।

इस प्रकार वस्त्र बदलकर उसने उस दिव्य जड़ी को अपने केशों में बांध दिया और पगड़ी से केशकलाप को ढंक दिया।

परन्तु उसके सामने एक प्रश्न था, अब यहां से कैसे निकला जाये?

उसने सोचा—अन्तःपुर से पुरुषवेश में निकलना जोखिम भरा प्रयत्न है।··· कोई देख ले तो मरम्मत हो सकती है···। कोई चिन्ता नहीं···परिणाम कुछ भी हो, शील की रक्षा अब सम्भव हो गई है।

कुछ समय बीता। मलया पुरुषवेश में अपने खण्ड से बाहर निकली। इधर-उधर देखा, सब निद्राधीन हो चुके थे। वह आगे चली। कुछ ही दूर जाने पर दो दासियां मिलीं और इस नौजवान को वहां देख चौंक पड़ी। यह तरुण युवक यहां कैसे आया होगा?

वे दोनों वापस मुड़ीं और रानियों के पास जाकर उस दिव्य व्यक्ति के आगमन की बात सुनायी। वे दोनों दासियां महाराजा की रानियों की मुख्य दासियां थीं।

और एकाध घटिका के भीतर महाराजा कंदर्पदेव की आठों रानियां उस सुंदर नौजवान को देखने आ गईं···। उनके साथ दासियों का समूह भी आ गया। पुरुषवेशधारी मलया को देख सभी स्त्रियों का हृदय आनन्द से नाच उठा।

इस अंतःपुर में एक चिड़िया भी प्रवेश नहीं कर सकती; फिर यह तरुण कहां से आया?

रानियों के मन में यह प्रश्न नहीं उभरा। वे एकटक इस दिव्य तरुण को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देख रही थीं। सभी उस पर मोहित हो गईं और उसे अपने पास रहने के लिए प्रार्थना करने लगीं।

मंत्रमुग्ध सभी रानियां और दासियां उस तरुण को घेरे खड़ी थीं। इतने में ही एक दासी ने महाराजा के आगमन की सूचना दी। परन्तु कोई रानी या दासी वहां से नहीं खिसकी। वे सब मंत्रमुग्ध होकर मलया को देख रही थीं।

कंदर्पदेव आए। यह सब देख, वे आश्चर्यचकित रह गए। उन्होंने सबको वहां से हट जाने का आदेश दिया और इस तरुण से पूछा—'तू कौन है ? यहां कैसे आया ?'

तरुण बोला—'महाराज ! मैं पथिक हूं···कर्मयोग से यहां आ पहुंचा हूं···मुझे जाना है, परन्तु ये स्त्रियां मुझे जाने नहीं देतीं।'

राजा बार-बार युवक को देख रहा था। आंखें तो मलयासुन्दरी जैसी ही हैं···सुन्दर भी है···परन्तु यह स्त्री नहीं, पुरुष है। 'तेरा नाम क्या है ?' राजा ने पूछा।

'सुन्दरसेन।'

'तुझे यहां किसने आने दिया ?'

मलयासुन्दरी मौन रही।

राधिका कुछ दूर खड़ी थी। उसकी ओर दृष्टि कर महाराजा ने पूछा—'मलया कहां है ?'

'देवी सो रही हैं।'

'उसको जगा और मेरे आगमन की सूचना दे।'

राधिका चली गई।

महाराजा मलयासुन्दरी से कुछ प्रश्न करें, उससे पूर्व ही राधिका दौड़ी-दौड़ी आयी। उसने कहा—'महाराज ! देवी नहीं हैं !'

'तो कहां गई ?'

'कुछ भी अता-पता नहीं।'

'अरे ! किसी ने उसे भवन से बाहर जाते देखा है ?'

'नहीं, महाराज !'

'महाराज···महाराज···महाराज···राधिका, जा, अन्तःपुर में खोज कर। कहीं छिपी होगी।'

महाराजा ने अपने प्रहरी से कहा—'इस तरुण को बंदी बना दो।'

मलयासुन्दरी कहीं नहीं मिली।

महाराजा ने सोचा—यह पुरुष ही मलयासुन्दरी होनी चाहिए। यह किसी मंत्र-प्रयोग से पुरुष हो गई है।

महाराजा ने उससे अनेक टेढ़े-मेढ़े प्रश्न किए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलयासुन्दरी मौन रही।

मौन का दुष्परिणाम आया। राजा अत्यन्त कुपित हो गया।

उसने हाथ में एक कोड़ा लिया और मलयासुन्दरी की पीठ पर उसका प्रहार करने लगा।

मलया के पीठ की चमड़ी उधड़ गई। वह नवकार के जाप में तल्लीन हो गई।

राधिका ने कहा—'कृपावतार ! आप कुपित न हों। यह पुरुष है।'

'राधिका ! यह पुरुष अन्य कोई नहीं, मलयासुन्दरी ही है। इसने रूप-परिवर्तन किया है।' फिर मलया की ओर देखकर कंदर्पदेव ने कहा—'कल प्रातःकाल तक तू सही-सही बात नहीं बताएगा तो तुझे हाथी के पैरों तले रौंद दूंगा।'

मलया मौन रही।

राजा क्रोधावेश में बड़बड़ाता हुआ चला गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५३. अंतिम विश्राम

जब तक मनुष्य के कर्म अशुभ होते हैं तब तक उसकी चालाकी अथवा प्रयत्न कारगर नहीं होते।

मलयासुन्दरी को दुर्लभ आम मिला···दुष्ट राजा के पंजे से निकलने के लिए उसने यौन-परिवर्तन भी कर डाला, किन्तु वह पलायन नहीं कर सकी। उसे शीलरक्षा का कवच मात्र मिला। उसने कोड़े के प्रहार सहन किए···उसकी सुन्दर पीठ पर कोड़े के चार-पांच प्रहारों के चिह्न स्पष्ट उभर आए थे। चमड़ी उधड़ गई थी···रक्त चू रहा था और उसे असह्य पीड़ा हो रही थी···फिर भी उसे इस बात की प्रसन्नता थी कि उसने अपने शील की रक्षा की है।

मनुष्य की जब कसौटी होती है तभी उसकी शक्ति का परीक्षण होता है।

हाथी के पैरों तले रौंदने की धमकी देकर राजा कंदर्पदेव चला गया था। जाते-जाते उसने अपने प्रहरियों को यह आदेश दिया था कि दुष्ट पुरुष को एक कोठरी में बंद कर दिया जाए और इस बात की सावधानी रखी जाए कि वह छलिया कहीं छिटक न जाए।

राधिका पुरुषवेशधारी मलया से बात करना चाहती थी और उसे यह समझाना चाहती थी कि इतनी मार सहन करने की अपेक्षा पटरानी बनना उत्तम है···किन्तु उसे अवसर नहीं मिला। प्रहरियों ने मलया को एक काल-कोठरी में बंद कर ताला लगा दिया।

मलया ने मन-ही-मन निश्चय किया था कि हाथी के पैरों तले रौंदे जाने पर या शरीर के टुकड़े-टुकड़े हो जाने पर भी उसका कुछ नहीं बिगड़ेगा। अमूल्य शील के समक्ष ये सारे कष्ट नगण्य हैं। मृत्यु भले ही आ जाए। अब कोई चिन्ता नहीं है।

जो मौत का वरण करने के लिए तत्पर रहता है उसको अन्य पीड़ाएं स्पर्श तक नहीं करतीं।

परन्तु मलयासुन्दरी का भाग्य उसे निरन्तर सहयोग दे रहा था। जिस खंड में वह बंद थी, वह वही खंड था जो पहले से उसके लिए निश्चित था। इस खंड

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के बाहर एक झरोखा भी था। मुक्त होने का यह अच्छा अवसर था।

यह सोच वह उठी और खंड के वातायन के पास आयी। उससे वातायन का संकरा द्वार खोला।

रात्रि का प्रथम प्रहर पूरा हो गया था। उसने देखा कि उपवन में कोई प्रहरी नहीं है···संभव है कि सभी प्रहरी भोजन करने गए हों अथवा बातों में मशगूल हों।

नहीं···मृत्यु की निश्चिति होने पर भी मनुष्य को बचने का प्रयत्न अवश्य ही करना चाहिए। संभव है यहां से मुक्त होने पर पिता के राज्य में जाना हो जाए, प्रियतम से मिलना हो जाए।

झरोखे से नीचे उतरने के लिए उसने रज्जु की अनिवार्यता महसूस की। रज्जु थी नहीं। मलया ने पलंग पर बिछे रेशमी चादर के दो टुकड़े किए। इसी प्रकार ओढ़ने की चादर के दो टुकड़े कर, चारों को जोड़ उसने एक को उस वातायन के संगमरमर के खंभे से बांधा और शेष को नीचे लटका दिया। और क्षण भर का भी विलम्ब न कर वह सरसराती हुई उसके सहारे नीचे उतर गई।

उपवन बहुत बड़ा नहीं था। उसके चारों ओर छोटी दीवारें थीं। मलया ने दीवार को फांद डाला। उसी समय उसने भवन में शंखनाद सुना। उसने सोचा—संभव है किसी प्रहरी ने रस्सी बने उन टुकड़ों को देख लिया है और उसने यह शंखनाद किया हो।

मलया का मन क्षण भर के लिए भयाक्रान्त हो गया और वह बिना कुछ सोचे, बिना गन्तव्य का निर्णय लिये; सामने दीख पड़ने वाले मार्ग पर चल पड़ी।

सागरतिलक नगर के मार्गों से मलया बिलकुल अनभिज्ञ थी। उसको यह ज्ञात ही नहीं था कि कौन-सा मार्ग कहां जाता है? वह तो दुष्ट राजा के पंजे से निकल जाना चाहती थी। निकलने के पश्चात् वह किसी भी उपाय से पितृगृह चली जाएगी, ऐसा उसने निश्चय कर रखा था।

मलया के मन में जो संदेह था, वह भवन में साकार हो उठा। मलय जब उपवन की छोटी भींत को छलांग मारकर पार कर रही थी, उसी समय दो प्रहरियों ने लटकती हुई उस रस्सी को देखा था और शंखनाद किया था।

शंखनाद सुनकर आठ प्रहरी और आ गए और वहां की स्थिति देखकर चौंक पड़े।

मलया के खंड का द्वार तोड़कर अंदर देखा। मलया छिटक गई थी। यह समाचार महाराजा के पास पहुंचा। उस समय महाराजा मैरेय का पान कर सोने की तैयारी कर रहे थे। दासी ने हाथ जोड़कर कहा—'कृपावतार! मुख्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महल से एक प्रहरी कोई संदेश लेकर आया है।'

कंदर्पदेव स्वयं बाहर गया।

प्रहरी ने मस्तक नमाकर कहा—'कृपावतार ! गजब हो गया !'

'क्या हो गया ?'

'बंदी फरार हो गया।'

'फरार हो गया ! अरे नालायको ! क्या तुम सब सो रहे थे ?' राजा ने तत्काल अपने सैनिकों को चारों ओर भेजा और स्वयं कुछ सैनिकों को साथ ले मलया की खोज में निकल पड़ा।

दुष्ट राजा के पंजे से छूटकर मलया एक मार्ग पर चली जा रही थी। वह एक छोटे से गांव में पहुंच गई। मलया ने देखा, वहां दूर-दूर पर छोटे-छोटे मकान बने हैं। मलया ने रात भर वहीं रहने का निश्चय कर लिया।

मलया एक निर्जन स्थान की ओर गई। जाते-जाते उसके कानों में घोड़े के पदचाप सुनाई दिए।

मलया नीचे बैठकर, झाड़ी में छिप गई। दस सैनिकों की एक टुकड़ी इधर-उधर देखती हुई उस स्थान से आगे निकल गई। मलया के हृदय की धड़कन कुछ कम हुई और वह लुकती-छिपती कुछ आगे बढ़ी।

वह एक स्थान पर आकर रुकी। वहां दो वृक्ष थे। पास में एक कुआं था। कुछ ही दूर पर एक मंदिर दृष्टिगोचर हुआ।

मलयासुन्दरी एक वृक्ष की ओट में खड़ी हो गई और चारों तरफ निरीक्षण करने लगी।

मलया को यह कल्पना नहीं थी कि पास वाले वृक्ष पर एक नौजवान छिपा बैठा है। वह विश्राम कर रहा है। वह नौजवान कोई और नहीं, स्वयं महाबल कुमार था जिसको पाने के लिए मलया तड़प रही थी।

दो दिन से मलया को ढूंढ़ते-ढूंढ़ते वह इसी नगर में आ पहुंचा था और प्रियतमा की खोज में हताश होकर रात्रि के प्रारंभ में यहीं आकर एक वृक्ष पर विश्राम ले रहा था।

मलया को यह कल्पना नहीं थी कि पास वाले वृक्ष पर उसका प्रियतम विद्यमान है और न महाबल को ही यह कल्पना थी कि वहां उसकी प्रियतमा मलया आ पहुंची है।

मलयासुन्दरी को इस बात का संतोष था कि वह पुरुष रूप में है⋯परन्तु किस ओर जाना है, यह प्रश्न उसके मन को भारी बना रहा था। यदि भागते समय पुनः वह बन्दी बना ली गई तो ? इससे तो यही उचित है कि उसी वृक्ष के नीचे रात बिताई जाए। मलया उसी वृक्ष के नीचे बैठ गई।

लगभग अर्द्ध घटिका बीती होगी कि कुछ व्यक्ति हाथों में जलती मशालें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ले उधर आते हुए दिखलाई दिए। वे मशाल के प्रकाश में कुछ खोज रहे हैं, ऐसा प्रतीत हो रहा था।

मलया ने सोचा—राजा के सिपाही उसकी टोह में इधर-उधर घूम रहे हैं। उसने परस्पर बातचीत करते हुए उनके शब्द सुने। उसने राजा का स्वर पहचान लिया। उसने सोचा—यदि वे यहां आ जायेंगे तो बड़ी कठिनाई पैदा हो जाएगी।

अब क्या करना चाहिए? अनेक विचारों के उतार-चढ़ाव में उलझती हुई मलया वहीं बैठी रही।

राजा और राजा के सैनिक कुछ दूर थे और मलयासुन्दरी को ढूंढ़ रहे थे।

मनुष्य जब अत्यन्त दुःखी हो जाता है और विपत्तियों का भार ढोते-ढोते थक जाता है तब उसमें जीवन की आशा क्षीण हो जाती है।

मलया का मन टूट चुका था। उसे लग रहा था कि संभव है वह पुनः राजा की बंदी बन जाए। वहां से पलायन करना असंभव था। उसने सोचा—इस दुःखी और अनन्त पीड़ाओं के आवर्त में फंसे जीवन से तो मरना अच्छा है। क्यों न मैं अब अपना जीवन का अंत कर पीड़ाओं से मुक्त हो जाऊं! पास में कुआं है। मैं उसमें कूदकर अपना प्राणान्त क्यों न कर दूं!

दूसरे ही क्षण उसने सोचा, जिनेश्वरदेव ने आत्महत्या को घोरतम पाप कहा है। जो एक बार आत्महत्या करता है उसे अनेक जन्मों तक दुःखी होना पड़ता है।

किन्तु जीवन के बोझ को हल्का करने का और कोई उपाय नहीं था। इतने दिन तक मलया इसी आशा-तंतु के सहारे जी रही थी कि उसे प्रियतम मिलेंगे, पुत्र के दर्शन होंगे। किन्तु निराशा ही उसे हाथ लग रही थी। अब वह जीवन से ऊब चुकी थी।

इन विचारों के तूफान में उलझती हुई मलया उठी और कूप की ओर चल पड़ी।

उसी क्षण कुछ आवाज सुनकर महाबल जाग उठा।

मलयासुन्दरी कूप के पास पहुंच गई। वह नहीं जानती थी कि कुआं कितना गहरा है? उसमें पानी है या नहीं? मलया इस कूप से सर्वथा अजान थी। मलया ने कूप के भीतर झांककर देखा…भयंकर अंधकार में कुछ भी नहीं दीखा।

उसने हाथ जोड़कर नवकार मंत्र का तीन बार स्मरण किया।

महाबल की दृष्टि कूप की ओर गई। उसने देखा, कोई पुरुष खड़ा है। वह उठा…

उसी वक्त तीन बार नवकार मंत्र का स्मरण कर मलया ने कहा—'गगन-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंडल में विराजित गृह-नक्षत्रो ! अपने महाबल के लिए मैं जो कुछ सह सकती थी, मैंने सहा है···अब मेरे में विशेष सहने की शक्ति नहीं है···यदि आप मेरे प्रियतम को कभी कुछ संदेश दे सकें तो इतना मात्र कहना कि दुःख के भार से दबी हुई तुम्हारी मलया ने कायर होकर ऐसा विश्राम लिया है, जो कभी उचित नहीं माना जा सकता। वह कुछ गंभीर हुई और जोर से बोली—'महाबल ! तुम कहीं भी हो, मेरा नमस्कार स्वीकार करना···सुखी रहना।'

मात्र बीस कदम दूर स्थित महाबल एक पुरुष के मुंह से अपना नाम सुनकर अत्यधिक चंचल हो उठा और वह कूप पर आए उससे पूर्व ही मलयासुंदरी ने उस अंधकूप में छलांग लगा दी।

मलयासुंदरी ने दोनों आंखें बन्द कर कूप में छलांग लगायी···परन्तु कुएं में पत्थर नहीं, रेत अधिक थी···मलया कूप के तल तक पहुंची···रेत पर गिरी और मूर्च्छित हो गई।

उसी क्षण महाबल भी कुएं के पास आ गया। अंदर घना अंधकार व्याप्त था। कुछ भी दीख नहीं रहा था। फिर भी उसने अंदर उतरने का प्रयत्न किया···एक वृक्ष का मूल उसके हाथ में आया···उसको पकड़कर महाबल कुछ नीचे उतरा···फिर एक पैर टिकने भर का भी स्थान वहां नहीं था। इसलिए उसने संभलकर नीचे छलांग मारी।

सद्भाग्य से जहां मलयासुंदरी गिरी थी उसके एक हाथ की दूरी पर महाबल उस रेत पर आ गिरा और अंधकार के कारण हाथ को इधर-उधर फैलाता हुआ कुछ खोजने लगा।

इधर राजा कंदर्पदेव अपने दो सैनिकों को वहां रोककर दूर निकल गया था। उसने इस कूप की ओर देखा तक नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५४. विषधर

चाहने पर भी वर्षा नहीं आती और चाहने पर भी मौत नहीं मिलती। जब तक जीवनशक्ति प्रबल होती है, तब तक मौत निकट नहीं आती।

पुरुषवेशधारी मलया कूप की रेत पर जा गिरी। उसको कहीं चोट नहीं आयी। वह मात्र मूर्च्छित हो गई थी।

महाबल भी उसी कूप में गिरा था। उसको भी चोट नहीं आयी और वह मूर्च्छित भी नहीं हुआ।

वह अंधकार में हाथ से कुछ टटोल रहा था। तत्काल उसका हाथ मलया के शरीर पर लगा। मलया मूर्च्छित थी। महाबल बोला—'भाई! तू कौन है? इस प्रकार कूप में क्यों पड़ा? तुझे क्या दुःख है?'

किन्तु उत्तर कौन दे?

महाबल का हाथ युवक के मुंह पर फिरने लगा। महाबल को लगा कि यह युवक जीवित है, श्वासोच्छ्वास चल रहा है। उसने कपाल पर हाथ फेरा।

मलया को कुछ होश आने लगा। वह बेजान अवस्था में ही बोल पड़ी—'महाबल! मुझे क्षमा करना। तुम जहां कहीं भी हो, मेरी वंदना स्वीकार करना।'

महाबल बोला—'भाई! तुम कौन हो? किस महाबल को याद कर रहे हो? तुम्हें क्या दुःख है?'

मलया चौंकी...अरे, यह तो मेरे प्रियतम का ही स्वर है···मेरे स्वामी की आवाज···क्या यह स्वप्न है या यथार्थ?

अंधकार में कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। मलया ने पूछा—'आप कौन हैं? यहां क्यों आए हैं? इस नगरी के राजा के कोई चर तो नहीं हैं?'

'भाई! मैं भी तेरे जैसा ही एक दुःखी नौजवान हूं···किन्तु तेरे जैसे मरना नहीं चाहता···मैं अपनी प्रियतमा की खोज में निकला हूं···महीनों से खोज रहा हूं···किन्तु मेरी हृदयेश्वरी कहीं नहीं मिली···फिर भी मैं निराश नहीं हुआ···तू क्यों इस कूप में गिरा है···? तू किस महाबल को याद कर रहा है?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलया को अब पूरा निश्चय हो गया कि यह उसी का स्वामी है। भले ही मुझे कर्मों का अपार भोग करना पड़ा, भले ही मुझे सागर में तैरना पड़ा, भले ही मुझे मौत से जूझना पड़ा, अंत में मेरे स्वामी मुझे मिल गए। ओह ! इस अंधकार में मैं अपने स्वामी का मुंह कैसे देखूं ?

मलया को मौन देख, महाबल ने पुनः कहा—'कोई बात नहीं है, तू अपना दुःख मुझे बताना नहीं चाहता, ठीक है। हमें इसी कूप में पड़े रहना होगा। बाहर निकलने का कोई मार्ग नहीं दीख रहा है।'

महाबल के प्रश्न का उत्तर मलया दे, उससे पूर्व ही एक विशाल बिंबी में कुछ प्रकाश-सा दीखा। वह प्रकाश बढ़ता गया।

महाबल ने देखा कि उस बिंबी में से एक मणिधर नाग निकला है और वह अपनी मणि को एक ओर रख रहा है। इस दिव्यमणि के प्रकाश से कूप का अंधकार नष्ट हो गया। मलया ने इस प्रकाश में अपने स्वामी की ओर देखा··· वह उठी और महाबल के दोनों हाथ पकड़कर बोली—'आप···'

महाबल चौंका—इस तरुण को पहले कभी नहीं देखा था···क्या यह पागल तो नहीं हो गया है ? वह बोला—'मित्र ! तू किसको ढूंढ़ रहा है ? तू अपना दुःख बता। दुःख बताने से हल्का हो जाता है।'

'ओह ! महाबल ! मेरे स्वामी···आज मेरी आराधना सफल हुई···महाबल ! आप अपने थूक से मेरा तिलक मिटा दें।'

महाबल चौंका। क्या मैं जिसे ढूंढ़ रहा था, वह मेरी प्राणप्रिया मलया मुझे मिल गई ? महाबल ने तत्काल अपने थूक से वह तिलक मिटाया और दूसरे ही क्षण दिव्य जड़ी-बूटी का प्रभाव क्षीण होने लगा···कुछ ही क्षणों में मलया मूल रूप में आ गई···महाबल ने अत्यन्त प्रेम और स्नेह से प्रिया को बाहुपाश में बांध लिया।

दोनों आपबीती सुनाने लगे।

और मणिधर नाग अपनी मणि ले चला गया···पुनः सघन अंधकार व्याप गया।

मलया और महाबल के वियोग का अंत आ गया था। दोनों बातें करते रहे और महाबल पुत्र-दर्शन के लिए उत्सुक हो उठा। धीरे-धीरे रात बीती। प्रातःकाल हुआ। सूर्योदय हो गया।

मलया और महाबल ने ऊपर देखा। ऊपर प्रकाश दीख रहा था। उस प्रकाश में महाबल ने देखा, कुछ व्यक्ति कूप के भीतर झांक रहे हैं। कंदर्पदेव ने जोर से कहा—'मलया ! तू मूल रूप में आ गई है, यह जानकर प्रसन्नता हुई है। तेरा पति तुझे मिल गया, यह और प्रसन्नता की बात है। अब तुम दोनों बाहर निकलो। मैं दोनों के लिए दो ऊंचे-चौड़े बर्तन कूप में उतरवाता हूं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसमें दोनों बैठ जाओ। मेरे आदमी ऊपर खींच लेंगे, फिर जहां जाना हो, चले जाना।'

मलया ने महाबल का हाथ थामते हुए कहा—'स्वामी ! यह जो बोल रहा है, यही नगरी का दुष्ट राजा कंदर्पदेव है···मुझे इसके शब्दों पर तनिक भी विश्वास नहीं है।'

'प्रिये ! अब तो मैं तेरे साथ हूं। भय की कोई बात नहीं है। एक बार हमें इस अंधकूप से निकल जाना है, फिर देख लेंगे।'

इतने में दो ऊंचे-चौड़े बर्तन मजबूत रस्सी से बंधे हुए नीचे आए। राजा ने कहा—'दोनों बैठ जाएं।'

राजा फिर चिल्लाया—'ठीक बैठ गए न ?'

'हां, महाराज !' महाबल ने कहा।

'अच्छा।' कहकर राजा ने अपने आदमियों से उन बर्तनों को ऊपर खींचने के लिए कहा। और महाबल के बर्तन को खींचने वाले तीनों आदमियों से कहा—'आधी दूर आए तब रस्सी को काट देना।'

दुष्ट राजा के आदमी समझ गए।

मलया जिस बर्तन में बैठी थी, वह तत्काल तेजी से ऊपर खींच लिया गया, तब तक महाबल का बर्तन केवल आधी दूर ही आ पाया था और तभी राजा के आदमियों ने रस्सी काटकर महाबल को पुनः कूप में गिरा दिया। मलयासुंदरी चौंकी। उसने वहीं से पुनः कुएं में कुदने का प्रयत्न किया। राजा ने उसे खींचकर बाहर निकाल लिया। मलया बोली—'महाराज ! राजा वचन का पालन करता है। आपने मेरे स्वामी को पुनः कुएं में डाल दिया। कितनी आपदाओं को झेलने के बाद मैंने अपने प्राणप्रिय को पाया था···आपको ऐसा आचरण नहीं करना चाहिए था।'

राजा ने धीरे से कहा—'ऐसे भिखारी के साथ तेरा जीवन बिगड़े, यह उचित नहीं है···अब तो मैं ही तेरा प्राणाधार बनूंगा।'

मलया कांप उठी। ओ कर्मदेव ! इतनी कठोर कसौटी ! आखिर कब तक ? तीव्र अग्नि में स्वर्ण भी पिघल जाता है, जलकर राख हो जाता है। मुझे अभी क्या-क्या दुःख भोगने पड़ेंगे···एक हाथ में आशा का थाल आता है और उसी क्षण लूट लिया जाता है, इससे अच्छा तो यह होता कि मैं उस अंधकूप में अपने प्रियतम के साथ ही रहती।···इन विचारों में उलझी हुई मलया रो पड़ी।

राजा की आज्ञा से मलया को एक पालकी में बिठा दिया गया और राजा उसे लेकर अपने नगर की ओर चल पड़ा।

राजा ने इस बार मलयासुंदरी को अपने राजभवन में न रखकर एक पुराने भवन में रखा। वह कारावास जैसा ही था। उसे बंदी बनाकर सैकड़ों रक्षकों को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वहां छोड़ दिया।

मलया पुनः पुरुष रूप धारण न कर ले, इसलिए उसके पास किसी दासी को नहीं छोड़ा।

दिन बीता। रात आयी।

एक रक्षक दीपक रखने खंड में गया। मलया ने कहा—'प्रकाश की कोई आवश्यकता नहीं है।'

वह बोला—'देवी ! यह मकान वर्षों से निर्जन पड़ा है…कोई जीव-जन्तु आए तो…।'

'जो मौत से नहीं डरता, वह जीव-जंतु से क्यों डरेगा ?' मलया ने कहा।

समय बीतने लगा।

मध्यरात्रि का समय आया।

इतने में खंड में से भयंकर चीख सुनाई दी।

तत्काल दीपक लेकर एक रक्षक अंदर गया। अन्य रक्षक भी आ गए। दृश्य देखकर सब कांप उठे।

एक भयंकर विषधर मलया के पैरों में डसकर वहीं चिपट गया था।

मुख्य रक्षक ने अपनी तलवार से विषधर को मार डाला।

मलयासुंदरी मूर्च्छित होकर गिर पड़ी।

मुख्य रक्षक ने महाराजा को यह दु:खद संदेश देने के लिए अश्वारोही को भेजा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५५. विषमुक्ति

मलया के सर्पदंश का समाचार सुनते ही महाराजा कंदर्पदेव के होश-हवास उड़ गए।

मध्यरात्रि बीत गई थी। महाराजा मलया का मधुर स्वप्न ले रहे थे···इतने में ही महाप्रतिहार ने सर्पदंश की बात कहकर महाराजा के मधुर स्वप्न को मिट्टी में मिला दिया। वह चाहता था मलया को अपनी अंकशायिनी बनाना और उसके अप्रतिम रूप और यौवन का पान करना···

सर्पदंश की बात सुनते ही राजा किंकर्तव्यविमूढ़ बन गया···उसने फिर राजवैद्यों को बुला भेजा और वह उस जीर्णशीर्ण भवन की ओर चला। उसे यह पीड़ा हो रही थी कि मलया को वैसे निर्जन भवन में रखकर अपराध किया है।

जल्दबाजी में लिया गया निर्णय पश्चाताप का कारण ही बनता है। किन्तु अब क्या हो?

वह तत्काल रथारूढ़ होकर उस भवन में आया और मलया के कक्ष में पहुंचा। वहां का दृश्य देखते ही उसकी आशाओं पर पानी फिर गया। वह इतना अवश्य जानता था कि जिस किसी व्यक्ति को सर्प ने डसा है, उस व्यक्ति के प्राण चौबीस प्रहर तक ब्रह्मरंध में टिके रहते हैं। इस एक क्षीण आशा के बल पर उसने मलया को रथ में सुलाया और राजभवन में आ गया।

राजभवन में कोलाहल मच गया था। रात्रि की नीरवता भंग हो चुकी थी।

राजा की आज्ञा से मलया को एक सुंदर खंड में ले जाया गया और वहां एक पलंग पर उसे लिटा दिया गया।

राजवैद्य आ गए थे। एक वैद्य ने मलया की नाड़ी देखकर कहा—'महाराज! जिस सर्प ने इस सुंदरी को डसा है वह तीव्र विषधारी सर्प होना चाहिए। देवी के प्राण ब्रह्मरंध में पहुंच गए हैं। उन प्राणों को पुनः शरीरस्थ करने में कोई औषधोपचार सफल नहीं हो सकता···। क्योंकि औषधि को गले के नीचे पहुंचाना अत्यन्त दुष्कर है···देवी का आयुष्यबल बलवान् हो और पुण्य का कोई योग हो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो मांत्रिक के सिवाय इस विष का निवारण नहीं हो सकेगा, इसलिए आप तत्काल मांत्रिक को बुलाकर प्रयत्न करें।'

राजवैद्य ने आगे कहा—'महाराज ! जब तक मांत्रिक या गारुड़िक नहीं आ जाते तब तक मैं एक प्रयोग करता हूं'''यदि वह औषधि कुछ भी काम कर पाएगी तो मेरा प्रयत्न अवश्य ही सफल होगा'''' कहकर राजवैद्य प्रयोग की तैयारी में लग गया।

राजा ने नगरी के प्रसिद्ध गारुड़िक और मांत्रिकों को बुलाने के लिए आदमी भेजे।

रात्रि के अंतिम प्रहर में दस-बारह मांत्रिक और गारुड़िक आ गए।

राजवैद्य का प्रयोग सफल नहीं हुआ। वह हाथ झटककर दूर बैठ गया था।

मांत्रिकों ने प्रयोग प्रारंभ किए'''किन्तु एक भी प्रयोग सफल नहीं हुआ।

एक गारुड़िक अपना प्रयोग पूरा कर बोला—'महाराज ! यदि नाग को न मारा होता तो मैं अपनी मंत्रशक्ति से उसी नाग को यहां बुला लेता और देवीजी के विष को चूसने का निर्देश देता'''अब मैं लाचार हूं।'

महाराजा ने पूछा—'क्या ऐसा कोई उपाय नहीं है कि इस देवी का विष उतर जाए?'

एक वृद्ध गारुड़िक बोला—'कृपावतार ! यदि किसी के पास मणिधर नाग की मणि हो या विशेष साधना-बल हो तो ही इस सुंदरी को बचाया जा सकता है, अन्यथा नहीं। हमारे पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है।'

सूर्योदय हो चुका था।

मलयासुंदरी मूर्च्छित अवस्था में शय्या पर पड़ी थी।

उसके प्राण ब्रह्मरंध्र में सिमट गए थे। राजा बार-बार उसके विष-मुक्ति की बात सोच रहा था, क्योंकि वह उसे अपने हाथों से गंवाना नहीं चाहता था। उसका उपभोग करना चाहता था।

सर्पदंश की बात सारे नगर में फैल गई।

दो-चार अन्य मांत्रिक भी आए, पर सब असफल रहे। राजा ने तत्काल अपने महामंत्री जीवक को एक ओर बुलाकर कुछ कहा। जीवक मंत्री तत्काल बाहर चला गया और दूसरे उपमंत्रियों को सूचना दी।

लगभग दो घटिका के पश्चात् राज्य के चार संदेशवाहक नगरी के बाहर भिन्न-भिन्न दिशाओं में चले गए। वे राज्य के सभी नगरों में जा-जाकर यह घोषणा करने लगे—'राजभवन में मलयासुन्दरी नाम वाली एक सुन्दर स्त्री को नाग ने डस लिया है'''उसके विष को दूर करने के सभी उपाय निष्फल गए हैं'''महाराजा कंदर्पदेव यह घोषणा करते हैं कि जो कोई व्यक्ति मलयासुन्दरी को विषमुक्त कर नया जीवन देगा, उसे 'रणरंग' नामक हाथी, राजकन्या और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक देश पुरस्कारस्वरूप दिया जाएगा।'

यह पडह सर्वत्र फैल गया, किन्तु किसी भी व्यक्ति ने इस पडह को नहीं झेला।

राजा के पडह-वादक चारों दिशाओं में यह घोषणा करते हुए घूम रहे थे; पर कोई भी व्यक्ति विषमुक्त करने के लिए आगे नहीं आ रहा था।

इतने में ही एक विदेशी जैसे लगने वाले सुन्दर तरुण ने उस पडह पर हाथ रखकर कहा—'अब बन्द करो अपनी घोषणा। मैं भयंकर से भयंकर विष का निवारण कर दूंगा···मुझे तुम अपने महाराजा के पास ले चलो···किन्तु मेरी एक शर्त माननी होगी।'

'आप हमारे साथ चलें। महाराजा आपकी शर्त अवश्य स्वीकार करेंगे।' घोषणा करने वाले ने कहा।

विदेशी नौजवान को लेकर संदेशवाहक राजभवन में पहुंचे। उस समय दिन का अंतिम प्रहर चल रहा था।

विदेशी युवक को राजा के समक्ष उपस्थित किया गया।

महाराजा ने विदेशी युवक की ओर देखा···देखते ही वह चौंक उठा—अरे, यह तो वही सुंदर युवक है जो अंधकूप में मलयासुंदरी के साथ था और जिसे पुनः कूप में फेंक दिया था। इस पुरुष के कारण ही मलया मेरा सत्कार नहीं कर पाती थी, इसीलिए मैंने इसे पुनः कूप में डाल दिया था। परन्तु यह उस अंधकूप से कैसे निकला? वहां तो अभी भी सिपाही खड़े होंगे। आगे कुछ भी न सोचते हुए राजा ने पूछा—'आप कौन हैं?'

'मैं एक विदेशी हूं। जिसे सर्प ने डसा है, वह मेरी पत्नी है। मैं भयंकर विष को नष्ट कर सकता हूं···आपने जिस पुरस्कार की घोषणा करवायी है, उसे मैं नहीं चाहता। यदि आप मेरी पत्नी को मुझे सौंपने का वादा करें तो मैं कुछ ही क्षणों में मलयासुंदरी को विषमुक्त कर सकता हूं।' राजा इस शर्त को सुनकर चौंका। उसने अपने दुष्टबुद्धि मंत्री जीवक की ओर देखा। मंत्री ने पूछा—'आपका शुभ नाम?'

'सिद्धेश्वर।' महाबल ने कहा।

'सिद्धेश्वर! मलयासुंदरी आपकी पत्नी है, इसका प्रमाण क्या है?'

'मलयासुंदरी होश में आने पर यदि मुझे पतिरूप में स्वीकार न करे तो मैं यहां से चला जाऊंगा।' महाबल ने कहा।

राजा अभी चिन्तन कर रहा था।

नगर के संभ्रान्त व्यक्ति, जो वहां उपस्थित थे, बोले—'महाराज! सिद्धेश्वर का कथन न्यायसंगत है···आपको इसकी पत्नी इसे सौंपनी ही चाहिए।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा ने सोचा—एक बार मलया विषमुक्त हो जाए। फिर आगे सोचेंगे। मन में ऐसा पाप रखकर राजा बोला—'सिद्धेश्वर! यदि तुम मलया को विषमुक्त करने के साथ-साथ मेरा एक दूसरा कार्य भी कर दोगे तो मैं मलया को तुम्हें सौंप दूंगा···किन्तु यदि मलया ने तुम्हें पतिरूप में स्वीकार न किया तो···?'

'तो मैं वैसे ही चला जाऊंगा।' महाबल ने कहा।

महाबल को लेकर महाराजा मलया के खंड में गए। महाबल ने पूरा खंड खाली करवा दिया। उसने चारों ओर शुद्ध पानी के छींटे दे एक आसन पर बैठने की तैयारी की। उस समय उसने महाराजा से भी कक्ष से बाहर जाने की प्रार्थना की।

कंदर्पदेव बाहर चले गए। महाबल ने खंड का द्वार अंदर से बंद कर सांकल लगा दी।

फिर उसने मलयासुन्दरी को उस शुद्ध की हुई भूमि पर सुलाया और विषापहार मंत्र की आराधना प्रारंभ की···सात बार मंत्र का जाप कर उसने अपनी कमर पर बंधे कपड़े से एक दिव्य मणि निकाली। वह अत्यन्त चमक रही थी। उसने उसे जल से धोया और जल को मलया के मुंह पर छिड़ककर मणि को ब्रह्मरंध्र पर रखा।

कुछ ही क्षणों के पश्चात् मलया ने अपना एक हाथ हिलाया। पैरों को संकुचित कर धीरे-धीरे आंख उघाड़ी।

वह देखते ही चौंकी—स्वयं को सर्प ने डसा था···स्वामी अंधकूप में थे। यहां कैसे आ गए? वह अचानक उठने लगी। महाबल बोला—'प्रिये! अब तू निर्भय है···राजा ने वचन दिया है कि वह मेरी पत्नी मुझे सौंपेगा।'

'स्वामिन्! दुष्ट व्यक्ति के लिए वचनों का कोई मूल्य नहीं होता···किन्तु आप अंधकूप से कैसे निकले?'

महाबल ने पत्नी के मस्तक पर रखी मणि हाथ में ले ली। उसने कहा—'प्रिये! पहले तू अपनी बात बता···तुझे सर्प कैसे डस गया?'

मलयासुन्दरी पति महाबल का सहारा ले बैठी और अपनी सारी घटना उसे सुनायी।

महाबल बोला—'प्रिये! मैं पुनः अंधकूप में जा गिरा। राजा के सिपाही कुएं के चारों ओर सावचेत होकर बैठ गए। अभी भी बैठे हुए हैं। उस अंधकूप से बाहर आना असंभव था। दिन बीता। रात के अंधकार में पुनः वह मणिधारी सांप आया। उसकी मणि के प्रकाश में मैंने ऊपर चढ़ने का प्रयास किया। मुझे देखकर मणिधारी सर्प अपनी बिबी से आगे चला। मुझे प्रतीत हुआ कि वह कुछ संकेत कर रहा है। मैं उस बिबी के पास गया। वहां एक पत्थर को हटाया। मुझे एक सुरंग दिखाई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दी। मैं उस सुरंग में घुसा और पेट के बल आगे खिसकते-खिसकते एक चौड़े स्थान पर आ गया। मणिधर सर्प अपनी मणि वहां रख चला गया। मैं नवकार मंत्र का जाप करता हुआ मणि के पास गया। मैंने देखा वहां कोई गुप्त द्वार है। मैंने शिला को हटाया। मार्ग बन गया। फिर मणिधर की मणि को एक ओर रख मैं सर्प की प्रतीक्षा करने लगा। किन्तु एक प्रहर तक वह नहीं आया'''तब मैं मणि को लेकर उसी मार्ग से बाहर निकला। शिलाखण्ड को यथावत् कर जब मैं बाहर आया तब रात्रि का अन्तिम प्रहर चल रहा था। मैं कुएं से काफी दूर आ चुका था। मैं उस वृक्ष के पास आ गया, जहां मैंने कपड़ों की पोटली रखी थी। उसे ले नगर में आया और एक पान्थशाला में विश्राम के लिए रह गया। फिर मैं तेरी खोज में निकला और यहां आ गया।

'ओह प्रियतम ! मेरे लिए इतने कष्ट ! मैं अभागिनी हूं कि अपने प्रियतम को भी सुख नहीं दे सकती।' कहती हुई मलया रो पड़ी।

महाबल बोला—'प्रिये ! अब कष्टों का अन्त आ गया है। अभी हमें यहां से प्रस्थान कर देना है।'

'स्वामिन् ! राजा के वचनों पर विश्वास रखना खतरे से खाली नहीं है।' मलया ने कहा।

महाबल तत्काल द्वार के पास गया और द्वार को खोल बाहर निकल गया। मलया भी उसके पीछे-पीछे कक्ष से बाहर आ गई।

मलया सुन्दरी को जीवित देख सभी लोग हर्ष से फूल उठे। राजा कंदर्पदेव ने प्रसन्न होकर कहा—'सिद्धेश्वर ! तुमने असंभव कार्य को संभव कर दिखाया है।'

सिद्धेश्वर ने कहा—'महाराजश्री ! आपके मंत्री ने एक शंका व्यक्त की थी—आप मलयासुन्दरी से पूछें कि वह किसकी पत्नी है ?'

राजा ने कहा—'तुम जो कहते हो वह सही है।'

महाबल बोला—'फिर आप मुझे मेरी पत्नी सौंप दें और प्रसन्न हृदय से हमें विदाई दें।'

'सिद्धेश्वर ! महाराज ने आपकी शर्त मानी है। आपने उनका एक कार्य करने की स्वीकृति दी थी, वह आप पूरा करें।' जीवक मंत्री ने कहा।

'हां, आप मुझे आज्ञा दें।' महाबल ने कहा।

कंदर्पदेव ने मुसकराते हुए कहा—'कल मैं आपको अपना कार्य बताऊंगा। अभी तो रात आ गई है। सब घर जाने के लिए उत्सुक हैं।'

महाबल समझ गया कि राजा कोई षड्यंत्र की बात सोच रहा है, इसलिए उसने मलया की ओर देखकर कहा—'मलया ! भय की बात नहीं है। कल प्रातःकाल राजा का कार्य संपन्न कर हम यहां से चलेंगे।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वहां के नगरसेठ ने राजा से कहा—'महाराज ! अपनी शर्त के अनुसार आप सिद्धेश्वर को उसकी पत्नी सौंप दें।'

'सेठजी ! अभी राजा का कार्य पूरा नहीं हुआ है। वह कार्य होते ही महाराजा मलया को सौंप देंगे।' महामंत्री ने कहा।

राजा बोला—'जब तक मेरा कार्य न हो जाए, तब तक मलया राजभवन में ही रहेगी। सेठजी ! आप महाबल को अपने साथ ले जाएं।' ऐसा ही हुआ।

महाबल को लेकर नगरसेठ चला गया।

मलया राजभवन के एक कक्ष में चली गई।

राजा और मंत्री अपने मंत्रणागृह में गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६. विनाश का षड्यंत्र

१. चिता की राख

प्रातःकाल हुआ। पूर्वांचल पर मरीचिमाली उदित हुआ। सारा नगर व्यस्त हो गया। महाबल स्नान, मंत्र जाप आदि से निवृत्त होकर नगरसेठ के साथ राजा के पास आया। उसने सोचा, मुझे राजा का एक कार्य संपन्न करना है। मैंने वचन दिया है और उसका मुझें अक्षरक्षः पालन करना है। राजा का कार्य शीघ्रता से संपन्न कर मैं मलया को लेकर अपने नगर पृथ्वीस्थानपुर की ओर चला जाऊंगा। माता-पिता मेरे विरह में अत्यन्त दुःखी होंगे।

महाराजा ने कहा—'सिद्धेश्वर! अपना कार्य पूरा होते ही मैं मलया को लौटा दूंगा। तब तक वह मेरे राजभवन में ही रहेगी। मेरा कार्य बहुत कठिन नहीं है। मैं मस्तकशूल व्याधि से ग्रस्त हूं। यदा-कदा मैं उससे अत्यन्त पीड़ित हो जाता हूं। एक योगी ने मुझे इस व्याधि के निराकरण का उपाय बताया था। परंतु अभी तक मैं उस उपाय को क्रियान्वित नहीं कर सका। वह उपाय यह है—बत्तीस लक्षणों से युक्त एक व्यक्ति हंसते-हंसते चिता में जलकर राख हो जाए और उसकी राख सिर पर लगाई जाए तो शिर-शूल मिट सकता है। यह कार्य तुझे करना है। यह कार्य होते ही तू मलया को लेकर कहीं भी जा सकता है।'

यह सुनते ही महाबल अवाक् बन गया। दूसरे ही क्षण नवकार मंत्र का स्मरण कर वह बोला—'महाराज! यह कार्य दुष्कर नहीं है। मैं इसे संपन्न कर दूंगा। एक बात है कि मैं जहां कहूं, वहीं चिता तैयार करनी होगी। चिता की तैयारी भी मैं ही करूंगा।'

राजा ने कहा—'सिद्धेश्वर! जैसा तुम कहोगे वैसा ही होगा।'

श्मशानभूमि।

राजा, मंत्री तथा नगर के हजारों व्यक्ति श्मशान की ओर चले। वहां भीड़ एकत्रित हो गई।

महाबल ने चिता के लिए एक स्थान चुना। उसने स्वयं चिता की तैयारी की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समय हुआ। महाबल ने स्वयं कुटिराकार चिता में प्रवेश किया। रक्षकों ने तत्काल चिता के मुंह पर चार-पांच बड़े-बड़े लक्कड़ रख दिए। फिर चिता को चारों ओर से सुलगा दिया।

मलयासुन्दरी ने यह दृश्य देखा नहीं, पर सुनते ही मूच्छित होकर गिर पड़ी।

चिता धग्-धग् कर जलने लगी।

राजा का हृदय प्रसन्न हो गया, क्योंकि सिद्धेश्वर जलकर राख हो रहा था।

श्मशान की चिता जलकर ठंडी हो चुकी थी। वहां केवल राख का ढेर बचा था। रक्षकों को निश्चय हो गया था कि सिद्धेश्वर जलकर राख हो गया है। इसलिए वे श्मशान को छोड़कर चले गए।

किन्तु सिद्धेश्वर तो जीवित था। जिस स्थान पर चिता की रचना की गई थी, वह स्थान परिचित था। जिस मार्ग से वह कुएं से बाहर निकला था, वह स्थान वही था, इसी गुप्त मार्ग पर उसने चिता की रचना की थी। जैसे ही चिता जलाई गई, वह गुप्त मार्ग से भीतर जाकर वहां शिलाखण्ड दे दिया था। वह गुप्त मार्ग से भीतर गया और अन्दर के चौक में निर्भय होकर बैठ गया। उसके पास मणि थी। उसने मणि को बाहर रखा। सारा स्थान प्रकाश से जगमगा उठा। वह नवकार महामंत्र के जाप में तल्लीन हो गया।

रात का चौथा प्रहर प्रारम्भ होने से पूर्व वहां रहने वाला मणिधारी नाग आया और मणि को लेकर जाने लगा। महाबल ने इस उपकारी नाग को भावपूर्ण वन्दन किया और शिला को हटाकर बाहर आ गया। राख ठंडी हो चुकी थी। उस राख के ढेर से उसने सिर ऊंचा किया और आस-पास देखा। कोई रक्षक नहीं था। यह अवसर उचित है—ऐसा सोचकर उसने कुछ राख अपने उत्तरीय के पल्ले में बांधी और चुपचाप वहां से चल पड़ा।

सूर्योदय हुआ।

महामंत्री बीहड़ श्मशान में पहुंचा। राख का ढेर पड़ा था। उसने उस पर पानी गिरवाया और महाराजा के पास आ गया।

सभी ने यही मान लिया था कि सिद्धेश्वर मर गया है और अब मलया राजा कन्दर्पदेव के अन्तःपुर की शोभा बढ़ाएगी। राजा इसी इन्तजार में आनन्दित हो रहा था। वह कुछ कहे, उससे पूर्व ही मुख्य द्वार पर सिद्धेश्वर की जय-जय के शब्द कान में पड़े। सभी की दृष्टि मुख्य द्वार की ओर गई।

वहां एक हाथ में राख की पोटली लेकर महाबल सिद्धेश्वर मुख्य द्वार में प्रवेश कर रहा था।

राजा और मंत्रियों के चेहरों पर श्याम रेखाएं अंकित होने लगीं। मलयासुन्दरी का बदन प्रफुल्लित हो गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा ने कहा—सिद्धेश्वर, तुम आ गए ?'

'हां, महाराज ! आपकी कृपा से मैं राख लेकर आ गया । आप इस राख से अपना सिरशूल मिटाएं और मेरी पत्नी मलया मुझे सौंपें ।'

'सिद्धेश्वर ! मेरे मन में सन्देह उभर रहा है कि तुमने इस कार्य में चालाकी की है । चिता में जलने वाला जीवित कैसे रह सकता है ? या तो तुम अदृश्य होकर चिता से निकल भागे थे या तुम किसी और मांत्रिक प्रयोग से सबकी दृष्टि को बांधकर भाग गए थे ।'

महाबल बोला—'यह संशय निराधार है । आपके रक्षकों के समक्ष मैंने चिता में प्रवेश किया था । आस-पास में हजारों लोग थे। चिता को चारों ओर से सुलगाया था और मैं उसमें जलकर राख हो गया था ।'

'अरे, तो फिर तुम जीवित कैसे आ गए ?'

'महाराज ! साधना की शक्ति अपार होती है। मैं जलकर राख हो गया था। मेरे इष्टदेव को मेरी मृत्यु के बारे में जानकारी हुई। रात्रि के अन्तिम प्रहर में वह देव मेरे पास आया और अमृत का छिड़काव कर मुझे जीवित कर दिया। देव ने ही मुझे आज्ञा दी है कि यह तेरे ही शरीर की राख है, राजा को दे दे। मैं इसीलिए इसे आपको देने आया हूं ।'

महाराजा ने कहा—'प्रिय ! कोई बात नहीं है । तुमने अपनी शर्त पूरी कर ली । अब मित्रभाव के कारण एक छोटा-सा कार्य और कर दो ।'

'महाराजश्री ! आप अपना कार्य मुझे शीघ्र बताएं ।' महाबल ने कहा ।

राजा बोला—'नगर से कुछ दूर छिन्नकटक नामक एक पर्वत है । उस पर्वत पर एक विषम शिखर है और उस शिखर के पीछे एक खाई है । उस खाई के किनारे एक आम्र-वृक्ष है जो सदा आम्रफलों से लदा रहता है । सभी ऋतुओं में वह आम देता है । मैं चाहता हूं कि तुम उस वृक्ष के आम ले आओ । मैं पित्त-प्रकोप से पीड़ित हूं और वैद्यों ने मुझे आम्ररस में औषधि-सेवन का परामर्श दिया है। उस औषधि का इसी ऋतु में आसेवन करना होता है । आम की ऋतु अभी दूर है । तुम वहां से आम ला दो मेरा पित्त-रोग नष्ट हो जाएगा ।'

महाबल ने राजा की भावना परख ली । उसने कार्य की स्वीकृति दे दी ।

राजा ने दो व्यक्तियों को शिखर तक मार्ग दिखाने के लिए भेज दिया । उन्हें आगे कर महाबल चला ।

महाबल ने देखा मार्ग अत्यन्त विकट था, पर्वत की चढ़ाई अत्यन्त सीधी थी । एक क्षीण पगडंडी जा रही थी । दोनों मार्गदर्शक और महाबल उस पगडंडी पर चलने लगे । एक मार्गदर्शक का पैर फिसला और वह भयंकर रूप से चीखता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुआ नीचे ऊंडी, पाताल-सी ऊंडी खाई में जा गिरा। महाबल क्षणभर के लिए अवाक् रह गया। वह नवकार मंत्र का जाप करता हुआ चढ़ रहा था। शिखर तक पहुंचकर उस मार्गदर्शक ने अंगुलि के इशारे से दिखाते हुए कहा—'योगीश्वर! खाई की इस गहराई में वहां एक आम्रवृक्ष दीख रहा है, वही सदाबहार वृक्ष है। उसी के आम लाने हैं। उस तक पहुंचने का रास्ता आप स्वयं खोजें और निर्णय करें। महाराज! आज तक हमने वहां जाने का रास्ता नहीं देखा है और कोई मनुष्य वहां तक नहीं पहुंच पाया है।'

महाबल ने इधर-उधर देखा, पर मार्ग था ही नहीं। उसने अपनी धोती का कच्छ मारा। उत्तरीय से कमर को कसा और तीन बार नवकार महामंत्र का स्मरण कर उसने आम्रवृक्ष की ओर छलांग लगा दी।

मार्गदर्शक यह देखकर घबरा गया। उसने देखा, सिद्धेश्वर एक गोले की भांति नीचे चला जा रहा है। उसने अपनी दोनों हथेलियों से आंखें ढंक लीं और कुछ क्षण वहां रुककर नगर की ओर चल पड़ा।

एक चमत्कार घटित हुआ।

महाबल का शरीर अभी आम्रवृक्ष पर नहीं गिर पाया था। उस वृक्ष का अधिष्ठाता एक व्यंतर देव था। उसने महाबल को इस ओर छलांग लगाते देख लिया था।...महाबल को देखते ही उसके मन में एक स्मृति जागी। उसने गिरते हुए महाबल को झेल लिया।

मौत की कल्पना से छलांग लगाने वाले महाबल को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। वह आश्चर्य शान्त हो, उससे पूर्व ही व्यंतर देव महाबल को लेकर उस आम्रवृक्ष के पिछले भाग में अदृश्य हो गया।

महाबल ने देखा—वह एक तेजस्वी पुरुष के साथ गुफा में एक शय्या पर बैठा है।

महाबल व्यंतर के समक्ष हाथ जोड़कर बोला—'आपने मेरे पर महान् उपकार किया है। आपका परिचय जानना चाहता हूं।'

'महाबलकुमार! एक वर्ष पूर्व तुमने मेरे पर महान् उपकार किया था। तुम स्वर्णपुरुष की साधना में मेरे सहायक बने थे। याद है?'

महाबल ने नम्रतापूर्वक सिर हिलाकर स्वीकृति दी।

व्यंतरदेव ने कहा—'मैं उसी योगी का जीव हूं। वहां से मरकर मैं इस आम्रवृक्ष पर व्यंतरदेव के रूप में जन्मा हूं। तुम्हें गिरते देख मेरी स्मृति ताजा हो गई। मैंने उपकार का बदला चुका दिया है। तुम यहां क्यों आए? पर्वत से क्यों छलांग लगायी?'

महाबल ने सारी घटना संक्षेप में कही।

व्यंतरदेव बोला—'महाबल! तुम्हारे साहस का मैं अभिनंदन करता हूं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुम रात भर यहीं विश्राम करो। सागरतिलक नगर का राजा कंदर्पदेव व्यभिचारी और लम्पट है। मैं उसे उचित पाठ पढ़ाऊंगा। कल मैं आम्रफलों की टोकरी के साथ उसकी राजसभा में पहुंचूंगा। मैं अब तुम्हारे साथ रहूंगा। राजा तुम्हारा कुछ भी अनिष्ट नहीं कर पाएगा।'

महाबल ने व्यंतरदेव का आतिथ्य स्वीकार किया।

राजा को सिद्धेश्वर के छलांग लगाने का समाचार ज्ञात हुआ। उसने सोचा—अब मलया मेरी है, इसमें कोई कसर नहीं रह गयी है।

रात बीत गई।

साथ-साथ राजा ने सोचा—उसका अवरोधक भी मिट गया। पर…

सूर्योदय हुआ।

प्रथम प्रहर अभी चल रहा था। राजसभा खचाखच भरी थी। आज महाराजा कंदर्पदेव कुछ विशेष घोषणा करने वाले थे। वह घोषणा संभवतः मलया से संबंधित थी। यह बात सारे नगर में फैल गई। सभी लोग उत्सुकता से राजसभा में एकत्रित होने लगे। आज स्त्रियां भी राजसभा में आयी थीं।

महामंत्री अपनी पूरी योजना उपस्थित जनता के समक्ष रखने वाला था। इतने में ही राजसभा के मुख्य द्वार पर सिद्धेश्वर के जयनाद की प्रचंड ध्वनि सुनाई दी। इस ध्वनि में उमंग थी, आनंद था।

राजसभा में एकत्रित सभी नर-नारी के चक्षुयुगल उस ध्वनि की ओर आकृष्ट हो गए। सभी उस ओर देखने लगे। राजा, मंत्री और मलया तथा सभी रानियां उस ओर देखने लगीं।

कंधे पर आम की टोकरी उठाए महाबल सिद्धेश्वर धीरे-धीरे राजसभा में प्रवेश कर रहा था।

महामंत्री जीवक और महाराजा कंदर्पदेव आश्चर्यचकित रह गए—अरे! क्या यह व्यक्ति लोह-निर्मित है कि मौत भी इससे दूर भाग जाती है?

सिद्धेश्वररूपी महाबल सभी को मस्तक नमाता हुआ आगे बढ़ा। उसने आम का करंडक वहां रखा। उसमें अदृश्य रूप से व्यंतरदेव छिपा हुआ था। उसने केवल महाबल को सुनाते हुए कहा—'वत्स! मेरी सूचना को याद रखना… मैं तुम्हारे साथ ही हूं।'

महाबल ने मन-ही-मन व्यंतरदेव का आभार माना।

महाबल मंच पर गया। करंडक रखकर उसने महाराजा से कहा—'कृपावतार! आपने मित्रभाव से जो कार्य मुझे सौंपा था, वह मैंने पूर्ण कर दिया है। इस करंडक में अप्राप्य आम्रफल भरे हुए हैं।'

सभी सदस्यों ने हर्षनाद किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलया आनंद से उछल आगे बढ़ी और स्वामी के चरणों में लुढ़क गई।

और उस समय सभा में एक नया आश्चर्य घटित हुआ।

महाबल ने आम का जो करंडक रखा था उसमें से आवाज आने लगी—'राजा को खाऊं या मंत्री को खाऊं?'

३. धधकती आग

'राजा को खाऊं या मंत्री को खाऊं'—यह शब्द सुन सारी सभा भयभीत हो गई। सबकी आंखें करंडक की ओर स्थिर हो गईं।

महाबल और मलया बातें करते-करते राजसभा के पिछले भाग में स्थित उद्यान में चले गए।

करंडक में से बार-बार यह ध्वनि निकल रही थी—'राजा को खाऊं या मंत्री को खाऊं?'

महामंत्री ने राजा से कहा—'महाराज! सिद्धेश्वर आम के बदले मायाजाल ले आया है। मैं अभी उस मायाजाल का भंडाफोड़ करता हूं।

उसी समय घबराए हुए राजा ने कहा—'महामंत्री! आप करंडक के पास न जाएं। सिद्धेश्वर को बुला भेजें। वे मंत्रणागृह में मलया से बातें कर रहे हैं।'

महामंत्री बोला—'महाराज! आप चिन्ता न करें···करंडक में इन्द्रजाल के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। मैं सभा को बता देना चाहता हूं कि इस करंडक में आम नहीं है।'

यह कहकर महामंत्री करंडक के पास आया, करंडक का ढक्कन खोलकर आम निकालने के लिए हाथ डाला···

उसी समय करंडक में से भयंकर ज्वाला निकली जिसने तत्काल मंत्री जीवक को भस्म कर डाला। मंत्री वहीं राख का ढेर बन गया।

सभा में हाहाकार मच गया। सभी भय-त्रस्त होकर कांपने लगे। अभी भी करंडक से भयंकर ज्वाला निकल रही थी। सभी उसको भयमिश्रित आश्चर्य से देख रहे थे।

ज्वाला करंडक को छोड़कर अधर आकाश में चलने लगी। सभी भयाक्रान्त होकर कांपने लगे।

दो व्यक्ति सिद्धेश्वर को बुलाने गए। सिद्धेश्वर ने समझ लिया कि यह सारा व्यंतरदेव का चमत्कार है। वह राजसभा में आया।

कंदर्पदेव ने सिद्धेश्वर से कहा—'महापुरुष! कृपा कर इस ज्वाला को शान्त करें। लोग भयभीत हो रहे हैं।'

तत्काल महाबल करंडक के पास गया और हाथ जोड़कर बोला—'शांत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हों, शांत हों, आपकी क्रोधाग्नि में अनेक जीव जलकर भस्म हो जाएंगे।'

तत्काल ज्वाला शांत हो गई।

महाबल ने करंडक में से दो आम्रफल निकाले और राजा के समक्ष उन्हें प्रस्तुत करते हुए कहा—'कृपावतार! ये देखें, ये दिव्य आम्रफल हैं।'

'नहीं…नहीं…नहीं…इन जादुई फलों को दूर रखो।'

महाबल बोला—'महाराज! इसमें कोई जादू नहीं है। आप गौर से देखें, पके हुए और अमृतमय ये आम्रफल हैं।'

किन्तु राजा की हिम्मत नहीं हुई। उसने सोचा—कहीं मंत्री जैसी हालत न हो जाए?

राजा ने दूसरे व्यक्तियों को आम लेने के लिए कहा।

राजा को मन-ही-मन विश्वास हो गया कि ये वे ही अलभ्य आम्रफल हैं।

महाबल बोला—'आपका कार्य संपन्न हुआ। अब मैं मलया को साथ ले अपने गांव जाना चाहता हूं।'

राजा बोला—'मित्रवर! एक कार्य शेष है। वह तुम्हारे जैसे साहसी और शक्तिशाली व्यक्तियों से ही संपन्न हो सकता है।'

महाबल बोला—'आप अपना कार्य बताएं। अब यह अंतिम कार्य होगा। इसको संपन्न कर मैं यहां पल भर भी नहीं रुकूंगा।'

राजा बोला—'सिद्धेश्वर! यह मेरा अंतिम कार्य है। अनेक वर्षों से मेरी यह लालसा है कि जैसे मैं आगे देख सकता हूं वैसे ही मैं पीछे भी देख सकूं। मुझे पीछे देखने के लिए मुड़ना न पड़े। ऐसी कोई पीठ पर आंख लगा दो। मेरी लालसा पूरी हो जाए।'

यह सुनकर सारी सभा स्तब्ध रह गई।

महाबल भी असमंजस में पड़ गया। जो सर्वथा अशक्य है, उसे शक्य कैसे बनाया जा सकता है?

महाबल चिन्तामग्न हो गया। इतने में ही व्यंतर देव ने उसके कानों में कुछ कहा और तत्काल महाबल का उत्साह बढ़ा। उसने यह चुनौती स्वीकार कर ली।

सारी सभा अवाक् रह गई।

महाबल महाराजा के पास आकर बोला—'आप उठें।'

कंदर्पदेव तत्काल आसन से उठ गया।

महाबल ने व्यंतर की सूचना के अनुसार कंदर्पदेव का मस्तक घुमा डाला। राजा चीखा, पर उसका आगे का भाग अब पीछे हो चुका था।

महाबल बोला, 'कृपावतार! इष्टदेव की कृपा से आपका कार्य हो गया है।'

परन्तु राजा इस अवस्था से आकुल हो उठा। उसने कहा—'मित्र! बहुत पीड़ा हो रही है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'इसमें मेरा कोई दोष नहीं है।'

महाराजा की दशा पर सारी सभा हंस पड़ी।

महाराजा ने कहा—'मित्र ! तुमने अपना कार्य कर डाला। अब मेरा मुंह पूर्ववत् कर डालो।'

महाबल ने स्वर्णप्रभु का स्मरण कर राजा का मुंह पुनः घुमाया और उसे पूर्ववत् कर डाला।

राजा का मन अभी भी पाप-मुक्त नहीं हुआ था। उसके मन में महाबल को मार डालने की भावना थी।

उसने अभिनय किया और महाबल को साथ भोजन करने के लिए राजी कर लिया।

दोनों भोजन करने बैठे।

इतने में ही व्यंतरदेव ने महाबल के कान में कहा—'युवराज ! दूध का पात्र मुंह से नहीं लगाना। उसमें विष घुला है। राजा ने तुम्हारे विनाश के लिए एक षड्यंत्र रचा है। आज तुम निश्चिन्त रहो...मैं उसे शिक्षा दूंगा।'

व्यंतरदेव के कथनानुसार महाबल ने दूध नहीं पीया। कुछ दूसरी चीजें खा उठ गया।

इतने में ही महाप्रतिहार हांफता-हांफता आया और बोला—'कृपावतार ! गजब हो गया।'

'क्या हुआ ?'

'आपकी अश्वशाला में आग लग गई...'

'आग', इतना कहते ही राजा नीचे बैठ गया। उसने अभिनय करते हुए कहा—'ओह ! यदि आग नहीं बुझेगी तो मूल्यवान् अश्व जलकर भस्म हो जाएंगे।'

आग चारों ओर फैलने लगी। उसकी भयंकरता से सारा राजभवन कांप उठा। सभी लोग इधर-उधर दौड़ने लगे।

यह आग राजा द्वारा पूर्व-नियोजित थी।

राजा सिद्धेश्वर को लेकर अश्वशाला की ओर गया।

महाबल ने आग की भयंकरता को देखा।

महाराजा ने कहा—'सिद्धेश्वर ! आप महान् उपकारी हैं...आपने मेरे सभा-मंडप की रक्षा की है। इस अश्वशाला में मेरा एक बहुमूल्य और प्रिय अश्व है। वह पंचकल्याणक अश्व है। आप उसका रक्षण करें। मैं आपका यह उपकार जीवनभर नहीं भूलूंगा।'

महाबल सोचने लगा, इस आग में प्रवेश कर बाहर कैसे निकलूंगा ?

महाबल को चिंतित देख, व्यंतरदेव ने कहा—'वत्स ! तुझे जला डालने का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह षड्यन्त्र है, किन्तु तू निर्भय होकर अश्वशाला में प्रवेश कर, मैं तेरे साथ हूं।'

महाबल ने तत्काल महाराजा से कहा—'राजन्! आप विषाद न करें। मैं अभी आपका पंचकल्याणक अश्व ला देता हूं।'

इतना कहकर महाबल अश्वशाला की ओर दौड़ा।

राजा मन-ही-मन हर्षान्वित हुआ।

कुछ समय बीता।

सबकी दृष्टि अश्वशाला की ओर थी। सभी ने देखा—महाबल एक तेजस्वी और दिव्य अश्व पर बैठकर आग में से सुरक्षित बाहर आ रहा है। उसका रूप निखर गया था। बदन पर दिव्य अलंकार और वस्त्र सुशोभित हो रहे थे।

राजा महाबल का यह रूप देख आश्चर्यचकित रह गया।

महाबल सीधा महाराजा के पास आया और बोला—'राजन्! यह सब आपका ही प्रताप है। मैं आपका उपकार मानता हूं। यदि आप मुझे अश्वशाला में न भेजते तो मुझे आरोग्य, रूप, दीर्घायु और दिव्य वस्त्रालंकार प्राप्त नहीं होते।···अभी एक घटिका तक ऐसा ही योग है। जो कोई अश्वशाला में जाएगा वह मेरी ही तरह दीर्घ जीवन, रूप, तेज, यौवन और समृद्धि को प्राप्त कर जाएगा।'

राजा के मन में दीर्घ जीवन और यौवन प्राप्त करने का लोभ जागा। दीर्घ जीवन और यौवन का लोभ किसे नहीं होता?

कुछ ही समय में राजा और अन्यान्य कुछ लोग अश्वशाला में जाने के लिए तैयार हो गए। महाबल ने कहा—'महानुभावो! एक साथ दो नहीं जाएं, एक-एक कर जाएं।'

राजा कंदर्पदेव पहले गया और···

नगरसेठ ने कहा—'अब मैं जाता हूं।'

महाबल बोला—'सेठजी! यह तो उस दुष्ट का अंत करने की चाल थी। आग में कोई जीवित नहीं बच सकता।'

दुष्ट राजा की मृत्यु हो गई। दुष्ट मंत्री पहले ही मर चुका था।

राजा निःसन्तान था। राज्यसिंहासन रिक्त हो गया था।

रात्रि में सारे मंत्री तथा नगर के संभ्रान्त व्यक्ति एकत्रित हुए और राजा का चुनाव करने के लिए विचार-विमर्श करने लगे।

विचार-विमर्श करते-करते मध्यरात्रि के समय सभी एक बात पर सहमत हुए कि सिद्धेश्वर को राजगद्दी सौंपी जाए। सबको यह विश्वास था कि सिद्धेश्वर राजा बनने योग्य है। इसमें तेज है, विद्या है, शक्ति है।

महाबल को राज-सिंहासन पर बिठा दिया।

सारा नगर हर्ष से उछलने लगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल ने राज्यभार संभालते ही कंदर्पदेव की विधवा रानियों के लिए सुन्दरतम व्यवस्था की। नगर में कंदर्पदेव की मृत्यु के उपलक्ष्य में गरीबों को दान दिया और प्रजा की सुख-शांति के लिए अनेक नीतियां निर्धारित कीं।

बलसार को यह ज्ञात ही नहीं था कि मलयासुन्दरी इस नगर की पटरानी बन चुकी है।

बलसार किराने से जहाज भर सागरतिलक नगर के बंदरगाह पर आ पहुंचा था। वह नये राजा की प्रीति संपादित करने के लिए कुछ भेंट ले राजदरबार में आया।

बलसार को देखते ही महाबल के पार्श्व में बैठी मलयासुन्दरी चौंकी और उसने मंद स्वर में स्वामी से कहा—'स्वामी! जो आ रहा है, यही बलसार है। इसी ने हमारे पुत्र को छीन रखा है।'

बलसार ने महाबल की ओर दृष्टि डाली। मलयासुन्दरी को वहां पास में बैठी देख, उसका हृदय कांप उठा। उसने सोचा—मलयासुन्दरी यहां कैसे आ गई! नहीं-नहीं···अरे! यह तो मलया ही है! वही चेहरा, वही रूप! वही तेज और वही नयन युगल!

अब क्या करूं?

वह असमंजस में पड़ गया।

महाबल बोला—'सेठजी! आपने मलयासुन्दरी को पहचान लिया है।' फिर मलया की ओर देखकर कहा—'मलया! जिस महापुरुष के विषय में तू बता रही थी, वह यही है न?'

मलया ने मस्तक नमाकर स्वीकृति दी।

महाबल ने तत्काल बलसार को बंदी बनाने का आदेश दिया और उसके काले कारनामे कह सुनाए।

महाबल ने कहा—'इस दुष्ट सेठ ने मेरे एकाकी पुत्र को अपने घर में छिपा रखा है। इसकी सारी संपत्ति जब्त कर ली जाए। जब तक दंड की घोषणा न की जाए तब तक इसे कारागृह में रखा जाए।'

उसी समय राजाज्ञा का पालन हुआ। महाबलाधिकृत चार रक्षकों के साथ आगे आया और बलसार को बंधनग्रस्त कर दिया।

किन्तु दुष्ट बलसार एक शब्द भी नहीं बोला। मलया को देखकर बलसार को वह तमाचा याद आ गया जो मलया ने उसके गाल पर मारा था। उसके दिल में अकुलाहट होने लगी।

बलसार को कारागृह में डाल दिया गया।

कारागृह में जाते-जाते बलसार मन-ही-मन महाराजा महाबल और मलया के विनाश की योजना गढ़ रहा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५७. न्याय का गौरव

बलसार को कारावास में आए पन्द्रह दिन बीत गए थे। महाबल ने अपने पुत्र के विषय में जानकारी करने का पूरा प्रयत्न किया। पर बलसार ने कुछ भी अता-पता नहीं बताया। वह अपनी बात पर दृढ़ था।

बलसार ने एक योजना बनाई। सबसे पहले उसने अपनी पत्नी प्रियसुन्दरी तथा बालक बलसुन्दर को अन्यत्र भिजवा दिया। फिर उसने चंद्रावती के राजा वीरधवल को एक पत्र लिखा। उसे यह ज्ञात नहीं था कि मलयासुन्दरी और कोई नहीं, महाराजा वीरधवल की प्रिय कन्या है।

उसने पत्र में लिखा कि 'महाराजश्री ! आप शीघ्र यहां आकर सागरतिलक नगर को हस्तगत करें। आपका शत्रु राजा कंदर्पदेव जलकर भस्म हो गया है। उसके स्थान पर सिद्धराज को राजा बनाया गया है। वह भी आपके प्रति शत्रुता रखता है। उसने मुझे कारावास में डाल रखा है। आप आएं, मुझे मुक्त कराएं और इस राज्य की अपार संपत्ति के स्वामी बनें।'

मलयासुन्दरी के पिता महाराजा वीरधवल और महाबल के पिता महाराज सुरपाल—दोनों मित्र-राजा थे। दोनों ने आपस में विचार-विमर्श किया और बलसार के पत्र को महत्त्व देते हुए उसकी बात स्वीकार कर ली।

उन्होंने युद्ध की पूरी तैयारी कर ली।

एक दूत को सागरतिलक नगर की ओर भेजा।

दूत का सत्कार कर उसे राजसभा में लाया गया।

उसने कहा—'महाराजा सिद्धराज का कल्याण हो। मैं चंपापुरी के महाराजा वीरधवल का दूत हूं। आपके पास महत्त्वपूर्ण संदेश लेकर आया हूं।'

मलया ने यह सुनकर महाबल से कहा—'स्वामीनाथ ! अपना परिचय···'

महाबल बोला—'समय आने पर···'

उस दूत ने युद्ध की बात कही और कहा—'आप कारागृह में पड़े हुए बलसार को मुक्त कर दें, अन्यथा बहुत बड़ा रक्तपात होगा।'

वाचालता से और भी बहुत कुछ कह डाला।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाबल आनंदित हो रहा था और मलया भी हर्षित हो रही थी।

महाबल ने दूत से कहा—'दूत ! तुम बहुत वाचाल हो। मैं युद्ध करना नहीं चाहता, किन्तु अन्याय के आगे झुकना भी नहीं चाहता। बलसार दोषी है। मैं उसको उचित दंड देना चाहता हूं। यह मेरे राज्य का प्रश्न है। तुम्हारे राजा मेरे घरेलू मामलों में क्यों हस्तक्षेप करते हैं? युद्ध केवल सैन्यशक्ति से ही नहीं लड़ा जाता। उसमें न्याय की शक्ति भी आवश्यक होती है। मेरा पक्ष न्याययुक्त है। तुम जाओ और अपने राजा से कहो—युद्ध विनाश का कारण है। मैं युद्ध करना नहीं चाहता। पर यदि वे युद्ध करना ही चाहें तो मैं युद्ध के लिए तैयार हूं।'

दूत चला गया।

महाराजा वीरधवल की सेना राज्य की सीमा पर आ गई।

सूर्योदय से पूर्व ही महाबल हाथी पर सवार हो, पांच सौ सैनिकों को साथ ले युद्धस्थल पर आ पहुंचा।

उसने कवच, शिरस्त्राण पहन रखे थे।

विपक्ष की सेना विशाल थी। शताधिक हाथी थे और उत्तम शस्त्रास्त्रों से सज्जित सैनिक थे।

युद्धभूमि पर आकर वीरधवल ने शत्रु की अल्प सेना को देखकर कहा—'अरे ! राजा सिद्धराज युद्ध करने आए हैं या क्रीडा करने? उनकी सेना एक घटिका भर में नष्ट हो जाएगी।'

सूर्योदय से पूर्व महाबल ने तीन बार महामंत्र का स्मरण किया और स्वर्णप्रभ व्यंतरदेव की स्मृति की। व्यंतरदेव आकर बोला—'क्यों वत्स ! क्या आज्ञा है?'

'महापुरुष ! मैं आपका दास हूं। सामने देखें, मेरे पिता और श्वसुर युद्ध करने आए हैं···दोनों ने मुझे नहीं पहचाना है। मुझे युद्ध नहीं करना है। दिखावा मात्र है। आप यदि सहायक बनें तो मैं अपने पूज्य जनों को अपना परिचय दे सकूं। एकाध घटिका में ही सारा संपन्न हो जाएगा।'

व्यंतरदेव ने हंसते हुए कहा—'युवराज ! तुम्हें भी मजाक करने में रस आता है। तुम संग्राम की घोषणा करो···किसी की कोई हानि नहीं होगी···'

सूर्योदय हो गया।

दोनों सेनाएं आमने-सामने खड़ी थीं। रणभेरी बज उठी। शंखनाद होने लगे और दोनों ओर से बाणों की वर्षा होने लगी।

व्यन्तरदेव ने एक चामत्कारिक स्थिति बना दी।

विपक्ष से जो बाण या शस्त्र आते थे, व्यन्तरदेव उन्हें बीच में ही समाप्त कर देता था। महाबल के शस्त्र सीधे प्रहार करते थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह देखकर महाराजा सुरपाल और वीरधवल अपने नामांकित हाथियों पर आरूढ़ होकर आगे आए। उन्हें कुछ भी विचित्रता नहीं लगी।

महाबल ने मंत्रित कर दो बाण छोड़े—एक बाण पिता और दूसरा श्वसुर पर। दोनों बाण दोनों की तीन-तीन बार प्रदक्षिणा कर उनकी गोद में एक-एक पत्र रख महाबल के पास लौट आए।

महाबल ने इन पत्रों द्वारा अपना परिचय दिया था।

पत्र पढ़ते ही वीरधवल ने युद्ध बंद करने की घोषणा की।

युद्ध बंद हो गया। कोई क्षति नहीं हुई।

महाबल हाथी से नीचे उतरा और आगे बढ़कर दोनों के चरणों में गिर पड़ा।

पिता और श्वसुर—दोनों हर्ष से उछल पड़े।

बाजे-गाजे के साथ पिता और श्वसुर राजमहल में गए। वहां पहुंचते ही मलया ने दोनों की चरणरज मस्तक पर चढ़ायी।

दोनों ने मलया को आशीर्वाद दिया।

तत्पश्चात् मलया और महाबल ने अथ से इति तक की सारी घटनाएं सुनाईं। सुनकर सब रोमांचित हो उठे।

राजा सिद्धराज महाराजा सुरपाल के युवराज महाबल हैं और महारानी मलयासुन्दरी राजा वीरधवल की सुपुत्री हैं—यह बात सारे नगर में फैल गई। नगरवासी उत्सव मनाने की तैयारी में लग गए।

दूसरे दिन।

राजभवन खचाखच भरा था। बलसार को वहां लाया गया। उसकी बातें सुन महाराजा सिद्धराज ने उसके काले कृत्यों को एक-एक कर जनता के समक्ष रखा। सारी जनता उसे धिक्कारने लगी।

महाबल ने कहा—'बलसार ! तेरा अपराध अक्षम्य है। तूने एक अबला को फंसाया, उसको बेचा और उसके पुत्र को छीन लिया। इसका दंड मृत्यु है। तू क्या कहना चाहता है ?'

बलसार रो पड़ा। उसने दया की भीख मांगी।

महाबल और मलया का हृदय पिघल गया। मलया बोली—'स्वामीनाथ ! क्षमा परम धर्म है, उत्तम धर्म है।'

महाबल ने बलसार से कहा—'तू क्षमा करने योग्य नहीं है। अभी-अभी कारागृह में भी तूने षड्यन्त्र रचा था…यह तेरी दुष्टता का उत्कृष्ट उदाहरण है…मैं तुझे मुक्त करता हूं। तू अपने आप प्रायश्चित्त की अग्नि में जलेगा।'

दूसरे दिन बलसार और उसकी पत्नी दोनों बालक बलसुन्दर को लेकर राजसभा में आ पहुंचे।

मलयासुन्दरी अपने प्राणप्रिय पुत्र को लेकर चूमने लगी और लंबे समय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तक चूमती रही।

इसी समय महाप्रतिहार ने आकर यह सूचना दी—'नगर की दक्षिण दिशा में स्थित सुमंगल उद्यान में केवली चंद्रयशा पधारे हैं।'

केवली भगवंत !

पूरा राजपरिवार सुमंगल उद्यान की ओर चल पड़ा।

नगर के अन्यान्य व्यक्ति भी उसी दिशा की ओर चल पड़े। केवली भगवान् के दर्शन कर सभी आनंदित हुए।

केवली भगवान् ने धर्मदेशना दी और भवबंधन-मुक्ति पर प्रकाश डाला।

सारी जनता ने मंत्रमुग्ध होकर केवली भगवान् की वाणी का आस्वाद लिया।

धर्मदेशना संपन्न हुई।

परिषद् अपने-अपने गन्तव्य की ओर चली गई। राजपरिवार वहीं रुका रहा। जनता के विसर्जित हो जाने के बाद मलया ने पूछा—'भगवंत ! मैंने कभी किसी को पीड़ा नहीं पहुंचायी, फिर भी मेरे पर विपत्तियों के पर्वत टूट पड़े, ऐसा क्यों ?'

केवली भगवान् ने कहा—'भद्रे ! इस भव में बांधे हुए कर्म इसी भव में भोगने पड़ते हैं, ऐसी व्यवस्था नहीं है। विगत भवों के कर्म जिस भव में, जब उदय में आते हैं तब उन्हें भोगना पड़ता है। भद्रे ! शील के प्रति तेरी आस्था रही और नवकार मंत्र का जाप तू करती रही। ये दोनों तेरे लिए कवच बने हुए थे। किन्तु पूर्वभव के कर्मों का परिणाम तो तुझे भोगना ही पड़ा। वे कर्म दूरस्थ जन्मों के नहीं, इससे पूर्वजन्म के ही थे।'

महाराज वीरधवल ने आश्चर्य के साथ पूछा—'भगवन् ! आप स्पष्ट करें।'

केवली भगवान् उनके पूर्वभव की बात बतलाते हुए बोले—'भद्रजनो ! पृथ्वीस्थानपुर में प्रियमित्र नाम का एक धनाढ्य गृहपति रहता था। उसके तीन पत्नियां थीं—रुद्रा, भद्रा और प्रीतिमती। किन्तु प्रियमित्र का अनुराग प्रीतिमती से अधिक था। वह रुद्रा और भद्रा की उपेक्षा करने लगा। प्रियमित्र का एक मित्र मदनचंद कभी-कभी उसके घर आता था। वह प्रीतिमती के प्रति आसक्त हो गया। प्रीतिमती पतिव्रता थी। वह विचलित नहीं हुई। प्रियमित्र को अपने मित्र का दुष्टभाव ज्ञात हुआ। दोनों में संघर्ष हुआ और मदनचंद नगर छोड़कर अन्यत्र चला गया। रास्ते में दो दिन तक उसे खाने को कुछ भी नहीं मिला···वह आकुल-व्याकुल हो गया···इतने में ही उसने एक ग्वाले को गाएं चराते देखा···वह उसके पास गया और खाने के लिए कुछ याचना की। दयार्द्र होकर ग्वाले ने एक गाय दुहकर दूध दिया। गाय का दूध पाकर मदन अत्यन्त प्रसन्न हुआ···उसके मन में एक विचार उभरा—यदि इस वक्त कोई अतिथि आ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाए तो मैं उसे दूध पिलाने के पश्चात् दूध पीऊंगा। इस भावना को लिये वह एक तालाब के पास स्थित एक वृक्ष के नीचे आ बैठा। और उसी समय मासक्षपण की तपस्या का पारणा लेने के लिए गांव की ओर जाते हुए एक मुनि उधर आ निकले। मदन ने मुनि को दूध का दान दिया। मुनि आवश्यकतानुसार दूध ले, पारणा कर अपने स्थान की ओर चले गए। मदन भी शेष दूध पीकर मुंह साफ करने तालाब पर गया। वह फिसला और तालाब में जा गिरा। वह तत्काल मर गया। मरकर वह इसी नगरी के राजा के वहां पुत्ररूप में उत्पन्न हुआ। उसका नाम रखा गया कंदर्पदेव !

पृथ्वीस्थानपुर में प्रीतिमती और प्रियमित्र—दोनों एक-दूसरे में अत्यन्त आसक्त थे। एक बार वे धनंजय यक्ष के मंदिर में दर्शनार्थ गए। मार्ग में एक तपस्वी मुनि मिले। प्रियमती ने इसे अपशकुन माना। उसने मुनि को पत्थरों से मारा और रजोहरण छीन लिया। मुनि क्षमासागर थे। वे कायोत्सर्ग कर खड़े रह गए। प्रीतिमती ने मुनि को दागने के लिए एक नौकर से कहा। नौकर ने आज्ञा नहीं मानी। इससे कुपित होकर प्रियमित्र ने उसे एक वृक्ष से बांधकर औंधे मुंह लटका दिया। फिर दोनों यक्षमंदिर में जा, यक्ष के दर्शन कर अपने घर आए और सुखोपभोग में दिन बिताने लगे। प्रियमित्र की दोनों उपेक्षित पत्नियां, रुद्रा और भद्रा, अत्यन्त विषादग्रस्त हो गई थीं। दोनों के मन में पति तथा प्रीतिमती के प्रति प्रचंड रोष पैदा हो गया। एक दिन दोनों ने आत्महत्या कर ली। भद्रा मरकर व्यंतरी बनी। रुद्रा मरकर गजपुर के राजा चन्द्रयशा के घर में पुत्री रूप में उत्पन्न हुई। उसका नाम कनकावती रखा गया और वह महाराजा वीरधवल की पत्नी हुई।

महाबल और मलया को दुःख देने के लिए ही व्यंतरी ने हार उठाया था और महाबल को भी उठाया था'''क्योंकि महाबल ही प्रियमित्र का जीव था और प्रीतिमती का जीव थी मलयासुन्दरी। दोनों के मध्य मोहजनित भवबंधन बंधे होने के कारण इस जन्म में भी पति-पत्नी हुए।'

महाबल की ओर दृष्टिपात कर केवली भगवान् ने कहा—'महाबल ! रानी कनकावती तेरे प्रति मुग्ध बनी थी और मलया की शत्रु बनी थी। पूर्वजन्म के वैरभाव का वह पोषण कर रही थी और तूने जिस सेवक को वटवृक्ष पर औंधे मुंह बांधा था, वह मरकर भूत बना और उसी ने तुझे वटवृक्ष पर औंधे मुंह लटकाया था। रुद्रा ने एक बार तेरी मुद्रिका चुरा ली थी और उसे इस सेवक ने देख लिया था। दोनों के बीच बहुत विवाद हुआ। उसका बदला लेने के लिए इस सेवक भूत ने लोभसार के शव में प्रवेश कर कनकावती की नाक काट ली थी।'

'भद्रे ! तेरे पर विपत्तियां आयीं, उनका मूल कारण मुनि के प्रति हंसी का आना ही है। तूने उस समय रूप, यौवन और समृद्धि के नशे में अत्यन्त भारी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्म बांधे थे। कंदर्प पूर्वभव में तेरे प्रति आसक्त था। वह मोह का बंधन इस भव में भी नहीं छूटा और तुझे दुःख देने में उसने पीछे मुड़कर भी नहीं देखा।' केवली भगवान् ने शान्त भाव से कहा।

मलया ने पूछा—'भगवन् ! जिस मुनि का मैंने अपमान किया था, उनका क्या हुआ ?'

'भद्रे ! तेरा यह दूसरा भव है। मेरा वही भव है। मैं ही हूं वह मुनि।'

उस समय सभी ने केवली भगवान् को वंदना की।

मलयासुन्दरी ने कहा—'भगवन् ! मेरे मन में और दो प्रश्न घुल रहे हैं।'

'भद्रे ! तेरे प्रश्न को मैं जान गया हूं। बलसार ने तेरे रूप पर मुग्ध होकर तुझे अनेक कष्ट दिए। उसने अपनी दुष्ट प्रवृत्ति से चिकने और भारी कर्मों का अर्जन किया है और जिस मगरमच्छ ने तुझे किनारे पर ला पटका था, वह तेरी धायमाता का जीव था। तेरे प्रति उसका ममत्व भाव था। उसी ममत्व भाव से प्रेरित होकर उसने तुझे बचाया था।'

महाबल ने पूछा—'भगवन् ! कनकावती अभी कहां है ? उसका वैरभाव तृप्त हो गया या नहीं ?'

'राजन् ! कनकावती का वैर अभी तक तृप्त नहीं हुआ है।

'अभी वह एक बार और तुझ से बदला लेने का प्रयास करेगी···उसे अभी समय लगेगा।'

मलया बोली—'भगवन् ! भवबंधन के जाल से मुक्त होने का क्या कोई दूसरा उपाय नहीं है ?'

'भद्रे ! जो सर्वत्याग के मार्ग पर चलने का निश्चय करता है, वह भवबंधन से मुक्त हो जाता है···उसे आत्म-साक्षात्कार होता है और जन्म-मरण पर विजय प्राप्त होती है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपसंहार

पन्द्रह वर्ष बीत गए।

अपने पुत्र को राज्यभार सौंप महाबल और मलयासुन्दरी दोनों प्रव्रजित होकर सर्वत्याग के मार्ग पर अग्रसर हो गए।

महाबल मुनि-अवस्था में विचरण कर रहे थे। एक बार वे पृथ्वीस्थानपुर के सीमान्त पर आए और कायोत्सर्ग कर ध्यानस्थ हो गए। उस समय चारों ओर ठोकरें खाती हुई कनकावती उसी गांव में जा निकली और उसने मुनिवेश में महाबल को पहचान लिया। प्रतिशोध की आग भभक उठी। आसपास में कोई नहीं था। कनकावती ने लकड़ियां इकट्ठी कीं, उन्हें महाबल मुनि के चारों ओर चिना और उनमें आग लगा दी।

भयंकर कर्मों का अर्जन कर अट्टहास करती हुई कनकावती आगे चली गई। किन्तु मुनि महाबल इस उपसर्ग को समभाव से सहते रहे और आत्ममंथन में लीन हो गए।

महाबल महामुनि केवली हो गए और वहीं सिद्ध हो गए। महासाध्वी मलयासुन्दरी भी उत्तम चरित्र का पालन कर, मृत्यु का वरण कर, देवलोक में उत्पन्न हुई।

दोनों के भवबंधन सदा-सदा के लिए टूट गए।

□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org